जिनवाणी

Vol. 49 1992 No. 1, 3 Vol. 50 1993 No. 1-2

जनवरी 1992

पौष २०४८

सम्यग्ज्ञान

जीवन को सुन्दर बनाने के लिये आवश्यक है कि जीवन में सम्यग्ज्ञान की ज्योति जगे। सम्यग्ज्ञान की ज्योति जगेगी तो विचारों में परिवर्तन आएगा और लगेगा कि धर्म परलोक की चीज नहीं है।

—पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.
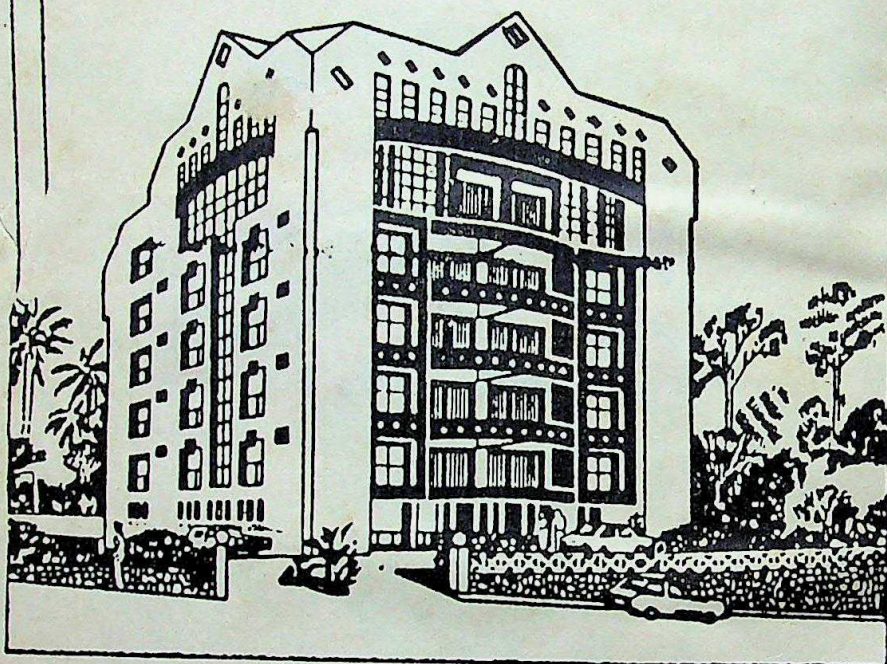
जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

आचार्य श्री हस्तीमलजी म. की ८२वीं जयन्ती पर विशेष सामग्री ।

जे य कंते पिए भोए,
लद्धे विपिट्ठी कुव्वई ।
साहीणे चयइ भोए,
से हु चाइत्ति वुच्चई ।।

—दशवैकालिक २/३

जो पुरुष प्राप्त हुए कान्त और प्रिय भोगों को स्वेच्छा से उदासीनता-पूर्वक त्याग देता है, वह निश्चय ही त्यागी कहलाता है ।

जनवरी, १९९२
वीर निर्वाण सं० २५१८
पौष, २०४८

वर्ष : ४९ • अंक : १

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए., पी-एच.डी.

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ५६५९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : २,००० रु०
संरक्षक सदस्यता : १,००० रु०
आजीवन सदस्यता : देश में ३५० रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में १०० डालर
त्रिवर्षीय सदस्यता : ८० रु०
वार्षिक सदस्यता : ३० रु०

मुद्रक :
फ्रेण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ कथा/प्रसंग/सूक्ति ☐

☐ कविता ☐

☐ प्रतिवेदन ☐

☐ स्तम्भ ☐

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ सूक्ति/कथा/प्रसंग ☐

☐ महिला स्तम्भ ☐

☐ प्रश्नमंच कार्यक्रम [६०] ☐

☐ कविता ☐

☐ स्तम्भ ☐

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

अप्पा खलु सयय रक्खियव्वो,
सव्विदिएहिं सुसमाहिएहिं ।
अरक्खिओ जाइपहं उवेइ,
सुरक्खिओ सव्वदुहाण मुच्चइ ।।

—दशवैकालिक चूलिका २/१६

सब इन्द्रियों को सुसमाहित कर आत्मा की सतत रक्षा करनी चाहिए। अरक्षित आत्मा, जाति-पथ (जन्म-मरण) को प्राप्त होती है और सुरक्षित आत्मा सब दुःखों से मुक्त हो जाती है।

मार्च, १९९२
वीर निर्वाण सं० २५१८
फाल्गुन, २०४८

वर्ष : ४९ • **अंक : ३**

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए., पी-एच.डी.

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर-३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ५६५६६७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर-३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : २,००० रु०
संरक्षक सदस्यता : १,००० रु०
आजीवन सदस्यता : देश में ३५० रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में १०० डालर
त्रिवर्षीय सदस्यता : ८० रु०
वार्षिक सदस्यता : ३० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर-३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ कथा / प्रसंग / सूक्ति ☐

☐ परिचर्चा ☐

☐ प्रश्नमंच कार्यक्रम (६२) ☐

☐ कविता ☐

☐ स्तम्भ ☐

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

धीरस्स पस्स धीरत्तं,
सव्वधम्माणुवत्तिणो ।
चिच्चा अधम्मं धमिट्ठे,
देवेसु उववज्जई ।।

—उत्तराध्ययन ७/२९

आचरण द्वारा सत्य-धर्म का अनुसरण करने वाले धीर पुरुषों की धीरता तो देखो कि वे अधर्म को त्याग कर धर्मिष्ठ बन जाते हैं और अन्त में दिव्य दशा को प्राप्त करते हैं ।

जनवरी, १९९३
वीर निर्वाण सं० २५१९
पौष, २०४९

वर्ष : ५० **अंक : १**

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए., पी-एच.डी.

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ५६५९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : २,००० रु०
संरक्षक सदस्यता : १,००० रु०
आजीवन सदस्यता : देश में ३५० रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में १०० डालर
त्रिवर्षीय सदस्यता : ८० रु०
वार्षिक सदस्यता : ३० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ कथा / प्रसंग / सूक्ति ☐

☐ प्रश्नमंच कार्यक्रम (६३) ☐

☐ कविता ☐

☐ स्तम्भ ☐

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

स समय-पर समयविऊ,
गंभीरो दित्तिमं सिवो सोमो ।
गुणसयकलिओ जुत्तो,
पवयणसारं तरिकहेऊं ।।

जो स्वसमय व पर समय का ज्ञाता, गंभीर, दीप्तिमान, कल्याणकारी और सौम्य है तथा सैकड़ों गुणों से युक्त है, वही निर्ग्रन्थ-प्रवचन के सार को कहने का अधिकारी है ।

—बृहत् कल्प भाष्य (२२४)

फरवरी, १९९३
वीर निर्वाण सं० २५१९
माघ, २०४९

वर्ष : ५० अंक : २

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए., पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए., पी-एच.डी.

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर-३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ५६५९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर-३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : २,००० रु०
संरक्षक सदस्यता : १,००० रु०
आजीवन सदस्यता : देश में ३५० रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में १०० डालर
त्रिवर्षीय सदस्यता : ८० रु०
वार्षिक सदस्यता : ३० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर-३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अपनी बात : आचार्य श्री की ८२वीं जयन्ती
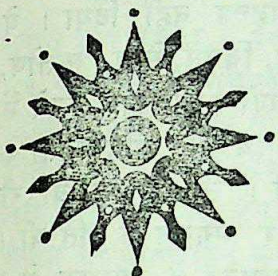
आचार्य श्री जिन आदर्शों के लिए जिये, उन्हें हम अपने जीवन में उतारें

☐ डॉ० नरेन्द्र भानावत

इस बार पौष शुक्ला चतुर्दशी को परम पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८२वीं जयन्ती देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रति वर्ष की भाँति तप, त्यागपूर्वक मनाई जायेगी, और आचार्य श्री प्रत्यक्षत: सशरीर हमारे बीच नहीं होंगे। पर परोक्ष रूप में उनके संयमी जीवन और सम्यक्दर्शन, ज्ञान, चारित्र रूप रत्नत्रय की आलाक-किरणें हमारा मार्ग प्रशस्त कर रही होंगी।

आचार्य श्री की यह जयन्ती हम में दायित्व-बोध की विशेष भावना भरती है। हमें इस बात की प्रेरणा देती है कि हम आचार्य श्री के उन आदर्शों को अपने जीवन में उतारें, जिनके लिए वे जीवन-पर्यन्त साधनारत रहे। आचार्य श्री आदर्शों के कल्पना-लोक में विचरण करने वाले साधक नहीं थे। वे अपने ज्ञान और क्रिया समन्वित व्यक्तित्व द्वारा आदर्शों को अपने मन, वचन, कर्म में आत्मसात किये हुए थे। उनका साधनाशील व्यक्तित्व उस भूधर की तरह था जो अपनी कठोरता में स्रोतस्विनी की तरलता लिये हुए हो। वे आगम, पुराण, इतिहास, न्याय, काव्य, दर्शन और धर्मशास्त्र के प्रखर पण्डित और मनीषी विद्वान् थे। धार्मिक और सांस्कृतिक परम्पराओं को उन्होंने गहराई से समझा था और उनकी नींव पर वे आधुनिक भाव-बोध का ऐसा नव्य और भव्य प्रासाद खड़ा करना चाहते थे जिसमें सभी को बिना किसी भेदभाव के सुख और शान्ति की छांह मिल सके।

आचार्य श्री ने ७१ वर्ष के अपने सुदीर्घ संयमी जीवन में अनेक अनुभव प्राप्त किये और शास्त्र के साथ-साथ लोक-जीवन व लोक-संस्कृति का निकटता से अध्ययन किया। वे बराबर यह अनुभव करते रहे कि नैतिक जीवन और स्वस्थ समाज-रचना के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति का चरित्र शुद्ध, निर्मल, प्रामाणिक, विवेकशील, और श्रद्धानिष्ठ हो। उनके जीवन का संदेश था—

कथनी और करनी में भेद न हो, मन, वचन और कर्म की एकता हो, ज्ञान और क्रिया में उचित सामंजस्य हो और इसी के लिए उनका जीवन समर्पित रहा।

आचार्य श्री शुद्ध वीतराग धर्म के आराधक थे। वे बाह्य क्रियाकाण्ड में विश्वास नहीं करते थे। जड़ पूजा को उन्होंने कभी महत्त्व नहीं दिया। वे आत्मदेव के सच्चे उपासक थे और अहिंसा, संयम, तप, विनय, सेवा, सन्तोष, सामायिक, स्वाध्याय, पौषध, दया, वात्सल्य आदि सद्गुणों का विकास करने में ही सच्ची भक्ति और धर्माराधना मानते थे। धर्म के पथ पर, वीतरागता के पथ पर आगे बढ़ने में वे श्रद्धा को बहुत महत्त्व देते थे। उनकी श्रद्धा बाहरी देवी-देवताओं के प्रति न होकर राग-द्वेष विजेता जिनेश्वर भगवन् के प्रति थी। पदार्थ-पूजा में विश्वास न कर वे आत्म-ज्ञान और आत्मदेव के उपासक थे। धर्म के नाम पर आडम्बर, प्रदर्शन और दिखावा उन्हें पसन्द नहीं था। विषय और विकारों को जीतने में ही वे सच्ची धर्म-साधना समझते थे। यही कारण है कि उन्होंने ज्ञान रहित यांत्रिक क्रिया को महत्त्व नहीं दिया। उनका बल सदा इस बात पर रहा कि जो क्रिया हो वह ज्ञानपूर्वक हो। 'पढ़मं नाणं तओ दया' अर्थात् प्रथम ज्ञान, फिर आचरण। समाज में ज्ञान के प्रति विशेष जागृति पैदा करने के लिए वे सतत सक्रिय रहे। उन्होंने स्वयं सार्वजनोपयोगी साहित्य की रचना की। 'उत्तराध्ययन', दशवैकालिक, अंतगड दशा, प्रश्न व्याकरण, नन्दी सूत्र, जैसे आगमों की उन्होंने सरल हिन्दी में व्याख्या-विवेचना प्रस्तुत की और उनका सरल सहज प्रवाही हिन्दी पद्यानुवाद भी किया। उनके प्रवचन शास्त्रीय होते हुए भी सहज, सुबोध और मर्मस्पर्शी होते थे। उनकी साहित्य चेतना प्रखर थी। वे कहा करते थे कि स्थानकवासी परम्परा का मूल आधार ज्ञान ही है, शास्त्र ही है। यदि समाज में इसकी प्रतिष्ठा और सुरक्षा, नहीं रही तो यह परम्परा टिकेगी कैसे? इसी उद्देश्य से उन्होंने घर-घर और व्यक्ति-व्यक्ति में स्वाध्याय की अलख जगाने का भगीरथ प्रयास किया। उनकी प्रेरणा से राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि प्रदेशों में स्वाध्याय संघ गठित हुए। सैंकड़ों की संख्या में स्वाध्यायी तैयार हुए और उनके माध्यम से संत-सतियों के चातुर्मासों से वंचित क्षेत्रों से पर्युषण पर्व की आराधना विशेष धर्म ध्यानपूर्वक कराई जाने लगी। जगह-जगह धार्मिक शिक्षण शिविर और स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर आयोजित किये जाने लगे। स्वाध्याय की प्रवृत्ति को एक अभियान का, एक आन्दोलन का, एक आध्यात्मिक क्रांति का रूप मिला। इससे वृद्ध, युवक और महिलाएँ भी जुड़ीं। नियमित सामायिक के साथ स्वाध्याय होने लगा। शास्त्र ज्ञान के प्रति लोगों में रुचि जगी।

धार्मिक पाठशालाएँ चालू हुई। धार्मिक पुस्तकालय भी खुले और आलमारियों में बन्द पड़े ग्रंथों की गांठें खुलीं। उन्हें व्यवस्थित किया जाने लगा।

इस प्रकार प्राचीन साहित्य की सार-संभाल की जाने लगी। ज्ञान भण्डार व्यवस्थित होने लगे।

आचार्य श्री दूरद्रष्टा थे। समाज की आवश्यकता को अनुभव कर तदनुकूल शुभ प्रवृत्ति के लिए वे सतत प्रेरणा देते थे। उन्हीं की प्रेरणा से आज से ४९ वर्ष पूर्व **'जिनवाणी'** मासिक पत्रिका अस्तित्व में आई। इस पत्रिका के माध्यम से न केवल धार्मिक आध्यात्मिक साहित्य का वृहत् पाठक वर्ग तैयार हुआ वरन् जैन धर्म, दर्शन, साहित्य, इतिहास के क्षेत्र में विद्वानों का एक लेखक मण्डल भी तैयार हुआ। प्राकृत और संस्कृत अध्ययन-अध्यापन और लेखन को प्रोत्साहित करने की आचार्य श्री की विशेष भावना रही। **'स्वाध्याय शिक्षा'** का प्रकाशन इसी दृष्टि से प्रारम्भ हुआ।

आचार्य श्री बराबर इस बात पर बल देते थे कि जिस समाज को अपने इतिहास का ज्ञान नहीं है, वह कभी भी सही दिशा में आगे नहीं बढ़ सकता। वर्तमान को समुन्नत और भविष्य को उज्ज्वल व कल्याणकारी बनाने के लिए अतीत का ज्ञान, और उसकी सतत प्रेरणा आवश्यक है। इसी भावना से प्रेरित होकर आचार्य श्री ने 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' चार भागों में प्रस्तुत किया, बिखरी हुई पट्टावलियों को संकलित किया, और जन साधारण तक इतिहास-ज्ञान पहुँचाने के लिए इतिहास को राग-रागिनियों में पद्यबद्ध किया। इन प्रयत्नों से पता चलता है कि आचार्य श्री का इतिहास-बोध अत्यन्त प्रखर था और वें सांस्कृतिक विरासत के प्रति विशेष जागरूक थे।

आचार्य श्री ज्ञान को समाज की आँख के रूप में मानते थे। आँख साफ, निर्दोष और तेजस्वी बनी रहे, उसके लिए वे ज्ञान की शक्ति को संगठित करने में लगे रहे। उनकी प्रेरणा से अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् का गठन हुआ और विभिन्न क्षेत्रों के पुरानी और नई पीढ़ी के पण्डित और विद्वान् एक मंच पर आये। आचार्य श्री के सान्निध्य में विभिन्न स्थानों पर सैद्धान्तिक और व्यावहारिक समसामयिक विषयों पर कई संगोष्ठियाँ आयोजित की गई। विद्वानों के साथ श्रीमन्त, सामाजिक कार्यकर्ता और प्रशासनिक अधिकारी भी जुड़े। आचार्य श्री का मानना था कि ये चारों अंग मिलकर समाज का सही दिशानिर्देश कर सकते हैं। आँख को पाँव चाहिए और पाँव को आँख।

आचार्य श्री अपने सिद्धान्त में सुदृढ़ और कठोर थे। जहाँ भी संयम-साधना में कमी देखते, उसे सहन नहीं करते, समझौता नहीं करते। वे उदार थे, समन्वयवादी थे, अन्य धर्मों और सम्प्रदायों के प्रति उनके मन में आदर भाव था पर अपने साध्वाचार और मर्यादा के प्रति वे विशेष कठोर और दृढ़ थे। उनका

हृदय करुणा और वात्सल्य भाव से परिपूर्ण था। अपने सम्पर्क में आये लोगों को वे अपने उद्बोधन से ऐसी प्रेरणा देते थे कि उनके निराश जीवन में आशा का संचार हो उठता था। असहाय स्थिति में विश्वास का नया बल प्राप्त हो जाता था। आकुल-व्याकुल मन आश्वस्त और शान्त हो जाता था। भटकते मन को लक्ष्य का ज्ञान हो जाता था। हजारों की संख्या में ऐसे भाई-बहिन हैं, युवक-युवतियाँ हैं जिनका जीवन आचार्य श्री के सम्पर्क में आकर रूपान्तरित हो गया। आचार्य श्री के सम्पर्क में आकर ऐसा मससूस होता था जैसे दग्ध-विदग्ध मन को आषाढ़ के मेघ की शीतल बून्द मिल गई हो, आग में अनुराग का बाग महक उठा हो।

आचार्य श्री का महनीय व्यक्तित्व हमारे लिए केवल वन्दनीय और पूजनीय ही नहीं, वह मननीय और आचारणीय है। हमारा यह पुनीत दायित्व और विनम्र कर्तव्य है कि हम आचार्य श्री के बताये हुए मार्ग पर चलें। उन्होंने सामायिक और स्वाध्याय का जो दीप प्रज्वलित किया, उसकी लौ को और बढ़ायें, उसके प्रकाश को और तेज व विस्तार दें। यह तभी संभव है जब हम प्रदर्शन और दिखावा में न उलझकर सच्चे अर्थों में ज्ञान को अपना लक्ष्य बनायें, जिन मर्यादाओं की उन्होंने स्थापना की उनकी रक्षा में अपने पुरुषार्थ को लगावें, जिन आदर्शों को उन्होंने अपने जीवन में उतारा और हमें जिस मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी, उस मार्ग पर चलते रहने में अपना पराक्रम करें। यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी और उनकी जयन्ती मनाना सार्थक होगा।

सच्ची सीख : आचार्य श्री हस्ती

बिना दान के निष्फल कर हैं, शास्त्र श्रवण बिन कान।
व्यर्थ नेत्र मुनि दर्शन के बिन, तके पराया गात॥

धर्म-स्थान में पहुँच सके ना, व्यर्थ मिले वे पाँव।
इनके सकल करण जग में, है सत्संगति का दाँव॥

खाकर सरस पदार्थ बिगाड़े, बोल बिगाड़े बात।
वृथा मिली वह रसना, जिसने गाई न जिन गुण गात॥

सिर का भूषण गुरु-वन्दन है, धन का भूषण दान।
क्षमा वीर का भूषण, सबका भूषण है आचार॥

काम मोह मद पुद्गल के हैं, गावे गान हजार।
'गज मुनि' आत्म-रूप को गाओ, हो जावे भव-पार॥

प्रवचनामृत*

□ ग्राचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०

जिसका जीवन परोपकार में रत है, जिसका स्वभाव उदारता से भरा हुग्रा है ग्रौर जो विनम्रता की साक्षात्मूर्ति है, वह मनुष्य होकर भी देव या ईश्वर है। जिस जीवन की सभी स्पृहा करें, उसकी ग्रोर ध्यान दें ग्रौर टकटकी लगायें, उससे ग्रच्छा जीवन दूसरा क्या हो सकता है? हमें ग्रपने जीवन को इसी रूप में ढालने का प्रयत्न करना चाहिये।

•

ऊंचा उठना सब कोई चाहता है, मगर उठ नहीं पाता। कारण ढूंढ़ने पर स्पष्ट पता चलेगा कि केवल चाहने भर से कोई काम पूरा नहीं होता। चाह की मंजिल तभी समीप ग्राती है जब उस राह पर चलने का परिश्रम उठाया जाय, स्फूर्ति ग्रौर उत्साह से काम लिया जाय। मानव जीवन पाकर भी हमारा उत्थान नहीं हुग्रा तो इससे बढ़कर दूसरा दुर्भाग्य ग्रौर क्या होगा?

•

ग्राप भौतिक सुख-साधनों को देखकर मन ही मन न ललचायें, तृष्णा ग्रौर स्पृहा न करें। प्राकृतिक सम्पदा ग्रौर बहुविध रंगीनियों के ग्रागे, उनसे मिलने वाले परम सुखों के ग्रागे, ये भौतिक सुख कोई महत्त्व नहीं रखते। नील गगन में पूनम की चान्दनी जैसी ग्राभा बिखेरती है क्या किसी भी गैस या लाइट में वैसी ज्योति कभी सम्भव है? प्रकृति प्रदत्त खुली हवा का ग्रानन्द क्या बिजली के पंखे में पाया जा सकता है? निर्झर के मीठे, शीतल जल जैसा स्वाद क्या कृत्रिम ठंडे पेय पदार्थों में प्राप्त हो सकता है?

•

प्रान्त-प्रान्त की भाषाग्रों ग्रौर लिपि में चाहे जो भी ग्रन्तर हो, रंग ग्रौर वर्ण में चाहे जैसा भी भेद दिखाई देवे मगर हर मानव की मनोभावना एक जैसी ही होती है। भूख, प्यास, सर्दी-गर्मी, हानि-लाभ का ग्रसर ग्रार्य ग्रौर द्रविड़ दोनों पर समान रूप से पड़ता है। सागर में ज्वार ग्रौर भाटा समान रूप से ग्राता रहता है। चाहे वह बंगोपसागर, हिन्द महासागर या ग्ररब सागर ही क्यों न हो? जिस व्यक्ति ने इस भावना को हृदयंगम किया है, इसके महत्त्व को समझा है, वह कभी भेदभाव से काम नहीं लेगा ग्रौर सदा सबको समान मानेगा।

• ग्राचार्य श्री के प्रवचनों से संकलित

आर्य और द्रविड़ की सभ्यता और संस्कृति में चाहे जैसा भेद, ऊंचा-नीचा रूप रहा हो मगर दोनों समाज के जीवन जीने की इच्छा में कोई भेद नहीं रहा होगा। दोनों वर्ग के लोग, सुख शान्ति और आराम को अपने लिए निश्चय ही कल्याणकारक और श्रेयस्कर समझते होंगे। दक्षिण और उत्तर की दूरी दिशा तक ही कायम रही होगी, दोनों दिलों में तो कभी कोई दूरी नहीं रही होगी।

•

आप जहाँ कहीं भी रहें, किसी के प्यार और प्रीति के आगे आपको झुकना ही पड़ेगा। जो कोई भी आपको प्यार देगा, स्नेह देगा, निश्चय ही आप उसके इस स्नेह के आगे अभिभूत हुए बिना नहीं रहेंगे। जननी और जनक हमको बहुत प्यारे हैं, वह इसलिए नहीं कि वे जननी और जनक हैं, बल्कि इसलिए कि उनका सारा प्यार हमारे लिए समर्पित है।

•

जीवन-यात्रा में पद-पद पर पड़ाव आते ही रहते हैं, जहाँ मनुष्य थोड़ी देर ठहर कर आगे की यात्रा निश्चित करता है। ये पड़ाव, जहां हमारी चेतनता को अधिकाधिक संबल और सुविधा प्राप्त हो, हमारे लिए अधिक श्रेयस्कर हैं, बनिस्वत उसके कि जहाँ हम केवल थक कर बैठें और सुस्ती मिटाने में मजा लें।

•

एक दिन संसार से सबको जाना है, अगर आप इस बात को सत्य और दुरुस्त समझते हैं तो क्यों न अपने जीवन को सफल बनाने का सत्प्रयास कर लेते हैं। यात्री अपनी यात्रा के लिए आवश्यक सामग्री संचय कर चलता है। आप भी अपने पाथेय को भली-भांति सहेज लें और तब आगे बढ़ें। ऐसा करने से आपको यात्रा में दुःख नहीं उठाना पड़ेगा।

•

राम और कृष्ण, बुद्ध और महावीर सभी मानव थे और आप भी मानव हैं। फिर क्या कारण है कि लोग आपके प्रति भक्ति और प्रेम नहीं दिखाते? अगर इसका कारण समझ में आता है तो आप भी वैसा ही बनने का प्रयास करें, जैसा उन्होंने किया।

•

धारावाही लेखमाला [१]

श्रावक धर्म : स्वरूप और चिन्तन

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
(उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य)

इस विराट् विश्व में कुछ तत्त्व शाश्वत हैं और कुछ अशाश्वत हैं। धर्म तत्त्व जो कि मोक्ष से सम्बन्धित शाश्वत के संगीत का—मधुरलय है, असंकीर्ण है, सत्यमूलक उच्चतम आदर्शों पर आधारित है, यों यह सत्यप्रधान, सत्कर्म प्रधान एवं सद्गुण अध्यात्म अभियान है। इतना ही नहीं, यह नितान्त लोकजनीन है, जन-जन का है, प्राणिमात्र का है। जीवन में धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जीवन और धर्म एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। धर्म को जीवन से पृथक् नहीं किया जा सकता, क्योंकि धर्म के अभाव में जीवन गतिशील नहीं हो सकता। जीवन में से धर्म को अलग-विलग करने का अर्थ है—आत्मा के अस्तित्व से इन्कार होना। स्पष्ट है कि धर्म जीवन के साथ अनुस्यूत है। अनिवार्य रूप से आराध्य है, साध्य है और सर्वतोभावेन उपादेय है।

श्रावक धर्म वस्तुतः धर्म के उच्चादर्श को जीवन के धरातल पर साक्षात्कार करने की सुन्दर से सुन्दर और सरल से सरल विधि है। दर्शन केवल कल्पना के सौन्दर्य तक सीमित नहीं है, किन्तु वह यथार्थ जीवन से उतना ही सम्बन्ध मानता है जितना कि सहस्रकिरण दिनकर के साथ उसकी रश्मियों का है। दर्शन का सम्बन्ध जीवन के साथ एकाकार हो जाता है। तब उस जीवन में एक अनुपम चमत्कृति समुत्पन्न हो जाती है। धर्म आचार प्रधान है, और आचार का वर्गीकरण भी पाँच प्रकार से हुआ है। उनके नाम ये हैं—

(१) ज्ञानाचार (२) दर्शनाचार (३) चारित्राचार
(४) तपाचार (५) वीयाचार।[1]

हम जब तक आचार अर्थात् धर्म के यथार्थ स्वरूप को नहीं समझ लेते,

१. पंचविहे आयारे पण्णत्ते, तं जहा नाणायारे,
दंसणायारे, चरित्तायारे, तवायारे, वीरियायारे।
—स्थानांग सूत्र—५वां स्थान

तब तक कर्म-बन्धन से उन्मुक्त नहीं हो सकते अथवा मुक्ति के मंगलमय मार्ग पर गतिशील नहीं हो सकते। आत्मा अनादिकाल से अनन्त आधि-व्याधि और उपाधि की दारुण वेदनाओं से संत्रस्त है। अतएव प्रत्येक जीव उन असीम वेदनाओं से मुक्ति चाहता है।[1] जन्म, जरा, रोग, मृत्यु, इत्यादि अनेक असह्य दुःखों से संसारी आत्माएँ संक्लेश पा रही हैं। शरीर एवं शरीर से सम्बन्धित जितने भी विषय हैं, वे दुःखप्रद हैं। आत्मा जब तक अज्ञान के सघन अन्धकार में भ्रमणशील रहता है, तब तक दुःख के कारणों को सुख-शान्ति रूप समझ कर उनका सम्मान करता है किन्तु सम्यग्ज्ञान होने पर वही जीव यह स्पष्ट रूप से समझ लेता है कि शरीर और इन्द्रियों के विषय क्षणमात्र सुख की भ्रान्ति उत्पन्न करते हैं और बहुकाल के लिए दुःखप्रद होते हैं। उनमें सुख अल्प हैं और दुःख अनन्त हैं, वे अनन्त मोक्ष-सुख के प्रतिपक्षी हैं एवं अनर्थों की गहरी खान हैं। ऐसे दुःख पूर्ण कामभोगों से मुक्ति का साधक विरक्त हो जाता है। संसार का मार्ग और मोक्ष का मार्ग इन दोनों में पर्याप्त रूप से अन्तर है। आत्मा जब मुक्तिपथ का पथिक होता है तो संसार के सुखों की ओर पीठ कर देता है।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की समन्वित-साधना को मोक्ष मार्ग कहा है।[2] ये तीनों मोक्ष–प्राप्त करने के प्रमुख कारण हैं, प्रधान साधन हैं। मुक्ति के साधक के लिये ज्ञान, दर्शन जितने अपेक्षित हैं उतना ही चारित्र अपेक्षित है। ज्ञान के द्वारा मुक्त जीव का स्वरूप समझा जाता है तो दर्शन के द्वारा उस पर श्रद्धा विश्वास होता है तथा चारित्र के द्वारा अशुभ का निग्रह एवं तप के द्वारा पूर्ण रूप से विशुद्धि प्राप्त होती है। प्रत्येक कार्य का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। निरुद्देश्य कोई कार्य नहीं होता। आत्मा जब मुक्ति का पथिक होता है तो मुक्ति हो उसका अन्तिम ध्येय है, साध्य है, लक्ष्य है एवं वही आराध्य व अन्तिम विश्रान्ति है। पथिक सदैव पथ पर चलता ही नहीं रहता है, वह मंजिल प्राप्त करने पर विश्रान्ति भी करता है। इसी प्रकार सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र मुक्ति का पथ है, किन्तु उसकी भी एक सीमा है जो कि चरम एवं परम है। यह मुक्ति का पथ आत्मा से कहीं दूर नहीं है और न वह आत्मा से भिन्न है। एक दृष्टि से मुक्ति का पथ व मुक्ति का स्वरूप आत्मा का ही एक विशुद्ध स्वरूप है। अतएव एक मुक्तात्मा और बद्धात्मा में शक्ति एवं अभिव्यक्ति का अन्तर है। जैसे मलयुक्त तन तथा वस्त्र वाले व्यक्ति में एवं स्नानयुक्त व्यक्ति में अन्तर होता है। आत्मा मुक्ति का मार्ग एवं मुक्ति अपने आप में उपलब्ध करता है। क्योंकि

१. उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन १६, सूत्र–१३
२. तत्त्वार्थ सूत्र १/१

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य और उपयोग ये जीव के लक्षण हैं।[1] अर्थात् शुद्धात्मा का अपना स्वरूप है और जो आत्मा का स्वरूप है, वह आत्मा से तादात्म्य सम्बन्ध से रहता है। अतएव उसे बाहर ढूँढ़ना सर्वथा व्यर्थ है।

इस दृष्टि से श्रमण भी मुक्ति-मार्ग का पथिक है और श्रावक भी मुक्ति मार्ग का पथिक है। दोनों में इतना ही अन्तर है कि एक अपनी सम्पूर्ण शक्ति व सम्पूर्ण समय अध्यात्म-साधना में समर्पित करता है किन्तु द्वितीय आंशिक समय के लिये साधना में अपनी शक्ति लगाता है। अतएव प्रथम को सर्व-विरत एवं द्वितीय को देश-विरत कहा जाता है। किन्तु दोनों के ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप व वीर्य आदि मुक्ति मार्ग और साधन में एकता है, दोनों के साध्य, साधन एक हैं। जैसे दो पथिक एक पथ पर चलते हैं। चाहे उनमें एक वायुयान से चले, और दूसरा बैलगाड़ी या पैदल यात्रा करे किन्तु ये दोनों एक लक्ष्य व एक मंजिल पर पहुँचने के इच्छुक हैं, तो वे एक ही पथ के पथिक कहे जाते हैं। ऐसे ही श्रमण और श्रावक दोनों ही एक मुक्तिमार्ग के पथिक कहलाते हैं।

जैन धर्म में 'श्रावक' शब्द उस विशिष्ट व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है जो कि धर्म की आंशिक रूप से साधना करता है। धर्म के मुख्य भेद दो हैं[2]—श्रुत धर्म और चारित्र धर्म। उसमें प्रथम श्रुतधर्म के दो प्रकार हैं—सूत्र रूप श्रुतधर्म और अर्थ रूप श्रुतधर्म। तदनन्तर द्वितीय चारित्र धर्म के दो भेद किये हैं—आगार चारित्र धर्म और अनगार चारित्र धर्म। आगार का अर्थ होता है गृह। जो व्यक्ति गृह में रहता हुआ धर्म की साधना करता है, उसके धर्म को आगार चारित्र धर्म कहते हैं। इसीलिये 'श्रावक' का एक पर्यायवाची शब्द 'आगारिक' भी होता है। श्रावक शब्द के लिये 'श्रमणोपासक' शब्द भी प्रयुक्त हुआ है। 'श्रावक' शब्द 'श्रृ' धातु से निष्पन्न हुआ है। उसका अभिप्राय है—श्रद्धापूर्वक निर्ग्रन्थ प्रवचन सुनने वाला। किन्तु श्रावक केवल सुनता ही नहीं, यथाशक्ति उसका आचरण करता है। 'श्रावक' शब्द के तीन अक्षरों का अभिप्राय इस प्रकार है—'श्रा' का अर्थ है—श्रद्धापूर्वक तत्त्वार्थ श्रवणकर्ता। 'व' का अर्थ है—सत्पात्रों में अशन, पान आदि दान रूप बीज का वपन करने वाला एवं 'क' का अर्थ है—सुसाधु की सेवा द्वारा पापकर्म दूर करने वाला। इस प्रकार संक्षिप्त में 'श्रा' श्रद्धावान्, 'व' विवेकी और 'क' क्रियावान्। यह तीनों अक्षरों का

---

१. उत्तराध्ययन सूत्र २८/११
२. दुविहे धम्मे पण्णत्ते सुयधम्मे चेव चारित्त धम्मे चेव

—स्थानांग सूत्र, स्थान-२

तात्पर्य है।[1] 'श्रावक' शब्द के श्रमणोपासक, आगारिक, देशविरति, इत्यादि अनेक पर्यायवाची शब्द हैं।

श्रावक-जीवन एक अतीव विशिष्ट जीवन है। यह जीवन मानव को जन्म से प्राप्त नहीं होता अथवा किसी श्रावक के कुल में जन्म लेने से कोई श्रावक नहीं कहला सकता। चाहे नाम से वह श्रावक कहा भी जाये, धर्म से वह श्रावक नहीं हो सकता। अतएव श्रमण की भांति श्रावक धर्म की प्रतिज्ञाएँ की जाती हैं। श्रावक धर्म की प्रतिज्ञा ग्रहण करने पर उसको नव जीवन प्राप्त होता है। अतः उसका नया जन्म माना जाता है। वह श्रमणोपासक जीव-अजीव का ज्ञाता होता है। पुण्य-पाप को समझ कर अपने योग्य कर्म करता है। उसका जीवन विश्वासपात्र होता है। दानपात्र के लिये उसका गृह-द्वार सदा अनावृत रहता है। यदि वह राजाओं के अन्तःपुर में भी प्रवेश करे, तो उसके चारित्र के प्रति सभी का आदर व विश्वास होता है। वह श्रमण-निर्ग्रन्थों को असन, पान, खादिम, स्वादिम, आहार, वस्त्र, पात्र, निवासार्थ मकान, कम्बल, पादपीठ, औषधि आदि चौदह प्रकार का दान करके उनकी पर्युपासना करता रहता है। अतएव उसका 'श्रमणोपासक' नाम एक सर्वथा-सार्थक नाम है श्रावक की द्वादश प्रकार की प्रतिज्ञाएँ हैं, उसका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है—

१. अहिंसा व्रत की प्रतिज्ञा—

प्रथम अहिंसा व्रत में श्रावक स्थूल-प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता है। यह प्रत्याख्यान यावज्जीवन के लिये दो करण, तीन योग से किया जाता है। अर्थात् निरपराध त्रस जीव की हिंसा वह मन, वचन व काया इन तीन योगों से न करता है, न कराता है। प्रथम अहिंसा व्रत का नाम 'स्थूल-प्राणातिपात विरमण' है। इसका एक विशेष तात्पर्य है। क्योंकि जीव तो त्रिकाल शाश्वत, अजर, अमर ध्रुव तत्त्व हैं। उसका कभी अतिपात अर्थात् मृत्यु नहीं हो सकती। अतः हिंसा करने वाला व्यक्ति जीवातिपात नहीं कर सकता, किन्तु जीव के साथ जो शरीर, इन्द्रियाँ आदि दस प्राण हैं, उन्हीं को अलग करता है। 'स्थूल' का तात्पर्य यहाँ पर निरपराध त्रस जीव की हिंसा से है। क्योंकि जीव दो प्रकार के हैं। त्रस एवं स्थावर। इनमें से श्रावक स्थावर अर्थात् पृथ्वी, अप्प, अग्नि,

---

१. श्रद्धालुतां श्राति पदार्थ चिन्तनाद्,
धनानि पात्रेषु वपत्यनारतम्।
किरत्यपुण्यानि सुसाधुसेवनाद्,
दत्तोऽपि तं श्रावक माहुरूत्तमा।

—श्राद्धविधि शा. श्लोक—३

वायु एवं वनस्पति इन एकेन्द्रिय जीवों की हिंसा का त्याग नहीं कर सकता। क्योंकि वह भिक्षा के द्वारा उदर-पोषण नहीं करता है। अतः वह अन्नोत्पादन के लिये खेती करता है, उपवन लगाता है, कूप खुदवाता है, महल-भवन बनाता है, भोजन बनाता है, विवाह आदि प्रसंगों में प्रीतिभोज आदि कार्य करता है। इनमें एकेन्द्रिय जीवों की हिंसा अवश्यम्भावी है। अतएव वह त्रस जीव अर्थात् द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय व पंचेन्द्रिय जीवों की हिंसा का त्याग करता है।

पाँच अतिचार—

गृहस्थ श्रावक को सावधानी रखने पर भी कभी-कभी प्रमाद या अज्ञान के कारण दोष लगने की संभावना रहती है। ऐसे दोष अतिचार कहे जाते हैं। स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत के मुख्य अतिचार पाँच हैं।

१. **बन्ध**—किसी त्रस प्राणी को कष्ट देने वाले बन्धन में बाँधना, उसे अभीष्ट स्थान पर जाते हुए रोकना। अपने अधीन जो व्यक्ति हैं, उन्हें निर्दिष्ट समय से अधिक रोककर उनसे सीमा-अधिक कार्य लेना आदि भी बन्ध के ही अन्तर्गत है। यह बन्धन शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक आदि विविध प्रकार का है।

२. **वध**—किसी भी त्रस प्राणी को मारना वध है। अपने अधीनस्थ व्यक्तियों को या अन्य प्राणियों को लकड़ी, चाबुक या पत्थर आदि से मारना, उन पर अनावश्यक आर्थिक भार डालना, किसी की भी लाचारी का अनुचित लाभ उठाना, अनैतिक दृष्टि से शोषण कर उससे लाभ उठाना आदि वध के अन्तर्गत हैं। जिस कार्य से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप त्रस प्राणियों की हिंसा होती है, वह वध है।

३. **छविच्छेद**—किसी प्राणी के अंगोपांग काटना। छविच्छेद के समान वृत्तिछेद करना भी अनुचित है। किसी की सम्पूर्ण आजीविका का छेद करना अथवा उचित पारिश्रमिक से कम देना भी छविच्छेद के सदृश ही दोषयुक्त है।

४. **अतिभार**—बैल, ऊँट, घोड़ा, प्रभृति पशुओं पर या अनुचर अथवा कर्मचारियों पर, उनकी शक्ति से अधिक बोझ लादना अतिभार है। किसी की शक्ति से अधिक कार्य करवाना भी अतिभार है।

५. **भक्तपान-विच्छेद**—समय पर भोजन, जल आदि न देना, नौकर आदि को समय पर वेतन आदि न देकर उसे कष्ट पहुँचाना, ये सब बातें भक्तपान विच्छेद के अन्तर्गत परिगणित होती हैं।

श्रमण सर्वविरति साधक होता है। उसकी अहिंसा परिपूर्ण होती है। वह त्रस व स्थावर दोनों प्रकार के जीवों की हिंसा का त्याग करता है। श्रावक त्रस जीवों की हिंसा का ही त्याग करता है। अतएव बीस बिस्वा की अहिंसा में

दस बिस्वा की अहिंसा कम हो गई। त्रस की अहिंसा में भी दो भेद हैं—आरम्भजा और संकल्पी। श्रावक संकल्पी हिंसा का त्याग कर सकता है किन्तु खेत खोदते, मकान बनाते इत्यादि कार्य करते समय अनजान में त्रस की हिंसा हो सकती है। अत: वह आरम्भजा हिंसा का भी त्याग नहीं कर सकता। स्थावर का आरम्भ करते समय त्रस की हिंसा अवश्यम्भावी है। अतएव दस में पाँच विश्वा कम हुए। आरम्भजा हिंसा के दो भेद हैं—सापराधी और निरपराधी। श्रावक केवल निरपराधी त्रस जीव की दया पालता है। क्योंकि वह चोर को, हत्यारे को यथोचित दण्ड दे सकता है। महाराजा चेटक एवं उनके सैनिक वरुण नागनटुवा ने युद्ध किया था।[१] अत: पाँच विस्वा अहिंसा में ढाई विस्वा अहिंसा और भी कम हो गई। निरपराधी की हिंसा के भी दो भेद हैं—सापेक्ष और निरपेक्ष। अर्थात् सकारण और अकारण। सप्रयोजन एवं निष्प्रयोजन। श्रमण दोनों प्रकार की अहिंसा का पालन करता है। किन्तु श्रावक निष्प्रयोजन अहिंसा का पालन कर सकता है। सप्रयोजन अहिंसा का नहीं। जैसे हाथी को चलाते समय अंकुश लगाते हैं, घोड़े को चाबुक, बैल को दण्ड प्रहार करते हैं। अपने पारिवारिकजन एवं गाय, बैल आदि—पशु के शरीर में कृमि उत्पन्न होते हैं तो उनको औषध प्रयोग से दूर करते हैं, इससे ढाई विस्वा अहिंसा में भी उसके सवा विस्वा अहिंसा शेष रहती है। किन्तु जब कभी श्रावक सामायिक व्रत या प्रतिपूर्ण पौषध आदि विशेष प्रतिज्ञा ग्रहण करता है तो उस समय कुछ समय के लिये वह श्रमणवत् परिपूर्ण अहिंसा का भी पालन कर सकता है। इसलिये उसकी अहिंसा भी देशविरति की अहिंसा है। [क्रमश:]

चिन्तन-कण

□ श्री कुन्दन सुराणा

(१) औरों के दोष गिनने-गिनाने से, अपने दोष कम नहीं होते।
(२) विश्वास औरों से मांगने से नहीं, अपने स्वयं के व्यवहार से मिलता है।
(३) प्रतिवादी जिसे छपवाना चाहता है, वादी उसे छिपाना चाहता है।
(४) औरों के दोषों को उछालना व स्वयं के दोषों को छिपाना आज की नेतागिरी है।
(५) क्षय होने वाले शरीर व साधन से अक्षय सुख कैसे मिलेगा?
(६) चोर कैसे पकड़ा जाएगा, अगर पकड़ने वाला ही चोर हो।
(७) मन में जहर नहीं तो बाहर भी जहर नहीं।
(८) व्यवहार [नीयत] शुद्धि के बिना, सभी धार्मिक क्रियाएँ अधूरी हैं।

—८, सत्यनारायण मार्ग, पाली

१. भगवती सूत्र

'जिन' को नमन

□ वर्षा सिंह

धर्माराधन करो,
मन को पावन करो।
'जिन' वचन का मनुज !
तुम यूं पालन करो ॥

धर्म के अंग दो—
श्रुत है, चारित्र है।
धर्म ही तो हमारा,
परम मित्र है।

धर्म पथ पर चलो,
तप का साधन करो।
'जिन' वचन का मनुज !
तुम यूं पालन करो ॥

मोक्ष ही लक्ष्य हो,
अब हर कर्म का।
ज्ञान हो प्रज्वलित,
धर्म के मर्म का।

धर्म का ध्वज लगा,
सत् का वाहन करो।
'जिन' वचन का मनुज !
तुम यूं पालन करो ॥

त्याग हिंसा अहित,
जिन को करके नमन।
"वर्षा" कर लें हम,
अब क्षमा को ग्रहण।

धर्म - जल में नहा,
व्रत को धारण करो।
'जिन' वचन का मनुज !
तुम यूं पालन करो ॥

—एफ-३६, एम. पी. ई. बी. कॉलोनी
मकरोनिया, सागर-४७०००४ (म. प्र.)
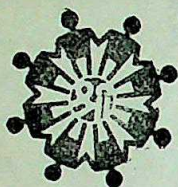
लोग देखते रह गये उसे !

☐ मिट्ठालाल मुरड़िया

हे मरुधरा तू धन्य है ! तेरे कण-कण में, ऊँची-ऊँची मीनारों में, स्तूपों में, गुम्बजों में और गवाक्षों में—शौर्य, संस्कार, सभ्यता, संस्कृति, सद्भाव और सौजन्य बिखरा हुआ है—जो पेड़-पौधों में, खेतों-खलिहानों में, फूलों-फलों में, गिरजाघरों, मन्दिरों, मस्जिदों और लोक जीवन की लहरों में उभर रहा है ।

तेरी धरती पर एक फकीर आया था । उसके पास कोई जादू-[illegible] और कोई चमत्कार नहीं था, था केवल ऊँचा आत्मबल, संयम-साधना, अटल साहस, अदम्य विश्वास, अपार उत्साह, धर्मनिष्ठा और निर्भीकता ।

उसके व्यक्तित्व का तेज, साधना की प्रखरता और उसके मुखमण्डल की आभा चमकती रही । लोग उसे देखते रहे ।

उसमें एक विशिष्टता थी । वह अपने सतत स्वाध्याय में लगा रहा और साहित्य-निर्माण करता रहा । उसकी साधना खूब फूली-फली । जहाँ-जहाँ वह गया, जहाँ-जहाँ वह ठहरा, चला, फिरा, सोया, बैठा, सत्संग किया, सब धन्य हो गये ।

देश की धरती पर जहाँ-जहाँ उसके पाँव पड़े, उसकी वाणी मुखरित हुई, जहाँ-जहाँ पवन टकराया, पेड़-पौधे, नदी-झरने स्पर्श हुए, विस्तृत फैली हुई मैदानी तलहटियों, भवनों के भग्नावशेषों और महलों से गुजरे-लोग उसे देखते रह गये ।

उसकी दिव्य प्रभा से, अनूठी प्रज्ञा से, निष्काम समर्पण से, निस्वार्थ मनोदशाओं से, संकल्पों और अनुष्ठानों से, आनन्द लहराने लगा, हर्ष हँसने लगा । लोग उसे देखते रहे ।

सर्वत्र शंख बज उठे, शहनायियाँ निनादित होने लगीं, मृदंग और दमामें महाघोष करने लगे, वीणा के तार झंकृत हो उठे । एक स्नेह उमड़ा, प्रेम जगा, भाव-विह्वलता बढ़ी, सौजन्य और मैत्री, आन, बान और शान में समा गयी । उसकी जिन्दादिली, लगन, कार्य और स्वभाव को लोग देखते रह गये ।

यह कौन था ? क्या था ? उसने क्या किया ? कहाँ-कहाँ गया ? प्रतिफल में क्या लिया ? हमारी आँखें खोलने के लिए और हमारे कायाकल्प के लिए यह सब समय बतायेगा, इतिहास बोलेगा।

यह चतुर चितेरा, ज्ञान का महाधनी, दर्शन का महाकाव्य, चारित्र्य का महागौरव, चतुर्विध संघ का उज्ज्वल नक्षत्र—उसकी ध्वनि गूंज उठी। बोला—मुझे जल्दी जाना है। जाने की मेरी पूरी तैयारी है। भारी जमघट लगा, भक्तों की भीड़ में चल दिया वह फकीर, किसी को पता ही नहीं चल सका। पंछी उड़ गया, लोग देखते रह गये।

ये हैं हमारे कोटिशः वन्दनीय प्रतापी संत, कीर्ति पुरुष, युगस्रष्टा आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.।

वे कालजयी हैं, सतचित आनन्द विजयी हैं, मृत्युंजयी हैं। जाते-जाते उनकी उद्घोषणा थी—

'सुखी रहें सब जीव जगत के'

लोग देखते रह गये।

—श्री ह. मु. जैन छात्रावास, २०, प्रीमरोज रोड, बेंगलोर-५६००२५

व्यर्थ है

□ सीमा कुचेरिया

गुण न हो तो रूप व्यर्थ है,
उपयोग न आये तो धन व्यर्थ है।
भूख न हो तो भोजन व्यर्थ है,
परोपकार न करने वाले का तो जीवन ही व्यर्थ है।
विनम्रता न हो तो विद्या व्यर्थ है,
साहस न हो तो हथियार व्यर्थ है।
होश न हो तो जोश व्यर्थ है।

—द्वारा श्री पारसमल कुचेरिया,
२०३३, रामललाजी का रास्ता, पीतलियों का चौक,
जौहरी बाजार, जयपुर-३०२००३
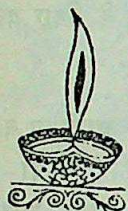
दूरदर्शी एवं मर्मज्ञ आचार्य श्री हस्ती

☐ कुमारी अनुपमा कर्णावट

'गुरु हस्ती के दो फरमान—सामायिक, स्वाध्याय महान् ।' बाल्यकाल से ही धार्मिक संस्कारयुक्त माहौल में रची-बसी होने से ये पंक्तियाँ मेरे लिए अपरिचित कभी नहीं रहीं, किन्तु मेरा अपरिपक्व मस्तिष्क उस समय कदाचित इन दो महामंत्रों से इतना प्रगाढ़ सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाया जो मुझे इनके मूल स्वरूप, इनकी विरासत व इनके मर्म से परिचित करवा सकता जैसा कि मैं आज महसूस करती हूँ । सामायिक के उद्देश्य की मूल भावना तो फिर भी स्पष्ट थी किन्तु स्वाध्याय की सारगर्भिता एक लम्बे समय तक मेरे लिए अगम्य रही । नहीं जानती थी मैं कि इस छोटे किन्तु भव्य शब्द के ताने-बाने इतनी प्रगाढ़ता से जुड़े हैं कि कालान्तर में ये धर्म की नींव बन कर संस्कारों के अटूट प्रस्तर का रूप धारण कर लेते हैं । सम्भवतः इसीलिए युगप्रणेता, धर्ममूर्ति परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्ती इसकी सतत प्रेरणा का बीज जन-जन में अंकुरित किया करते थे जो कालान्तर में धर्म के गहन वट-वृक्ष में बदल कर समाज में अपनी जड़ें मजबूत करने में सक्षम होता था ।

स्वाध्याय अर्थात् स्वयं अध्ययन करना । दूसरे शब्दों में प्रभु की वाणी का अध्ययन कर उसके अनुसार आत्म-चिन्तन करना । स्वाध्याय में 'स्व' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । वर्तमान भौतिकवादी मानव हेतु जो अपने समस्त कार्य 'स्व' के प्रयोजनार्थ सिद्ध करता है, यह 'स्व' अत्यन्त प्रेरणास्पद है ।

आचार्य श्री हस्ती दूरदर्शी एवं मर्मज्ञ थे और वे समाज की नब्ज से भली-भांति परिचित थे । वे जानते थे कि मानव के चंचल मन में वे ही प्रवृत्तियां अमिट प्रभाव अंकित करती हैं जिनका प्रेरणास्रोत स्वयं उनका अंतर्मन हो । अतः धर्म के प्रासाद की नींव उन्होंने उपदेशों से डालने की बजाय स्वाध्याय के प्रथम पाषाण से निर्मित करना सहज माना ।

प्रारम्भ में जब मानव स्वाध्याय करना शुरू करता है तो सामान्यतः उसका उद्देश्य व्यापक नहीं होता । वह सहज भाव से गुरु-भक्ति के आकर्षण की डोर से बंधकर मात्र उनके कथनानुसार स्वाध्याय शुरू करता है न कि धर्म का ज्ञान प्राप्त करके वैसा आचरण करने की प्रवृत्ति का इच्छुक होकर । किन्तु यही

जाने-अनजाने में उसके धार्मिक जीवन की शुरुआत हो जाती है और उसके गुरु का कर्तव्य स्वतः ही पूर्णता की ओर अग्रसर हो जाता है। अध्ययन करते-करते उसमें स्वाध्याय के प्रति रुचि बढ़ने लगती है व उसका जिज्ञासु मस्तिष्क जो ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट देन है, धर्म का मर्म जानने को आतुर हो उठता है। यहाँ औपचारिकता का स्थान जिज्ञासा ले लेती है यद्यपि श्रद्धा का प्रादुर्भाव अगले चरणों में होता है।

आंधियाँ चाहे उठाओ, बिजलियाँ चाहे गिराओ।
जल गया है दीप तो, अंधियारा ढल कर रहेगा।।

शनैः-शनैः ज्यों-ज्यों धर्म के रहस्य उसके आगे अनावृत्त होने लगते हैं, त्यों-त्यों उसके विवेक-चक्षुओं पर बंधी भौतिकता की पट्टी खुलने लगती है। वह अध्यात्म के शाश्वत सत्यों से अवगत होने लगता है। उसके मस्तिष्क में बना भ्रामक कल्पनाजाल विच्छिन्न होने लगता है और वह 'नीर-क्षीर-विवेकी' दृष्टि का स्वामी बनता जाता है। मस्तिष्क के परिष्कृत होने के साथ-साथ कलुषित विचारों पर सद्प्रवृत्तियाँ हावी होने लगती हैं जो उसकी जीवन-धारा को स्वच्छ, पवित्र और निर्मल बनाती हैं। तब जन्म लेते हैं कुछ प्रश्न—मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? मेरा उद्देश्य क्या है? इत्यादि-इत्यादि। और इनके समाधान हेतु उसे एक ही मार्ग नजर आता है धर्म का। जैसे ही वह इस मार्ग पर चल पड़ता है, उसकी समस्त भौतिकवादी, कष्टकारी प्रवृत्तियों की चिता जलने लगती है। और अन्त में बची रहती है पवित्र, शुद्ध भस्मी जो आत्मा का उद्धार करती है।

स्वाध्याय को ध्याय कर, ज्ञात हुआ सब मर्म।
धर्म की स्निग्ध ज्योति से, दूर हुए सब भ्रम।।

इस प्रकार दिन में आधा घण्टा स्वाध्याय करने की प्रेरणा मात्र औपचारिकता नहीं होती वरन् इसका उद्देश्य एक ऐसी धार्मिक यात्रा की शुरूआत करना होता है जो भले ही सदैव अपने अंतिम पड़ाव मोक्ष तक नहीं पहुँच पाए किन्तु प्रेरणा की मशाल बनकर अपने दिव्य आलोक से भावी मार्ग अवश्य प्रशस्त कर देती है और अतीत के गाँव में छोड़ देती है अपने पदचापों की आहट, जो औरों के लिए मोक्ष की पगडण्डी बन जाती है।

इस प्रकार धीरे-धीरे स्वाध्याय की अवधि स्वतः ही बढ़ती जाती है और यह प्रवृत्ति सहज ही निवृत्ति की ओर अग्रसर कर देती है। किन्तु उसके व्यापक प्रसार के लिए आवश्यकता है तो जन-जन में केवल इसकी रुचि जाग्रत करने की जिसकी सतत प्रेरणा की मशाल तो गुरु हस्ती जला गए हैं, किन्तु उसे थाम कर

उसका आलोक सर्वत्र हमें ही प्रस्तुत करना है और निःसंदेह ऐसा करके हम सदैव स्वयं को उस मृत्युंजयी महासंत के वरद-हस्त की छत्र-छाया तले ही पायेंगे क्योंकि—

स्वाध्याय से हस्ती है, हस्ती से स्वाध्याय ।
दीपज्योत, चकोर चाँद ज्यूं, इक दूजे के ये पर्याय ।।

तो आइये, हम सभी मिलकर इसी क्षण से स्वाध्याय का समावेश अपने जीवन-अध्याय में करें ताकि एक नई अलख हम जगा सकें और हमारे नेत्रों से दूर किन्तु हृदय-सिंहासन में विराजमान, चिर निद्रा में लीन उस महा मानव की पुण्य आत्मा भी कदाचित् हमें देख गौरवान्वित हो सके ।

गतिशील करो चरणों को, मंजिल पास नहीं है,
कालचक्र गतिमान, किसी का दास नहीं है ।
जीवन की हर सांस, सार्थक कर डालो तुम,
सांसों पर पल भर भी विश्वास नहीं है ।।

—आत्मजा श्री मनमोहनजी कर्नावट
विनायक 11/10-21, राजपूत होस्टल के पास
पावटा 'बी' रोड, जोधपुर

एक जनवरी से 'जिनवाणी' पत्रिका के शुल्क में वृद्धि

वर्तमान कागज की महंगाई और पोस्टेज दरों में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण "जिनवाणी" पत्रिका के शुल्क में बढ़ोतरी करने का निर्णय लिया गया । यह बढ़ोतरी (नया शुल्क) दिनांक १ जनवरी, १९९२ से प्रभावी होगी—

क्र.सं.	विवरण	वर्तमान शुल्क	संशोधित शुल्क
१.	स्तम्भ सदस्यता	रु. १,००१/-	रु. २,०००/-
२.	संरक्षक सदस्यता	रु. ५०१/-	रु. १,०००/-
३.	आजीवन सदस्यता (देश में)	रु. २५१/-	रु. ७५०/-
४.	आजीवन सदस्यता (विदेश में)	रु. ७५१/-	डालर १००/-
५.	त्रिवार्षिक सदस्यता	रु. ५५/-	रु. ८०/-
६.	वार्षिक सदस्यता	रु. २०/-	रु. ३०/-

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार

□ श्री हीरालाल गाँधी 'निर्मल'

जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार, वन्दन अभिनन्दन बार-बार,
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार, जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार।
हे युग-स्रष्टा, जीवन-द्रष्टा, हे महामानव, हृदय-हार,
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार-२

हे महात्मा, हे आध्यात्मिक, सन्त, ऋषि, मुनि, ज्ञानी,
हे महान् आचार्य, संयमी, साधक, मौनी, ध्यानी।
हे परम श्रद्धेय, जागरूक, मृत्युंजय, अवधानी,
हे आत्मलीन, हे क्षमाशील, हे महाभेद-विज्ञानी ।।

हे निर्लेपी, हे निर्द्वंद्वी, हे समभावी, हे उदार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार................................।। १ ।।

हे निर्मल मन, हे जीवन-धन, श्रमण-शुद्ध-आचारी,
जैन-जगत् के सूर्य अलौकिक, सुखद, शान्त, मनहारी।
सागर सम गम्भीर, समन्वयकारी, परउपकारी,
पर्वत सम ऊँचाई, महके जीवन की फुलवारी ।।

हे तपस्वी, हे यशस्वी, दिव्य-पुरुष, हे निर्विकार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार................................।। २ ।।

हे ज्योतिर्धर, ज्योति-पुंज, हे शशि सम शीतल योगी,
सामायिक स्वाध्याय के प्रेरक, जगमग जीवन-ज्योति।
हे इतिहास पुरुष, कवि, लेखक, हे जग विरल विभूति,
सम्प्रदाय–सौहार्द व समता की थी शान्त मूर्ति ।।

हे तेजस्वी, हे ओजस्वी, निडर, निस्पृही तव विचार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार................................।। ३ ।।

हे श्रमण संस्कृति के गौरव, तुम प्रकाश-स्तम्भ समान,
ज्ञान-क्रिया के समवायी, हे आगम-ज्ञान, क्रिया के धाम।
जिन शासन की तुम प्रभावना करते, बुद्धिमान, विद्वान्,
आगम के ज्ञाता-व्याख्याता, ज्ञान-दीप से दैदीप्यमान ।।

हे महात्यागी, जन-अनुरागी, तेरी महिमा है अपार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार................................।। ४ ।।

करुणा-सागर, सौम्य-प्रकृति, दूरदर्शी और चारित्रवान,
सरल, सादगीमय जीवन, साधक, प्रेरक थे वे मतिमान ।
हे समाज-स्तम्भ, किये तुमने जन-हित के कई काम,
सबको अहिंसा-धर्म से जोड़ा, अमर रहेगा तेरा नाम ।।

कोमल वक्ता, एक संस्था, जैन-धर्म का किया प्रसार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार..............................।। ५ ।।

धन, विद्या, श्रम, शासन जोड़ा, संस्था एक बनाई,
अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् हमने पाई ।
धनवान जुड़े, विद्वान् जुड़े, कार्यकर्त्ता, अधिकारी,
दिया मार्गदर्शन सबको ही, महा समन्वयकारी ।।

युवा-शक्ति, नारी-शक्ति का, संगठन करते कर विहार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार..............................।। ६ ।।

जीव-दया, स्वधर्मी सेवा, इनका कोष बनाया,
धर्म-सहिष्णु, संस्कृत, प्राकृत का अध्ययन करवाया ।
शोध-कार्य पर जोर दिया, भंडारों को खुलवाया,
सर्वेक्षण कर, प्रेरक बनकर, इतिहास लिखवाया ।।

हे ग्रंथकार, आगम-प्रचार, किया जीवन भर, हे गुणाधार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार..............................।। ७ ।।

सरस्वती के पुत्र, तुम्हारी कृतियाँ सभी निराली,
दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और जैनाचार्य चरितावली ।
प्रश्न व्याकरण, नन्दीसूत्र, फिर अंतगड़ की व्याख्या की,
आत्म-जागरण के पद लिखकर, जन-जन की सेवा की ।।

साहित्यकार, तेरे विचार, सब आगम के हैं अनुसार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार..............................।। ८ ।।

है धन्य-धन्य पावन जीवन, पद-चिह्न तुम्हारे प्रेरक हैं,
भौतिक-तन के नहीं, यश-तन के, इक सदा प्रकाशित दीपक हैं ।
मर करके भी तुम अमर बने, इतिहास सदा गुण गायेगा,
जैन गगन का ज्योतिर्मय नक्षत्र चमकता जायेगा ।।

तेरी वाणी, जग-कल्याणी, दर्शन, ज्ञान, चारित्राचार—
जैनाचार्य हस्ती जय, नमस्कार..............................।। ९ ।।

—रेलवे सीनियर हायर सैकण्डरी स्कूल, आबू रोड, (राजस्थान)

वयोवृद्ध समाजसेवी, शिक्षा-सेवानुरागी का मार्मिक पत्र

आचार्य श्री के विचारों को घर-घर पहुँचाया जाये !

८७, विक्टोरिया लेआउट
बैंगलोर–५६००४७
दिनांक ६–१०–१९९१

मान्यवर डॉ० नरेन्द्रजी भानावत,
महामंत्री श्री अ० भा० जैन विद्वत् परिषद्, जयपुर
सादर जयवीर।

आपका पत्र मिला। पत्र पढ़ते ही ऐसी तीव्र भावना जागृत हुई कि मैं अभी ही आपके पास पहुँच जाऊँ।

जीवन के गत ६० वर्षों के सक्रिय रूप से कार्य करते कभी यह नहीं सोचा था कि रीढ़ की हड्डी की पीड़ा कार्य करने में बाधक बनेगी। अतएव इच्छा होते हुए भी शरीर से जोधपुर में आयोजित विद्वत् संगोष्ठी में भाग लेने के लिए पहुँचने में असमर्थ हूँ, किन्तु मन आपके पास है। आचार्य श्री हस्ती-मलजी म० सा० के सम्बन्ध में अपनी भावनाएँ किन शब्दों में व्यक्त करूँ ? मुझे दुःख है कि परिषद् के एक पदाधिकारी के नाते इन दिनों कोई सेवा नहीं कर सका।

सन् १९२८–२९ में जब मैं जयपुर में जैन ट्रेनिंग कॉलेज में पढ़ता था, उस समय आचार्य श्री के सम्पर्क में आने का मुझे अवसर प्राप्त हुआ। वह सम्पर्क वर्षों से कभी कहाँ, कभी कहाँ निरन्तर बढ़ता रहा।

आचार्य श्री की प्रेरणा से ही इन्दौर में विद्वत् परिषद् की स्थापना हुई थी, तब से अब तक उनके ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य से लाभान्वित होते हुए परिषद् के कार्य को आगे बढ़ाया।

पीपाड़ में आपके साथ आचार्य श्री के अन्तिम दर्शन किये थे और कई प्रश्नोत्तर किये, समुचित समाधान पाया था। उस समय एक प्रबल भावना उठी थी कि वर्तमान युग में आचार्य श्री की विचारधारा के अनुरूप जैन विश्वविद्यालय और स्वाध्यायपीठ की स्थापना की जानी चाहिए। समाज के जितने भी स्कूल और कॉलेज हैं, उनमें योग्य और संस्कारशील अध्यापकों को अच्छा वेतन देकर नियुक्त किया जाये। वर्तमान पद्धति में आमूल परिवर्तन कर शिक्षा के क्षेत्र को स्वच्छ और निर्मल बनाया जाये ताकि आचार्य श्री के विचारों को क्रियान्वित किया जा सके।

इसमें कोई शक नहीं कि आचार्य श्री ने जिस उद्देश्य से संयम-साधन का संकल्प लिया था, उसे अन्त तक पूर्ण रूप से निभाया तथा ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य का पालन करते हुए मोक्ष मार्ग का अनुसरण किया।

विशेष नहीं लिखकर आचार्य श्री के चरणों में अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए चाहता हूँ कि शास्त्रोद्धार का जो कार्य उनके द्वारा हुआ, उसे और आगे बढ़ाया जाये। उनकी भावना के अनुरूप 'उत्तराध्ययन सूत्र' को सभी भाषाओं में गीता की तरह घर-घर पहुँचाया जाये।

उनकी स्मृति में एक आश्रम भी स्थापित किया जाये। ईसाई मिशनरी की भांति अपने जीवन को समर्पित करने वाले विद्वानों को सभी सुविधाओं के साथ पर्याप्त द्रव्य देकर रखा जाये, साथ ही एक मण्डल भी बनाया जाये।

मैं बड़े आनन्द का अनुभव करता हूँ कि आपने प्रारम्भ से अब तक विद्वत् परिषद् के कार्य को, उसकी कई प्रवृत्तियों को सार्थक बनाया है। आपने ही नहीं, आपके परिवार ने व अन्य विद्वानों ने भी इसमें पूर्ण योग दिया है। आप सभी का यह योग विद्वत् परिषद् के इतिहास में स्मरणीय रहेगा। आप जैसे दस परिवार इस कार्य में लग जायें तो बहुत बड़ा कार्य आसानी से हो सकता है। आपकी लेखनी में, वक्तृत्व कला में और जैन धर्म के गहरे ज्ञान में वह शक्ति है कि आप आचार्य श्री की विचारधारा को अवश्य ही साकार बना सकेंगे। हम सब आपके साथ हैं।

आचार्य श्री के भक्त क्रियाकाण्डी नहीं हैं। कई जैन-अजैन, सरकारी और गैर सरकारी ऊँचे पदों पर आसीन हैं। वे भी आचार्य श्री के विचारों का देश-विदेश में प्रचार करना चाहते हैं। यह आचार्य श्री के प्रति गहरी श्रद्धा और भक्ति का परिणाम है।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि आचार्य श्री के किये हुए कार्यों को सुन्दर रूप देकर—उसे घर-घर पहुँचाया जाये ताकि सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव करते हुए व्यक्ति अपने जीवन को सफल बनावें।

आचार्य श्री हीराचन्दजी म० सा० और उपाध्याय श्री मानचन्दजी म० सा० के चरणों में मेरी वन्दना अर्ज करें।

मैं आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के व्यक्तित्व एवं कृतित्व सम्बन्धी विद्वत् संगोष्ठी की सफलता चाहता हूँ। विद्वत् परिषद् के सभी सदस्यों को सस्नेह स्मरण कर मेरा अभिवादन कहें।

भवदीय

जोधराज सुराणा

उपाध्यक्ष, श्री अ० भा० जैन विद्वत् परिषद्
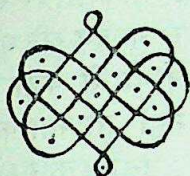
असीम आत्मशक्ति के धनी हस्ती

☐ भंडारी सरदारचन्द जैन

खुश जमालों की याद आती है,
बेमिसालों की याद आती है।
जाने वाले नहीं आते हैं,
पर जाने वालों की सदैव याद आती है ।।

इसी कड़ी में जैनाचार्य स्वर्गीय पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमलजी म. सा. की १६-१-१९९२ को ८२वीं जयन्ती है और वह 'स्वाध्याय दिवस' के नाम से विख्यात-प्रसिद्ध है। पूज्य गुरुदेव को न केवल पूज्य श्री रतनचन्द्रजी म. सा. के सम्प्रदाय के अनुयायीगण ही, बल्कि जैन-जैनेतर, सम्पूर्ण स्थानकवासी समाज, मन्दिरमार्गी आम्नाय के मानने वाले, तेरापंथ सम्प्रदाय के अनुयायी, दिगम्बर समाज एवं देश-विदेश के कोने-कोने, जगत् भर में आपकी ख्याती फैली हुई है। जिसने भी एक बार मात्र आपके दर्शन कर लिए, उसके हृदय में आप हमेशा के लिए बस गए। यह आपश्री का विचक्षण प्रभाव था।

"मानस बल का परिणाम बड़ा,
जगत् में दिखला दिया श्री हस्ती गुरुवर ने ।।"

आँखों देखी एक सत्य घटना लिख रहा हूँ :—

विक्रम संवत् २०१५ अर्थात् ईस्वी सन् १९५८ का चौमासा, पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा., स्वामीजी श्री अमरचन्दजी म. सा., श्री लक्ष्मीचन्दजी म. सा., श्री माणकचन्दजी म. सा. एवं श्रमण संघ के संत श्री हगामीलालजी म. सा., श्री रोशनलालजी म. सा., श्री प्रेमचन्दजी म. सा. ठाणादि नौ का, भारत की राजधानी दिल्ली सब्जी मंडी स्थानक में था। चातुर्मास सुसम्पन्न होने के पश्चात् जब मैंने सुना कि आपश्री का विहार दिल्ली महानगरी से राजस्थान की ओर होने वाला है। मैं सेवा में दिल्ली पहुँचा और गुरुदेव श्री के दिल्ली से अलवर तक विहार में मैं साथ-साथ रहा, और जब मेहरौली, गुड़गांव, बादशाहपुर आदि-आदि गाँवों से विचरण करते हुए अलवर की ओर आगे बढ़ रहे थे, तब रास्ते में एक गाँव में उस गाँव के लोग इकट्ठे

होकर, हाथ में बड़ी-बड़ी लाठियें लेकर एक मकान के छप्पर से, कालिंदर सर्प को गिराकर मारने लगे और उस समय उसी रास्ते से होकर गुरुदेव श्री और हम आ रहे थे तो एकदम गुरुदेव श्री ने वहीं रुककर उन लोगों से कहा कि आप सांप को मारो नहीं। तब वे लोग कहने लगे कि मारें नहीं तो क्या करें, यह सांप हमको काट जायगा–खा जायगा–हम मर जायेंगे। उसी वक्त गुरुदेव श्री ने फरमाया, आप सब लोग दूर हो जायें—हट जावें, हम इसको पकड़ कर सुरक्षित स्थान में दूर छोड़ देंगे, आप निश्चित हो जावें–चिन्ता न करें–फिकर न करें–डरे नहीं, उस सांप को ओघे (जैन संत जीव रक्षा के लिए रजोहरण अपने पास रखते हैं) पर लेकर दूर एकान्त निर्जर स्थान में ले जाकर, गुरुदेव श्री ने छोड़ दिया। गाँव के सब लोग गुरुदेव श्री की 'असीम शक्ति', 'आत्म बल' की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

मैंने इसके पूर्व तो मेरे परिजनों से सिर्फ सुना ही था कि सतारे–महाराष्ट्र प्रान्त में भी गुरुदेव श्री ने एक नाग-सांप को जीवन दान दिया, पर इस गाँव में तो हमने प्रत्यक्ष आँखों से यह देखा। हमारी आस्था जम गई। श्रद्धा दृढ़ हो गई।

तब अन्तर मन गुन-गुनाने लगा :—

"फूल तो बहुत होते हैं, पर गुलाब जैसे नहीं।
संत तो बहुत होते हैं, पर 'हस्ती' गुरुदेव जैसे नहीं॥"

आपके सुमधुर जीवन में नौ "स" साकार हुए :—

१. सम्यग्-ज्ञान, २. सम्यग्-दर्शन, ३. सम्यग्-चारित्र,
४. सम्यग्-तप ५. समता भाव में रमणता,
६. स्वाध्याय में लीनता, ७. सजगता (सजाग्रता),
८. सहनशीलता, ९. समय की पाबन्दी।

अन्त में 'गुरु हस्ती' के दो फरमान—

'सामायिक, स्वाध्याय महान्।'

आज पुनः भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

—त्रिपोलिया बाजार, जोधपुर–३४२ ००२

प्रेरक संस्मरण
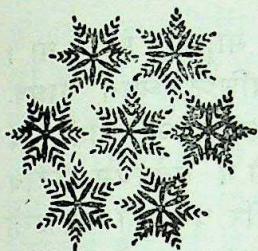
भविष्यद्रष्टा व वचन-सिद्धि के योगी

□ श्री पी० एम० चौरड़िया

आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० अल्पभाषी थे। वे गूढ़ से गूढ़ विषय का सार कुछ ही नपे-तुले शब्दों में प्रकट कर देते थे। भाषा समिति एवं वाणी-विवेक के प्रति विशेष जागरूक संत थे। उनकी वाणी ब्रह्म वाक्य हुआ करती थी। अपने अतीत ज्ञान एवं साधना के बल से उन्हें भविष्य की घटनाओं का ज्ञान हो जाता था। भविष्य के घटना-चित्र का उल्लेख वे अपनी प्रेरणाओं और उपदेश से भक्तों के समक्ष इस तरह से करते, जिसका उन्हें अहसास भी नहीं हो पाता।

मेरे जीवन में भी ऐसे कई प्रसंग आए, जब उन्होंने प्रेरणा एवं सम्यक् मार्गदर्शन देकर मुझे जागरूक बनाया। आपका आशीर्वाद पाकर मैं धन्य हो गया। आज भी जब उन सबका चिन्तन करता हूँ, तो इस ज्योति पुरुष एवं महान् अध्यात्म योगी के प्रति श्रद्धा से सिर झुक जाता है।

यहाँ आचार्य श्री के सान्निध्य-सम्पर्क सम्बन्धी कुछ संस्मरण प्रस्तुत हैं।

[१]

आचार्य श्री का १४ वर्ष पूर्व अजमेर में चातुर्मास था। आप लाखन कोटड़ी स्थानक में विराज रहे थे। इसी चातुर्मास में मद्रास में स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार हेतु एक स्वाध्याय समिति के गठन की चर्चा चली। उसके विधान का प्रारूप भी तैयार किया गया। कुछ समय पश्चात् मुझे आचार्य भगवन् के दर्शन करने हेतु अजमेर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैंने स्वाध्याय समिति के विधान का प्रारूप, आपके समक्ष पेश किया। आचार्य श्री ने पूछा—'साल भर में स्वाध्याय समिति का पंजीकरण हो जायेगा?' मैंने कहा, गुरुदेव! एक महिने में ही इस समिति का पंजीकरण करने का प्रयास किया जाएगा। मद्रास आकर समिति को पंजीकरण कराने का प्रयत्न किया, लेकिन कोई न

कोई बाधा व अड़चन उपस्थित हो जाती। साल भर पूरा होने पर ही समिति का पंजीकरण सम्भव हो सका।

[२]

सन् १९८० में आचार्य श्री का चातुर्मास मद्रास के साहूकार पेट में था। एक दिन रात के समय जैन दर्शन के प्रमुख विद्वान्, विशिष्ट ध्यान साधक श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा, विशिष्ट स्वाध्यायी श्री नवरत्नमल जी डोसी एवं मैं आचार्य भगवन की सेवा में बैठे थे। आचार्य श्री ने सर्वप्रथम करीब १५ मिनट तक लोढ़ा साहब से ध्यान के विषय में गम्भीर चर्चा की एवं उन्हें ध्यान के बारे में सही स्थिति का मार्गदर्शन दिया। तत्पश्चात् आपने श्री नवरत्नमल जी डोसी को जोधपुर में विभिन्न क्षेत्रों पर चल रही धार्मिक पाठशालाओं में सक्रियता लाने एवं स्वाध्याय संघ के कार्यों में सक्रिय रूप से जुड़ने की प्रेरणा दी। अब मेरी बारी थी। आचार्य श्री ने मुझसे कहा—'तुम जिन शासन की सेवा में अधिक समय लगाओ, धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं में सक्रिय रूप से जुड़ जाओ और कार्य करो।' मैंने अपनी परिस्थिति आचार्य भगवन् के समक्ष रखी। आचार्य श्री मुस्कराए और बोले—'यदि तुम ऐसा करोगे तो समाज का नेतृत्व करोगे। मंत्री बनोगे, अध्यक्ष बनोगे, आदर-सत्कार पाओगे। प्रमाद मत करो।' आचार्य भगवन् के ये उद्गार सुनकर मैं निहाल हो गया। आपने ११ साल पूर्व जो बातें कही थीं। वे सभी बातें पूर्णतया सत्य प्रकट हो रही हैं।

[३]

आचार्य श्री के मद्रास चातुर्मास का ही प्रसंग था। मेरी धर्मपत्नी की तपस्या चल रही थी। प्रतिदिन आचार्य भगवन् के मुखारविंद से ही पच्चखान लिये जाते थे। जिस दिन २० की तपस्या थी, इस दिन हमेशा की भांति सायंकाल मैं आचार्य श्री की सेवा में उपस्थित हुआ। मुझे देखकर सहज ही आचार्य श्री ने पूछा—'बहन की तपस्या कैसी चल रही है?' उस दिन पित्त एवं उल्टी की शिकायत ज्यादा थी, अतः मैंने स्थिति बताई तथा अर्ज किया कि २१ उपवास कर पारणा के भाव हैं। आचार्य श्री कुछ समय तो मौन रहे, फिर बोले—उबलते-उबलते पानी को थोड़ा-थोड़ा कर पीने को कहो।' आचार्य श्री की कुछ समय की चुप्पी तथा प्रेरणापूर्वक सन्देश से मुझे ऐसा अहसास हुआ कि आचार्य भगवन् का हमारे चोरड़िया परिवार को आशीर्वाद प्राप्त है। जब मैंने श्रीमती जी को यह वार्त्तालाप सुनाया, तो उनका मनोबल जाग उठा और मासखमण की तपस्या करने का संकल्प कर लिया। वास्तव में यह ३० दिन की तपस्या सुखसाता पूर्व सम्पन्न हुई। यह सब आचार्य देव की कृपा का ही फल था।

[४]

आचार्य श्री का १९९० का अन्तिम चातुर्मास पाली में था। मैं दर्शन करने पहुँचा। दोपहर का समय था। व्याख्यान हॉल में धार्मिक संगीत प्रतियोगिता चल रही थी। वर्तमान आचार्य श्री हीराचन्द जी म० सा० एवं स्वर्गीय श्री कैलाश मुनिजी म० सा० व्याख्यान हॉल में विराजे थे। मैं आचार्य श्री के पास मद्रास में चल रहे ५० महिनों से 'प्रश्न मंच कार्यक्रम' के बारे में सारी जानकारी दे रहा था। 'प्रश्न मंच' के बारे में सुनकर आचार्य श्री बड़े प्रमुदित हुए और इस कार्यक्रम की प्रशंसा की। आपने मुझे कहा—'जाओ, संगीत का कार्यक्रम चल रहा है, तुम भी प्रश्न मंच के विषय में जाकर अपने विचार प्रस्तुत करो।' मैंने अर्ज किया कि भगवन्! कार्यक्रम के अन्त में अपने विचार श्रोताओं के समक्ष अवश्य प्रकट करूँगा। आचार्य श्री चाहते थे कि कार्यक्रम के मध्य ही अपने विचार प्रकट करूँ। वहाँ के संघ के एक प्रमुख पदाधिकारी जो दर्शन करने हेतु उपस्थित हुए थे, उनको भी मेरा परिचय दिया तथा बोलने के लिए समय देने को कहा। जब वे पदाधिकारी कुछ समय तक प्रवचन हॉल से नहीं लौटे तो आचार्य श्री ने स्वयं अपने पास बैठे हुए श्री गौतम मुनिजी को कहा। आचार्य श्री की प्रश्न मंच कार्यक्रम के प्रति इतनी जिज्ञासा, प्रेरणा व आशीर्वाद पाकर मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहा। आज मुझे यह अहसास हुआ कि इतने लम्बे समय तक प्रश्न मंच कार्यक्रम की ख्याति अभी भी क्यों बनी हुई है। संगीत के कार्यक्रम के मध्य में ही मुझे १५ मिनट का समय मिला, जिसमें मैंने 'प्रश्म मंच कार्यक्रम' की सारी रूपरेखा रखी।

आज आचार्य भगवन् पार्थिव रूप से हमारे बीच में नहीं हैं, लेकिन फिर भी मेरे स्मृति-पटल पर वे सदा विराजमान रहते हैं। मुझे ऐसा महसूस होता है कि वे अभी भी प्रेरणा दे रहे हैं, जिनको पाकर मेरे सारे कार्य सरल हो जाते हैं। उनकी पवित्र आत्मा को मैं नतमस्तक होकर प्रणाम करता हूँ।

—89, Audiappa Naicken Street
MADRAS–600 079

ऋतु बसन्त जाचक भया, हरिख दिया द्रुम पात।
तातें नव पल्लव भया, दिया दूर नहीं जात॥

—संत कबीर

प्रेरक प्रसंग
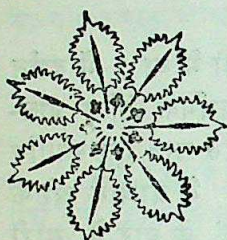
आचार्य श्री का प्राकृत-प्रेम

□ डॉ० भागचन्द्र जैन 'भास्कर'
अध्यक्ष, पालि-प्राकृत विभाग, नागपुर विश्वविद्यालय

प्रज्ञा-पुरुष आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० कालजयी महापुरुष थे जिन्होंने प्रसुप्त समाज के बीच स्वाध्याय के माध्यम से अध्यात्म का जागरण किया और एक नया सूत्र दिया आगम को समझने का जिससे व्यक्तित्व का आध्यात्मिक विकास हो सके। इस सूत्र से समाज में जैन धर्म के प्रति जिज्ञासा पैदा हुई और ज्ञान-प्राप्ति की ओर कदम बढ़ाने का उसने साहस किया। इससे प्राकृत भाषा की ओर लगाव बढ़ा।

मैं आचार्य श्री के समतामयी व्यक्तित्व से बहुत पहले से परिचित था पर प्रत्यक्षत: दर्शन करने का सौभाग्य मिला नागपुर में। वह कदाचित् सन् १९८० का दिसम्बर माह था। हमारे नागपुर विश्वविद्यालय में पालि-प्राकृत विषय को लेकर एक जबर्दस्त भूचाल सा खड़ा हो गया था। कुछ लोग पालि-प्राकृत को अलग-अलग कराना चाहते थे और मैं उन्हें एकत्रित रखने में उनकी भलाई देखता था। संघर्ष गहरा हो रहा था। जैन समाज को प्राकृत से कुछ लेना-देना नहीं था और बौद्ध समाज के एक वर्ग के साथ राजनीतिक शक्तियाँ जुड़ गई थीं। ऐसे समय आचार्य श्री का नागपुर शुभागमन हुआ। श्री फकीरचन्द मेहता भी वहीं थे। उन्होंने यह बात आचार्य श्री के समक्ष प्रस्तुत की। आचार्य श्री ने कहा—'प्राकृत भाषा का संरक्षण-संवर्धन करना हमारा पुनीत कर्तव्य है। तदर्थ जो भी यथोचित हो, किया जाये।' उनके इस विचार ने हमारा मनोबल और बढ़ा दिया। आनन-फानन में प्रेस वालों को आमन्त्रित किया, स्थिति उन्हें स्पष्ट की। दूसरे दिन सारे समाचार पत्रों में आचार्य श्री का अमूल्य विचार प्रकाशित हो गया। इस विचार-प्रकाशन ने हमें एक बहुत बड़ा सम्बल दिया। हम अपने संघर्ष में सफल हुए और प्राकृत की होने वाली निर्मम हत्या को हमने बचा लिया, यह उनका प्राकृत-प्रेम था।

प्राकृत जैन आगमों की भाषा है और भारतीय भाषाओं की जननी भी। जैनागमों पर प्राकृत और संस्कृत में बाद में टीकायें, व्याख्यायें, चूर्णियाँ और वृत्तियाँ भी लिखी गईं। प्राकृत का समग्र साहित्य राष्ट्रीय साहित्य है, किसी सम्प्रदाय विशेष का साहित्य नहीं है। यह एक अलग बात है कि जैन-बौद्ध

श्रमण परम्परा ने प्राकृत के उपयोग पर बल दिया। मैं पालि को प्राकृत का ही एक अभिन्न किन्तु प्राचीनतम अंग मानता हूँ। इसलिए यह कहना चाहूँगा कि तीर्थंकर महावीर और तथागत बुद्ध ने प्राकृत जैसी तत्कालीन जनबोली को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया और उसे संस्कृत से भी अधिक लोकप्रिय बना दिया। विडम्बना यह है कि हमारा जैन समाज अपनी आगम-भाषा प्राकृत के संरक्षण, प्रचार-प्रसार में विशेष रुचि नहीं रखता, शायद व्यावसायिक वृत्ति उससे फल-फूल नहीं पाती।

आचार्य श्री ने इस कटु तथ्य का आकलन किया और प्राकृत के प्रचार-प्रसार में अपने जीवन को लगा दिया। यद्यपि उनका प्रयत्न समाज से बाहर नहीं जा पाया, फिर भी समाज में प्राकृत के प्रति प्रेम को जागृत करने का उनका बीड़ा काफी हद तक सफल हुआ। साधना के पक्ष से प्राकृत को जोड़कर उन्होंने एक और उसके संरक्षण के लिए स्तम्भ खड़ा कर दिया। साधक किसी न किसी रूप में प्राकृत को पढ़ने लगे, स्वाध्याय के माध्यम से प्राकृत ग्रन्थों का पठन-पाठन बढ़ गया और समाज उससे परिचित होने लगा। यह सब आचार्य श्री के प्राकृत-प्रेम का फल है। उनकी इस देन को हम और भी फलीभूत कर सकें, ऐसा हमारा प्रयत्न होना चाहिए।

—न्यू एक्सटेंशन एरिया, सदर, नागपुर–४४०००१

दो मुक्तक

☐ संकलन : **श्री कुन्दन सुराणा**

[१]

अनाज वहाँ होता नहीं, जहाँ पानी का प्रबन्ध नहीं है,
भँवर वहाँ जाते नहीं, जिस फूल में सुगन्ध नहीं है।
निभा सकते हैं व्यवहार, ऊपर का सब,
पर दिल वहां खुलता नहीं, जहाँ आत्मीय सम्बन्ध नहीं है।

[२]

अपनी आय में, सन्तोष भी होना चाहिए,
अपने दोष पर, अफसोस भी होना चाहिए।
यौवन की उन्मत्त धारा में बहने वालो,
जोश के साथ तुम्हें, होश भी होना चाहिए।

—८, सत्यनारायण मार्ग, पाली
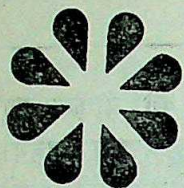
आगम-मर्मज्ञ आचार्य

□ श्री मोहनलाल मेहता

सुप्रसिद्ध जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० स्थानकवासी जैन परम्परा के एक अनुपम अध्यात्म योगी, युग-पुरुष, चरित्रनिष्ठ आचार्य थे। थोड़े समय में अपने अध्यवसाय से इस परम्परा में उन्होंने उत्कृष्ट सन्त-रत्नों में अपना विशेष स्थान बना लिया था।

बाल्यावस्था में वे दीक्षित हुए। वे प्रखर मेधाशक्ति के धनी थे। दीक्षित होते ही आपने संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी भाषाओं, जैन दर्शन एवं जैनागमों का तल-स्पर्शी अध्ययन प्रारम्भ किया। युवावस्था में पदार्पण करते-करते तो आप एक प्रखर प्रतिभाशाली आगम-मर्मज्ञ आचार्य बन गये। इतनी अल्पायु में आचार्य पद पर अधिष्ठित होने वाले वर्तमान युग में आप प्रथम जैनाचार्य गिने जाते हैं।

जैनागमों के अध्ययन-अध्यापन, उपदेश एवं उनके तल-स्पर्शी ज्ञान का लाभ जन-जन को देने के लिए विविध प्रवृत्तियों के माध्यम से जो क्रम आचार्य श्री ने अपनी युवा अवस्था में प्रारम्भ किया, उसे अनवरत रूप से अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक निभाया। समाज इस प्रकार से युगों-युगों तक उपकृत रहेगा।

समाज में आपने विविध प्रवृत्तियाँ प्रारम्भ कीं। देश में स्वाध्याय संघों का जाल बिछाया। 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका के माध्यम से जन-जन तक आगम का सम्यग्ज्ञान पहुँचाने की समाज को प्रबल प्रेरणा दी। आपने भारत के विभिन्न भागों में मरुधर प्रदेश के उत्तरी छोर से लेकर दक्षिण पथ के सागर तट पर्यन्त सुविशाल क्षेत्र के गाँव-गाँव, नगर-नगर में विहार करते हुए जैन धर्मानुयायियों एवं जन-जन को अपने आगम-रस से भरे-पूरे उपदेशों से लाभान्वित किया एवं अपनी चरण-रज से इस धरती को पावन किया।

आगम साहित्य-निर्माण के लिए आपकी प्रेरणा से 'सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल' की स्थापना हुई, जिसने आगम साहित्य निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया एवं आज भी दे रहा है।

आचार्य श्री ने कई आगमों का पांडित्य पूर्ण लेखन व सम्पादन किया। आपके प्रवचन बड़े पांडित्यपूर्ण एवं आगम-मर्म से भरे-पूरे होते थे। इनसे आपकी विद्वता एवं आगम-मर्मज्ञता का पूर्ण परिचय मिलता है।

आचार्य श्री की ठोस मान्यता थी कि केवल पढ़-लिख जाना व पदवियाँ प्राप्त कर लेना ही विद्वता नहीं है, विद्वानों के जीवन में श्रद्धा होनी परमावश्यक है, उनका जीवन धर्मनिष्ठ होना नितान्त आवश्यक है। आचार्य श्री कहा करते थे कि समाज में विद्वानों की बड़ी कमी है, यह बात उन्हें बहुत खटकती थी। सद्भाग्य से समाज में कुछ विद्वान् हैं तो उनका सम्मान समाज में नहीं है, यह आचार्य श्री के हृदय में जबर्दस्त पीड़ा थी। आचार्य श्री ने अपने इन्दौर चातुर्मास में "श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत परिषद्" की स्थापना करने का संकेत समाज के विद्वानों व कार्यकर्ताओं को दिया। यह परिषद् विद्वानों, श्रीमन्तों, विचारकों तथा समाज-सेवकों के बीच एक सेतु का कार्य कर रही है तथा निरन्तर प्रगतिशील है। आचार्य श्री जब-जब परिषद् के विद्वानों से मिलते थे, तब वे आनन्द-विभोर हो जाते थे।

आचार्य श्री न केवल धार्मिक सन्त थे अपितु कुशल लेखक, भाषा-शास्त्री एवं भारतीय इतिहास के बहुश्रुत मनीषी थे। उनके द्वारा रचित साहित्य शोध के क्षेत्र में प्रतिमान माना जाता है। 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' ग्रन्थ के चार भाग वास्तव में जैन संघ और धर्म-दर्शन के विश्वकोष हैं।

—९५८, सैक्टर-४, हिरण मगरी, उदयपुर (राज०)

अहिंसक तरीका

☐ कल्पना आँचलिया

सर वाल्टर रेले जितना बुद्धिमान था उससे अधिक वीर भी था। एक बार महारानी ऐलिजाबेथ के दरबार में एक नवयुवक ने रेले को द्वन्द्व युद्ध के लिए ललकारा। सर वाल्टर ने अस्वीकार कर दिया तब उस असभ्य नवयुवक ने निन्दा करके उनके मुँह पर थूक दिया। सभा में उच्चगण सकते में आ गये। सैनिकों ने म्यान में से तलवारें निकाल लीं। तलवार के धनी रेले ने इस प्रकार अपमानित होकर भी धीरजता से कहा—"मैं अपने मुँह पर रुमाल फिराकर जिस आसानी से तुम्हारा थूक पोंछ सकता हूँ, उतनी ही आसानी से तुम्हारी छाती में लगे हुए तलवार के घाव को पोंछ सकता हूँ। परन्तु बिना कारण ही नरहत्या करने के पाप से बचने का कोई उपाय होता तो मैं अभी तुम्हारे साथ तलवार लेकर लड़ने को तैयार हो जाता।"

कहना न होगा, सर वाल्टर के अहिंसक तरीके पर नवयुवक उनके चरणों में गिर पड़ा।

—११६, देवाली, उदयपुर
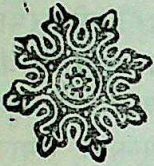
अर्पण है श्रद्धा-सुमन !

□ प्रस्तोता श्री प्रेमचन्द्र जैन 'गोखरू'

(१)

रत्नवंश के सूर्य का, हुआ गजब अवसान,
विद्वद महल हो गया, सचमुच ही सुनसान।
माँ रूपा के लाल थे, श्री केवल के नन्द,
आचार्य प्रवर हस्ती बने, जगती में मकरन्द ।।

(२)

निमाज नगर की भूमि पर, किया स्वर्ग में वास,
इस महितल को दे गये, सुरभित मृदु सुवास।
महाश्रमण गुणवान थे, करुणाशील अपार,
चरण कमल पड़ते जहां, छाती नई बहार ।।

(३)

सामायिक स्वाध्याय का, करते हुए प्रचार,
जीवन भर डटकर किये, जगती में उपकार।
जैन जगत की शान थे, श्रमण वंश शृंगार,
आचार्य प्रवर हस्ती चरण, वंदन अपरंपार ।।

(४)

नगर देवली में मिला, दर्शन का सौभाग्य,
चरणन् रज मस्तक चढ़ा, खिले वस्तुतः भाग्य।
अर्पण है श्रद्धा-सुमन, करिए पूज्य स्वीकार,
आशीष रहे मस्तक सदा, हो जावें भव पार ।।

(५)

श्रद्धा प्लावित हृदय से "प्रेम" करे गुणगान।
जीवन पथ आलोकित बने, यही उर के अरमान ।।

—द्वारा श्री जितेन्द्र कोठारी, अधिशासी अभियन्ता, देवली
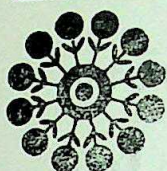
श्री हस्ती चरित्र

□ श्री ठाकुरप्रसाद सेन

दोहा

श्री जिनवर को ध्यान धर, गुरु को शीश नमाय।
चरित्र लिखूं गुरु 'हस्ति' को, चातुर लो चित लाय ।। १ ।।
रस पिंगल जानूं नहीं, नहीं छन्द को ज्ञान।
त्रुटि होय सुधारियो, श्रावक परम सुजान ।। २ ।।
जैसे लंका हेम की, मुंदड़ी की क्या बात।
तैसे आप प्रवीन हैं, मेरी कौन बिसात ।। ३ ।।
मुनि 'हस्ती' मेरे गुरु, वही हैं तारनहार।
उनकी कृपा से रच्यो, पढ़-सुन करें विचार ।। ४ ।।

जन्म स्थली का वर्णन

कविता

इस देश के उतराध की, पश्चिम धरा को देखिये।
प्रकटे सती संत सूर दाता, मरुधरा को पेखिये ।। ५ ।।
स्वर्ण अक्षर में लिखा, मरु भूमि का इतिहास है।
किस पथ चलें ? क्या क्या करें ? देता वही प्रकाश है ।। ६ ।।
नृप माल देव मंडोर को, भिड़ गयो पतशाह से।
हत्यो सलामत आगरे, प्रकटे अमर नरनाह से ।। ७ ।।
जसवन्त सर काबुल करो, औरंग भेज्यो काम से।
मांये सुलाती आज तक, शिशु को उसी के नाम से ।। ८ ।।
स्वामीभक्त राठौड़, दुर्गादास से कहाँ पाइयो।
सिंह अवरंग दाढ़ से निज, नाथ को ले आइयो ।। ९ ।।
जोधा दूदा और ऊदा, कूंपा चांदा से भये।
बीका चन्द्रसेन से, रणबाँकुरे यहाँ हो गये ।। १० ।।
भक्तिमति मीरां हुई यहीं, मुनिवर श्री भूधर भये।
पावन धरा की परम्परा, श्री 'हस्ती' मुनि यहीं पर हुए ।। ११ ।।
प्रस्तुत यही प्रसंग है सुनि, चतुर आप विचारियो।
पढ़ सुन के पाओ प्रेरणा, शिक्षा उन्हीं की धारियो ।। १२ ।।

जन्म - प्रसंग

कलि काल व्याप्यो देश में, सब लोग भूले धर्म को ।
स्वार्थ साधन में लगे हैं, तज दिये सद्कर्म को ।। १३ ।।
चोरी हिंसा कपट धोखा, और पापाचार है ।
पूर्ण भारत की धरा पर, मच्यो हाहाकार है ।। १४ ।।
हाल जो यदि यही रहा तो, देश देश का क्या होयेगा ।
पूर्ण भारत की धरा पर, कौन सुख से सोयेगा ।। १५ ।।
किन्तु हालत देश की, जिसने बिगाड़ी जो भी थे ।
गए बिसर उस बात को, रखवाले भी कम न थे ।। १६ ।।
दीन जन की आर्तवाणी, जिन प्रभु ने जब सुनी ।
उस लाक में इच्छा हुई, धर को उबारे कोई मुनी ।। १७ ।।
परम्परा भी यही रही थी, जब कभी संकट पड़े ।
भार भूमि का उतारन, आन कोई जिनवर खड़े ।। १८ ।।
इस बैर तारक रूप में, श्री 'हस्ती' मुनिवर आइयो ।
वही मारवाड़ पीपाड़ बोहरा, वंश में प्रकटाइयो ।। १९ ।।

दोहा

प्रकटे मुनि पीपाड़ में, मरु में प्रसिद्ध नाम ।
उदापति नीमाज की, जागीरी को गाम ।। २० ।।

कविता

श्रेष्ठि केवलचंद बोहरा, चतुर और प्रवीन थे ।
'रूपमति' उनकी सुनारि, दाउ धर्म-कर्म में लीन थे ।। २१ ।।
गर्भ की आशा भई, तब, गए पिता सुर लोक में ।
दुर्भाग्य से विपदा पड़ी थी, मां डूबी थी शोक में ।। २२ ।।
जैसे-तैसे दिवस बीते, मास दसवां आइया ।
वो घड़ी कब आये हर्षित, होय सब हर्षाइया ।। २३ ।।
सहस इक शत नौ पै सड़सठ, मास पोस बखानियो ।
स्वर्ण सूरज को उदय थो, शुक्ल चवदस जानियो ।। २४ ।।
ऐसे शुभ दिन योग में, प्रकटे भले 'हस्ती' मुनी ।
देने बधाई लोग आये, बात जिससे भी सुनी ।। २५ ।।
हेम की थाली बजी, बाजी वहाँ शहनाइयाँ ।
द्वार बंदनवार बांधी, बंटने लगी मिठाइयाँ ।। २६ ।।

लोग सब नवजात शिशु का, देख मुख सुख पाइया।
हो चिरायु औ शतायु, कामना दरसाइया ।। २७ ।।
आय जोशी खोल पत्रा, नाम 'हस्ती' राखिया।
सो 'गजेन्द्राचार्य' 'गजमुनि', नाम से जग भाखिया ।। २८ ।।
धर्म ध्वज धारी बनेंगे, विगत में जोशी कहे।
चमके गगन में चन्द रवि, यश गाथा तब तक रहे ।। २९ ।।
हो प्रमुदित मातुश्री ने, जोशी को दक्षिणा दिया।
गण सिद्ध सुर मुनि सुनि तबै, तिहुलोक में मंगल भया ।। ३० ।।
शिशु रूप 'हस्ती' का अलौकिक, जिनकी लूँ बलिहारियाँ।
ठुमक चलते क्रीड़ा करते, अरु करते किलकारियाँ ।। ३१ ।।
आँगन में कभी खेलते, कभी पालने में झूलते।
बाल सुलभ लीलाएँ इनकी, देख सबही फूलते ।। ३२ ।।
नवनीत दधि अर दूध रोटी, मात से थे माँगते।
चन्द को नभ में चमकता, देख निशिभर जागते ।। ३३ ।।
जाय बाड़े में कभी, एकान्त मिलता झूलते।
हूँ कौन ? मेरा काम क्या ? यह सोचना नहीं भूलते ।। ३४ ।।
पति शोक में माता दुखी थी, दार्शनिक बालक भये।
इस पर भी परिजन प्लेग से, कितने ही सुरपुर को गये ।। ३५ ।।
धन-धान्य से सम्पन्न घर, 'हस्ती' अकेले रह गये।
था सहारा मात का बस, साहस करके सह गये ।। ३६ ।।
सम्बन्ध सारे व्यर्थ हैं, संसार में नहीं सार है।
वैराग्य के पथ पर चलूँ, 'हस्ती' ने लीनी धार है ।। ३७ ।।
माँ को कही जा 'हस्ती' ने जब, अपने मन की बात को।
कहा पुत्र संग वैराग्य लूँ, अहा धन्य है उस मात को ।। ३८ ।।
जय जय जिनेन्दर आपकी, सद्कार्य यों निश्चय हुया।
बरसे गगन से पुष्प तब, तिहुं लोक में मंगल भया ।। ३९ ।।

दीक्षा-प्रसंग

दोहा

कर निश्चय सुत मात ने, गृह अरु जग तज दीन।
'शोभा' मुनि की शरण में, आये आश्रम लीन ।। ४० ।।
वरद-हस्त 'शोभा' मुनि, दिया 'हस्ती' पै आप।
धर्म शरण 'हस्ती' भये, मिटा सर्व संताप ।। ४१ ।।

जैसे उत्तम वृक्ष के, उत्तम ही फल जान ।
तैसे गुरु 'शोभा' मुनी, 'हस्ती' शिष्य महान ।। ४२ ।।
करते गुरु की सुश्रूषा, पाया 'हस्ती' ज्ञान ।
कर कर जप-तप सामायिक, लीनो शास्तर जान ।। ४३ ।।

सोरठा

पकन लगा वैराग, शास्त्र मुनी ज्यों - ज्यों पढ़े ।
मन में लग गई लाग, दीक्षा दो गुरुवर मुझे ।। ४४ ।।
तन मन कोमल जान, वचन कहे गुरुदेव ने ।
तुम बालक नादान, अभी धैर्य धारण करो ।। ४५ ।।
काल गति को पेख, वैरागी अति हठ कियो ।
लगी लगन को देख, दी आज्ञा गुरुदेव ने ।। ४६ ।।

कुंडलिया

पुर प्रसिद्ध अजमेर को, गिरि आडावल भाल ।
दीक्षा लें 'हस्ती' मुनी, खबर गई तत्काल ।।
खबर गई तत्काल, लोग सुन सुन कर आये ।
बढ़ी धर्म की बेल, श्रमण श्रावक मन भाये ।।
भागवती दीक्षा हुई, मुनि "श्री शोभाचन्द्र" ।
धन्य धन्य अजमेर जहँ, 'हस्ती' भये मुनीन्द्र ।। ४७ ।।

दोहा

शत उनीस सततर ऊपर, माघ मास गुरुवार ।
दूजे दूसरी शुक्ल पक्ष, लीनी दीक्षा धार ।। ४८ ।।
वैरागी से मुनि भये, (श्री) 'हस्तीमल' महाराज ।
श्रमण संघ हर्षित हुए, हर्षित सकल समाज ।। ४९ ।।
परम पूज्य माँ 'रूप' जी, दीक्षा लीनी साथ ।
यश पाया संग पुत्र के, सबको किया सनाथ ।। ५० ।।
सती अमृतकुँवरजी, मुनि 'चौथमल' महाराज ।
एक साथ दीक्षा भई, धन्य भयो शुभ काज ।। ५१ ।।

शिक्षा-प्राप्ति प्रसंग

मत्तगयन्द सवैया

पंडित श्री दुख मोचनजी, विद्वान बड़े गुणवान कहाये ।
हस्ति मुनि तिनको संग पायके, शास्तर ज्ञान की शिक्षा पाये ।।

प्राकृत संस्कृत डिंगल पिंगल, आगम ग्रन्थ को आप पढ़ाये ।
जैन जैनेतर धर्म के ग्रन्थ, पढ़े विद्वान बने हैं सवाये ।। ५२ ।।
है बड़ योग भयो है सुयोग, मिले शिष्य योग्य गुरु मन भाये ।
हेम में मेल सुहागे को होत तो, कुन्दन क्यों न बनेगा सवाये ।।
ऐसे बड़े गुरु 'शोभा' मुनी, तिनके 'हसती' अनुगामी कहाये ।
दो कर जोड़ बखान करूँ, कविता लिख के कवि शीश नमाये ।।५३।।

कवित्त

मुनि श्री 'शोभाचंद्र', शिष्य मुनि 'हस्तीमल',
धरम प्रचार कीनी, गाँव-गाँव जायके ।
जहाँ-जहाँ जाते आप, होती थी अपार भीड़,
मुनि के दरस पाते, थानक में आयके ।
पाय के मुनी को संग, बहती धरम गंग,
सराहे सकल संघ, हिय हरषाई के ।
धरम प्रचार मिल, दोउ मुनिराज कियो,
मुनि की महिमा कही, कवित्त रचाय के ।। ५४ ।।

कविता

कार्य विधि गुरुदेव ने, 'हस्ती' मुनि की देखली ।
काल गति अर वृद्ध वय, निज की गुरु ने पेखली ।। ५५ ।।
उगणीस सत संवत तेयासी, गुरुराज ने निर्णय लिया ।
आचार्य पद पर मनोनयन, 'हस्ती' मुनी को कर दिया ।। ५६ ।।
दायित्व का था बोध पूरा, और गुरुवर ने दिया ।
भावी हित उपदेश गुरुवर ने दिया उपकृत किया ।। ५७ ।।
कैसे संभाले संघ को, कैसे प्रचारे धर्म को ।
ज्ञान की गरिमा बढ़े, यह भेद दीनो मर्म को ।। ५८ ।।
संघ शासन की ध्वजा, तब हाथ में 'हस्ती' मुनि ।
दी सौंप संथारा लिया, यह बात जब सबने सुनी ।। ५९ ।।

दोहा

सफल संथारा काल में, आये लाखों लोग ।
कर दर्शन कृतार्थ जन, पायो शुभ संयोग ।। ६० ।।
खमत खामणा कर मुनी, नाम जिनेश्वर लीन ।
मुनिवर श्री शोभाचंद्र ने, स्वर्ग पयाना कीन ।। ६१ ।।

मावस श्रावण मास की, पुष्य नक्षत्र रविवार।
गुण[1] सिद्धि[2] नखतर[3] चंद्र[4] को, शोभा तजौ संसार ।। ६२ ।।
एती आपत आ पड़ी, भयो संघ में शोक।
तिमिर नाश कर हस्ति मुनि, कियो आप आलोक ।। ६३ ।।
भये धर्म - जलयान के, हस्ती खेवनहार।
संघ चतुर्दिक में भई, मुनि की जयजयकार ।। ६४ ।।
सबल हस्त 'मुनि हस्ति' के, ता पे आया भार।
यश गाथा तिनकी कहूँ, अपनी मति अनुसार ।। ६५ ।।

आचार्य पद प्राप्ति

दोहा

संवत सहस्र नौ सत ऊपर, साल सतासी जान।
पावन मास बैसाख को, शुक्ल तीज भई आन ।। ६६ ।।
सिंह पोल - जोधाणपुर, प्रसिद्ध पावन ठौर।
पद पायो आचार्य को, मुनि 'हस्ती' सिरमौर ।। ६७ ।।

दोहा

मुनिवर थे जब बीस के, पद आचार्य संभाल।
दीर्घ अवधि इतिहास में, मिले न एक मिसाल ।। ६८अ ।।

धर्म-प्रचार

कवित्त

एतो मोटो पद पाय, गरब तनिक नाहीं,
निशि दिन सेवा कीनी, धरम बढ़ाय के।
जप तप कीने बहु, त्याग तपस्या आप,
चहुं दिस गाँव गाँव, पुर - पुर जायके।
स्वाध्याय सामयिक में, ही है अपार सार,
मंत्र फूंक दियो आप, जग को सुनाय के।
जैसे नाम 'हस्ती' मुनी, तैसी दीठि हस्ती मुझे,
जग को जगाया, धर्म-डंका बजायके ।। ६८ब ।।

विचरण-क्षेत्र

सवैया

धर्म प्रचार के काज मुनी मरुभौम से बाहर आप पधारे।
मालव गुर्जर और मेवाड़ उत्तर मध्य प्रदेश प्रचारे ।।

१ तीन, २ आठ, ३ नौ, ४ एक यानी ३-८-९-१; उलटने पर १९८३ संवत हुए।

तामिल, आंध्र, कर्नाटक, दिल्ली हरियाणा पधार किते जन तारे।
धर्म बिजय चहुँ ओर भई, मुनि केते भये अनुयायी तिहारे ।। ६९ ।।

विगत चातुर्मासों की

दोहा

विचरण कर के देश में, जह तह कीनो वास।
मुनिवर 'हस्ति' ने किये, सत्तर चातुर्मास ।। ७० ।।
पाली, गढ़ भोपाल में, चतुर्मास हुए चार।
पाँच किये पीपाड़ में, जग के तारनहार ।। ७१ ।।
जयपुर अर अजमेर में, पावस बीते सात।
जिसकी गाथा याद कर, तन अर मन हरषात ।। ७२ ।।
गढ़ जोधाणा शहर पर, मुनिवर मेहरबान।
ग्यारह चौमासे किये, कायम कीर्तिमान ।। ७३ ।।

कवित्त

अहमदनगर और मेड़ता, किशनगढ़,
ब्यावर, नागौर, जलगाँव की क्या बात है।
माधोपुर सवाई से, कोसाणा, बालोतरा में,
चतुर्मास किये मुनी, सब हरषात है।
एती ठौर दोय - दोय पावस बिताये आप,
पायो यश धर्म धारी, बातें कही जात है।
धन्य मुनिराज 'हस्ती' आपसे आचार्य भये,
ताको इतिहास जग मांही विख्यात है ।। ७४ ।।

सवैया

रामपुरा, रतलाम, उदैपुर, लासन गाँव उज्जैन गये थे।
बीकानेर, दिल्ली, सहलाणा, चातुर्मास सतारा किये थे ।।
अमदाबाद, इन्दौर, मद्रास, गुलेदगढ़ी में जा रहिये थे।
नाम लिखूं रायचूर को नाथ, जहाँ एक-एक चौमासे किये थे ।। ७५ ।।

शासन-काल में दीक्षाएँ

दोहा

पिचियासी दीक्षा हुई, मुनि के शासन काल।
इकतिस चौवन संत सती, होकर भये निहाल ।। ७६ ।।

पट्ट शिष्य तिनमें भये, मुनि श्री हीराचंद ।
वर्तमान आचार्य वही, मुनिवर बीच मुनीन्द्र ।। ७७ ।।

आचार्य श्री की प्रेरणा से स्थापित संस्थाएँ

कविता

सद्कार्य हेतु प्रेरणा, मुनिराज ने सर्वत्र दी ।
आज्ञा हुई जब आपकी, संस्थाएँ कितनी खोल दीं ।। ७८ ।।
ज्ञान के भंडार पुस्तकालय, किते ही खोलकर ।
ज्ञान की ज्योति जगाई, जय जिनेन्दर बोलकर ।। ७९ ।।
विगत जिसकी मैं बखानूं, ध्यान उस पर दीजिये ।
सेवा करें इस देश की, निज आँख से लख लीजिये ।। ८० ।।

छन्द[1]

शहर बड़ा जोधण धरा में ।
पावटा औ सरदारपुरा में ।।
सिंहपोल के घोड़ों का चौक बड़ो ।
पुस्तकालय में जाकर आप पढ़ो ।। ८१ ।।

'जिनवाणी' मासिक आज छपै ।
द्युति ताहि दिसा दसही में दिपै ।।
'स्वाध्याय' पत्रिका जयपुर सों ।
उपजे सुविचार पढ़े उर सों ।। ८२ ।।

पुनि मंडल सम्यक् ज्ञान प्रचार ।
स्वाध्याय संघ के कार्य अपार ।।
दिये मुनि छात्रावास खुलाय ।
करि कोड पढावन बाल बुलाय ।। ८३ ।।

कियो मुनि विद्वज्जन सम्मान ।
विदवत्त परिषद की बड़ी शान ।।

१–यह वेग्रक्षरी छन्द है । गुरु लघु का इसमें नियम नहीं है । मात्रा १६ (सोलह) प्रति चरण/अन्त में तुक मिलनी चाहिये ।

पिंगल ग्रन्थ—"रघुवर जसप्रकाश" में लिखा है—

गुरु लघु अनियम सोल मता गण ।
कोई बेग्रसरी छन्द कही मण ।

गुणीजन के अभिनन्दन काज।
खुली श्रृंखला भयो धन्य समाज ।। ८४ ।।

पुस्तकालय हस्ती - शोभा नाम।
पुरातत्व समिति संरक्षण काम ।।
पुस्तकालय हैं स्वाध्याय काज।
थपाये मुनि प्रिय गाँव निमाज ।। ८५ ।।

श्राविका रु श्रावक के कई संघ।
भये जिन धर्म जगत के अंग ।।
फलफूल रही संस्था कितनी।
मौं दीठि जहाँ लगजा जितनी ।। ८६ ।।

मंडल महिला रु युवाजन के।
उपकृत हैं वृन्द गुनीजन के ।।
कई बौद्धिक गतिविधि आन बढ़ी।
ज्यों धर्म लता तरु जाय चढ़ी ।। ८७ ।।

दोहा

किशनगढ़, भोपालगढ़, अर जाओ जलगाँव।
कितनी संस्था पे लिखो, मिले मुनी को नांव ।। ८८ ।।
दूर पड़े पीपाड़ से, तो भी निश्चय एक।
जा देखो नीमाज में, सक्रिय आज अनेक ।। ८९ ।।
बड़ा शहर है जोधपुर, जयपुर मोटा नाम।
सेवा कितनी संस्था, करती आठो याम ।। ९० ।।
मुनि 'हस्ती' का यश बड़ा, बड़े मुनी के काम।
गुरु 'हस्ती' के चरण में, 'ठाकुर' करे प्रणाम ।। ९१ ।।

आचार्य श्री द्वारा रचित साहित्य

चन्द पद्धरी

साहित्य लिखो मुनिवर अनूप।
कई ग्रंथ रचे संतन के भूप ।।
यशगान करूँ मैं मुनीराज।
सरसे जिसको पढ़ सब समाज ।। ९२ ।।

"इतिहास धर्म" के खंड चार ।
"तीर्थंकर तीन" पढि करो विचार ।।
"पट्टावलि प्रबंध - संग्रह" एक ।
"जिनाचार्य - चरितावलि" लेइ देख ।। ९३ ।।

"अंतकृत दशांग सूत्र" रचे आप ।
"प्रश्न व्याकरण सूत्र" से कटते पाप ।।
'उत्तराध्ययन' 'श्रमण' 'नंदी' सूत्र जोय ।
'दशवैकालिक' वृहत्कल्प' हरषाय मोय ।। ९४ ।।

'व्याख्यान माला' पढ़ बढ़त ज्ञान ।
पढ़ियो "कुलक संग्रह" सुजान ।।
'धार्मिक कहानियाँ' पढ़ि उलास ।
'आदर्श विभूति' से हिय उजास ।। ९५ ।।

'पुजारी अमरता' पढ्यो नाथ ।
देखी "मुक्तावली" जोड़ हाथ ।।
'आध्यात्मिक साधना' है प्रसिद्ध ।
'प्रार्थना प्रवचन' पढ़ो रिद्ध सिद्ध ।। ९६ ।।

'सिद्धान्त प्रश्नोतरी' लई जान ।
'पर्युषण साधना' पढ़ी आन ।।
पावन 'पदावली पर्युषण' पर्व ।
'नवपद आराधना' पढ़ करिय गर्व ।। ९७ ।।

'पाठावलि सामायिक स्वाध्याय' ।
यह ग्रन्थ रच्यो मुनिवर सवाय ।।
"श्रीमद् रत्नचंद्र जीवन ज्योत" ।
पढ़ि 'पद मुक्तावलि' हिय उद्योत ।। ९८ ।।

अति अल्प विगत लिखे नहिं तमाम ।
साहित्य जगत में अमर नाम ।।
ज्यों नभ में चमके रवि चन्द्र ।
त्यों धर्म गगन "गज मुनि" मुनीन्द्र ।। ९९ ।।

ये ग्रन्थ देत हमको उलास ।
करि तिमिर दूर प्रकटे उजास ।।
ऐसे मुनि "श्री हस्ती" महान ।
विख्यात भये जानत जहान ।। १०० ।।

कर जोड़ विनऊँ मैं शीश नाय।
लिखने में कोई कसर आय।।
हो क्षमा त्रुटि कहूँ जोड़ हाथ।
गुरु 'हस्ती' से कवि है सनाथ।। १०१ ।।

आचार्य श्री की महायात्रा का अन्तिम पड़ाव

दोहा

मास चैत्र अरु साल है, दोय सहस्र अड़चास।
आये मुनी निमाज में, जिसकी मोटी आस।। १०२ ।।
नर-नारी सब नगर के, आये दर्शन काज।
पलक बिछा स्वागत किया, जय जय जय मुनिराज।। १०३ ।।
घर 'सोहन' गंगबाल को, 'भवन सुशीला' नाम।
जहाँ ठहरे "हस्ती" मुनी, भयो सुपावन धाम।। १०४ ।।
ठाम ठिकाना प्रसिद्ध है, मरुधर की धर माह।
कुञ्ज आम के हैं घने, ठंडी ठंडी छांह।। १०५ ।।
रजवट बट में है खरो, नगरी को इतिहास।
रण बंका 'जगराम'[१] 'छत्र'[२] 'अमर'[३] 'उमेद' है खास।।१०६।।
चतुर सिद्ध योगी हुए, पुरी 'भोज'[५] रघुनाथ'[६]।
नाम 'रिद्ध'[७] 'चैतन्य'[८] मुन, सभी झुकाते माथ।।१०७।।
कीरति पूरे देश में, छाय रही चहुँ ओर।
नीर जहाँ लो गंग में, अमर मुनी सिरमोर।।१०८।।
जब मुनि आये नगर में, नगर धर्म मय होय।
जैसे 'त्रिशला नंद' से, पावापुर ही जोय।।१०९।।
वृद्ध वय तापै रोग कछु, जर्जर भया शरीर।
मुनिवर ने निश्चय किया, धीर वीर गंभीर।।११०।।
की अंतिम संलेखना, बद दस अवल बैसाख।
गुरुवर ने तेला किया, तन मन को दृढ़ राख।।१११।।
मास वही बैसाख है, तिथि तेरस शुक्रवार।
संघ चतुर्विध साख में, लिया संथारा धार।।११२।।
संथारा की खबर सुन, मच गई हाहाकार।
पत्र पत्रिका रेडियो, टी. वी. करी पुकार।।११३।।

१–श्री जगरामसिंह, २–श्री छत्रसिंह, ३–श्री अमरसिंह, ४–श्री उम्मेदसिंह—नीमाज ठिकाने के सुप्रसिद्ध ठाकुर। ५–श्री भोजपुरी, ६–रघुनाथपुरी, ७–श्री रिद्ध रावल, ८–श्री चेतनपुरी—समाधि लेने वाले सिद्ध पुरुष।

दूर दूर से दौड़ के, सुन कर आये लोग।
मोटर वायुयान से, अंतिम दर्शन योग ॥११४॥
भयो केन्द्र सब देश को, नगर प्रसिद्ध निमाज।
मुनि हस्ती को है नगर, नगरी के मुनिराज ॥११५॥
हिन्दू मुस्लिम जैन संग, अन्य पंथ के लोग।
"हस्ती-मय" बस्ती हुई, कैसा पावन योग ॥११६॥
उस संथारा काल का, कैसे करूँ बखान।
मसि कम चले न लेखनी, उर नहिं पूरो ज्ञान ॥११७॥
पशु वध पूरो बंद थो, नहिं व्यसन व्यापार।
जय जय 'मुनि हस्ती' सिवा, दूजो नहिं व्यवहार ॥११८॥
अफसर नेता मिनिस्टर, नित्य दूर से आय।
जय जय 'हस्ती' बोलकर, गुरु को शीश नमाय ॥११९॥
टी. वी. के संग रेडियो, पल-पल खबरें देय।
सफल संथारा स्वास्थ्य की, सब कोई सुन लेय ॥१२०॥
कब तक बाती प्रज्वले, दीपक में ना तेल।
किन्तु डोर अध्यातम की, मुनिवर ने ली झेल ॥१२१॥
संथारा की अवधि में, आये केतिक लाख।
धन्य-धन्य भये दर्श कर, भरे जगत यह साख ॥१२२॥

छप्पय

संवत दोय सहस्र, अड़तालीस का आना।
मास प्रथम बैसाख, शुक्ल आतम रवि जाना।
पुख नखतर संयोग. मुनीवर ने जब ठाना।
तज तन रूपी चीर, कीन मुनि स्वर्ग पयाना।
इमि पायो मुनि इच्छामरण, 'ठाकुर' यश गाथा कहे।
जय जय जय गुरु 'हस्ती' मुनी, महिमा युग-युग तक रहे ॥१२३॥

दोहा

भंडारी उद्यान में, चंदन चिता पोढ़ाय।
दई विदा मुनिराज को, नारिकेल चढ़ाय ॥१२४॥
मास वही सुद नवम को, पुख नखतर शशिवार।
भस्मिभूत नश्वर भयो, जाने सब संसार ॥१२५॥
धन्य संघ नीमाज को, धन्य नगर नीमाज।
धन्य धरा है नगर की, है धन्य सकल समाज ॥१२६॥

तेज राज के साथ में, भंडारी परिवार।
साधी पूरी बन्दगी, पाया सुयश अपार ।।१२७।।
जब तक धर अहि शीश पे, रहे अमर मुनिनाम।
मिलो विरद नीमाज को, जग में पावन-धाम ।।१२८।।
सुद तेरस दिन भौम को, दोय सहस्र अड़चास।
चरित लिखो गुरु 'हस्ती' को, पावन कार्तिक मास ।।१२९।।

पुनि नमि मुनिवर 'हस्ती' को,
जा से सुख उपजाय।
"हीरा" मुनि को पेश कर,
'ठाकुर' शीश नमाय ।।१३०।।

इति श्री श्री १००८ श्री पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब को जीवन चरित लिख कर सम्पूर्ण कियो तथा परम पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री हीराचंद्रजी महाराज साहब की सेवा में सं. २०४८ मिति कार्तिक शुक्ला तेरस, भौमवार, १९ नवम्बर, १९९१ को जोधपुर में पेश कियो।

—व्याख्याता, राजनीति विज्ञान, श्री मरुधर केसरी विद्यालय, राणावास

१०१ रुपये में १०८ पुस्तकें प्राप्त करें

अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रारम्भ की गई "ज्ञान प्रसार पुस्तक-माला" के अन्तर्गत अब तक ८० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुल १०८ पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना है। प्रत्येक पुस्तक का फुटकर मूल्य दो रुपया है पर जो व्यक्ति या संस्था १०१ रुपये भेजकर ट्रैक्ट साहित्य सदस्य बन जायेंगे, उन्हें १०८ पुस्तकें निःशुल्क प्रदान की जायेंगी। कुछ पुस्तकें अप्राप्त हैं, वे दुबारा प्रकाशित होने पर सदस्यों को भेजी जायेंगी।

तपस्या, विवाह, जयन्ती, पुण्यतिथि पर प्रभावना के रूप में वितरित करने के लिए १०० या अधिक पुस्तकें खरीदने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

कृपया १०१ रुपये मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा "अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्" के नाम सी-२३५ ए, तिलक नगर, जयपुर-३०२००४ के पते पर भेजें।

—डॉ० नरेन्द्र भानावत
सम्पादक-संयोजक

आचार्य श्री की देन

☐ श्री पार्श्वकुमार मेहता

आचार्य श्री से मेरा प्रथम परिचय मेरे काकासा पं० रतनकुमारजी 'रत्नेश' ने सन् १९४५ में भोपालगढ़ में कराया था। वे उस समय 'जिनवाणी' के सम्पादक व सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के व्यवस्थापक थे। मेरे पिताजी के देहान्त के बाद उन्होंने ही मेरा संरक्षण कर पढ़ाया-लिखाया। मैं ब्यावर गुरुकुल में अध्ययन हेतु रहा। वहाँ १९४६ के लगभग पौषधशाला में आचार्य श्री कुछ समय विराजे, मुझे सान्निध्य मिला। उन्होंने मुझे नैतिक जागरण, संस्कार निर्माण एवं धार्मिक शिक्षण लेने की प्रेरणा दी। उन्हीं की प्रेरणा से मैंने १९४८ में लगभग १४ वर्ष की आयु में 'धर्मरत्न' परीक्षा एवं 'मुनीमी' परीक्षा १९४९ में उत्तीर्ण की। विशारद व साहित्यरत्न क्रमशः आगे के वर्षों में मैट्रिक के बाद उत्तीर्ण की।

आचार्य श्री जहाँ-जहाँ ग्रामानुग्राम, नगर, शहर विहार करते वहाँ-वहाँ जो भी मेधावी छात्र-छात्राएँ उनके सम्पर्क में आते, संस्कार-निर्माण, स्वाध्याय-सामायिक की प्रेरणा देते रहते। यही कारण है कि स्वाध्याय संघ, सामायिक संघ की स्थापना हुई और जहाँ चातुर्मास से वंचित क्षेत्र रहते हैं, वहाँ स्वाध्यायी जाकर इस कमी की आपूर्ति कर रहे हैं। कितना विशाल कार्य जो युगों-युगों तक स्थायी रूप से समाज को लाभान्वित करेगा आचार्य प्रवर की दूरदृष्टि ने प्रसारित एवं प्रचारित कराया। आपकी ही प्रेरणा का प्रतिफल है जो आज 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका समग्र जैन समाज, श्रमण, संस्कृति, साहित्य, इतिहास एवं जैनत्व की प्रकाशपुञ्ज हो गई है। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल ने आचार्य प्रवर का साहित्य प्रकाशित कर उनके विचारों को युगों तक अक्षुण्ण रखने का दायित्व पूर्ण किया है। 'उत्तराध्ययन', 'दशवैकालिक', 'नन्दीसूत्र' 'अन्तगड़दशा' आदि आचार्य प्रवर द्वारा सम्पादित ग्रन्थों के साथ-साथ आपके प्रवचन 'गजेन्द्र व्याख्यान माला' भाग १ से ७ तक प्रकाशित कराई है। समय-समय पर प्रवचन संग्रह, स्वाध्याय स्तवन माला, आध्यात्मिक आलोक आदि महत्त्वपूर्ण सामग्री स्वाध्यायियों व पाठकों को उपलब्ध कराई है। आपकी प्रेरणा व उपदेशों से श्रावक-श्राविकाओं की क्रान्तिकारी तपस्याएँ, त्याग-प्रत्याख्यान, स्वाध्याय, सामायिक, नैतिक जागरण, चारित्र-निर्माण, संस्कार-निर्माण आदि को सम्बल मिला है। आपका प्रवचन साहित्य, आगमिक साहित्य, जैन धर्म एवं ऐतिहासिक साहित्य स्वाध्यायियों के जीवन-निर्माण तथा उनके नैतिक उत्थान, प्रगति एवं शिक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण है। वह

जन-जन के लिए भी प्रेरणाप्रद है। 'उत्तराध्ययन सूत्र' के तीन भाग प्रकाशित हो चुके हैं। सुन्दर विवेचन, शब्दार्थ, भावार्थ सरल भाषा में सर्व-साधारण की समझ में आ जाता है।

'सज्झाएणं नाणावरणिज्जं कम्मं खवइ' स्वाध्याय करने से ज्ञानावरणीय कर्म क्षय होता है। प्रति दिन स्वाध्याय की साधना करने से अज्ञ विज्ञ, विज्ञ विशेषज्ञ और विशेषज्ञ सर्वज्ञ भी बन सकता है। कितना सुन्दर अर्थ, समझाने की कला जो जन-साधारण के मन में सहज ही बैठ जाती है। संयम एवं चारित्र-साधन के लोह-पुरुष, उत्कृष्ट क्रियोद्धारक, अध्यात्म-योगी ही ऐसी शासन दीपाने वाली सेवाएँ दे सकते हैं जो आचार्य प्रवर ने दी हैं। आचार्य प्रवर की जैन शासन को देन चिरस्मरणीय, अभिनन्दनीय व सराहनीय ही नहीं है अपितु पूजनीय व आचरणीय है।

आचार्य प्रवर ने समाज के विद्वानों और कार्यकर्ताओं, श्रीमन्तों और समाज-सेवियों को एक मंच पर खड़ा किया, उनको संरक्षण प्रदान कराया। समाज सेवी, कार्यकर्ता और विद्वानों को आदर-सत्कार दिलाया। अक्षय तृतीया पर गुणि-अभिनन्दन दिवस समारोह में समाज-सेवी विद्वानों का अभिनन्दन आपके सान्निध्य में आपकी प्रेरणा से प्रारम्भ हुआ था। ऐसे महान् ज्योतिर्धर आचार्य की दिव्यात्मा को कोटि-कोटि नमन।

—१/९६, मालवीय नगर, जयपुर—३०२०१७

प्यारी माँ

□ श्री सौभाग्यमल जैन

प्यारे बच्चो कभी न अपनी माँ का हृदय दुखाना।
प्यारी माँ की प्यारी याद रख, उसको शीश झुकाना॥
माँ का दूध सुधा सा, इसकी कौन लगा सकता कीमत ?
माँ की सेवा अमर साधना, यह विद्वानों का अभिमत॥
सारे जग में महापुरुषों ने, अपनी माँ का पाया प्यार।
प्यारी माँ की ममता का वे, पाते ही रहे दुलार॥
जिसको अपनी माँ का नहीं, मिलता रहा है प्यार।
उसको इसका अभाव खलता, जिसे न माँ का मिले दुलार॥
इस लिये मातृत्व जगत में, सभी जगह पूजा जाता।
माँ की गोद में शिशु वर्ग का, मन भी हर्षित हो जाता॥

—घास बाजार, रतलाम

स्तुति काव्य :
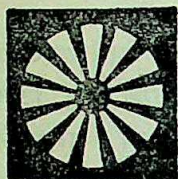
गजेन्द्र (आचार्य हस्ती) चालीसा

□ श्री रिखबराज कर्णावट

गजेन्द्र मुनिवर आपका, गाता हूँ गुणगान ।
मुझ पर पूरी महर थी, लेता हूँ मैं मान ।।

भारत देश विश्व हितकारी । राजस्थान की महिमा भारी ।। १ ।।
भूमि मरुधरा मंगलकारी । पीपाड़ नगर की बलिहारी ।। २ ।।
बोहरा कुल यहाँ था नामी । केवलचन्द स्वर्ग पथ गामी ।। ३ ।।
रूपा दे थी उनकी नारी । जन्मा पुत्र महासुखकारी ।। ४ ।।
उगणी सौ सतसठ की साल । पौष सुदी चौदस खुशहाल ।। ५ ।।
चारों ओर मोद था भारी । धन्य हुई रूपा महतारी ।। ६ ।।
नर नारी देखण को आये । लक्षण देख अतीव हर्षाये ।। ७ ।।
थी बालक की छवि अविराम । सोच बूझकर दीना नाम ।। ८ ।।
हस्तीमल हस्ती सम जाना । ऐरावत गजेन्द्र कर माना ।। ९ ।।
उत्तम संस्कारों को पाये । बचपन से प्रभु के गुण गाये ।।१०।।
आत्मज्ञान हस्ती ने चिन्हा । शोभाचन्द्र गुरु कर लीना ।।११।।
दस वर्ष की वय में धारा । जोग लिया देखे जग सारा ।।१२।।
शोभा गुरु ने क्षमता देखी । इनकी ज्ञान क्रिया को पेखी ।।१३।।
अपना अंतिम लेख लिख दीना । भावी पूज हस्ति को कीना ।।१४।।
सोलह वर्ष की आयु आई । भावी पूज की पदवी पाई ।।१५।।
बीस वर्ष में चादर धारी । संघ जोधपुर का बलिहारी ।।१६।।
बड़े बड़े आचार्य निहारे । उनसे ज्ञान गुणों को धारे ।।१७।।
अति प्रसन्न लोग थे सारे । सकल समाज वारणा वारे ।।१८।।
भारत भर में कीरति फैली । अद्भुत थी जीवन की शैली ।।१९।।
स्नेह सभी सन्तों को दीना । उनकी सेवा कर यश लीना ।।२०।।
जैन जैनेतर आगम पढ़े । ज्ञान ध्यान में ऊँचे चढ़े ।।२१।।
पद विचरण भारत में कीना । बोध भव्य जीवों को दीना ।।२२।।
ज्ञान-क्रिया का किया समन्वय । सामायिक स्वाध्याय चयन कर ।।२३।।
ग्रन्थ अनेक आप से रचित । आगम ग्रंथ किये परिभाषित ।।२४।।

मौलिक इतिहास जैन के दाता । जिससे जग तुमरे गुण गाता ।।२५।।
संस्थाओं की की जागरणा । सम्यग् ज्ञान की सतत प्रेरणा ।।२६।।
शुद्ध धर्म का किया प्रचार । सात दशक संयम निर अतिचार ।।२७।।
अद्भुत योगी फक्कड़ ऐसे । कलियुग में ये आये कैसे ।।२८।।
बचन सिद्ध लाखों में एक । चमत्कारों की कथा अनेक ।।२९।।
दयावान करुणा के सागर । नाग बचाये थे गुण आगर ।।३०।।
नाम लियां दुख भागे दूर । बन गये दयावान कई क्रूर ।।३१।।
जो तुम्हारे गुण नित गावे । जनम जनम के पाप मिटावे ।।३२।।
भेद ज्ञान को तुमने पाया । आत्म दर्श कर आनन्द छाया ।।३३।।
पर कल्याण पराक्रम फोड़ा । जन जन से शुभ नाता जोड़ा ।।३४।।
आठ दशक का जीबन जिया । मोक्ष मार्ग तुमरे मन बसिया ।।३५।।
असीम आत्म शक्ति के धारी । मृत्युंजय थे संशय हारी ।।३६।।
निमाज गाँव संथारा ठाये । लाखों लोग दर्शन को आये ।।३७।।
हिन्दू मुसलमान ने माना । जोगी ऐसा हुआ न होना ।।३८।।
नश्वर देह से नाता तोड़ा । आत्म राम से खुद को जोड़ा ।।३९।।
वैशाख शुक्ला अष्टमी जाण । जग वल्लभ ने किया प्रयाण ।।४०।।

अनंत काल से फंसे हुए हम, मोह दशा से हमें उबारो ।
निज आतम का भान नहीं है, अज्ञान तिमिर को शीघ्र निवारो ।।
गजेन्द्र गुरुवर विनति माणी, ज्ञान प्रकाश करो उजियारो ।
भव बन्धन से मुक्त करो अब, करुणा सागर नाम तिहारो ।।

भक्त लोग सुमरे सदा, तव गुण गाथा गाय ।
गजेन्द्र गुण संबल मिले, सुमति मिलेगी आय ।।

—'ऋषभायतन' रोड, १-सी, सरदारपुरा, जोधपुर-३ (राज.)

समता रस | आचार्य श्री रतनचन्दजी म.

समता - रस का प्याला, पीवे सोई जाणे ।
छाक चढ़ी कबहू नहीं उतरे, तीन भवन सुख माने ।
एह सम अवर नहीं रस जग में, इम कहे वेद-पुराणे ।
एकल क्लेश टले एक छिन में, जो समता घट आणे ।
रतनचन्द समता रस प्रकट्या, लहि केवल ज्ञाने ।
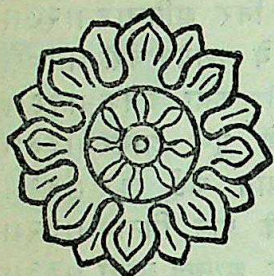
आचार्य श्री की देन— स्वाध्याय और सामायिक

☐ श्री शान्तिलाल पोखरना

वर्तमान युग के महापुरुषों में आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० का नाम सदैव बड़ी श्रद्धा के साथ लिया जाता रहेगा क्योंकि मानव समाज ही नहीं, प्राणी मात्र के प्रति उनके मन में जो करुणा और वात्सल्यभाव था, उसी का परिणाम है कि उनके अन्तिम समय संथारे में सर्प भी अपनी श्रद्धा प्रकट करने वहाँ प्रगट हुआ। ऐसा महापुरुषों का चमत्कार ही होता है। उनकी प्रेरणा और उपकार का ही प्रतिफल है कि जहाँ-जहाँ भी आपने चातुर्मास या विचरण किया वहीं स्वाध्याय और सामायिक का अलख जग गया। तभी तो जन-जन के मुखारविन्द से आकाश गुंजायमान हो गया कि "जब तक सूरज चाँद रहेगा, हस्ती तेरा नाम रहेगा।"

स्वाध्याय और सामायिक के प्रचार-प्रसार को उन्होंने अपना मिशन बना लिया था। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि जब तक श्रावकों में स्वाध्याय नहीं होगा तब तक सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चरित्र व तप की सही आराधना नहीं हो सकती। विशेषकर श्वेताम्बर समाज में स्वाध्याय की कमी भी बहुत है। वास्तव में व्यक्ति को जब तक स्वयं को जानने की जिज्ञासा नहीं जगेगी तब तक वह स्वाध्याय की ओर प्रवृत्त नहीं हो सकता। स्वाध्याय का सीधा-सादा अर्थ है— स्वयं का अध्ययन याने विशेषकर आत्मा का अध्ययन। व्यक्ति को जब यह पता लग जाए कि मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? और कहाँ जाना है? तो वह अनेक पाप कर्मों से सहज बच जाता है और सहज पुण्य अर्जित करने लग जाता है। कर्म और कर्म-फल जैन दर्शन की विशेषता है और इसका अध्ययन स्वाध्याय का प्रमुख अंग है। मैं एक चैतन्य प्राणी हूँ और यह मनुष्य जीवन बड़ा दुर्लभ है, इस योनी से ही मोक्ष की प्राप्ति संभव है। यह चिन्तन और मनन हमारा सतत चलता रहे, यही स्वाध्याय का लक्ष्य है। शरीर को भोजन की आवश्यकता है तो आत्मा को स्वाध्याय की। आचार्य श्री के जीवन और उनके मिशन से प्रेरणा लेकर हम भी अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहते हैं तो हमें प्रतिदिन

५ मिनट के स्वाध्याय से प्रारम्भ कर कम से कम एक घंटा नियमित स्वाध्याय का नियम लेना ही होगा, इसी में हमारा कल्याण है।

स्वाध्याय से ही सामायिक की ओर प्रवृत्ति बढ़ती है। सम-भाव की प्राप्ति और पाप-कर्म से मुक्ति के लिए ४८ मिनट की सामायिक सबसे सरल उपाय है। मन को केन्द्रित करना और सद्‌विचारों का संचार करना सामायिक की विशेषता है। मन को जीतना और मन, वचन व काया के योग को नियंत्रित करना सामायिक है। अभ्यास करने से इसमें काफी सफलता मिल जाती है और यह नियमित आदत में आ जाती है। ऐसी भावना बनने के बाद तो एक भी दिन बिना सामायिक के मन ही नहीं लगता है और मन में बेचैनी रहती है। हमारा लक्ष्य पूणिया श्रावक जैसी सामायिक होना चाहिये, जिसको धन दौलत से नहीं खरीदा जा सकता परन्तु मन को अवश्य जीता जा सकता है। क्योंकि मन ही सबसे अधिक चंचल है। उसकी गति बिजली से भी कई गुना तीव्र है। अतः सामायिक और स्वाध्याय मन को जीतने का सबसे सरल और अमोघ साधन है।

आज के इस भौतिक युग में मनुष्य इतना तनावग्रस्त और संकीर्ण हो गया है कि जिसकी वजह से अनेक नई-नई बीमारियों ने उसे जकड़ लिया है। आत्म-विश्वास और उन्नत जीवन जीने के लिए सामायिक और स्वाध्याय जन-जन के लिए सर्वांगीण विकास का सरल उपाय है। इसी के द्वारा हम सुधरेंगे और जग सुधरेगा। विश्व-शान्ति और विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास कर प्राणीमात्र के कल्याण की मंगल कामना में हम अपना योगदान दे सकते हैं और यही आचार्य श्री की विशेष देन थी।

—७५, काशीपुरी, भीलवाड़ा

'आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान' के लिए १५ मार्च, १९९२ तक कृतियां आमंत्रित

'जिनवाणी' के दिसम्बर, ९१ के अंक में उक्त सम्मान के लिए जैन धर्म सम्बन्धी मौलिक कृतियाँ ७ जनवरी, ९२ तक आमंत्रित की गई थीं। अब यह तिथि बढ़ाकर १५ मार्च कर दी गई है। ग्यारह हजार की राशि के उक्त सम्मान के लिए कृपया ग्रंथ की चार प्रतियाँ शीघ्र भेजें।

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, बापू बाजार, जयपुर-३०२ ००३
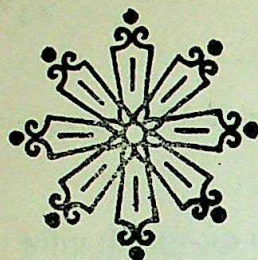
आध्यात्मिक जगत् के सन्त-शिरोमणि

☐ श्री अमृतलाल मेहता

प्रातः स्मरणीय, बाल-ब्रह्मचारी, स्वाध्याय-साधना प्रेरक, श्रीमद् जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० केवल रत्नवंशीय सम्प्रदाय के आचार्य ही नहीं अपितु सम्पूर्ण आध्यात्मिक जगत् के सन्त-शिरोमणि थे।

आपका सम्पूर्ण जीवन स्व-पर कल्याण में समाहित था। सामायिक एवं स्वाध्याय को परस्पर पूरक बना, जीवन की सार्थकता का बोध आप जन-जन को कराते थे। आप जैनाचार्य ही नहीं अपितु एक युग की सजीव प्रतिकृति थे।

पूज्य गुरुदेव के प्रथम दर्शन का सौभाग्य मुझे श्री रत्न जैन पाठशाला भोपालगढ़ में मिला जहाँ मैं बाल्यावस्था में छात्रावास में विद्याध्ययन कर रहा था। मुझे उस संस्था पर गौरव है।

आचार्य प्रवर सदैव अप्रमत्त बन स्वाध्याय एवं मौन साधना में संलग्न रहते थे। उसी का परिणाम है कि आपकी दृष्टि जिस पर पड़ती, वह कृतकृत्य हो जाता।

विशाल भारत के चारों ओर फैले श्रावक-श्राविकाओं को सन्त-सतियों के चातुर्मास का लाभ यदा-कदा ही मिल पाता है। आपने चातुर्मास से वंचित क्षेत्रों में पर्वाधिराज पर्युषण आराधना करवाने हेतु स्वाध्याय संघों के निर्माण की सद्प्रेरणा दी।

प्राचीन जैन गुरुकुल के आज राजकीय अनुदान प्राप्त विद्यालयों में परिणत होने से उनकी भूमिका बदल गई है। अतः प्राकृत-संस्कृत भाषा के साथ-साथ नवीन ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन की समन्वित शैली पर स्वाध्याय विद्यापीठ की स्थापना कर समाज में विद्वानों को तैयार करने का जो सदुपदेश आपने दिया, उसी के परिणामस्वरूप जयपुर, जलगाँव आदि क्षेत्रों में स्वाध्याय विद्यापीठ समाज सेवारत हैं।

केवल २० वर्ष की वय में आचार्य पद पर आरूढ़ हो, निरभिमानता-पूर्वक जिस गरिमा के साथ शासन को दीपाया, वह जन-मन के मानस-पटल सदैव स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

कहा जाता है कि आचार्य को समाधि मरण की स्थिति दुर्लभता से प्राप्त होती है, किन्तु आप इसके अपवाद हैं। आपने मृत्यु को विजय उत्सव मान कर गले लगाया।

आपकी सद्प्रेरणा से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा प्रकाशित 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका का प्रकाशन उत्तरोत्तर अपने स्तर में गतिमान है।

आपके व्याख्यानों का संग्रह 'गजेन्द्र व्याख्यान माला' के नाम से हुआ है। आपकी प्रेरणा से संस्थापित अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् संगोष्ठियों के आयोजन एवं टैक्ट प्रकाशन आदि के द्वारा समाज के उन्नयन में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान कर रही है।

आचार्य श्री की सद्प्रेरणाएँ हमारे जीवन-पथ को आलोकित कर हमें अनुप्राणित करती रहें, यही भावना है।

प्रज्ञा पुरुष को कोटि-कोटि वन्दन।

—९६१, सैक्टर ४, हिरण मगरी, उदयपुर (राज०)

मृत्यु का डर

☐ श्री धर्मचन्द लोढ़ा

एक बार एक सज्जन ने साधु महाराज से पूछा कि आपका जीवन कितना पवित्र, कितना निष्पाप है। हमारा जीवन ऐसा क्यों नहीं होता? महाराज बोले कि मेरी बात छोड़ो। मुझे मालूम हुआ है कि सात दिन बाद तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी।

यह सुनकर वह सज्जन हक्का-बक्का रह गया और तुरन्त घर की ओर भागा। उसने झटपट अपने सभी लेन-देन और अधूरे कामकाज निपटाये तथा बिस्तर पर पड़ गया। छह दिन व्यतीत हो गये, सातवें दिन मुनि उनसे मिलने आ पहुँचे। तुरन्त उस सज्जन ने प्रणाम किया। महाराज ने पूछा कि इन छह दिनों में तुमने कितना पाप किया? उन्होंने उत्तर दिया कि महाराज पाप का विचार करने की फुरसत नहीं मिली।

मुनि ने हँसते हुए उत्तर दिया—"अब समझे, हमारा जीवन इतना निष्पाप क्यों है? मरण रूपी शेर सामने खड़ा रहे तो पाप कैसे सूझेगा? मरण का सतत स्मरण पाप से मुक्ति का उपाय है।"

—बीसलपुर हाउस, अग्रवाल धर्मशाला के पीछे देवली—३०४८०४ (टोंक) राज०

समाज-दर्शन

आचार्य श्री की जयन्ती 'स्वाध्याय दिवस' के रूप में मनायें

जोधपुर—सामायिक स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक स्वर्गीय जैनाचार्य पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८२वीं जन्म जयन्ती दिनांक १६-१-९२ को आ रही है जिसे 'स्वाध्याय दिवस' के रूप में मनाने का निश्चय किया है। इस उपलक्ष्य में क्षेत्र की अनुकूलतानुसार विभिन्न कार्यक्रम आयोजित होंगे। उस हेतु कुछ कार्यक्रमों की रूपरेखा भिजवायी जा रही है, जिसकी प्रेरणा करने पर विभिन्न क्षेत्रों में इस शुभ दिवस का कार्यक्रम स्वाध्याय साधना के प्रचार-प्रसार के रूप में मनाया जा सके—

१. सामूहिक दया, पौषध एवं स्वाध्याय का आयोजन करना।

२. अखण्ड जाप का आयोजन।

३. स्वाध्यायी बनने और बनाने का संकल्प लेना।

४. विशिष्ट स्वाध्यायियों का सम्मान करना।

५. जनकल्याणकारी योजना, स्वधर्मी सहायता, वात्सल्य एवं मानव राहत के कार्यक्रम प्रारम्भ करना।

६. नियमित स्वाध्याय करने का संकल्प लेना।

७. धार्मिक पाठशालाएँ एवं पुस्तकालय प्रारम्भ करना।

८. साप्ताहिक सामूहिक स्वाध्याय का संकल्प लेना।

९. स्वाध्याय विषय पर प्रश्नमंच, विचार गोष्ठी, निबन्ध, भाषण एवं भजन प्रतियोगिताएँ आदि आयोजित करना।

१०. विभिन्न संचार माध्यमों एवं समाचार-पत्रों में प्रासंगिक लेख छपवाने की व्यवस्था करना।

इसके अतिरिक्त स्वाध्याय संघ से समाज के प्रत्येक वर्ग को जोड़ने के उद्देश्य से निर्धारित की गयी विभिन्न सदस्यता श्रेणियों में अपनी क्षमतानुसार सदस्य बनने एवं बनाने का लक्ष्य रखावें—

प्रेमी सदस्य—प्रतिदिन कम से कम २० मिनट स्वाध्याय करने वाले तथा साप्ताहिक सामायिक करने वाले।

नैष्ठिक सदस्य—प्रतिदिन नियमपूर्वक सामायिक एवं स्वाध्याय करने वाले।

सक्रिय सदस्य—पर्युषण में साधु-संतों के चातुर्मास से वंचित क्षेत्रों में जाकर धर्म प्रभावना करने वाले।

अर्थ सहयोगी सदस्य—

सहयोगी सदस्य—पाँच वर्ष तक प्रति वर्ष २५०/- रुपये अथवा एकमुश्त १२५०/- रुपये देने वाले।

संवर्द्धक सदस्य—पाँच वर्ष तक प्रतिवर्ष ५००/– रुपये अथवा एकमुश्त २५००/- रुपये देने वाले।

संरक्षक सदस्य—पाँच वर्ष तक प्रति वर्ष १०००/- रुपये अथवा एकमुश्त ५०००/- रुपये देने वाले।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस सन्दर्भ में व्यापक योजना बनाकर कार्यक्रम आयोजित किये जायें तो समाज के सदस्यों को स्वाध्याय संघ एवं जनकल्याण की गतिविधियों से जोड़ने में ये कार्यक्रम निमित्त बन सकेंगे एवं आचार्य श्री के प्रति श्रद्धा की सच्ची अभिव्यक्ति व्यक्त कर सकेंगे।

—चंचलमल चौरड़िया
सचिव, स्वाध्याय संचालन समिति

दिनांक ३०-१२-९१ के संत-सती समाचार

१. आचार्य श्री हीराचंद जी म. सा. ठाणा ४ से पचपदरा सुख-शांति से हैं।

२. उपाध्याय श्री मानचंद जी म. सा. ठाणा ३ पीपाड़ सुख-शांति से हैं।

३. पं० रत्न श्री शुभेंद्र मुनिजी ठाणा २ खाराबेरा सुख-शांति से हैं।

४. श्री ज्ञान मुनिजी ठाणा ५ बिसलपुर सुख-शांति से हैं।

५. जोधपुर–घोड़ों के चौक–स्थिरवास प्रवर्तनीजी म० सा०, उप प्रवर्तनीजी म० सा० ठाणा 6 से सुख-शांति से विराजित हैं।

६. जोधपुर पावटा—श्री सायर कंवर जी म० सा० ठाणा ३ से विराजते हैं और श्री [illegible] जी म० सा० के घुटने में दर्द है।

७. शासनप्रभाविका परम विदुषी श्री मैनासुन्दरी जी म० सा० ठाणा ८ सवाई माधोपुर क्षेत्रों में विचरण कर रही हैं।

८. श्री संतोष जी म० सा० ठाणा ५ किशनगढ़ की तरफ विचरण कर रही हैं।

९. श्री शांतिकंवर जी म० सा० ठाणा ४ हीरादेसर की तरफ विचरण कर रही हैं।

१०. श्री तेजकंवर जी म० सा० ठाणा ३ दूदू की तरफ विचरण कर रही हैं।

११. श्री सुशीला कंवरजी म० सा० ठाणा ५ आगोलाई की तरफ विचरण कर रही हैं।

स्वर्गीय आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८२वीं जयन्ती पौष शुक्ला चतुर्दशी (१९ जनवरी, रविवार) पर आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म० सा० ठाणा ४ के बालोतरा, उपाध्याय श्री मानचन्द जी म० सा० ठाणा ५ के पाली व पं० र० श्री ज्ञानमुनिजी म० सा० ठाणा ५ के पीपाड़ विराजने की संभावना है।

—भंडारी सरदारचन्द जैन

सन्त-विहार-चर्या

रत्न वंश के अष्टम पट्टधर परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचंद्र जी म० सा० **जोधपुर** का सफल चातुर्मास पूर्ण कर, पावटा, महामन्दिर, सरदारपुरा, देवनगर, प्रतापनगर, कमला नेहरू नगर, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड आदि उपनगरों को फरसते हुये दिनांक १६-१२-९१ को ठाणा ४ से **पाल ग्राम** पधारे जहाँ श्री चंपालाल जी बाफणा ने आजीवन शीलव्रत ग्रहण किया। यहाँ बाफणा परिवार के ६ घर हैं। यहाँ से बोरा नाडा, नार नाडी, भाण्ड होते हुये दि० १९-१२-९१ को **धवां ग्राम** पधारे जहाँ सोनराज जी लूंकड़ के यहाँ विराजे। यहाँ लूंकड़ परिवार के ८ घर एवं भूरट, बुरड, गोलेच्छा आदि १२ घर स्था० जैन समाज के हैं। ग्राम के श्रावकों में धर्म के प्रति अच्छी लगन है। सर्वश्री हस्तीमल जी, इन्द्रमल जी, पारसमल जी लूंकड़, नेमीचन्द जी एवं बहन सागर आदि ने सेवा में रस लिया। आचार्य प्रवर यहाँ ३ दिन विराजे। यहाँ पर श्री हनुमानचन्द जी सालेचा सपरिवार बालोतरा से दर्शनार्थ पधारे।

यहाँ से डोली होते हुये **कल्याणपुर** २४-१२-९१ को पधारे। जहाँ स्थानकवासी जैनों के १२ घर खुले हैं। यहाँ श्री केशरीमल जी, रतनलाल जी, चन्दनमल, जी, चम्पालाल जी, मांगीलाल जी सरपंच पारसमल जी एवं युवा बन्धु वगन बाबू आदि ने धर्म ध्यान सेवा का लाभ लिया। इस बीच बालोतरा के सुश्रावक श्री रूपचंद जी कवाड ने धवा से कल्याणपुर तक ४ दिन सेवा का लाभ लिया। **डोली ग्राम** में भीलवाड़ा संघ के अधिकारी गण चातुर्मास की विनती का स्मरण दिलाने हेतु उपस्थित हुए। डोली ग्राम में ही बालोतरा संघ के श्री धनराज जी चोपड़ा, रिकबचंद जी हुण्डिया, ओमप्रकाश जी बांठिया एवं मीठालाल जी 'मधुर' सेवा में दर्शनार्थ पधारे। साथ ही शीघ्र बालोतरा पधारने की विनती की। यहाँ पर श्री माणक चंद जी चोपड़ा, माणकचंद जी सालेचा, पृथ्वीराज जी सालेचा बालोतरा से सेवा में आये। यहाँ से आचार्य श्री बिहार फरमावें, इसके पूर्व पचभद्रा संघ के श्रावकगण भगवान् पार्श्वनाथ की जयन्ती पचभद्रा में धर्मध्यान पूर्वक हो, ऐसी संभावनाएँ लेकर उपस्थित हुए। उनकी भावनाओं पर आचार्य प्रवर ने स्वीकृति साध्वोचित आगारों के साथ फरमाई। कल्याणपुर आचार्य श्री के २३-१२-९१ को विहार कर लेने के बाद समदड़ी संघ का शिष्टमंडल विनती लेकर उपस्थित हुआ किन्तु पचभद्रा की स्वीकृति होने के कारण मंगल पाठ श्रवण कर लौट गया। यहाँ मीठालाल जी 'मधुर' सपरिवार सेवा में उपस्थित हुए। २७-१२-९१ को कुडी होते हुये दि० २८-१२-९१ को **पचभद्रा** पधारे। कुडी में श्री भेरूजी बाफना, सोहनराज जी हुंडिया दर्शनार्थ आये। पाली से श्री अनिलकुमार जी मेघडा दर्शनार्थ पधारे। यहाँ से बालोतरा पधारने की संभावना है।

—चंदनमल लूंकड़
उपाध्यक्ष, श्रावक संघ, पचभद्रा

अखिल भारतीय प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता

प्रश्न—

१. मुझे जैन होने पर गर्व है क्योंकि..........

२. 'नवकार मंत्र' संसार का सर्वश्रेष्ठ महामंत्र है क्योंकि..........

३. सच्चा धर्म क्या है ?..........

४. आपके आराध्य देव कौन हैं ?..........

५. प्राणी को मुक्ति कब प्राप्त हो सकती है ?..........

६. 'जैन एकता' के लिये एक संक्षिप्त नारा (स्लोगन) सुझाइये..........

नियम

१. प्रतियोगिता में भाग लेने के लिये आपका जैन होना अनिवार्य है।

२. प्रतियोगिता में १५ से ४० वर्ष तक की आयु के व्यक्ति, महिलाएँ भाग ले सकते हैं।

३. प्रत्येक प्रश्न का उत्तर एक सादे कागज पर स्वच्छ अक्षरों में मात्र एक पंक्ति में देना है।

४. ध्यान रहे, प्रश्नों के उत्तर स्वरचित, स्वलिखित एवं मौलिक हों क्योंकि निर्णय हेतु आवश्यकता पड़ने पर मौखिक उपप्रश्न भी पूछे जा सकते हैं।

५. प्रतियोगिता का निर्णय तीन विद्वान् निर्णायकों की एक कमेटी करेगी जिसका निर्णय अंतिम एवं मान्य होगा।

६. सफल प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय प्रतियोगियों को क्रमश: ५०१, २५१ एवं १५१ रुपयों के पुरस्कार श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की पुण्य तिथि (दि० १०-५-९२) पर आयोजित समारोह में प्रदान किये जायेंगे। इसके अतिरिक्त पाँच सांत्वना पुरस्कार (प्रत्येक को ५१ रुपये) प्रदान किये जायेंगे।

७. कृपया प्रश्नोत्तर पत्र पर अपना नाम, उम्र एवं पता लिखना न भूलें।

८. प्रश्नोत्तर प्राप्त करने की अन्तिम तिथि ३१ मार्च, १९९२ है।

९. आप अपने प्रश्नोत्तर पत्र को निम्न पते पर डाक द्वारा भिजवा सकते हैं। इसके अतिरिक्त कार्यालय में रखे सीलबन्द डिब्बे में व्यक्तिगत रूप से डालने की व्यवस्था भी रहेगी।

पता—'प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता'
कार्यालय—अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ
जैन स्थानक, घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज०) पिन–३४२ ००१

—**चन्द्रेश भण्डारी**, संयोजक

मण्डल के साहित्य का विक्रय केन्द्र जोधपुर में

जयपुर—सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित साहित्य का एक विक्रय केन्द्र श्रीमान् भण्डारी सरदारचंद जी जैन, द्वारा मैसर्स भण्डारी सरदारचंद एण्ड

सन्स, होलसेल बुक सेलर्स एण्ड स्टेशनर्स, त्रिपोलिया बाजार, जोधपुर-३४२००२ (राज०) में प्रारम्भ हो गया है। इसी तरह से श्रीमान् सरदारचंद जी भण्डारी, जोधपुर को 'जिनवाणी' पत्रिका के सदस्य बनाने के लिए अधिकृत किया गया है। जो कोई भी सज्जन मण्डल का साहित्य जोधपुर में क्रय करना चाहते हों या 'जिनवाणी' के सदस्य जोधपुर में बनना चाहते हैं वे श्रीमान् सरदारचन्द्र जी भण्डारी से उपयुक्त पते पर सम्पर्क करने की कृपा करावें।

—**चैतन्यमल ढड्ढा**, मंत्री

अवधि में बढ़ोतरी

'जिनवाणी' अंक नवम्बर, १९९१ पृष्ठ संख्या ६२ पर प्रकाशित समाचार से सम्बद्ध दो प्रतियोगिताओं की अवधि महावीर जयन्ती १५ अप्रेल, १९९२, बुधवार तक बढ़ा दी गई है। कृपया संपर्क करें। डॉ० सोहनलाल संचेती, "संचेती भवन" चाँदी हॉल, जोधपुर (राज०)–३४२ ००१.

महावीर पुरस्कार वर्ष १९९० व वर्ष १९९१

प्रबन्धकारिणी कमेटी, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी द्वारा संचालित जैन विद्या संस्थान का वर्ष १९९० का ५००१/– रुपये का महावीर पुरस्कार डॉ० भागचन्द जैन "भास्कर" को उनकी कृति "आचार्य हरिषेण—प्रणीत धम्मपरिक्खा" के लिए प्रदान किया गया है। वर्ष १९९१ के 'महावीर पुरस्कार' के लिए जैनधर्म, दर्शन, इतिहास, साहित्य, संस्कृति आदि से सम्बन्धित किसी भी विषय की पुस्तक/शोध प्रबन्ध की चार प्रतियाँ दिनांक ३१ मार्च, १९९२ तक आमंत्रित हैं। इस पुरस्कार में ११००१/– रुपये एवं प्रशस्ति पत्र प्रदान किया जायगा। १ जनवरी, १९८८ के पश्चात् प्रकाशित पुस्तक ही इसमें सम्मिलित की जा सकती है। अप्रकाशित कृतियां भी प्रस्तुत की जा सकती हैं। अप्रकाशित कृतियों की तीन प्रतियाँ स्पष्ट टंकण/फोटोस्टेट की हुई तथा जिल्द बंधी होनी चाहिए। नियमावली तथा आवेदन का प्रारूप प्राप्त करने के लिए संस्थान कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

—ज्ञानचन्द्र खिन्दूका
संयोजक, जैनविद्या संस्थान समिति
भट्टारकजी की नसियां
सवाई रामसिंह रोड, जयपुर–३०२ ००४

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की कार्यकारिणी की बैठक सम्पन्न

जोधपुर—यहाँ २० नवम्बर को मण्डल के अध्यक्ष डॉ० सम्पतसिंह जी भाण्डावत की अध्यक्षता में मण्डल की कार्यकारिणी की बैठक सम्पन्न हुई। इसमें मण्डल का वर्ष १९९०–९१ के आय-व्यय का अंकेक्षित हिसाब एवं वर्ष १९९१–९२ का बजट सर्वसम्मति से पारित किया गया। साहित्य के प्रकाशन, वितरण एवं विक्रय तथा स्वाध्याय संघ की प्रवृत्ति को सक्रिय एवं गतिशील बनाने के सम्बन्ध में विचार किया गया। जनवरी, १९९३ से **'जिनवाणी** पत्रिका' का ५०वां वर्ष आरम्भ हो जायेगा। अतः स्वर्ण जयन्ती महोत्सव मनाने का निर्णय लिया गया। इसके लिए श्री नवरत्नमल जी जैन, बम्बई के संयोजन में एक वित्त समिति का गठन किया गया। **'जिनवाणी'** में प्रकाशित विगत ५० वर्ष की श्रेष्ठ रचनाओं का चयन कर एक विशेषांक प्रकाशित करना भी तय किया गया। आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की पुण्य स्मृति में जैन धर्म से सम्बन्धित विशिष्ट ग्रन्थ पर ग्यारह हजार रुपये का सम्मान पुरस्कार प्रतिवर्ष देने का निर्णय किया गया और इसके लिए प्रो० कल्याणमल जी लोढ़ा के संयोजन में एक चयन समिति गठित की गई। जयपुर में प्रथम सम्मान समारोह आयोजित करने का निर्णय लिया गया। प्रति वर्ष ५०००/– रु० का **'युवा प्रतिभा शोध साधना, सेवा सम्मान पुरस्कार'** देने का निर्णय किया गया। वर्ष १९९१ के लिए डॉ० संजीव भानावत का मनोनयन सर्व सम्मति से किया गया। अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री मोफतराज जी मुणोत एवं न्यायाधिपति श्री जसराज जी चौपड़ा का सान्निध्य इस बैठक में प्राप्त हुआ।

हार्दिक अभिनन्दन एवं बधाई

कोटा—यहाँ के प्रमुख कवि एवं साहित्यकार श्री प्रेमजी प्रेम के राजस्थानी कविता संग्रह 'म्हारी कवितावां' को साहित्य अकादमी ने पुरस्कृत किया है। उन्हें पच्चीस हजार की पुरस्कार राशि, प्रशस्ति पत्र एवं ताम्रपत्र एक विशेष समारोह में प्रदान किया जायेगा।

बैंगलोर—उजिया एजेन्सीज के श्री सुनील सांखला को व्यवसाय में उचित व्यवहार, उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा एवं सामाजिक कार्यों आदि के लिए **'जमनालाल बजाज उचित व्यवहार पुरस्कार'** प्रदान किया गया है। इसके पूर्व भी श्री सांखला अपनी व्यावसायिक कुशलता व समाज सेवा के लिए 'उद्योग श्री' की उपाधि से अलंकृत किये जा चुके हैं।

जयपुर—सुदूर संवेदन प्रभाग बी. एम. बिडला विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र जयपुर के आचार्य एवं अध्यक्ष डॉ० सरदार सिंह ढाबरिया को आठवीं योजनावधि (१९९२–९७) के लिए केन्द्रीय पर्वतीय क्षेत्र सलाहकार समिति, योजना आयोग, भारत सरकार का सदस्य मनोनीत किया गया है।

जयपुर—प्रमुख समाजसेवी एवं लेखक डॉ० गुलाबसिंह दरड़ा भारतीय प्रशासनिक सेवा की चयनित वेतन श्रृंखला में विशिष्ट शासन सचिव, कार्मिक व प्रशासन सुधार के पद पर पदोन्नत किये गये हैं।

उक्त सभी महानुभावों को हार्दिक बधाई व अभिनन्दन।

संक्षिप्त समाचार

अहमदनगर—श्री त्रिलोकरत्न स्था० जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड द्वारा संचालित जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, प्रथमा, सामायिक एवं प्रतिक्रमण की परीक्षाएँ वर्ष में दो बार लेने का निश्चय किया गया है। तदनुसार आगामी परीक्षाएँ 1 मार्च, 1992 से प्रारम्भ होंगी। आवेदन पत्र 31 जनवरी, 1992 तक कार्यालय में अवश्य भिजवा देवें।

भवानीमंडी—कन्याकुमारी से कश्मीर तक की एकता यात्रा के प्रारम्भ में निरीह निर्दोष मूक पशु की बलि देने की अहिंसा प्रचार समिति के अध्यक्ष श्री माणकचंद जी बोहरा एवं प्रमुख समाजसेवी व लेखक श्री राजेन्द्रप्रसाद जी जैन आदि ने घोर भर्त्सना की है।

दिल्ली—श्री कमल मुनि 'कमलेश' की प्रेरणा से अ० भा० अहिंसा अभियान की गतिविधियों के संचालन के लिए श्री मुन्नीलाल जी जैन चूड़ीवाले ने अशोक विहार स्थित अपना तीन मंजिल का बंगला समर्पित किया है। महिलाओं में जागृति लाने के लिए 'चन्दनबाला महिला सेवा संघ' का गठन भी किया गया है।

गम्भीरा—प्रमुख पत्रकार श्री बाबूलाल जैन 'उज्ज्वल' के संयोजन में उनके अपने गाँव में 14 दिसम्बर को विदुषी महासती श्री मैना सुन्दरी जी म० सा० आदि ठाणा ८ के सान्निध्य में आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की अष्टम मासिक पुण्य तिथि का आयोजन कई रचनात्मक धार्मिक कार्यों के साथ सम्पन्न हुआ। बजरिया, आलनपुर, सवाईमाधोपुर, कुश्तला, पचाला, चोरू, समीधि, आदर्शनगर, [illegible] आदि लगभग ३० श्री संघों के दर्शनार्थी बड़ी संख्या

में उपस्थित हुए। इस अवसर पर श्री उज्ज्वल ने एक नई योजना का शुभारम्भ किया, जिसके अनुसार गांव में हर कुए पर पानी छान कर पीने हेतु हर पनिहारिन को एक-एक कपड़ा वितरित किया गया। गांव के कई किसानों एवं जैनेतर बन्धुओं ने सप्त कुव्यसन त्याग के नियम ग्रहण किये।

उज्जैन—स्वाध्याय की प्रवृत्ति को बढ़ाने हेतु 'महावीर स्वाध्याय चल पुस्तकालय' प्रारम्भ किया जा रहा है जिसमें घरों में जाकर पुस्तकें दी जायेंगी अत: जिन महानुभावों के पास धार्मिक पुस्तकें हों और उनके उपयोग में न आ रही हों तो वे उक्त पुस्तकालय के लिए इस पते पर अपनी पुस्तकें भेजें। —पारसमल चौरड़िया, कैलाश टाकीज के सामने, उज्जैन।

शोक श्रद्धांजलि

दिल्ली—यहाँ करोल बाग स्थित उप प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री बनवारी लाल जी म० सा० का स्वर्गवास हो गया। प्रवर्तक श्री रमेश मुनिजी के सान्निध्य में २० दिसम्बर को शान्ति सभा का आयोजन किया गया जिसमें दिवंगत आत्मा के त्याग, वैराग्यमय संयमी जीवन पर विशेष प्रकाश डाला गया।

समदड़ी—यहाँ स्थिरवास महासती श्री बक्सू जी का ८५ वर्ष की आयु में २ दिसम्बर को स्वर्गवास हो गया। ६० वर्ष की आयु में आपने दीक्षा ग्रहण की और २५ वर्ष तक संयम का दृढ़तापूर्वक निरतिचार पालन किया।

दुर्ग—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री केवलचंद जी श्रीश्रीमाल का ६४ वर्ष की आयु में १२ दिसम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आप राजस्थान में तिवरी गाँव के निवासी थे। आप सामाजिक, धार्मिक सेवा-कार्यों में रुचि लेते थे। आप स्थानीय जैन संघ के अध्यक्ष रहे और संत-सतियों की सेवा में सदैव आगे रहते थे। आप प्रतिदिन सामायिक और स्वाध्याय करते थे तथा कई वर्षों से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर रहे थे। आपने कई अठाई, ग्यारह, पन्द्रह व मासखमण जैसी तपस्याएँ की थीं। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

धमतरी—यहाँ के धर्मनिष्ठ श्रावक श्री मनसुखलाल जी लोढ़ा का ७८ वर्ष की आयु में [illegible] को आकस्मिक निधन हो गया। बचपन

से आपकी धर्म के प्रति विशेष रुचि थी और २५ वर्ष की आयु से ही प्रतिदिन सामायिक व स्वाध्याय करते थे। ४० वर्ष की आयु से आपने जमीकन्द एवं रात्रि भोजन का त्याग कर दिया था। आपने कई नियम प्रत्याख्यान ले रखे थे। संत-सतियों की सेवा में आप सदैव आगे रहते थे।

जोधपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री सुगनचन्द जी चौरड़िया का सड़क दुर्घटना में २६ दिसम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप सरल प्रकृति के सेवाभावी श्रद्धानिष्ठ श्रावक थे। धर्मप्रेमी सुश्रावक श्री बस्तीमल जी चौरड़िया के आप बड़े भाई थे।

जोधपुर—धर्मपरायण श्रीमती अमृतकँवर चोरड़िया धर्मपत्नी स्वर्गीय श्री कल्याणमल जी चौरड़िया का ८८ वर्ष की आयु में लम्बी अस्वस्थता के पश्चात् पौष कृष्णा दशमी दिनांक ३०-१२-९१ को दोपहर को बाद जोधपुर में स्वर्गवास हो गया।

आपकी धार्मिक क्रियाओं एवम् संत-सतियों के सत्संग में विशेष रुचि थी। स्वस्थ अवस्था में आप अपना अधिकांश समय जप-तप, सामायिक-स्वाध्याय में ही व्यतीत किया करती थीं। आप अपने ट्रस्ट के माध्यम से विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं में आजीवन सदस्य के रूप में तथा जनसेवा एवम् धार्मिक अनुष्ठानों में अपने अर्थ का सदुपयोग करने हेतु तत्पर रहती थीं। आपकी प्रेरणा से ही आपका सारा परिवार धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों हेतु बहुत ही सक्रिय है। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री कनकमल जी चोरड़िया मद्रास साहुकार पेट स्थानकवासी श्रावक संघ के अध्यक्ष हैं, वहीं श्री प्रकाशमल जी चोरड़िया मंत्री तथा जैन युवक संघ के अध्यक्ष व 'प्रश्न मंच कार्यक्रम' के प्रेरणा-स्रोत हैं। आपके तृतीय पुत्र श्री प्रसन्नमल जी जो चंगलपेट (तमिलनाडू) में गोद चले गये, वहाँ की सामाजिक एवं धार्मिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से अग्रणी हैं, तथा अपने धन का सद्कार्यों में उपयोग करने हेतु तत्पर रहते हैं। सबसे छोटे पुत्र श्री चंचलमल जी चोरड़िया स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ संचालन समिति के सचिव हैं, तथा अहिंसक चिकित्सा पद्धतियों के प्रचार-प्रसार हेतु प्रयत्नशील हैं एवम् जोधपुर की विभिन्न स्वयंसेवी

संस्थाओं में प्रमुख पदाधिकारी के रूप में कार्यरत हैं। आपकी पुत्री श्रीमती सज्जन जी गत ४० वर्षों से अधिक समय से कन्याओं के धार्मिक शिक्षण एवं संस्कार हेतु घोड़ों के चौक, जोधपुर में स्थित पाठशाला के संचालन में सहयोग दे रही हैं एवं अधिकांश समय संत-सतियों की सेवा में तथा वर्धमान जैन अस्पताल, घोड़ों के चौक में सेवाएँ दे रही हैं। आपकी पुत्रवधू श्रीमती रतन चोरड़िया अखिल भारतीय महावीर जैन श्राविका समिति की भू. पू. महामंत्री रह चुकी हैं। इस प्रकार स्वर्गीय आत्मा अपने पीछे भरा पूरा सुसंस्कारित परिवार छोड़ गई हैं। उनकी भावनानुसार मरणोपरान्त उनकी दीनों आँखें नेत्र कोष को दान दे दी गईं।

भवानीमण्डी—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री नथमल जी नागोता का ७८ वर्ष की आयु में २ जनवरी को असामायिक निधन हो गया। श्री नागोता झालावाड़ स्टेट में जैन समाज के प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने रजवाड़े के जमाने में तिरंगा झंडा थामे, राष्ट्रीय तराने गाते स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लिया। आप संसारी रिश्ते में विदुषी साध्वी श्री कलावती जी, राजमती जी एवं मंगलाजी के ताऊजी थे।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोकविह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—**सम्पादक**

लेखकों से निवेदन

- 'जिनवाणी' में जैन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य एवं संस्कृति तथा नैतिक उन्नयन व सामाजिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं। रचनाएँ मौलिक, अप्रकाशित, प्रेरणादायक एवं संक्षिप्त हों।
- रचना भेजते समय उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लेवें। अस्वीकृत रचना वापस करना सम्भव नहीं है।
- रचना कागज के एक ओर स्पष्ट अक्षरों में लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो।
- स्तरीय रचनाओं के लिए नियमानुसार मानदेय देने की व्यवस्था है।

—सम्पादक

वर्ष १९९२ के अहिंसक अगताओं की सूची

राजस्थान सरकार के स्वायत्त शासन विभाग ने नोटिफिकेशन संख्या एफ. १ (१६०६) एल. एस. जी./४६ दिनांक ४-१-५०, दिनांक २०-११-६७ व दिनांक १२-८-७४ तथा दिनांक २६-६-८८ के अनुसार वर्ष १९९२ में राज्य में घोषित अहिंसक अगताओं की माहवार वाइज सूची नीचे दी जा रही है। इन दिनों बूचड़ एवं कसाईखाने व पशुओं को कत्ल कर मांसादि का विक्रय करना कानूनन बन्द है।

क्र.सं	दिनांक	अगता	वार	घोषित तिथि
१.	२६-१-९२	गणतन्त्र दिवस	रविवार	२६ जनवरी
२.	३०-१-९२	गांधी निर्वाण दिवस	गुरुवार	३० जनवरी
३.	२-३-९२	महाशिव रात्रि	सोमवार	फाल्गुन कृष्णा १३
४.	११-४-९२	रामनवमी	शनिवार	चैत्र शुक्ला ९
५.	१५-४-९२	महावीर जयन्ती	बुधवार	चैत्र शुक्ला १३
६.	१६-५-९२	बुद्ध जयन्ती	शनिवार	वैशाख शुक्ला १५
७.	१५-८-९२	स्वतन्त्रता दिवस	शनिवार	१५ अगस्त
८.	२१-८-९२	कृष्ण जन्माष्टमी	शुक्रवार	भादवा कृष्णा ८
९.	३१-८-९२	गणेश चतुर्थी	सोमवार	भादवा शुक्ला ४
१०.	१-९-९२	ऋषि पंचमी	मंगलवार	भादवा शुक्ला ५
११.	१०-९-९२	अनन्त चतुर्दशी	गुरुवार	भादवा शुक्ला १४
१२.	२-१०-९२	गाँधी जयन्ती	शुक्रवार	२ अक्टूबर
१३.	२४-१०-९२	निर्वाण दिवस	शनिवार	कार्तिक कृष्णा १४
१४.	२५-१०-९२	दीपावली	रविवार	कार्तिक कृष्णा १५
१५.	२६-१०-९२	निर्वाण दिवस	सोमवार	कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा
१६.	१०-११-९२	कार्तिक पूर्णिमा	मंगलवार	कार्तिक शुक्ला १५

नोट :—१. इनके अतिरिक्त श्रम विभाग के आदेश क्रमांक एफ-११ (६) श्रम/८८ दिनांक २२-१२-८८ के अनुसार प्रत्येक शुक्रवार को भी अहिंसक अगता घोषित है।

२. जीव दया प्रेमी कृपया अपने-अपने क्षेत्रों में नगरपालिकाओं/पंचायत समितियों से इनकी पालना के आदेश जारी करा पालना करावें।

—जसकरण डागा
मंत्री
जीव दया मण्डल ट्रस्ट, टोंक

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१) रु. 'जिनवाणी' की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

३०३२. श्री अशोककुमार जी जैन, भोपालगढ़
३०३३. श्री एस. सी. मेहता, कलकत्ता
३०३४. श्री जौहरीलाल जी जितेन्द्रकुमार जी पटवा, जयपुर
३०३५. डॉ० नितन जे. व्यास, बरोड़
३०३६. श्री रमनलाल जी बाबूलाल जी जैन, मण्डावर महुआ
३०३७. श्री साधुराम जी जैन, पदमपुर मण्डी
३०३८. श्री उदित कोठारी संग्रामसिंह कोठारी, जयपुर
३०३९. श्री सुरेश जी सालेचा, जोधपुर
३०४०. श्री धर्मीचन्द नरेन्द्रकुमार चौधरी, फुलिया कलां
३०४१. श्री आर. के. भण्डारी, रांची
३०४२. बीणा सोनी, दिल्ली
३०४३. अमृत दाल मिल, जोधपुर
३०४४. श्री अनिल कमल जी कोठारी, जयपुर
३०४५. श्री जी. सी. लोढ़ा, जयपुर
३०४६. श्री दुर्गाप्रसाद जी जैन, जयपुर
३०४७. श्री एम. एम. कर्नावट, जोधपुर
३०४८. श्री महावीर जैन, कोटा
३०४९. श्री बाबूलाल जी पंकजकुमार जी जैन, सवाईमाधोपुर
३०५०. श्री रवीन्द्र जी कुम्भट, जोधपुर
३०५१. श्री अनिलकुमार जी लोढ़ा, जयपुर
३०५२. डॉ० अजितराज जी रांका, भडगांव
३०५३. श्री अजितकुमार जी जैन, खेरली
३०५४. श्री घनश्याम जी जैन, सवाईमाधोपुर
३०५५. श्री रमेशचन्द जी नरेन्द्रकुमार जी जैन, सवाईमाधोपुर

३०५६. श्री धनसुरेश जी आशिष जी जैन, सवाईमाधोपुर
३०५७. श्री पारसमल जी रमेशकुमार जी लूणिया, पाली मारवाड़
३०५८. श्री दिनेशकुमार जी जैन, मन्दसौर
३०५९. श्री संतोषकुमार जी चौरडिया, मन्दसौर
३०६०. श्री शिवसिंह जी माणकलाल जी चौधरी, मन्दसौर
३०६१. श्री जितेन्दकुमार जी तातेड़, मन्दसौर
३०६२. श्री सुरेश जी पोरवाल, इन्दरगढ़
३०६३. श्री नवरत्नमल जी गिडिया, जोधपुर

'जिनवाणी' को सहायतार्थ भेंट

१००१/– श्रीमती सरदार कुमारी हीरावत, जयपुर
पौत्र होने की खुशी में जिनवाणी को भेंट

१०००/– श्री ज्ञानचन्द जी चौपड़ा, अजमेर के सुपुत्र एवं श्री सुनील चौपड़ा के लघु भ्राता श्री विमल चौपड़ा के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

२०१/– डॉ० पदमचंद जी मुणोत, जोधपुर
चि० सुबोध के विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

२०१/– श्री विनोदकुमार जी गांधी, अजमेर
पूज्य दादाजी श्री हीरालाल जी गांधी की पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/– श्री अनिल जी जैन, दिल्ली
स्व० श्रीमती बीनादेवी की स्मृति में भेंट।

१०१/– श्री भँवरलाल जी बोथरा, जयपुर
चि० राजा के विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/– श्री खेमराज जी मेहता, मसर्स प्रकाश साड़ी कार्नर, ग्वालियर
द्वारा अपने पूज्य पिताजी की पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/– मैसर्स रांका ब्रदर्स, बैंगलोर
श्री किरणराज जी के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/– श्री एस. एस. जैन संघ, तिरुपति
तिरुपति में पं० रत्न श्री विचक्षण मुनिजी के चातुर्मास सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

५१/– श्री घेबरचन्द जी रेबलचंद जी श्रीमाल, दुर्ग
स्व० श्री केवलचन्द जी श्रीमाल की पुण्य स्मृति में जिनवाणी को भेंट।

५०– श्री मूलचन्द जी चतर, रामपुरा, कोटा।
पूज्य श्री बाघमार जी चतर की पुण्य स्मृति में भेंट।

२१/– श्री भँवरलाल जी रांका, प्रतापगढ़
श्री लाभचन्द जी म० सा० की प्रथम पुण्य तिथि के उपलक्ष्य में भेंट।

२१/– श्री हरीप्रसाद जी जैन, मण्डावर महुवा रोड
चि० गजेन्द्र कुमार जैन के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

२१/– श्री केवलचन्द जी मूथा, रायपुर
सुपुत्र के विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

२१/– श्री शान्तिमल जी जैन, भवानीमण्डी
मातुश्री बसन्तबाई की पुण्य स्मृति में भेंट।

२१/– श्री राजकुमार जी गोखले, पचपहाड़
स्व० पूनमचन्द जी गोखले की प्रथम पुण्य स्मृति में भेंट।

२१/– श्री कैलाशचन्द जी अशोककुमार जी बोहरा, भवानीमण्डी
दिवंगत आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८२वीं जन्म जयन्ती की स्मृति में भेंट।

११/– श्री कालूलाल जी, भवानीमण्डी
श्री बाघमल जी कुण्डल बोहरा की स्मृति में भेंट।

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

□ □ □

जय हस्ती – गुरु माऊली | श्री चन्दन चौरड़िया

ओ मैया मोरी । मारो मन नहीं लागे ।
छोड़ दियो तू मारो साथ । कब होगी मुलाकात ।।टेर।।

बित गया वो चार प्रहर । ओ सूरज भी डूब गयो ।
आयी नहीं अभी लौटकर । बो गइया मोरी..........।।१।।

बिखर गया सारा मोती । टूट गयी रेशम की डोरी ।
भवसागर पार कर लियो । टूट गयी ममता की डोरी ।।२।।

बज गयी घंटी ऽ ऽ ऽ । हुई झंकार ऽ ऽ ।
खुल गया पिंजड़ारा द्वार । उड़ गयो पंछी आकाश ।।३।।

बादरा में चमकी बिजलियाँ । दिल पर चल गयी छुरियाँ ।
उड़ गयी आँख की निंदियाँ । सूख गयी प्रेम की नदियाँ ।।४।।

बिछाई गयी कोमल कलियाँ । अंगारे भी बन गये फूल ।
गयी तू बहुत दूर ऽ ऽ । खयाल राखज्यो मारो जरूर ।।५।।

जिण मारग सू तू गुजरी । निशा अंधियारी मिट गयी ।
तप-संयम रा राह पर । चंदन-सी खुशबू फैली ।।६।।

—बोदवड़ (जलगाँव)–४२५ ३१०

हस्ती हमारे | मधु जैन

हस्ती हमारे स्वर्ग सिधारे,
छोड़ गये हमको किसके सहारे ?

रूपा के प्यारे थे, केवल दुलारे थे,
जन-जन की वो आँखों के तारे थे,
धर्म की राहें जिसने दिखाई उनको,
शत-शत वंदन हमारा ।।हस्ती० १।।

करुणा वात्सल्य के साकार रूप थे,
सामायिक स्वाध्याय के वो प्रेरक थे,
इतिहास का सर्जन जिसने किया था,
ऐसे थे ज्ञानी गुरुवर हस्ती हमारे
।।हस्ती० २।।

जब हस्ती ने संथारा लिया,
चारों ओर हलचल हो गई,
नरनारी सब दौड़े चले आये सब,
उनके दर्शन के प्यासे थे ।।हस्ती० ३।।

जब हस्ती की अर्थी उठी थी,
सारी दुनिया विह्वल हो गई थी,
ऐसे ज्ञानी गुरुवर युगों-युगों तक,
अजर अमर वो हरदम रहेंगे
।।हस्ती० ४।।

युवारत्न–गति-प्रगति एवं भावी कार्यक्रम –एक रूपरेखा

□ श्री ज्ञानेन्द्र बाफना

समाज, राष्ट्र एवं संघ सभी में सम्यक् विकास एवं उत्तरोत्तर प्रगति में युवाशक्ति की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। विश्व में जितनी भी क्रान्तियाँ हुई हैं, चाहे वे धार्मिक हों अथवा राजनैतिक, उनके नियामक युवक ही रहे हैं। पर जहां युवा शक्ति में उत्साह का वेग होता है, बिना संयम वह उत्साह का अतिरेक सृजन के बजाय अहितमूलक बन जाता है। प्रातः स्मरणीय परम पूज्य आचार्य भगवन् पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. युगमनीषी भविष्यद्रष्टा महा-पुरुष थे। उनकी सुदीर्घ साधनापूत दिव्य दृष्टि ने युवकों की शक्ति को पहिचाना एवं उनकी उस शक्ति को सामायिक, स्वाध्याय एवं संयम (निर्व्यसनता एवं सदाचार) के तीन धागों में संयोजित कर इसे सृजनात्मक मोड़ देने की महती प्रेरणा दी।

परम पूज्य गुरुदेव जहां कहीं पधारते, वे सर्वप्रथम युवकों को प्रेरित करते, उन्हें स्वाध्याय एवं सदाचार की प्रेरणा देते। युवकों की आँखों में उन्हें संघ, समाज व राष्ट्र का उज्ज्वल भविष्य नजर आता। अपने जीवन के संध्याकाल में तो सदाचारी निर्व्यसनी युवकों के संगठन की उनकी भावना अत्यन्त बलवती हो उठी। अपने परमाराध्य परम पूज्य गुरुदेव की विमल प्रेरणा से प्रेरित हो विभिन्न स्थानों पर युवक भक्तजन समय-समय पर संघ सेवा का लाभ लेते रहे। कई स्थानों पर स्थानीय युवक संघों का गठन भी हुआ।

१९९० वर्षावास के पूर्व परम पूज्य गुरु भगवन का जोधपुर पदार्पण हुआ। तब उन्होंने अपने कुछ युवक भक्तों के समक्ष सुव्यवस्थित सुसंगठित युवा संगठन की भावना व्यक्त की। परम पूज्य करुणासिन्धु गुरु भगवन् की प्रेरणा से प्रेरित हो, जोधपुर में इस ओर संगठित प्रयास प्रारम्भ हुआ, घर-घर जन सम्पर्क किया गया एवं सिंहपोल, घोड़ों का चौक, पावटा, महामंदिर, सरदारपुरा आदि केन्द्र गठित कर साप्ताहिक स्वाध्याय संगोष्ठियों का संयोजन प्रारम्भ किया गया।

जब प्रथम बार युवा भक्तजन संगठित हो अपने युगद्रष्टा, युगमनीषी, परम पूज्य गुरु भगवंत की सेवा में वंदन को पहुँचे, तो उन महामनीषी महापुरुष ने उन भक्तों को भ्रातृभाव का मूल मंत्र देते हुए संगठन के लिये आदर्श वाक्य दिया—"हम सब हैं भाई-भाई, हम में नहीं हो जुदाई।"

कितनी पावन थी भगवन् की प्रेरणा। भगवन् ने फरमाया—"जैसे एक मां के उदर से जन्म लेने वाले सांसारिक दृष्टि से भाई होते हैं, वैसे ही आध्यात्मिक बोध से एक देव, एक गुरु एवं एक ही वीतराग प्रणीत के अनुयायी सभी अपने आपको भाई समझें, एक दूसरे के सुख-दुःख में भागीदार बनें एवं सहायक बनें।"

"युवकों को अपने जीवन को व्यसन मुक्त बना कर, देव, गुरु व धर्म का सच्चा स्वरूप समझना है तथा बुजुर्गों के अनुभव एवं संरक्षण में संघ सेवा में जुड़ना है।"

परम पूज्य भगवन् के इसी मंगल उद्बोधन को संघ ने अपना लक्ष्य बना अपनी कार्यनीति नियत की।

सभी शाखाओं में सर्वप्रथम जैन ध्वज के समक्ष सभी सदस्य नवकार महामंत्र का उच्चारण करते हैं व तदनन्तर अपना दाहिना हाथ खड़ा कर संकल्प लेते हैं:—

"मैं जैन हूँ, मुझे जैन होने पर गर्व है।
देवाधिदेव अरिहन्त भगवान् मेरे देव हैं,
सुसाधु मेरे गुरु हैं,
जहाँ दया है, वहाँ धर्म है,
मैं अपने आपको देव, गुरु, धर्म एवं संघ को समर्पित करता हूँ।"

इसके पश्चात् २० मिनट तक का कार्यक्रम शाखायें अपनी-अपनी सुविधानुसार नियत कर सकती हैं। वैसे अभी तक सभी शाखाओं में स्वाध्याय संगोष्ठियों का ही आयोजन किया जाता रहा है।

अन्त में प्रार्थना के रूप में युवा शक्ति को जागृत होने का आह्वान किया जाता है।

यह आह्वान निम्न प्रकार है—

"जगो जैनी सुनो बातें, पड़े हो व्यर्थ क्यों बेगम।
जपो इस मंत्र को हरदम, हमारे तुम, तुम्हारे हम।

यही निगन्ध हो नभ भी कभी नि:शब्द हो जाये ।
तदपि हम तुम रहे हँसते, मिलाये हाथ को हरदम ।।

करोड़ों मिट गये तारे, हवा चलती प्रभाती है ।
न सोने का समय है यह, जगत से हट चला है तम ।।

पढ़ो इतिहास यदि अपना, खुले जो आपकी आँखें ।
तुरन्त यह ज्ञान सच्चा हो, किसी से कम न थे हम ।।

परम पूज्य गुरुदेव के पाली वर्षावास में वहां भी युबक संघ का गठन हुआ एवं वहां युवकों के श्रद्धा समर्पणयुत सेबा एवं तत्परता को देख कर दर्शनार्थी वन्धु चकित रह जाते । वहां के साथियों की अनुपम सेवा, श्रद्धा एवं समय-भोग ने संघ एवं समाज में युवा शक्ति के प्रति एक नूतन विश्वास का संचार किया ।

भोपालगढ़, पीपाड़, सवाईमाधोपुर, बजरिया एवं मद्रास आदि क्षेत्रों में भी विभिन्न धार्मिक आयोजनों में संगठित प्रयास हुए ।

अपने आराध्य गुरुदेव के अदृष्टपूर्ण मरणविजय के अनूठे समाधि संथारे के आध्यात्मिक अनुष्ठान में सभी क्षेत्रों के युवकों ने निमाज-निवासियों के साथ कंधे से कंधा मिला कर संघ सेवा का लाभ लिया ।

साथियों के उत्साह, अभिरुचि एवं समर्पण ने कार्यकर्ताओं को इस संगठन को अ० भा० स्वरूप देने की प्रेरणा दी । उसी के अनुरूप २१ नवम्बर, १९९१ को जोधपुर में प्रथम अखिल भारतीय अधिवेशन का आयोजन करने का निश्चय किया गया । संघ के कार्यकर्ताओं ने राजस्थान के प्रमुख क्षेत्रों में व्यक्तिगत सम्पर्क किया एवं सुदूरवर्ती क्षेत्रों से पत्र व्यवहार द्वारा सम्पर्क किया गया । ज़्यों-ज्यों अधिवेशन का समय सन्निकट आता गया, सदस्यों का उत्साह बढ़ता गया । दिनांक २१ नवम्बर, १९९१ को जयनारायण व्यास स्मृति भवन, जोधपुर में यह अधिवेशन सम्पन्न हुआ । इस अधिवेशन में संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्र बाफना ने संघ के उद्देश्यों एवं गतिविधियों पर प्रकाश डाला । स्थान-स्थान से पधारे हुए प्रतिनिधिगण ने अपने विचार व्यक्त करते हुए अपने महती सुझाव दिये ।

प्रतिनिधिगण के सुझावों को समाहित करते हुए जब संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्र बाफना ने आगामी तीन वर्षों के लिए निम्न कार्यक्रमों की घोषणा की तो सभी सदस्यों की हर्षध्वनि से किये गये अनुमोदन से अधिवेशन-स्थल गूँज उठा—

तीन वर्ष के लिये नियत किया गया कार्यक्रम इस प्रकार है:—

१— भारतवर्ष को नौ क्षेत्रों में बांट कर क्षेत्रिय शाखाओं का गठन एवं क्षेत्रिय शाखाओं के माध्यम से स्थानीय शाखाओं का संगठन।

२— सभी शाखाओं में साप्ताहिक संगोष्ठी कार्यक्रम को व्यवस्थित करना।

३— कम से कम ८१ नये युवा स्वाध्यायी तैयार करना, जो पर्युषण पर्वाराधन में अपनी सेवायें दे सकें।

४— राजस्थान के जैन घरों का सर्वेक्षण।

५— श्री जैन रत्न पुस्तक कोष के माध्यम से सभी साथियों को आवश्यकतानुसार शैक्षणिक सहयोग उपलब्ध कराना।

६— श्री जैन रत्न रक्त कोष के माध्यम से सदस्यों के रक्त ग्रुप की जानकारी रखना एवं रक्त उपलब्ध करवाना।

७— प्रत्येक सदस्य को माह में कम से कम दो घन्टे का समय असहाय, रुग्ण, वृद्ध व्यक्तियों की सेवा हेतु देने के लिये प्रेरित करना।

८— वर्ष में कम से कम एक मेडिकल केम्प का आयोजन करना।

९— अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के उद्देश्यों की पूर्ति एवं गतिविधियों में सहयोगी बनना।

सामना करो, भागो नहीं

□ श्री धर्मचन्द लोढ़ा

बात उस समय की है जब स्वामी विवेकानन्द लखनऊ में कहीं जा रहे थे। उस जगह एक तरफ भारी तालाब और दूसरी तरफ सरकारी ऑफिस की बड़ी-बड़ी दीवारें थीं। उस स्थान पर बहुत से बन्दर रहते थे। बन्दरों ने स्वामीजी का रास्ता रोक लिया और उनके चारों ओर आकर बैठ गये। उन्हें निकट देखकर स्वामीजी घबराकर भागने लगे। किन्तु जितना ज्यादा वे जोर से दौड़ते बन्दर भी उतनी ही तेजी से उनका पीछा करते। उनके हाथ से छुटकारा पाना असम्भव सा हो गया। ऐसे समय में एक बालक ने आकर कहा—"महात्माजी! बन्दरों का सामना करो, भागो नहीं।" ज्योंही स्वामीजी उनके सामने खड़े हुए, वैसे ही बन्दर नौ दो ग्यारह हो गये।

इसी प्रकार समस्त जीवन में, जो कुछ भी भयानक है, साहसपूर्वक उनके सामने खड़ा होना पड़ेगा। यदि हमें मुक्ति या स्वाधीनता का अर्जन करना है, तो प्रकृति को जीतने पर ही हम उसे पायेंगे, प्रकृति से भागकर नहीं। "सामना करो, भागो नहीं" सचमुच ही जीवन का एक बहुत बड़ा मन्त्र है।

—बीसलपुर हाउस,
अग्रवाल धर्मशाला के पीछे, देवली—३०४८०४ (टोंक) राज.

आँखों देखा हाल

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक संघ
का
प्रथम अधिवेशन

धर्मप्राण वीर लोंकाशाह जयन्ती के पावन प्रसंग पर कार्तिक शुक्ला १५ गुरुवार दिनांक २१ नवम्बर, १९९१ को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक संघ का प्रथम अधिवेशन जयनारायण व्यास स्मृति भवन (टाउन हाल) जोधपुर में हर्षोल्लास पूर्वक सम्पन्न हुआ।

अधिवेशन की अध्यक्षता अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष माननीय श्री मोफतराजजी सा० मुणोत ने की। माननीय श्री रणजीतसिंहजी सा० कूमट, शासन सचिव नागरिक आपूर्ति एवं राहत विभाग, राजस्थान, मुख्य अतिथि थे, वहीं विशिष्ट अतिथि के रूप में माननीय श्री महेन्द्र सुराना, प्रबन्ध निदेशक, राजस्थान राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ, जयपुर थे। माननीय न्यायाधिपति श्री जसराजजी चौपड़ा ने प्रभावी भाषा-शैली में युवारत्न बन्धुओं को कर्तव्य-बोध कराते निव्यर्सनी जीवन जीने की महत्ती प्रेरणा अपने उद्‌बोधन में दी।

अधिवेशन में जोधपुर, जयपुर, भीलवाड़ा, पीपाड़, भोपालगढ़, अजमेर, ब्यावर, मेड़ता, पालासनी, बालोतरा, किशनगढ़, पाली, बजरिया, सवाई-माधोपुर, हिण्डौन आदि-आदि क्षेत्रों के युवारत्न बन्धुओं ने भाग लिया।

कार्तिक शुक्ला १५ चातुर्मास का अन्तिम दिन होता है। इस प्रसंग पर विविध ग्राम-नगरों के संघ एवं श्रद्धालु भाई-बहिन अपने-अपने क्षेत्र की विनती लेकर उपस्थित होते हैं। अधिवेशन में आए युवारत्न बन्धु घोड़ों के चौक स्थानक विराजित परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री १००८ श्री हीराचन्द्रजी म० सा० आदि सन्त-सतीगणों के दर्शन-वन्दन प्रवचन-श्रवण हेतु उपस्थित हुए। स्थानीय संघ ने आगत श्री संघों, श्रद्धालु भाई-बहिनों के साथ युवारत्न बन्धुओं का हार्दिक स्वागत किया। भोजन के पश्चात् युवारत्न बन्धु अधिवेशन जयनारायण व्यास स्मृति भवन के लिए प्रस्थान कर गए।

मध्याह्न १ बजे के पश्चात् प्रारम्भ अधिवेशन में युवारत्न बन्धुओं का उत्साह एवं परस्पर प्रेम का ऐसा सुन्दर संगम कि हर युवारत्न बन्धु एक दूसरे से सस्नेह मिलता हुआ एक परिवार के रूप में अपना-अपना स्थान ग्रहण करने लगा। देखते-देखते जयनारायण व्यास स्मृति सभागृह ऊपर-नीचे खचाखच भर गया। अधिवेशन में सूर्यनगरी जोधपुर के युवारत्न बन्धु व्यवस्था सम्भाल रहे थे। उनके उत्साह को देख अन्यान्य नगरों के युवकों ने भी व्यवस्था बनाने में रुचि प्रदर्शित की तो चन्द ही क्षणों में संघ के प्रमुख संरक्षकों, शासन-सेवा समिति के सदस्यों, पदाधिकारियों, विशिष्ट अतिथियों एवं संघ-सेवियों को यथोचित स्थान सुलभ हो गया।

युवक संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा के निर्देशानुसार अधिवेशन कार्यक्रम के संचालक युवारत्न श्री चन्द्रेश भण्डारी ने मंच से अधिवेशन कार्यवाही प्रारम्भ करने के साथ संघाध्यक्ष माननीय श्री मोफतराजजी मुणोत से अनुरोध किया कि वे आज के अधिवेशन की अध्यक्षता स्वीकार कर अपने आसन पर विराजने का कष्ट करें। संघाध्यक्ष महोदय मंच पर पधारे, आसन ग्रहण किया, उसके पश्चात् माननीय रणजीतसिंहजी कूमट, माननीय श्री महेन्द्रजी सुराना, माननीय न्यायाधिपति श्री जसराजजी सा० चौपड़ा से निवेदन किया गया कि वे मंच पर अपने-अपने आसन पर बिराजें। स्थानीय संघ अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमलजी लोढ़ा, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष डॉ० सम्पतसिंहजी भाण्डावत और युवक संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा को मंच पर अपना-अपना स्थान ग्रहण करने की मंच की ओर से उद्घोषणा की गई।

युवारत्न बन्धुओं ने अध्यक्ष, मुख्य अतिथि, प्रमुख विशिष्ट अतिथि, मुख्य उद्बोधनकर्ता एवं पदाधिकारियों को ससम्मान उन्हें मंच पर उनके निर्धारित स्थान पर ले जाकर बैठाया। उपस्थित जन-समुदाय ने हर्ष ध्वनि कर मंच पर विराजे विशिष्टजनों के प्रति सम्मानजनक अभिवादन कर स्वागत किया।

कार्यवाही का प्रारम्भ नमस्कार महामंत्र के मंगलाचरण से किया गया। मंगलाचरण श्री गोपालराजजी अबानी ने किया।

युवारत्न बन्धु साप्ताहिक संगोष्ठियों के प्रारम्भ में "मैं जैन हूँ, मुझे जैन होने पर गर्व है" संकल्प पाठ बोल कर अपनी कार्यवाही शुरू करते हैं तदनुरूप युवारत्न बन्धु श्री रतन सुराना ने संकल्प पाठ पढ़ा। उपस्थित सभी सदस्यों ने दायां हाथ उठा कर एक स्वर-एक लय में खड़े रह कर संकल्प पाठ का उच्चारण किया।

युवारत्न बन्धु श्री आनन्दजी चौपड़ा ने मंच पर विराजे सभी अतिथियों के साथ अधिवेशन में भाग लेने आए युवारत्न साथियों का स्वागत किया। श्री आनन्दजी चौपड़ा के स्वागत भाषण के पश्चात् माल्यार्पण के साथ अतिथियों का स्वागत किया गया।

माननीय श्री रणजीतसिंहजी कूमट का युवारत्न श्री मनीष लोढ़ा ने, न्यायाधिपति माननीय श्री जसराजजी चौपड़ा का युवारत्न श्री अखिलेश जैन ने, माननीय श्री महेन्द्रजी सुराना का युवारत्न श्री दौलत भण्डारी ने, माननीय श्री मोफतराजजी मुणोत का युवारत्न श्री राजेश बोहरा ने, माननीय डॉ० सम्पतसिंहजी भाण्डावत का युवारत्न श्री महिपत चौपड़ा ने, न्यायाधिपति माननीय श्री श्रीकृष्णमलजी लोढ़ा का युवारत्न श्री दिलीप खिवसरा ने माल्यार्पण कर स्वागत किया।

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक संघ का परिचय युवक संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्र बाफणा ने दिया। परमाराध्य महामहिम आचार्य भगवन् पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म० सा० के दूरदर्शी चिन्तन को समयोचित बताते श्री बाफणा ने कहा कि पूज्य गुरुदेव की शक्ति और युवारत्न बन्धुओं की भक्ति से स्थापित युवक संघ ने प्रदेश के कई ग्राम-नगरों में प्रतिष्ठा अर्जित की है एवं हमारा संघ समूचे देश में अपनी एक विशिष्ट पहिचान शीघ्र बना पायेगा। अब तक की युवक संघ की गतिविधियों-प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालते युवक संघ के उद्देश्यों एवं भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा प्रस्तुत करते उन्होंने कहा कि इस अधिवेशन में जहाँ अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ के पदाधिकारियों का मनोनयन किया जायेगा वहीं आगामी तीन वर्ष तक का कार्यक्रम स्वीकार किया जायेगा।

युवारत्न श्री प्रकाश सालेचा, जोधपुर, युवारत्न श्री सुमतिचन्द मेहता, पीपाड़, युवारत्न श्री संदीप भाण्डावत जोधपुर, युवारत्न श्री नेमीचन्द कर्नावट भोपालगढ़, युवारत्न श्री सुरेश सुराना जोधपुर, युवारत्न श्री आनन्द पगारिया पाली, युवारत्न श्री नरेन्द्र मोदी किशनगढ़, युवारत्न श्री ओमप्रकाश बांठिया बालोतरा, युवारत्न श्री मदनलाल जैन सवाई माधोपुर, युवारत्न श्री हस्तीमल डोसी मेड़तासिटी, युवारत्न श्री सूर्यप्रकाश गाँधी अजमेर, युवारत्न श्री राजेन्द्र पटवा जयपुर, युवारत्न श्री सुशील गाँधी भीलवाड़ा ने अपने-अपने भाषण में युवक संघ की आवश्यकता, अपने क्षेत्र की प्रगति और भावी कार्यक्रमों के प्रति अपनी श्रद्धा-भक्ति रूप भावनाएँ व्यक्त कीं।

वरिष्ठ स्वाध्यायी सुश्रावक श्री रिखबराजजी कर्नावट ने युवकों को सादगी, सरलता और सेवा भावना को अपनाने पर बल दिया।

युवारत्न श्री राजेन्द्रजी चौपड़ा ने परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री हीरा-चन्द्रजी म० सा०, परम श्रद्धेय उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म० सा० के जोधपुर चातुर्मास में प्रथम बार मासखमण तप की आराधना की और सुदीर्घ तपस्या पर किसी भी प्रकार का कोई आडम्बर-प्रदर्शन नहीं किया। तरुण तपस्वी एवं सेवाभावी श्री राजेन्द्रजी चौपड़ा को मंच पर आमन्त्रित किया गया एवं उनके आदर्श तपाराधन की अनुमोदना हेतु युवारत्न श्री महेन्द्रजी सेठिया ने माल्यार्पण कर उनका अभिनन्दन किया।

युवक संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा ने तीन वर्ष की कार्य योजना प्रस्तुत की (जो इसी अंक में अन्यत्र प्रकाशित है) उपस्थित सभी युवारत्न बन्धुओं ने न्यूनतम कार्यक्रम की क्रियान्विति में पूर्ण सहयोग देने की भावना हाथ उठा कर व्यक्त की। हर्ष-हर्ष जय-जय की हर्ष-ध्वनि के साथ संकल्प पारित किया गया।

मंच को ओर से न्यायाधिपति माननीय श्री जसराजजी चौपड़ा से निवेदन किया गया कि वे युवारत्न बन्धुओं को कर्तव्य-बोध कराएँ।

माननीय न्यायाधिपति श्री जसराजजी चौपड़ा ने युवक संघ के प्रथम अधिवेशन के आयोजन पर हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करते कहा कि युवक शक्ति का पर्याय है। यदि यह शक्ति संगठित हो जाये तो उफनता हुआ नद लहलहाता हुआ समुद्र बनते देर नहीं लगेगी। एक-एक व्यक्ति में रही शक्ति का स्मरण कराते युवारत्न बन्धुओं को राम, कृष्ण, वीर लोंकाशाह, स्वामी विवेकानन्द, राजा हरिश्चन्द्र जैसे महान् कृतित्व के उदाहरण प्रस्तुत करते उन्होंने कहा कि संकल्पे सिद्धियति कार्याणी। युवक संकल्प शक्ति का परिचय दें तो समाज बदल सकता है।

युवकों को संकल्प-शक्ति की प्रभावी प्रेरणा कर न्यायाधिपति ने चारित्र-वान बनने की सद् शिक्षा दी। निर्व्यसनता प्रामाणिक जीवन की कसौटी है। जैन युवकों के खान-पान के परिप्रेक्ष्य में वर्तमान स्थिति का चित्रण करते उन्होंने खाद्य-अखाद्य के विवेक का बोध कराया।

संस्कारों की आवश्यकता निरूपित करते न्यायाधिपति चौपड़ा साहब ने कहा—स्वामी विवेकानन्द की तस्वीर आपने देखी होगी। उनके चेहरे पर ओज-तेज जो दिखाई देता है, वह उनके चरित्र और संस्कार को प्रकट करता है। स्वामी विवेकानन्द पर एक स्त्री आसक्त हो गई और निवेदन लेकर गई, एकान्त में कहा—मैं आपसे प्रणय सूत्र में बंधना चाहती हूँ जिससे आप जैसा

तेजस्वी मेरे पुत्र हो। विवेकानन्द उस स्त्री के पांव छूते कहते हैं—माता! तुम मुझे अपना पुत्र समझो। न्यायाधिपति महोदय ने छत्रपति शिवाजी का उदाहरण भी युवकों में चारित्रवान बनने की दृष्टि से दिया।

नेपोलियन का उदाहरण रखते युवकों को कठिनाई में धैर्य रखने की प्रेरणा दी।

विविध प्रसंगों पर प्रभावी प्रकाश डालते न्यायाधिपति महोदय ने युवा-शक्ति के संगठित होने के साथ चारित्रिक विकास पर बल दिया।

युवारत्न बन्धुओं ने दत्त-चित्त हो न्यायाधिपति महोदय के उद्बोधन का न केवल श्रवण किया अपितु अन्तर्मन से एक-एक शब्द-वाक्य पर उनका ध्यान केन्द्रित रहा।

माननीय श्री रणजीतसिंह जी कूमट ने अधिवेशन को सम्बोधित करते कहा कि न्यायाधिपति चौपड़ा साहब नें अपने प्रभावी उद्बोधन में युवकों को प्रेरित करने के सन्दर्भ में काफी कुछ कह दिया है, मैं अपनी साधारण बात आप तक रखूंगा। कूमट साहब ने परमाराध्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की अनुपम कृपा के स्मरण के साथ उनके सुदीर्घ चिन्तन के प्रति आदर व्यक्त करते कहा कि उस दिव्य दिवाकर ने युवक संघ को प्रेरणा दी फलस्वरूप आज आप एकरूपता में दिखाइ दे रहे हैं। सबसे पहले मैं आपके सद्प्रयास के लिए बधाई देता हूँ। कूमट साहब ने धर्म क्यों करें, उसका फल क्या है, विषय पर अपना चिन्तन प्रस्तुत करते बताया कि पैसे के साथ कुव्यसन बढ़ रहे हैं इसलिए आचार्य भगवन के सेवा-स्वाध्याय-सामायिक से हम सबको जुड़ना है। सेवा में अहं भाव न आए, सामायिक से समत्व भाव बढ़े और स्वाध्याय से आत्म निरीक्षण करें तो आपके कदम सधे हुए रहेंगे।

राजस्थान राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ के प्रबन्ध निदेशक एवं अधि-वेशन में पधारे विशिष्ट अतिथि माननीय श्री महेन्द्र जी सुराना ने अपने विचार रखते हुए कहा कि आज युवकों के आचरण को लेकर काफी टीका-टिप्पणी होती है। इसके पीछे गंभीरता से चिन्तन किया जाय तो लगेगा आज ज्ञान की कमी है। ज्ञान की कमी के कारण हीन भावना पैदा होती है। अपने अज्ञान को छुपाने के लिए धर्म की आलोचना होती है। सुराना साहब ने युवकों को ज्ञान-वृद्धि की प्रेरणा की। स्थानीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल जी लोढ़ा ने शरीर में जैसे रीढ़ की हड्डी का महत्त्व है ऐसे ही समाज में युवकों का महत्त्व है। लोढा साहब ने युवकों को अपनी शक्ति समझ कर उत्साहपूर्वक कार्य करने की क्षमता का बोध कराया।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष डॉ० सम्पतसिंह जी भाण्डावत ने युवक संघ की गतिविधियों पर प्रसन्नता व्यक्त करते अधिवेशन के लिए बधाई दी। युवकों की आवाज में एकरूपता रहे, युवक चरित्रवान होकर संघ-सेवा में विकास करें, इस वाक्य पर डॉ० भाण्डावत साहब ने विशेष बल दिया।

संघाध्यक्ष माननीय श्री मोफतराज जी मुणोत ने अपने आशीर्वचन में अत्यन्त प्रमुदित भाव में कहा कि मेरे संक्षिप्त कार्यकाल में आचार्य भगवन् के स्वप्न को साकार होता हुआ देखकर मुझे परम प्रसन्नता है। युवा एक शक्ति है। युवा शक्ति संगठित हो जाती है और विनय-विवेक के साथ आगे बढ़ती है तो उसके सामने कठिनाई नहीं आती। युवा शक्ति की नदी से तुलना करते मुणोत साहब ने कहा कि जैसे नदी दो पाटों के बीच बहती है तो उस क्षेत्र को हरा-भरा कर देती है और जब वही नदी किनारों को तोड़ बहती है तो विनाश कर देती है। युवा शक्ति जोश के साथ होश बनाए रखे। विनय और विवेक दो पाटों के बीच युवक अपनी शक्ति से संघ, समाज, राष्ट्र और धर्म की सेवा करें।

संघाध्यक्ष महोदय ने कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर युवारत्न बन्धुओं का ध्यान आकर्षित करते कहा—दूसरों को सुधारने के पहले स्वयं अपने आपको सुधारें। कवि की दो पंक्तियां प्रस्तुत करते मुणोत साहब से कहा—

हे सुधारक ! जगत की चिन्ता मत कर यार।
अपना मन ही जगत है, पहले उसे सुधार॥

धर्म संघ में विनय-विवेक और चरित्र की आवश्यकता पर वल देते समर्पण भाव से सेवाधर्म में शक्ति के उपयोग का संघाध्यक्ष महोदय का आह्वान प्रभावी था। उन्होंने जोर देकर कहा—समर्पण में शर्त नहीं होती।

संघाध्यक्ष महोदय के मन में युवाओं के प्रति असीम प्रेम उनके चेहरे पर स्पष्ट झलकता था। अपना अपनों को हितमार्ग में जोड़ें, इस दृष्टि से मुणोत सा० ने युवारत्न बन्धुओं को माता-पिता और घर में बड़ों को प्रणाम करने की बात का स्मरण कराया। एक व्यसनी बाप भी अपने बेटे को निर्व्यसनी देखना चाहता है, इसलिये आप जीवन में व्यसनों को छोड़कर चलें।

संघाध्यक्ष महोदय ने समस्त युवारत्न बन्धुओं का, युवक संघ के परामर्शदाताओं का और विशेष रूप से श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफणा का नामोल्लेख कर सभी को धन्यवाद दिया।

संघाध्यक्ष महोदय ने अत्यन्त विश्वास के साथ अपनी बात रखते युवारत्न बन्धुओं से कहा कि तीन वर्ष की कार्य-योजना आपके समक्ष प्रस्तुत की जा चुकी

है। संघ को सुव्यवस्थित चलाने के लिए पदाधिकारियों की जरूरत है, रहेगी। पदाधिकारीगण आपमें से होंगे इसलिए आप मुझे पदाधिकारियों के मनोनयन करने की स्वीकृति दें। उपस्थित युवारत्न बन्धुओं ने सर्वानुमति से संघाध्यक्ष महोदय को पदाधिकारियों के मनोनयन करने हेतु अपनी सहर्ष स्वीकृति दी।

संघाध्यक्ष महोदय ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक संघ के पदाधिकारियों का निम्नानुसार मनोनयन किया, जिसे 'हर्ष-हर्ष, जय-जय' के नारों के साथ स्वीकार किया गया—

अध्यक्ष—	युवारत्न श्री अमिताभ हीरावत, जयपुर
कार्याध्यक्ष—	युवारत्न श्री आनन्द चोपड़ा, जोधपुर
उपाध्यक्ष—	युवारत्न श्री संपत धारीवाल, पाली
मंत्री—	युवारत्न श्री गोपाल अबानी, जोधपुर
संयुक्त मंत्री—	युवारत्न श्री सुमतिचन्द मेहता, पीपाड़
,, ,,	युवारत्न श्री रतन सुराना, जोधपुर
,, ,,	युवारत्न श्री कुशल गोटेवाला, सवाईमाधोपुर
कोषाध्यक्ष—	युवारत्न श्री मनीष लोढ़ा, जोधपुर

संघाध्यक्ष महोदय ने श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफणा एवं श्री चंचलचन्द जी सिंघवी को युवक संघ के परामर्शदाता के रूप में मनोनीत किया।

नवमनोनीत पदाधिकारियों में अध्यक्ष महोदय श्री अमिताभ हीरावत अपरिहार्य कारणों से अधिवेशन में उपस्थित नहीं हो सके, इस कारण कार्याध्यक्ष युवारत्न श्री आनन्द चौपड़ा को संघाध्यक्ष महोदय ने जैन ध्वज प्रदान कर शपथ दिलाई।

युवक संघ के परामर्शदाता श्री चंचलचन्द सिंघवी ने युवारत्न बन्धुओं का, संघ के पदाधिकारियों का, स्थानीय संघ के समस्त सदस्य महानुभावों के साथ पधारे हुए विशिष्ट अतिथियों का हार्दिक आभार व्यक्त किया।

युवारत्न श्री चन्द्रेश भंडारी के कुशल संचालन में करीब ३ घंटे तक अधिवेशन की कार्यवाही अत्यन्त उमंग-उल्लास के साथ चली।

अधिवेशन के अन्त में स्थानीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से अल्पाहार का आयोजन रखा गया।

—नौरतन मेहता

जैन स्थानक, घोड़ों का चौक, जोधपुर
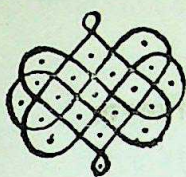
पुस्तकें पढ़ो और दूसरों को पढ़ने के लिए दो

☐ श्री नौरतनमल बाफणा

विश्वविख्यात अंग्रेज लेखक स्टीवेन्सन बस में यात्रा करते हुए एक पुस्तक पढ़ रहे थे। पढ़ते-पढ़ते पुस्तक को बस में ही छोड़ वे अपने गन्तव्य स्थान पर उतर गये। उनके सामने की सीट पर एक सद्गृहस्थ बैठे थे। पुस्तक को देख उन्होंने विचारा—स्टीवेन्सन महोदय पुस्तक भूल गये हैं, पुस्तक भी कीमती है। अतः चलो उनके घर जाकर पुस्तक उन्हें दे आयें। पुस्तक लेकर वे स्टीवेन्सन के घर पहुँचे और बोले—"साहब! यह पुस्तक लीजिए। आपकी पुस्तक आप बस में ही भूल गये थे। इस बहाने से आपके पुनः दर्शन और परिचय का भी लाभ मिला।"

स्टीवेन्सन ने हास्यवदन से कहा—आपने कृपा की यह तो अच्छा हुआ परन्तु पुस्तक मैं भूला नहीं। पुस्तक पढ़ते-पढ़ते जब पूर्ण हो जाती है तो उसे मैं वहीं रख देता हूँ, ताकि दूसरा भी कोई उसका सदुपयोग करे। पुस्तक तो पढ़ने के लिए ही है न? यह सुन वे गृहस्थ आश्चर्यचकित हो पूछने लगे—साहब इतनी सुन्दर और मूल्यवान पुस्तक आप जानबूझकर किस कारण से छोड़ देते हैं?

स्टीवेन्सन ने उत्तर दिया—"मित्र! मानव योंही गृहस्थभार से पूरा दबा हुआ है, फिर यह पुस्तकों का भारी वजन क्यों बढ़ाऊँ? प्रत्येक मनुष्य को इस प्रकार अपना बोझ हलका करते रहना चाहिए। दूसरे, पुस्तक तो पढ़ने के काम की है, भण्डारों और बक्सों में बन्द रखने की वस्तु नहीं है।"

स्टीवेन्सन जैन नहीं, मर्यादा वाले भी नहीं, व्रतधारी भी नहीं, परन्तु उनकी उदात्त भावना कितनी अमूल्य और निष्परिग्रहत्व को स्पर्श करने वाली है। उन्होंने अनजाने ही अपरिग्रहव्रत को जीवन में कैसा उतारा?

संग्रह वृत्ति के पोषण के लिए कितने मकान, बक्स और तिजोरियाँ रखनी पड़ती हैं? जरा सूक्ष्म दृष्टि से प्रत्येक श्रीमंत तथा परिग्रही सद्गृहस्थ को शान्त-चित्त से विचारना चाहिये। धन्य है स्टीवेन्सन की अपरिग्रहीवृत्ति तथा ज्ञानवर्धक उदात्त भावना को।

• •

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के आय-व्यय का अंकेक्षित विवरण
[१-४-१९९० से ३१-३-१९९१ तक]

अंकेक्षण - रिपोर्ट

हमने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर के सम्मिलित स्थिति विवरण तथा इसके अन्तर्गत चलने वाली संस्थाओं, मण्डल (मुख्य कार्यालय) जिनवाणी, स्वाध्याय संघ एवं जैन शिक्षण संस्थान के स्थिति विवरण जो कि दिनांक ३१ मार्च, १९९१ तक बनाए गए हैं तथा उपरोक्त संस्थाओं के आय-व्यय विवरण जो कि दिनांक ३१ मार्च, १९९१ को समाप्त होने वाले समय के लिए बनाए गए हैं, का अंकेक्षण कर लिया है तथा पाया है कि सभी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं उसके अधीनस्थ संस्थाओं द्वारा रखी लेखा पुस्तकों के अनुरूप है। हमने पाया कि:—

(१) साहित्य की पुस्तकों का अंतिम रहतिया, ज्ञान प्रसार पुस्तक माला की बची हुई पुस्तकों के सन्दर्भ में टोकन मूल्य पर मूल्यांकित किया गया है तथा अन्य शेष रहतिये के संदर्भ में उसे अनुमानित लागत मूल्य पर दिखाया गया है। पुस्तकों के अंतिम रहतिये का सत्यापन मण्डल के प्रबन्धकों द्वारा कर लिया गया है।

(२) स्वाध्याय संघ की पुस्तकें विभिन्न शाखाओं द्वारा भेजे गए विवरणी व प्रमाणकों के आधार पर बनाई गई है। कुछ खर्चों से सम्बन्धित प्रमाणक (वाउचर) हमारे सत्यापन हेतु प्रस्तुत नहीं किए जा सके हैं।

(३) लेखा पुस्तकें व्यापारिक आधार (मरकेन्टाइल बेसिस) पर लिखी गई हैं, परन्तु कुछ खर्चे रोकड़ आधार (केश बेसिस) पर ही लिखे गए हैं।

(४) विज्ञापन की आय रोकड़ आधार पर पुस्तकों में ली गई है।

(५) ओरियन्टल बैंक के साथ कराई गई स्थायी जमा पर उपार्जित ब्याज सूचना के अभाव में पुस्तकों में नहीं लिया गया है।

हमने समस्त आवश्यक जानकारी तथा स्पष्टीकरण जो कि हमारे विवेकानुसार परीक्षण के लिए आवश्यक थे, प्राप्त कर लिए हैं। हमें दी गई सूचनाओं तथा स्पष्टीकरणों के अनुसार उपरोक्त टिप्पणियों सहितः—

(अ) सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल का सम्मिलित तथा उसके अधीनस्थ संस्थाओं के स्थिति विवरण, मण्डल तथा अधीनस्थ संस्थाओं के कारोबार की दि. ३१ मार्च, १९९१ को सही स्थिति प्रदर्शित करते हैं।

(ब) सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के सम्मिलित तथा उसके अधीनस्थ संस्थाओं के दिनांक ३१ मार्च, १९९१ को समाप्त होने वाले वर्ष के आय-व्यय विवरण मण्डल तथा अधीनस्थ संस्थाओं के आय-व्यय पर आधिक्य का सही विवरणी प्रस्तुत करते हैं।

वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स
ह०
एस. एम. मेहता

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

संगीत

☐ प्रवर्तक श्री महेन्द्र मुनि 'कमल'

वह अपने साथ दहेज में घड़ी भी लाई थी।

संगीतात्मक थी वह घड़ी। हर आधे घण्टे बाद जब उससे संगीत की ध्वनि निकलती तो सारे घर में खुशी सी छा जाती और लोग नयी दुल्हन की ओर देखने लगते। वह लाज से घूंघट और लम्बा करके मुस्कराती हुई चली जाती। सब यही कहते जब से यह दुल्हन और घड़ी इस घर में आयी है, मानो सुन्दर समय ही आ गया है।

तभी घड़ी में से आवाज आई "मैं समय हूँ। मैं कभी एक जैसा नहीं रहता और कीमती भी बहुत हूँ। पर मेरी कद्र कोई नहीं करता। जानते हो मैं संगीत के माध्यम से क्या कहता हूँ—

मैं जा रहा हूँ,
मैं जा रहा हूँ,
मैं जा रहा हूँ,
मैं लौटकर नहीं आऊँगा,
मैं लौटकर नहीं आऊँगा,
मैं लौटकर नहीं आऊँगा।"

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

सम्मिलित स्थिति विवरण ३१.३.९१

दायित्व	रकम	सम्पत्ति	रकम
रिजर्व फण्ड	१७,०१,३४०.६४	राजस्थान आवासन मण्डल	
संरक्षक सदस्यता	१,००२.००	भूमि अग्रिम	८१,४७८.२०
स्तम्भ सदस्यता	१,००१.००	फिक्स डिपाजिट	१४,०७,४००.००
प्रचार-प्रसार योजना	२,००३.००	फर्नीचर	११,१२५.३४
प्रश्न मन्च सहायता	१,२४३.६४	टाइपराइटर	१,६७८.५६
स्वाध्याय स्मारिका	४०,६६१.५४	भूमि व भवन	१३,८६५.००
साहित्य प्रकाशन अग्रिम	४७,५०१.००	साइकिल	३१३.८०
स्वाध्याय शिक्षा सहायता	२६,७०१.५०	चल पुस्तकालय	३,४७६.६८
साहित्य संरक्षक सदस्यता	३,००३.००	पुस्तकालय साहित्य	२४०.००
कारपस फण्ड	४०,६५३.००	इन्कम टैक्स डिडक्शन एट सोर्स	१७,१६८.६५
कुष्ठ रोगियों की सहायता	५००.००	उपार्जित ब्याज	४१,४७४.००
वात्सल्य सेवा ऋण सहायता	९७,६५४.००	इण्डियन बैंक मद्रास	२६,५४५.२१
विविध देनदारियां	७२,६१३.३३	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर	१,१५,६४५.८१
		टेलीफोन डिपाजिट	८१०.००
		केन्द्रीय सहकारी बैंक	५.६२
		ऑरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स	२,१५६.१३
		स्टॉक	
		साहित्य १,३६,७०५.४५	
		कागज २१,६००.००	
			१,५८,३०५.४५
		रोकड़ शेष	१२,८६१.६४
		विविध लेनदारियां	८३,५६७.६१
		व्यय का आय पर आधिक्य	५५,२६३.३२
योग	२०,३६,७७७.६५	योग	२०,३६,७७७.६५

ह०	ह०	ह०
डॉ० सम्पतसिंह भाण्डावत	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**पदमचन्द कोठारी**
अध्यक्ष	मंत्री	कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स
ह०/—
एस. एम. मेहता

जयपुर
दिनांक २८ अक्टूबर, १९९१

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

सम्मिलित आय-व्यय विवरण ३१.३.९१

व्यय	रकम	आय	रकम
वेतन खाता	१,३६,६९८.००	सहायता	३,१३,९६७.००
जल खर्च	५९९.००	ब्याज	१,२६.१२४.४५
बिजली खर्च	२,०८४.७५	वार्षिक शुल्क	८,८८४.००
विविध व्यय	२०,३२४.४५	विज्ञापन	३८,६००.००
मेस खर्च	३२,९८५.५५	आर्थिक सदस्यता	१२,२५०.००
संस्कार निर्माण खर्च	२,४०५.८५	पर्युषण सहायता	१५,३५३.००
सम्पादन खर्च	१२,०००.००	विविध आय	२५.००
डाक खर्च	२९,२५९,३०	कमीशन	६,१००.००
स्टेशनरी प्रिंटिंग खर्च	२,८६,३८५.००	तलपट फरक	४.९०
लेख पुरस्कार	४,९१२.२०	साहित्य से लाभ	२३१.९७
ठेली किराया	३,७७४.००	कारपस फण्ड से ट्रांसफर	४७,०००.००
कमीशन	२,०४३.००	कागज स्टाक	२१,६००.००
टेलीफोन खर्च	२,९४२.००	व्यय का आय पर आधिक्य	५२४.७०
बैंक कमीशन	१,१०८.००		
यात्रा खर्च	५,७११.००		
पत्राचार पाठ्यक्रम	२,६००.००		
टाइपराइटर खर्च	१५५.००		
साईकिल खर्च	३४१.००		
पार्सल खर्च	८१.००		
मेडिकल व शिक्षा खर्च	२,४५९.८३		
भवन किराया	३,२२५.००		
पर्युषण खर्च	१६,४४१.५५		
प्रचार प्रसार खर्च	६,२५४.००		
सामायिक पत्र पत्रिकाएँ	१७६.४०		
हिण्डौन शिविर	७२०.००		
स्थानीय शिविर	१४३.००		
अनुग्रह राशि	४,८००.००		
विज्ञापन खर्च	७.५८२.००		
डिप्रीसियेशन	२,१५३.७४		
योग	५,९०,६६५.०२	योग	५,९०,६६५.०२

ह०	ह०	ह०
डॉ० सम्पतसिंह भाण्डावत	चैतन्यमल ढढ्ढा	पदमचन्द कोठारी
अध्यक्ष	मंत्री	कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स
ह०/—
एस. एम. मेहता

जयपुर
दिनांक २८ अक्टूबर, १९९१

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

स्थिति विवरण ३१.३.९१

दायित्व	रकम	सम्पत्ति	रकम
साहित्य प्रकाशन आजीवन		राजस्थान आवास मण्डल	
सदस्यता	१,९४,४०२.००	भूमि अग्रिम	८१,४७८.२०
साहित्य प्रका. रिजर्व फण्ड	३,८२,३१०.००	फिक्सड डिपोजिट	१२,६८,०००.००
साहित्य प्रकाशन अग्रिम	४७,५०१.००	फर्नीचर २,२०८.८७	
स्वाध्याय शिक्षा सहायता		घटाया ह्रास २२०.८८	
सहायता ८५,२२२.००			१,९८८.००
खर्च –५८,५२०.५०		टाइपराइटर ८२१.५५	
	२६,७०१.५०	घटाया ह्रास २७३.८२	
साहित्य संरक्षक सदस्यता	३,००३.००		५४७.७३
आजीवन सदस्यता	२,७७,१२०.५६	भूमि व भवन	१३,८९५.००
कारपस फण्ड	४०,९५३.००	इनकमटेक्स डिडक्शन एट सोर्स	१७,१६८.६५
कुष्ठ रोगियों की सहायता	५००.००	उपार्जित ब्याज	४१४७४.००
वात्सल्य सेवा ऋण सहायता	३,१९,६०४.००	इण्डियन बैंक मद्रास	२९,५४५.२१
जिनवाणी स्थायी जमा	३,००,०००.००	स्टेट बैंक बीकानेर जयपुर	७२,०५६.७८
स्वाध्याय संघ रिजर्व फण्ड	१,९५,०००.००	रोकड़	१,४६८.६६
आय का व्यय पर आधिक्य		स्टाक साहित्य	१,१३,१९१.००
पुराना शेष २,२२,१९४.६३		विविध लेनदारियाँ	२,२७,५९७.३२
चालू वर्ष हानि –१८१.२६		वात्सल्य सेबा ऋण	
	२,२२,०१३.३७	ऋण दिये ३,३०,७००.००	
विविध देनदारियां	८१,२८२.०६	ऋण वसूले १,०८,७५०.००	
			२,२१,९५०.००
योग	२०,९०,३९०.५५	योग	२०,९०,३९०.५५

ह०
डॉ० सम्पतसिंह भाण्डावत
अध्यक्ष

ह०
चैतन्यमल ढढ्ढा
मंत्री

ह०
पदमचन्द कोठारी
कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स
ह०/—
एस. एम. मेहता

जयपुर
दिनांक २८ अक्टूबर १९९१

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

आय-व्यय विवरण ३१.३.९१

व्यय	रकम	आय	रकम
विविध व्यय	१२,२१८.६५	कमीशन	६,१००.००
स्टेशनरी खर्च	७,४२८.७५	ब्याज	५२,४१९.१६
डाक व्यय	६,०२०.५०	सहायता	३,९१३.००
अनुग्रह राशि	४,८००.००	तलपट फरक	४.९०
वेतन खाता	५९,३४५.००	साहित्य से लाभ	२३१ ९७
ठेली किराया	३,२७७.००	कारपस फण्ड से ट्रांसफर	४७,०००.००
मेडिकल व शिक्षण खर्च	१,००२.००	व्यय का आय पर आधिक्य	१८१.२६
यात्रा व्यय	३,५९६.५०		
किराया	२,९२५.००		
बिजली खर्च	३९६.२०		
बैंक कमीशन	७६४.००		
विज्ञापन खर्च	७,५८२.००		
डिप्रीसियेशन	४९४.६९		
योग	१०९,८५०.२९	योग	१,०९,८५०.२९

ह०	ह०	ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**पदमचन्द कोठारी**
अध्यक्ष	मंत्री	कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स
ह०/—
एस. एम. मेहता

जयपुर
दिनांक २८ अक्टूबर, १९९१

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

साहित्य प्रकाशन खाता ३१-३-९१

व्यय	रकम	आय	रकम
साहित्य स्टॉक	१,११,०५८.००	साहित्य बिक्री	२०,५०७.३५
साहित्य खरीद	१,८४५.५०	सहायता निर्ग्रंथ भजनावली	४२,७३९.००
निर्ग्रंथ भजनावली प्रकाशन	४४,९११.००	सत साहित्य सहायता	२३,१०१.००
प्रतिक्रमण सूत्र	७,७००.००	ब्याज रिजर्व फण्ड व आजीवन सदस्यता का	६८,४२४.१२
तेरा तुझको अर्पण	१७,०००.००	कारपस फण्ड से ट्रांसफर	६४,०००.००
प्रार्थना प्रवचन	१४,७००.००	अन्तिम स्टॉक	१,१३,१९१.००
आध्यात्मिक आलोक	९०,५००.००		
प्रूफ रीडिंग प्रार्थना प्रवचन व सामायिक सूत्र	१,१७१.००		
दुःख मुक्ति सुख प्राप्ति	४,३००.००		
ज्ञान प्रसार माला	३८,५४५.००		
साहित्य से लाभ	२३१.९७		
योग	३,३१,९६२.४७	योग	३,३१,९६२.४७

ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत
अध्यक्ष

ह०
चैतन्यमल ढढ्ढा
मन्त्री

ह०
पदमचन्द कोठारी
कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

जिनवाणी
(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल)
स्थिति विवरण ३१-३-९१

दायित्व	रकम	सम्पत्ति		रकम
आजीवन सदस्यता	५,२२,११७.९९	स्थायी जमा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर		३,००,०००.००
संरक्षक सदस्यता	१,००२.००	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर		४२,११८.२३
स्तम्भ सदस्यता	१,००१.००	विविध लेनदारियाँ		१,९३१.३२
प्रचार प्रसार योजना	२,००३.००	व्यय का आय पर आधिक्य		
विविध देनदारियां	१,८७,१८१.९४	गत वर्ष का शेष	१,७३,७५६.००	
		चालू वर्ष हानि	१,६८,६०३.६०	
				३,४२,३५९.६०
		कागज स्टॉक		२१,६००.००
		रोकड़ शेष		५,२९६.७८
योग	७,१३,३०५.९३	योग		७,१३,३०५.९३

ह०	ह०	ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**पदमचन्द कोठारी**
अध्यक्ष	मन्त्री	कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

जिनवाणी

(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल)

आय-व्यय विवरण ३१-३-९१

व्यय	रकम	आय	रकम
सम्पादन खर्च	१२,०००.००	सहायता	४४,४२३.००
डाक व्यय	१९,२८०.४५	वार्षिक शुल्क	८,८८४.००
स्टेशनरी व प्रिंटिंग	२,७२,९३७.२०	विज्ञापन	३८,६००.००
विविध व्यय	३,६२७.३५	ब्याज	३६,३४३.६०
लेख पुरस्कार	४,९१२.२०	कागज स्टॉक	२१,६००.००
ठेली किराया	४९७.००	हानि	१,६८,६०३.६०
कमीशन	२,०४३.००		
टेलीफोन खर्च	२,९४२.००		
बैंक कमीशन	२१५.००		
योग	३,१८,४५४.२०	योग	३,१८,४५४.२०

ह०	ह०	ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**पदमचन्द कोठारी**
अध्यक्ष	मन्त्री	कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

स्वाध्याय संघ

(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल)

स्थिति विवरण ३१-३-९१

दायित्व	रकम	सम्पत्ति		रकम
रिजर्व फण्ड	२,६६,२६८.५३	टेलीफोन डिपाजिट		८१०.००
प्रश्न मन्च सहायता	१,२४३.६४	केन्द्रीय सहकारी बैंक		५.६२
विविध देनदारियां	९७,०३४.९१	ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स		२,१५९.१३
स्वाध्याय स्मारिका	४०,९६१.५४	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर		१,७७०.८०
आय का व्यय पर आधिक्य	४०,००२.४५	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल स्थायी जमा		१,९५,०००.००
		ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स स्थायी जमा		१,३९,४००.००
		फर्नीचर	१०,१५२.६०	
		घटाया ह्रास	१,०१५.२६	
				९,१३७.३४
		साइकिल	३९२.२५	
		घटाया ह्रास	७८.४५	
				३१३.८०
		टाइपराइटर	१,६९६.२०	
		घटाया ह्रास	५६५.३४	
				१,१३०.८६
		चल पुस्तकालय		३,४७९.६८
		पुस्तकालय साहित्य		२४०.००
		विविध लेनदारियां		६८,५४९.३९
		साहित्य स्टॉक		२३,५१४.४५
योग	४,४५,५११.०७	योग		४,४५,५११.०७

ह०	ह०	ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत	चैतन्यमल ढढ्ढा	पदमचन्द कोठारी
अध्यक्ष	मन्त्री	कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

स्वाध्याय संघ

(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल)

आय-व्यय विवरण ३१-३-९१

व्यय	रकम	आय	रकम
साहित्य प्रारम्भिक स्टॉक	२१,०५०.४५	साहित्य बिक्री	७१५.००
साहित्य खरीद	३,१७९.००	साहित्य अन्तिम स्टॉक	२३,५१४.४५
स्टेशनरी व प्रिंटिंग खर्च	६,०१९.४५	सहायता	२,००,६३१.००
वेतन खाता	५४,७२८.००	आर्थिक सदस्यता	१२,२५०.००
पोस्टेज खर्च	३,९५८.३५	ब्याज	२८,७७९.०५
बैंक कमीशन	१२९.००	पर्युषण सहायता	१५,३५३.००
विविध व्यय	२६३.५०	विविध आय	२५.००
यात्रा खर्च	२,११४.५०		
बिजली खर्च	४०७.४०		
पत्राचार पाठ्यक्रम खर्च	२,९०० ००		
टाइपराइटर खर्च	१५५.००		
साइकिल खर्च	३४१.००		
पार्सल खर्च	८१.००		
मेडिकल व शिक्षण खर्च	१,४५७.८३		
भवन किराया	३००.००		
पर्युषण खर्च	१६,४४१.५५		
प्रचार प्रसार	६,२५४.००		
सामयिक पत्र पत्रिकाएँ	१७६.४०		
जल खर्च	२०८.००		
हिण्डौन शिविर	७२०.००		
स्थानीय शिविर	१४३.००		
डिप्रीसियेशन	१,६५९.०५		
आय का व्यय पर आधिक्य	१,५८,५८१.०२		
योग	२,८१,२६७.५०	योग	२,८१,२६७.५०

ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत
अध्यक्ष

ह०
चैतन्यमल ढढ्ढा
मन्त्री

ह०
पदमचन्द कोठारी
कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

जैन शिक्षण सिद्धान्त संस्थान

(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल)

स्थिति विवरण ३१-३-९१

दायित्व	रकम	सम्पत्ति	रकम
रिजर्व फण्ड	५९,१२१.५३	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल	७८,१०५.४९
आय का व्यय पर आधिक्य		रोकड़ शेष	
गत वर्ष का शेष १५,३७१.३२		कन्हैयालालजी लोढ़ा के पास	
चालू वर्ष लाभ ९,६७९.१४		उचन्ती पर	६,०६६ ५०
	२५,०५०.४६		
योग	८४,१७१.९९	योग	८४,१७१.९९

ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत
अध्यक्ष

ह०
चैतन्यमल ढढ्ढा
मन्त्री

ह०
पदमचन्द कोठारी
कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

जैन शिक्षण सिद्धान्त संस्थान

(सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल)

आय-व्यय विवरण ३१-३-९१

व्यय	रकम	आय	रकम
जल खर्च	३९१.००	सहायता	६५,०००.००
बिजली खर्च	१,२८१.१५	ब्याज	८,५८२.६४
वेतन खाता	२२,६२५.००		
विविध व्यय	४,२१४.९५		
मेस खर्च	३२,९८५.५५		
संस्कार निर्माण खर्च	२,४०५ ८५		
आय का व्यय पर आधिक्य	९,६७९.१४		
योग	७३,५८२.६४	योग	७३,५८२.६४

ह०
डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत
अध्यक्ष

ह०
चैतन्यमल ढढ्ढा
मन्त्री

ह०
पदमचन्द कोठारी
कोषाध्यक्ष

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट
ह०
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक : २८ अक्टूबर, १९९१

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूपी नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं।

उत्तराध्ययन २३/७३

युवा-शक्ति स्नेह और सृजन से जुड़े !

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

ऋतुओं में जो महत्त्व बसन्त का है वही महत्त्व जीवन में युवा अवस्था का है। बसन्त के आते ही जिस प्रकार प्रकृति हरी-भरी हो उठती है, वन-उद्यान महकने लगते हैं, कोयल कूकने लगती है, भंवर गुंजार करने लगते हैं, उसी प्रकार युवा अवस्था में नई शक्ति और स्फूर्ति का संचार हो उठता है, नई-नई कल्पनाएँ पंख पसार कर उड़ने लगती हैं। नया आत्म-विश्वास और कुछ नया सृजन करने की भावना बलवती हो उठती है। यदि यह नई शक्ति नव-निर्माण में लगती है तो देश का कायाकल्प हो जाता है, समाज प्रगति के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित कर लेता है। इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है।

पर यदि युवा-शक्ति का उपयोग सही दिशा की ओर नहीं होता है तो जीवन निस्तेज हो जाता है और राष्ट्र संकटग्रस्त होकर अधोगति को प्राप्त होता है। वस्तुतः युवा-शक्ति पर ही जीवन की सफलता और राष्ट्र की समृद्धि निर्भर है। भारतीय स्वाधीनता-संग्राम का इतिहास इस बात का साक्षी है कि युवा शक्ति ने ब्रिटिश हुकूमत को उखाड़ कर फैंक दिया। जितनी भी प्रमुख क्रान्तियाँ हुईं हैं उनके पीछे युवाओं का बल रहा है। फिर चाहे वह क्रान्ति सामाजिक क्षेत्र की हो या चाहे राजनैतिक क्षेत्र की, चाहे धार्मिक क्षेत्र की रही हो या आध्यात्मिक क्षेत्र की। महावीर, बुद्ध आदि आध्यात्मिक महापुरुषों ने युवा अवस्था में ही क्रान्ति का बिगुल बजाया।

इस संदर्भ में जब हम आज भारत की युवा-शक्ति की ओर दृष्टिपात करते हैं तो स्थिति बड़ी भयावह, चिन्तनीय और गम्भीर लगती है। आजादी के संग्राम के समय युवा-मानस में जो जोश, लगन, निष्ठा और निस्स्वार्थ सेवा भावना से कर्म करने की ललक थी, उसका वर्तमान में प्रायः अभाव दिखाई देता है। आजादी प्राप्त करने के बाद उससे जो आशाएँ बंधी थीं, वे पूरी न हो पाईं और देश छोटे-मोटे स्वार्थों में उलझ गया। धर्म, भाषा, प्रान्तीयता, क्षेत्रीयता के नाम पर देश में नाना प्रकार के दल बन गये, निजी स्वार्थों के छोटे-छोटे गुट बन गये। युवकों से यह आशा थी कि वे इन संकीर्ण घेरों को तोड़कर देश-निर्माण को नई दिशा और गति देंगे पर ऐसा कुछ हो नहीं पाया। आजादी से प्राप्त शक्ति और स्फूर्ति धीरे-धीरे मन्द पड़ गई। त्याग का स्थान भोग ने ले लिया, सेवा का स्थान स्वार्थ ने ले लिया, देश-हित के स्थान पर

निजी स्वार्थ प्रमुख बन गया, देश को केन्द्र में न रखकर अपनी स्वार्थ-बुद्धि को केन्द्र में रखकर सोचा जाने लगा और दुःख की बात तो यह है कि युवा-शक्ति भी इसी घेरे में बन्ध सी गई।

कहने को तो आज का युवा वर्ग पहले की अपेक्षा अधिक सजग, सक्रिय और जागरूक लगता है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी वह आगे बढ़ा है। उसके पास भारी-भरकम सर्टिफिकेट्स और डिग्रियाँ हैं। पहले की अपेक्षा ज्ञान-प्राप्ति के अवसर और साधन बढ़े हैं, जीवन-यापन के स्तर में वृद्धि हुई है पर देश के निर्माण में उसकी भागीदारी का अनुपात घटा है। कभी-कभी तो लगता है कि उसकी रचनात्मक शक्ति कुंठित हुई है। जीवन के प्रति नकारात्मक चिन्तन अधिक बढ़ा है। उसकी शक्ति निर्माण की बजाय विध्वंस में लगने लगी है। वह बिना समझे, बिना परखे अपनी महान् विरासत को नकारने लगा है। परिणाम-स्वरूप उसकी आस्था हिल उठी है। समाज और देश के प्रति आत्मीय भाव में कमी आई है। बड़ों के प्रति सम्मान का भाव नहीं रहा, तिरस्कार और प्रतिकार का भाव अधिक पनपा लगता है। युवाओं के प्रति जन-मानस आशंकित हो उठा है, वह उनसे भयभीत और आतंकित है।

जब युवा-शक्ति का चिन्तन कुण्ठित हो जाता है, उसकी शक्ति का प्रवाह विपरीत दिशा में चलने लगता है तब नव-निर्माण नहीं होता है। आज युवा पीढ़ी के सामने लक्ष्यहीनता, दिशाहीनता और मूल्यहीनता की स्थिति है। उसे अपने बौद्धिक ज्ञान को रचनात्मक प्रवृत्ति से जोड़ना होगा। आज तो उसका ज्ञान, हिंसा, तोड़फोड़, विग्रह और विभेद में लग रहा है। आवश्यकता है कि यह ज्ञान, प्रेम, करुणा, सहयोग, विनय, श्रद्धा, एकता, अखण्डता और संवेदनशीलता से जुड़े। युवा-पीढ़ी का मानस सा बन गया लगता है कि वह बिना श्रम किये उसका लाभ चाहती है, बिना अध्ययन किये डिग्री चाहती है, बिना परिश्रम किये फल चाहती है, बिना सेवा किये सत्ता चाहती है। इसीलिए वह कुण्ठित है, त्रस्त है व तनावग्रस्त है। उसके स्वभाव में आक्रोश है, आदर नहीं, उसके जीवन में जिद्दीपना है, जिन्दादिली नहीं, अध्ययन की जानकारी है, स्वाध्याय से उद्भूत विवेक नहीं। इसीलिए उसे उछलकूद, छीनाझपटी, आतंक, शोरगुल व तोड़फोड़ अच्छी लगती है। आवश्यकता है कि उसकी दृष्टि बदले और उसकी शक्ति प्रतिकार की बजाय प्यार और स्नेह से जुड़े, संहार की बजाय सृजन से जुड़े। यह तभी सम्भव है जब उसे सन्तों का सत्संग मिले, सद्शास्त्रों के स्वाध्याय का अवसर मिले, अपने अन्तर में झांकने की तकनीक मिले। इसकी व्यवस्था आज के शैक्षिक पाठ्यक्रम में की जानी चाहिए।

□

प्रवचनामृत
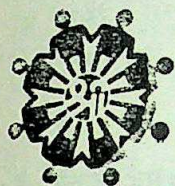
प्रार्थना : आत्मिक गुणों की मिठास*

☐ स्व० आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०

साधारण प्राणी अनेक प्रकार के रसों का आस्वादन करते हैं और उससे आनन्द का अनुभव करते हैं। मगर उस आनन्द में स्थायित्व कहाँ है? तृप्ति कहाँ है? पौद्गलिक रस में वह प्रगाढ़ता और उग्रता कहाँ है कि उसका आस्वादन करने के पश्चात् दूसरे रस का आस्वादन करने की लालसा ही शेष न रहे। मधुर से मधुर रस का आस्वादन करने के बाद नमकीन चखने की इच्छा जागृत होती है और उसके बाद भी इलायची, सुपारी आदि के आस्वादन की। और इन सब का आस्वादन कर लेने पर भी क्या तृप्ति स्थायी बन जाती है? नहीं, कुछ ही काल बीतते-बीतते पुनः वही लालसा जाग उठती है। मगर वीतराग स्वरूप का रस अलौकिक और अपूर्व है। उस रस का माधुर्य अनुपम है। यही कारण है कि एक बार जो उसका आस्वादन कर लेता है, उसे संसार के समस्त रस फीके जान पड़ते हैं। उसके चित्त पर संसार का कोई भी पदार्थ या सराग देवी-देवता नहीं चढ़ सकता। 'भक्तामर स्तोत्र' में आचार्य मानतुंग कहते हैं।

पीत्वा पयः शशिकरद्युति दुग्धसिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधेरशितुं क इच्छेत्?

भगवन्! जिसने क्षीर सागर के अमृत-सदृश जल का आस्वादन कर लिया है, क्या वह समुद्र का खारा पानी पीना पसन्द करेगा? कौन मूर्ख और अभागा होगा ऐसा?

तो जिसने वीतराग की प्रार्थना कर ली हो, जो वीतराग की प्रार्थना के सुधा-सागर में अवगाहन कर चुका हो, जिसका मन-मयूर वीतराग की प्रार्थना में मस्त बन चुका हो, उसका मन कभी भैरूं की प्रार्थना से सन्तुष्ट होगा?

*आचार्य श्री के प्रवचनों से संकलित।

भवानी की प्रार्थना में आनन्दानुभव कर सकेगा ? काली, महाकाली आदि सराग देवों की ओर आकर्षित होगा ? कदापि नहीं ।

वीतराग की प्रार्थना क्षीर समुद्र का मधुर अमृत है, वरन् उससे भी अनन्तगुणा अधिक माधुर्य और आत्मिक गुणों की मिठास है । उस मिठास में राग और द्वेष का खारापन नाम मात्र को नहीं है ।

गाय, भैंस आदि मादा पशुओं और माताओं के, जिनके दुधमुहे बच्चे हैं, शरीर में रक्त भी होता है, दूध भी होता है, परन्तु रक्त में खारापन और दूध में मिठास होता है । इस पार्थक्य का कारण यह है कि दूध अपनी सन्तान के प्रति प्रेम और ममता से उत्पन्न हुआ है । इसी प्रकार जब प्रार्थना आराध्य के प्रति हार्दिक प्रीति से उत्पन्न होती है, तब उसमें अनूठा ही मिठास होता है । जब प्रार्थना अन्तस्तल से उद्भूत होती है और जिह्वा उसका वाहन मात्र होती है तभी प्रार्थना हार्दिक कहलाती है और उसके माधुर्य की तुलना नहीं हो सकती ।

तीर्थंकर 'नमो सिद्धाणं' कह कर दीक्षा अंगीकार करते हैं । उनके लिए सिद्ध आदर्श हैं । सिद्धों को आदर्श बना कर वे आगे बढ़ते हैं तो साधना करके स्वयं सिद्ध पद प्राप्त कर लेते हैं । अपने जीवन में जो जिसे आदर्श बना लेता है और जिसके प्रति एकान्त निष्ठावान् होता है, वह वैसा ही बन जाता है । गीता से और जैनाचार्यों के कथन से भी इस तथ्य का समर्थन होता है । आचार्य हेमचन्द्र ने कहा है :—

वीतरागं स्मरन् योगी, बीतरागत्वमाप्नुयात् ।

अर्थात् जो योगी-ध्यानी वीतराग का स्मरण करता है, चिन्तन करता है वह स्वयं वीतराग बन जाता है ।

मनुष्य का अन्तिम साध्य दुःखों का आत्यन्तिक विनाश करके आत्मानन्द को प्राप्त करना है और यह साध्य वीतराग की उपासना के बिना सिद्ध नहीं हो सकता । वीतरागता प्राप्त कर लेने पर सम्पूर्ण आकुलताजनित सन्ताप आत्मानन्द के सागर में विलीन हो जाता है । वीतराग एक ऐसा अद्भुत यन्त्र है कि उसमें समस्त दुःख, सुख के रूप में ढल जाते हैं ।

सुकोमलकाय गजसुकुमार के मस्तक पर दहकते हुए अंगार रक्खे गये थे । अंगार दुख के कारण हैं । एक अंगार आधे क्षण तक भी आपके शरीर से छू जाय तो आपको कितनी पीड़ा होगी ? कैसी व्याकुलता उत्पन्न हो

जाएगी ? मगर गजसुकुमार के मस्तक पर गीली मिट्टी की, सिगड़ी की तरह पाल बनाई गई थी और उसमें खदिर के धधकते अंगार भरे गये थे । कल्पना मात्र से हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं और हृदय धड़कने लगता है। किन्तु उस समय गजसुकुमार की मनोदशा क्या थी ? क्या उन्होंने दुःख का अनुभव किया ? वे वीतराग के सच्चे उपासक थे, वीतराग के ध्यानी थे और वीतरागता में ही उनका मन पूरी तरह रम गया था। अतएव वे अंगार दुःख के कारण न बन कर उनके लिए अनन्त सुख के कारण बन गए।

कदाचित् आपके सामने ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये तो आप क्या सोचेंगे ? आप कुछ भी सोचें किन्तु वीतरागता के परमोपासक गजसुकुमार ने यही सोचा कि सोमिल मेरा मित्र है, सहायक है, उपकारक है । यह मेरा कोई बिगाड़ नहीं कर रहा है, मुझे कर्म-ऋण के गुरुतर भार से मुक्त होने में सहायता कर रहा है।

गजसुकुमार के चित्त में इस प्रकार की भावना उत्पन्न हुई, क्योंकि वे वीतरागता के उपासक थे । इसी कारण भयानक से भयानक दुःख भी उनके लिए परम सुख बन गया और उन्हें तत्काल सर्वज्ञ-सर्वदर्शी दशा प्राप्त हो गई। अगर गजसुकुमार के चित्त के किसी कोने में यह भावना होती कि सोमिल मेरा वैरी है और मुझे जला रहा है । यह ब्राह्मण है या चाण्डाल, जो मेरे मस्तक को तिल-तिल करके जला रहा है ? ऐसा नीचतापूर्ण कृत्य तो चाण्डाल भी नहीं कर सकता । अगर इस प्रकार का विचार उत्पन्न हो जाता तो इतनी तकलीफ उठा कर भी वे नतीजा क्या पाते ? निश्चित है कि उन्हें मोक्ष प्राप्त न हो सकता।

मगर वीतरागता का उपासक शरीर के प्रति भी निराग हो जाता है । शास्त्र में कहा है :—

'अवि अप्पणो विदेहम्मि नायरति ममाइयं ।'

वीतरागता का साधक अपने शरीर के प्रति भी ममत्ववान् नहीं रह जाता । उस स्थिति में अपने शरीर का दाह उसे ऐसा ही प्रतीत होता है, मानो कोई झोंपड़ी जल रही है और वह दूर से उसका जलना देख रहा है । इस प्रकार की देहातीत दशा प्राप्त हो जाने पर शरीर का दाह भी आत्मा को सन्ताप नहीं पहुँचा सकता ।

वीतराग भाव में रमण करने के कारण गजसुकुमार के हृदय में क्रोध के बदले करुणा का ही संचार हुआ कि—सोमिल की आत्मा क्यों कर्मबन्ध कर रही है ? भगवन् ! इसे सुमति मिले ।

अभिप्राय यह है कि इस प्रकार की उच्चतम भावना तभी उत्पन्न होती है, जब वीतरागता हमारा ध्येय हो और उस ध्येय की पूर्ति के लिए वीतराग-देव को ही प्रार्थ्य-उपास्य बनाया जाए।

इस प्रकार की उपासना के लिए पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता होती है, और वह पथ-प्रदर्शक वही हो सकता है जो वीतरागता के पथ पर काफी दूर तक अग्रसर हो चुका हो और निर्ग्रन्थ हो। ऐसा पथप्रदर्शक हमें गलत राह पर नहीं ले जाएगा।

प्रार्थना के दो रूप हैं—भौतिक-लौकिक-प्रार्थना और आध्यात्मिक लोकोत्तर-प्रार्थना। वीतराग देव को प्रार्थना का केन्द्र बनाने वाला यदि मन से जागृत है तो वह उनसे भौतिक प्रार्थना नहीं करेगा। कदाचित् कोई भूला-भटका, दिग्भ्रान्त होकर भौतिक प्रार्थना करने लगे तो वीतरागता का स्मरण आते ही वह सन्मार्ग पर आ जाएगा। वीतरागता की प्रार्थना की यह एक बड़ी खूबी है।

अब जरा विचार करना है कि उक्त दो प्रार्थनाओं में से आध्यात्मिक प्रार्थना ही क्यों उपादेय है और भौतिक प्रार्थना क्यों उपादेय नहीं है? भौतिक प्रार्थना का अर्थ है सांसारिक सुख के साधनों-भोगोपभोगों के लिए प्रार्थना करना। किन्तु भौतिक पदार्थों का संयोग वस्तुतः सुख का नहीं, वरन् दुःख का ही साधन है—

'संयोगमूला जीवेन प्राप्ता दुःख परम्परा।'

दुःखों का जो प्रवाह अनादिकाल से, अजस्र गति से प्रवाहमान है, उसका उद्गम-स्थल पर—संयोग है। ऐसी स्थिति में पर पदार्थों के संयोग के लिए प्रार्थना करना प्रकारान्तर से दुःख के लिए ही अभ्यर्थना करना है, अतएव भौतिक प्रार्थना को मुमुक्षुजन उपादेय नहीं मानते।

आध्यात्मिक प्रार्थना का अर्थ है आध्यात्मिक गुणों का विकास करने के लिए अरिहन्तों और सिद्धों की शरण में अथवा निर्ग्रन्थ गुरुओं के चरणों में आत्म-निवेदन करना, अपनी दुर्बलताओं को प्रस्तुत करना और उनसे मुक्त होने की आकांक्षा को अभिव्यक्त करना, इस रूप में एक प्रकार का चिन्तन होता है और वह भी प्रार्थना का एक रूप है।

तो सर्व प्रथम प्रार्थना करने वाले को अपने प्रार्थ्य का समीचीन रूप से निश्चय करना चाहिए और जिस उद्देश्य की सिद्धि के लिए उसे प्रार्थ्य बनाया है, उसी को सदैव सन्मुख रखकर प्रार्थना करनी चाहिए। जो इस विवेक के साथ प्रार्थना करेगा वह तिरेगा और इसी जीवन में उसे अपूर्व शान्ति की प्राप्ति होगी। ○
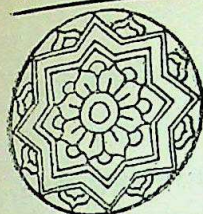
श्रावक धर्म : स्वरूप और चिन्तन

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

४—स्वदार सन्तोष व्रत :

ब्रह्मचर्य मानव-जीवन का मेरुदण्ड है। ब्रह्मचर्य एक ऐसी विशिष्ट साधना है, जिससे तन भी शक्तिशाली बनता है, मन भी बलवान बनता है और आत्मा भी बलवान बनती है। यह धर्म रूप महानगर का कोट है, धर्म रूप पद्म सरोवर की पाल के समान रक्षक है।

श्रमण हो या श्रावक हो, इन दोनों के ध्येय, दोनों का दृष्टिकोण, दोनों के जीवन की सार्थकता भोगों में शरीर को विनष्ट करने में नहीं, अपितु शरीर से भोगों के त्याग और इन्द्रिय-विषयों पर संयम की साधना—ब्रह्मचर्य की आराधना के द्वारा आत्मा को अनन्त शक्तिमान, सिद्ध, बुद्ध, मुक्त बनाने में है। यह बात दूसरी है कि श्रमण-जीवन में जैसे पूर्ण ब्रह्मचर्य की आराधना की जाती है, वैसा न करके श्रावक-जीवन में मर्यादित ब्रह्मचर्य की आराधना होती है। परन्तु दोनों की मंजिल एक है। दोनों को ब्रह्मचर्य के उच्च शिखर पर पहुँचना है, दोनों को मुक्त बनना है, दोनों अपनी आत्मा को अनन्त बल-वीर्य से सम्पन्न करना चाहते हैं, दोनों का पथ भी एक है। दोनों का गन्तव्य स्थान—मोक्ष एक है, ब्रह्मचर्य पथ भी एक है। ब्रह्मचर्य पालने के नियम जो श्रमण के हैं, वे ही श्रावक के लिए हैं। अन्तर है—उस पथ पर चलने वाले साधकों का। श्रावक साधक उसी ब्रह्मचर्य-महामार्ग पर मन्द गति से—रास्ते में—विश्राम लेता हुआ चलता है जबकि श्रमण साधक उसी महापथ पर तीव्रगति से विश्राम की अपेक्षा रखे बिना चलता है। परन्तु यह तो मानना होगा कि श्रावक का अन्तिम आदर्श पूर्ण ब्रह्मचर्य है। इसलिए श्रावक-जीवन में ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करना अनिवार्य, स्वाभाविक और उपयोगी है। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना नैतिक, धार्मिक सभी दृष्टियों से श्रावक के लिये उचित है। ब्रह्मचर्य व्रत को अंगीकार करने वाला श्रावक इस प्रकार प्रतिज्ञा लेता है :—

"मैं (देश विरति ब्रह्मचर्य व्रत में) स्वदार-संतोष के अतिरिक्त शेष समस्त (स्त्री जाति के प्रति) मैथुन का प्रत्याख्यान (त्याग) करता हूँ, यावज्जीव तक देव सम्बन्धी मैथुन का दो करण, तीन योग से (यानी मैथुन सेवन न करूँगा, न कराऊँगा मन से, वचन से, काया से) इसी प्रकार मनुष्य मनुष्यणी सम्बन्धी

तथा तिर्यञ्च-तिर्यञ्चणी सम्बन्धी मैथुन-सेवन का एक करण एक योग से अर्थात् काया से त्याग करता हूँ।"

स्वदार संतोष व्रत को अंगीकार करनें वाला श्रावक असीम काम-वासना के पाप से बच जाता है। परस्त्री-सेवन का त्याग करने वाले श्रावक का चित्त पर-स्त्री की ओर जाता ही नहीं है। ऐसा श्रावक राज्य भण्डार, अन्त:पुर में, साहूकार-महल में या कहीं भी चला जाय, किसी को उसके प्रति अप्रतीति नहीं होती। उसका शरीर और मन प्राय: स्वस्थ, मेधावी, सुडौल और बलिष्ठ होता है।

स्वदार संतोष व्रत के पाँच अतिचार हैं, वे जानने योग्य हैं आचरण करनें योग्य नहीं हैं। उनके नाम ये हैं—

१. इत्वरिक परिगृहीतागमन।
२. अपरिगृहीतागमन।
३. अनंग क्रीड़ा।
४. परविवाहकरण।
५. काम भोग तीव्राभिलाषा।

१. इत्वरिक परिगृहीतागमन—यह स्वदार संतोष व्रत का प्रथम अतिचार है। इसका अर्थ है—थोड़े समय के लिए पैसे देकर या और किसी तरह से अपने यहाँ रखी हुई स्त्री के साथ गमन करना।

२. अपरिगृहीतागमन—जो स्त्री किसी के द्वारा गृहीत नहीं है, ऐसी कुमारी अथवा वेश्या आदि के साथ, उसे परस्त्री न मान कर, गमन करना, अपरिगृहीतागमन नामक अतिचार है।

३. अनंग क्रीड़ा—काम-भोग के प्राकृतिक अंगों के अतिरिक्त अन्य अंगों से काम-क्रीड़ा करना, अनंग क्रीड़ा है।

४. परविवाहकरण—स्वकीय पुत्र, भाई, आदि सम्बन्धी जनों के अतिरिक्त पर का विवाह कराना अथवा दूसरा विवाह करना, पर-विवाहकरण नामक अतिचार है।

५. तीव्र काम भोगाभिलाषा—काम-भोग सेवन करने की प्रबल अभिलाषा रखना, निरन्तर इन्हीं विचारों में डूबे रहना भी तीव्र काम भोग अभिलाषा नामक अतिचार है।

ब्रह्मचर्य व्रत धारी श्रावक को ब्रह्मचर्य-रक्षा के लिए उक्त पाँच अतिचारों से बचना चाहिए। तभी वह श्रावक मर्यादित ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता हुआ ब्रह्मचर्य के उच्चतम-शिखर तक पहुँच सकेगा।

५—इच्छापरिमाण अपरिग्रह व्रत :

इच्छाएँ आकाश के समान अनन्त हैं, उनका कभी भी अन्त नहीं आ सकता। मानव की आयु का एक दिन अन्त आ सकता है, परन्तु इच्छाओं का अन्त सहसा नहीं होता। मानव की देह बूढ़ी हो सकती है, लेकिन इच्छा और तृष्णा कभी बूढ़ी नहीं होती। इच्छाएँ जल में उठने वाली तरंगों के समान हैं। जीवन समाप्त हो जाता है लेकिन इच्छाएँ समाप्त नहीं हो पातीं। जो निकृष्ट इच्छाएँ हैं, उनका त्याग करना सद्गृहस्थ श्रावक के लिये आवश्यक है। इच्छा के दो रूप होते हैं—एक शुभ रूप है, दूसरा अशुभ रूप है। विषमतापूर्ण–परिस्थिति में समभाव रखने, राग-द्वेष कम करने, ममत्व कम करने, आत्म-भाव में रमण करने, मुक्ति प्राप्त करने आदि आध्यात्मिक-इच्छाएँ उत्कृष्ट हैं। इच्छा का दूसरा रूप अत्यन्त निकृष्ट एवं अशुभ है। इच्छा की निकृष्टता उसके सीमित या साधारण होने में नहीं है, अपितु उसके उद्देश्य की तुच्छता में या इच्छापूर्ति के लिये अनुचित उपायों को काम में लाने में है।

श्रावक के लिए इच्छा-मूर्च्छा का सर्वथा त्याग आवश्यक नहीं है। किन्तु उनके लिए इच्छाओं का परिमाण अर्थात् सीमित करना आवश्यक है। गृहस्थ श्रावक के लिए संसार-व्यवहार में रहते हुए इच्छा का सर्वथा-निरोध अति दुष्कर है। जिस दिन वह इच्छाओं का सर्वथा त्याग कर देगा, उस दिन या तो वह संथारा (आजीवन अनशन) कर लेगा, या संसार-व्यवहार में रहने का त्याग कर देगा। लोक व्यवहार में रहते हुए गृहस्थ श्रावक को पूर्ण अपरिग्रह व्रत बता दिया जायेगा तो उसका पालन नहीं होगा। इन सब दृष्टिकोणों को संलक्ष्य में रख कर श्रावक के लिए इच्छा परिमाण व्रत बताया है।

एक बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिये कि पाँचवें व्रत को **"इच्छा परिमाण व्रत"** कहा है **"आवश्यकता परिमाण व्रत"** नहीं। क्योंकि आवश्यकताएँ तो आवश्यकताएँ हैं। वे तो जीवन-निर्वाह के लिए जरूरी हैं। उनकी मर्यादा क्या होगी। मर्यादा इच्छाओं की होगी। आवश्यकता अलग चीज है और इच्छा या मूर्च्छा अलग चीज है। स्पष्ट है कि इच्छाओं पर नियन्त्रण करो, उनकी सीमा करो। श्रावक को इच्छाओं को बढ़ा कर उनकी पूर्ति के लिए रात-दिन बेचैन होने से बचने के लिए "इच्छा परिमाण व्रत" है। उक्त व्रत के स्वीकार करने से श्रावक का कोई भी व्यावहारिक कार्य रुकता नहीं है, उसके विकास कार्य में अवरोध नहीं आता है बल्कि वह आत्म-कल्याण के कार्य कर सकता है। सुख-शान्तिपूर्वक निश्चिन्तता से जीवन यापन कर सकता है, गार्हस्थ्य-जीवन भी सुखमय हो जाता है और उसे अप्राप्त वस्तु को प्राप्त करने की चिन्ता नहीं रहती है, न दुःख होता है। यदि व्रत में रखी हुई सीमा के बाहर की कोई भी वस्तु बिना इच्छा या परिश्रम के प्राप्त होती हो तो भी वह उसे स्वीकार नहीं

करता और न ही किसी वस्तु की इच्छा से पीड़ित रहता है। इच्छा परिमाण व्रतधारी श्रावक धर्मकार्य में रुचिपूर्वक तल्लीन हो जाता है, उसके मन में उतनी चंचलता और अस्थिरता नहीं रहती है जितनी चंचलता और अस्थिरता असीम इच्छा वाले व्यक्ति में रहती है। जो श्रावक अपनी इच्छाओं का जितना निरोध कर लेता है, उसका मन धमकार्य में उतना ही लगता है और वह निर्ग्रन्थ धर्म के योग्य पात्र बन जाता है।

उक्त व्रत का आराधक श्रावक महा परिग्रह से बच जाता है क्योंकि उसने इच्छाओं को सीमित कर दिया है। इस कारण जितने अंश में उसकी इच्छा शेष है, उतने अंश के परिग्रह के अतिरिक्त शेष समस्त परिग्रह से निवृत्त हो जाता है। इस व्रत को तीन करण—करना, कराना और अनुमोदन तथा तीन योगों—मन, वचन और काया में से अपनी इच्छानुसार ग्रहण कर सकता है।

अन्य व्रतों की तरह इच्छा परिमाण व्रत के भी पाँच अतिचार हैं, दोष हैं जिनसे श्रावक को बचना चाहिये। वे पाँच अतिचार ये हैं :—

१. क्षेत्र-वस्तु परिमाणातिक्रम
२. धन्य धान्य परिमाणातिक्रम
३. हिरण्य सुवर्ण परिमाणातिक्रम
४. द्विपद चतुष्पद परिमाणातिक्रम
५. कुप्य धातु परिमाणातिक्रम।

१. क्षेत्र-वस्तु परिमाणातिक्रम—खेत आदि भूमि, गृह आदि नव प्रकार के बाह्य परिग्रहों के विषय में किये गये परिमाण का आंशिक और व्रत सापेक्ष उल्लंघन करना क्षेत्र-वास्तु आदि प्रमाण का अतिचार है।

२. हिरण्य सुवर्ण परिमाणातिक्रम—चांदी, सोने की मर्यादा का उल्लंघन करना। अगर किसी ने सोने के पाँच आभूषण मर्यादा में रक्खे हैं और छठा आभूषण आ जाय तो दो का एक आभूषण करवा लेना अतिचार है अथवा आभूषण स्वयं उपार्जन करके अपने पुत्र, पुत्री आदि स्वजन को दे देना भी अतिचार है।

३. धन्य धान्य परिमाणातिक्रम—रुपया, पैसा और धान्य के परिमाण का उल्लंघन करना। पहले की ही तरह एक देश भंग होने पर अतिचार होता है। सर्वथा भंग होने पर अनाचार हो जाता है।

४. द्विपद-चतुष्पद परिमाणातिक्रम—दो पैर वाले और चार पैर वाले पशु-पक्षी आदि तथा रथ आदि की मर्यादा को एक देश भंग करना।

५. कुप्य धातु परिमाणातिक्रम—तांबा, पीतल आदि तथा अन्य फुटकल सामान की बांधी हुई मर्यादा का उल्लंघन करना। यह पूर्वोक्त रीति से ही अतिचार है। [क्रमशः]

योगी को भय कैसा ?

□ डॉ० प्रेमचन्द रांवका

धैर्यं यस्य पिता, क्षमा च जननी, शान्तिश्चिरं गेहिनी।
सत्यं सूनुरयं, दया च भगिनी, भ्राता मनः संयमः ॥
शय्या भूमितलं, दिशोऽपि वसनं, ज्ञानामृतं भोजनं ।
एते यस्य कुटुम्बिनो वद सखे, कस्माद्भयं योगिनः ॥

—भर्तृहरिः

योग-साधना में आरूढ़ भर्तृहरि से किसी ने पूछा—साधु-सन्त वन में विचरण करते हैं, उनके पास माता-पिता, भाई-बहिन, पत्नी, पुत्र आदि कोई भी पारिवारिक लोग नहीं रहते हैं। न उनके पास रहने को मकान होता है; न सोने को शैय्या और न ही खाने को भोजन। तब वे कैसे जंगल में रहते हैं ? वन में हिंसक जानवरों के कारण वे कैसे—'निर्भयता से आत्म-साधना करते हैं' भर्तृहरि ने अपने 'वैराग्यशतक' में उक्त छन्द में इसका उत्तर दिया है—

वन में आत्म-साधना करने वाले जिस साधु-सन्त के पास धैर्य रूपी पिता, क्षमा रूपी माता, शान्ति रूपी गृहिणी, सत्य रूपी पुत्र, दया रूपी बहिन, संयम रूपी भाई रहता है। पृथ्वी जिसकी शय्या है, दिशाएँ जिसकी वस्त्र हैं, ज्ञानामृत (स्वाध्याय) जिसका भोजन है—इतना विशाल परिवार जिसके पास सदा रहता है,—ऐसे योगीराज को भय किससे होगा ? वह तो निर्भयतापूर्वक आत्म-साधना में रत रहता है। संसार के समस्त प्राणी उसके परिजन हैं। 'उदारचरितानांतु वसुधैव कुटुम्बकम्।'

न सुखं देवराजस्य न सुखं चक्रवर्तिनः ।
यत्सुखं वीतरागस्य, मुनिरेकान्तवासिनः ॥

इस परिवर्तनशील संसार में जो सुख न देवराज को प्राप्त है और न चक्रवर्ती को, वह सुख एकान्तवासी वीतरागी को योग साधना में मिलता है।

हो अर्द्ध निशा का सन्नाटा, वन में मृगचारी चरते हों।
ए शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिन्तन करते हो ॥

ऐसे योगी ही निर्भय हैं। वे अपने-पराये से भिन्न हैं। वे समग्रता में समतापूर्वक रहते हैं।

—१९१०, सेजड़े का रास्ता, जयपुर-१

[१]

'जिन' का नाम

□ वर्षा सिंह

प्राणी ! 'जिन' का नाम लिये जा।
भव-सागर यूं पार किये जा ॥

(१)

माया रूप बदल कर आये,
हर पल तेरा मन भरमाये,
किन्तु न तेरा कुछ कर पाये,
जब तू जिनवाणी को गाये,
'जिन वचनामृत' बूंद पिये जा।
भव-सागर यूं पार किये जा ॥

(२)

यह मेरा है, वह तेरा है,
मोह-चक्र का ये घेरा है,
जिसको तू उजियारा समझे,
रे, वह तो घना अंधेरा है,
'जिन-ज्योति' की किरण लिये जा।
भव-सागर यूं पार किये जा।

(३)

मूढ़ मनुज सब अपना समझे,
अहम् भरा वह पल-पल गरजे,
छूट सकेंगे 'जिन-वचनों' से,
जनम-जनम के सारे करजे,
"वर्षा" 'जिन' को नमन किये जा।
भव-सागर यूं पार किये जा ॥

—एफ-३६, एम. पी. ई. बी. कॉलोनी
मकरोनिया, सागर-४७० ००४

[२]

सच्ची यारी

□ श्री अचूक

मनवा समझो बात हमारी,
करलो गुरु से सच्ची यारी।

(१)

पल-पल हर क्षण रंग बदलती,
रहती दुनिया सारी।
नीरस अति निर्बल, निर्मोही,
बात सुनावे खारी।
मनवा समझो बात हमारी,
करलो गुरु से सच्ची यारी ॥

(२)

अंधी नगरी में रहकर के,
सारी उमर गुजारी।
श्वास अमोल बिताई जग में,
अन्त मिली लाचारी।
मनवा समझो बात हमारी,
करलो गुरु से सच्ची यारी ॥

(३)

आदि अन्त तो माटी माटी,
माटी सबसे भारी।
वैतरणी यदि पार उतरनी,
करलो नाम सवारी।
मनवा समझो बात हमारी,
करलो गुरु से सच्ची यारी ॥

(४)

कई जन्म तो व्यर्थ गुजारे,
जीती बाजी हारी।
सद्गुरु सन्त 'अचूक' मिले हैं,
अगम गति है न्यारी।
मनवा समझो बात हमारी,
करलो गुरु से सच्ची यारी ॥

—३८, विजयनगर, करतारपुरा
२२ गोदाम, जयपुर-६

चिन्तन
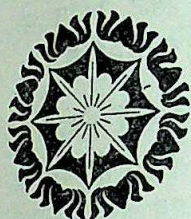
जैन मुनियों का दाह-संस्कार

□ श्री लालचन्द्र नाहटा 'तरुण'

यह सर्वमान्य व सर्वविदित तथ्य और सत्य है कि जैन मुनि चाहे वे कितने ही प्रभावशाली रहे हों—का दाह संस्कार सार्वजनिक श्मशान पर ही किया जाना चाहिये। अलग स्थानों पर दाह संस्कार करने से श्रमण संस्कृति विरोधी विकृतियाँ, पाखंड और आडम्बर पनपते हैं। स्थानकवासी परम्परा जो कि जैन धर्म की मूल मौलिक और शुद्ध सनातन परम्परा है, में अलग स्थानों पर दाह संस्कार करने का विधान या परम्परा कभी नहीं रही। भगवान महावीर से लेकर आज तक बड़े-बड़े तेजस्वी और प्रभावशाली, चमत्कारी और विद्वान् गणधर, जैन आचार्य, उपाध्याय, गणी, गणावच्छेक, प्रवर्तक, मुनिराज आदि हुए परन्तु किसी का दाह संस्कार विशिष्ट स्थान पर नहीं किया गया न ही उनका कोई स्मारक बना। अपवाद रूप में भी जब कभी इस नियम का उल्लंघन हुआ तभी विकृतियां पनपीं।

श्वे. मू. पू. समाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० बेचरदास जी दोशी ने भी जैन धर्म में मूर्ति पूजा की शुरूआत चिता पर बनने वाले वृक्षों, स्मारकों अर्थात् चैत्यों से मानी है। इसलिये अनेकानेक विकारों की जननी होने के कारण चिता पर स्मारक बनाना श्रमण संस्कृति में अच्छा नहीं समझा गया। यों तो समस्त संसार में कोई स्थान ऐसा नहीं है जहां से कोई न कोई आत्मा कभी न कभी सिद्ध नहीं हुई हो, यदि सिद्ध गति प्राप्त आत्माओं के भी स्मारक नहीं बने या नहीं बन सकते तो स्वर्गवासी आत्माओं के स्मारक बनाना तो घोर अंधविश्वास और भ्रम है। यदि मोक्ष प्राप्त आत्माओं का या स्वर्गप्राप्त आत्माओं का निर्वाण-स्थल होने से कोई स्थान पवित्र होता हो या पवित्र करने वाला होता हो तो संसार का हर स्थान पवित्र है। हमें किसी भी स्थान में मलमूत्र विसर्जन के लिए कोई भी जगह कभी भी कहीं भी उपलब्ध नहीं होगी। व्यक्ति के उत्थान में मात्र पुरुषार्थ और शुद्धोपयोग ही कारण है। स्थान की पूज्यता की बात निहित स्वार्थी व्यक्ति अपने स्वार्थ-पूर्ति हेतु ही करते हैं। स्थानकवासी समाज में यह प्रवृत्ति पड़ौसी समाजों की देखादेखी पनपने लगी है।

रत्नवंशी चतुर्विध संघ से विशेष निवेदन

जिस समय जैतारण व सोजत में शुद्ध जैन संस्कृति विरोधी निर्माण हो रहे थे उस समय भी मैंने इसके लिए प्रवर्तक श्री से विरोध प्रकट किया था किन्तु मेरी बात अनसुनी व उपेक्षित कर दी गयी, परिणाम हमारे सामने हैं।

अभी वैसा ही प्रसंग फिर उपस्थित होने जा रहा है निमाज में। वर्तमान समय में श्रीमज्जैनाचार्य परम पूज्य श्री हस्तीमल जी म. सा. बहुत ही प्रभावशाली, चमत्कारी, तेजस्वी, अनेकानेक आयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व वाले महान् आचार्य हुए हैं। उनका स्वर्गवास संलेखना संथारापूर्वक निमाज ग्राम में हुआ। संथारे के समय भंडारी परिवार एवं निमाज संघ ने संतों की एवं आगन्तुक दर्शनार्थियों की जैसी भावभीनी और उल्लेखनीय सेवा की उसके लिए उनको बहुत-बहुत धन्यवाद। किन्तु आचार्य श्री के देहावसान के पश्चात् कुछ कार्य ऐसे हो गये जिनके बड़े ही अनिष्टकारी परिणाम संभावित हैं। आचार्य श्री श्रीलाल जी म. सा., आचार्य श्री अमोलख ऋषि जी म. सा., आचार्य श्री जयमल जी म. सा., आचार्य श्री रघुनाथ जी म. सा. आदि जितने भी आचार्य हुए हैं उन सबका दाह-संस्कार सार्वजनिक श्मशान में ही हुआ है। यहाँ तक कि दिवंगत आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा. के पूर्वाचार्य श्री रतनचंद जी म. सा., श्री शोभाचन्द जी म. सा. आदि सभी का दाह संस्कार सार्वजनिक श्मशान पर ही किया गया। फिर ऐसी कौनसी विशेष बात हो गई जिससे आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा. का दाह-संस्कार किसी अलग स्थान विशेष पर किया गया।

"आचार्य श्री का दाह संस्कार सार्वजनिक स्थान पर ही होगा" यह निर्णय दिवंगत आचार्य श्री की अस्वस्थ अवस्था में, उनकी विद्यमानता में उनकी भावनानुसार हो गया था। वर्तमान आचार्य श्री हीराचन्द जी म. सा. ने अपने श्रीमुख से यह निर्णय फरमाया भी था। परन्तु अत्यन्त खेद और आश्चर्य है कि अपने गुरु एवं आचार्य श्री की आज्ञा का पालन उनके तथाकथित भक्तों द्वारा नहीं किया गया। यहाँ भक्तों के साथ तथाकथित विशेषण इसलिए लगाया गया कि सच्चा भक्त गुरु आज्ञा का पालन करता है। जो गुरु आज्ञा का उल्लंघन करता है या उनके विपरीत कार्य करता है वह गुरु-भक्त नहीं, गुरुद्रोही होता है। विचारणीय बात तो यह है कि रत्नवंशीय श्रावक समुदाय ने भी इसका समुचित विरोध नहीं किया। मैंने इस सम्बन्ध में रत्नवंश के कतिपय श्रावकों से जानकारी की तो उन्होंने बताया कि हमने तो विरोध किया था और प्रयत्न भी किया था कि दाह संस्कार सार्वजनिक स्थान पर हो, परन्तु कुछ स्थानीय व्यक्तियों के अत्यन्त आग्रह के कारण, उस विषाद वेला में मनमुटाव एवं विवाद से बचने हेतु हमें मन मारकर यह सब सहना पड़ा। उन्होंने यह भी बताया कि

अलग दाह संस्कार करने वालों ने यह भी वादा किया कि "दाह-संस्कार के स्थान पर यहाँ किसी प्रकार का दाह-संस्कार का कोई भी चिह्न नहीं रहेगा, यहाँ हल चला दिया जायेगा।"

परन्तु आचार्य श्री के दाह-संस्कार के स्थान पर चबूतरे पर उनकी भस्मी रख दी गयी है और चबूतरे को हटाने की बजाय सुरक्षित कर दिया गया। यही नहीं, उसके चारों ओर चारदीवारी बनाकर ऊपर चद्दर लगाकर उसे स्मारक का रूप दे दिया गया और इस चबूतरे के साथ सर्प-परिक्रमा आदि के बीसों मनगढंत चमत्कार जोड़ दिये गये हैं। इस प्रकार स्थानकवासी अर्थात् शुद्ध सनातन जैन परम्परा एवं आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा. के मूल सिद्धांत इस चबूतरे में दफना दिये गये हैं।

जिन परमपूज्य आचार्य भगवन्त ने जीवन भर जिन ढोंगों, पाखंडों, आडम्बरों, जड़ पूजा आदि के विरुद्ध संघर्ष किया, जिन्होंने स्वयं जैतारण में बनने वाले स्मारक का विरोध किया, अहो! यह कितनी विचित्र बात है कि उनके बाद उनके भक्तों ने उन्हीं के नाम पर ये सभी बुराइयाँ प्रारम्भ कर दीं, इससे अधिक खेद की बात क्या होगी?

प्रथम तो गुरु-आज्ञा का उल्लंघन घोर पाप है, उससे अनन्त गुणा पाप गुरु-हत्या का है और इससे भी अनन्त गुणा पाप गुरु के सिद्धान्तों की हत्या का है। कारण, गुरु-हत्या से केवल गुरु की ही हत्या हुई लेकिन सिद्धान्त हत्या से हजारों, लाखों व्यक्तियों के आत्मिक गुणों की हत्या हुई और निरन्तर होती रहेगी। यह रत्नवंश के लिए भी विचारणीय है। रत्नवंश यह कहकर नहीं बच सकता कि कोई व्यक्ति अथवा परिवार विशेष नहीं मानता तो हम क्या करें। क्या आचार्य श्री किसी व्यक्ति अथवा परिवार विशेष के ही गुरु थे। क्या वे रत्नवंश एवं समूचे समाज के गुरु व आचार्य नहीं थे। फिर एक परिवार को क्या अधिकार है कि वह दाह-संस्कार-स्थल पर स्मारक बनाये और वह व्यक्तिगत सम्पत्ति बने। क्या रत्नवंश का यह दायित्व नहीं है कि आचार्य श्री को व्यक्तिगत सम्पत्ति बनने से रोकें?

आचार्य श्री का दाह संस्कार-स्थल किसी व्यक्ति, परिवार या ग्राम विशेष के संघ की निजी सम्पत्ति नहीं हो सकती, न ही उस पर किसी व्यक्ति विशेष का अधिकार हो सकता है। आज स्वर्ग में आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म. सा. की आत्मा धिक्कार रही होगी अपने रत्नवंशीय चतुर्विध संघ पर, जो उनके नाम पर उनके ही सिद्धान्तों की हत्या कर रहे हैं। रत्नवंश के अध्यक्ष के नाते श्री मोफतराज जी मुणोत का विशेष दायित्व है कि इन गुरुद्रोही प्रवृत्तियों को रोकें।

यदि निमाज में स्मारक बनने दिया गया हो तो यह स्थानकवासी समाज के इतिहास की भयंकर दुर्घटना होगी। स्मारक बनाने के पक्ष वाले कहते हैं कि जैतारण में बन सकता है तो फिर निमाज में क्यों नहीं ? यदि निमाज में भी बन गया तो फिर कोई किसी को रोक नहीं सकेगा। अगले ५० वर्षों में गाँव-गाँव में स्मारक बन जायेंगे। बनाने वाले कहेंगे कि जब जैतारण और निमाज तक में भी स्मारक बन सकते है तो फिर यहाँ क्यों नहीं ? जैतारण से प्रारम्भ होकर यह आत्मघाती आग अभी तो निमाज ही पहुँची है। इसे नहीं रोका गया तो यह पूरे स्थानकवासी समाज को भस्मीभूत कर देगी। हर जगह मोहान्ध व्यक्ति तो मिलते ही हैं। अलग स्थानों पर दाह-संस्कार होने पर, ये कहते हैं इस स्थान पर किसी के पैर, जूतियाँ आदि न पड़ें, जानवर पेशाब आदि न करें इसलिये चबूतरा बनाना चाहिये। फिर चबूतरे की सुरक्षा व वर्षा आदि से बचाव के बहाने से उसकी चारों ओर चारदीवारी बनाकर ऊपर से ढक दिया जाता है। जब ऐसा हो जाता है तो उसके साथ कपोल कल्पित चमत्कारों और मनगढ़ंत घटनाओं को जोड़ देने का चक्कर चलता है। इससे लोगों में मूढ़ मान्यता और अंधविश्वास पनपते हैं। लोग उसे हाथ जोड़ने, सिर नवाने और परिक्रमा करने लगते हैं। फिर उस स्मारक को अधिकाधिक भव्य बनाने की होड़ लगती है। फिर वहाँ पर उनका चित्र रखा जाता है और कालांतर में वहां मूर्तियाँ आ जाती हैं। जब मूर्तियाँ आ ही गयीं तो फिर उनको वंदन-पूजन शुरू हो जाता है और इस प्रकार जैन धर्म और श्रमण संस्कृति का मूल मौलिक और शुद्ध स्वरूप नष्ट हो जाता है। भगवान महावीर और लोंकाशाह के द्वारा की गई धर्म क्रांतियां इस प्रकार नष्ट हो जाती हैं। यदि मुनिराजों का दाह-संस्कार सार्वजनिक श्मशानों पर ही हो और वहाँ पर किसी भी प्रकार का स्मारक चिह्न न रहे तो इन सभी बुराइयों से बचा जा सकता है। नहीं तो फिर स्था. समाज और मूर्तिपूजक समाज में अन्तर ही क्या रहेगा ? अतः प्रत्येक स्थानकवासी साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका का कर्तव्य है कि वे संगठित होकर इस दुष्प्रवृत्ति का तीव्र विरोध करें।

सभी अखिल भारतीय स्थानकवासी संस्थाओं से भी निवेदन है कि वे प्रस्ताव पास कर रत्नवंशीय श्रावक संघ प्रमुख मुणोत जी, हीरावत जी, भांडावत जी एवं भंडारी परिवार से इस आत्मघाती प्रवृत्ति को समाप्त करने के लिए बाध्य करें। इसके साथ ही साथ पूज्य आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी म. सा., पूज्य उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी म. सा. एवं सभी आचार्यों, उपाध्यायों, प्रवर्तकों, परामर्शकों, सभी संघाडा प्रमुख मुनिराजों की सेवा में पुरजोर विनती, साग्रह अनुरोध करता हूँ कि यदि आपके दिल में अपनी सम्प्रदाय, अपने गच्छ और स्थानकवासी जैन धर्म के प्रति रत्तीभर भी प्रेम है तो अपनी वसीयत

कीजिए, अपने प्रमुख शिष्यों व प्रमुख भक्तों को सौगन्ध दिराइये एवं सार्वजनिक रूप से स्पष्ट घोषणा कीजिए कि आपका कभी काम पड़ने पर दाह-संस्कार सार्वजनिक स्थान पर ही होवेगा और उस पर किसी प्रकार का चबूतरा, स्मारक आदि नहीं बनेगा। सभी अखिल भारतीय जैन संस्थाओं से निवेदन है कि वे प्रतिज्ञा करें कि सभी मुनियों के दाह-संस्कार सार्वजनिक स्थानों पर ही होंगे और वहाँ किसी प्रकार का कोई स्मारक चिह्न नहीं होगा। शुद्ध श्रमण संस्कृति की सुरक्षा तब ही हो सकेगी।

हमारा उद्देश्य शुद्ध सनातन जैन धर्म अर्थात् स्थानकवासी जैन धर्म एवं उसकी परम्परा विरोधी कार्यों से है, स्थानकवासियों को वरीयता और प्राथमिकता देते हुए निमाज में होने वाले प्रत्येक जनकल्याणकारी कार्य एवं योजनाओं का हमारा पूरा समर्थन है। हमारी भावना है कि श्रद्धांजलि सभा में घोषित एवं अन्य योजनाएँ नेताओं के विवाद में नहीं उलझनी चाहिये।

—केकड़ी (जिला अजमेर)

आन्तरिक ज्योति

☐ श्री नैनमल विनयचन्द्र सुराणा

एक समझदार पिता ने अपने दोनों पुत्रों की बुद्धि की उत्कृष्टता की परीक्षा करने के लिये दोनों को एक-एक रुपया देते हुए कहा—"तुम इस रुपये से कोई ऐसी चीज खरीद लाओ जिससे घर भर जाये।"

पहला पुत्र एक रुपये का घास लाया और घर में फैला दिया, जिससे सम्पूर्ण घर भर गया।

दूसरा पुत्र एक रुपये की मोमबत्ती लाया, ज्योति जलाई और ज्योति के उज्ज्वल प्रकाश से पूरा घर भर गया।

घर तो दोनों ने भर दिया, पर एक ने घास से भरा और दूसरे ने प्रकाश से भरा।

—सुराणा कुटीर, पुराना बस स्टैण्ड, सिरोही

संस्कृत काव्य :
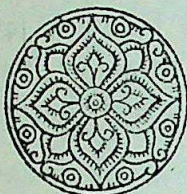
मायाऽष्टकम्

□ पं. श्री उदयचन्दजी म. 'जन सिद्धान्ताचाय

[मालिनी छन्द]

अमल गुण कदम्ब ज्वालने वह्निकल्पी,
विरति धृति महीध्र स्फोटने वज्रसाराम् ।
सुगति गमन मार्गोरुध्यते यत्प्रभावात्,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ॥१॥

यह माया निर्मल गुणों के समूह को जलाने में अग्नि के समान है और विरति-त्याग, धैर्य रूप पर्वतों को फोड़ने-तोड़ने में व चूर्ण करने में वज्र के समान है । इसके प्रभाव से सुगति में जाने का मार्ग रुक जाता है । ऐसी सदा ही दोषों से दूषित मलिन पापमयी माया को छोड़ दो ।

अखिल भुवनशास्ता चक्रवर्ती जगत्यां,
सपदि नरकभूमौ पतितोऽन्यो ऽप्यनन्तः ।
इतिमनसिविचार्य श्रेयसो योगमिच्छँरु,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ॥२॥

इस माया द्वारा सम्पूर्ण षट् खण्ड भूक्त के शासक और जगत्के चक्रवर्ती भी तत्क्षण नरक भूमि में पटक दिये गये, यों अन्य अनन्त प्राणी भी नरक में डाले गये हैं । ऐसा मन में विचार करके कल्याण के योग की इच्छा वाले सदा ही दोषों से दूषित मलिन पापमयी माया को छोड़ दो ।

कुगतिगमन हेतुं मोक्षमार्गेषु केतुं,
सुकृत मृदुवल्लीच्छेदने खड्ग तुल्यम् ।
विपद् विविध घमेत्सिादने सुप्रसिद्धां,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ॥३॥

यह माया कुगति में ले जाने में कारण रूप है, मोक्ष मार्ग की रुकावट में

केतु ग्रह के समान है एवं पुण्य रूपी कोमल लता को छेदन करने में तलवार के समान है तथा स्पष्ट और विविध धर्म क्रियाओं के नाश करने में यह सुविख्यात है। ऐसी सदा ही दोषों से दूषित मलिन पापमयी माया को छोड़ दो।

परगुण धन पुञ्जं लुम्पति द्राक्स्वभावा,
त्परपतन कृतार्थाऽमित्र संवर्द्धिनीया।
परसुखमव हन्तुं वीक्षमाणाऽन्तरंतां,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ।।४।।

स्वभाव से ही यह माया दूसरों के गुण रूपी धन समूह को तत्काल नष्ट कर देती है, दूसरों को गिराने में ही यह अपने आपको सफल समझती है, शत्रुओं की वृद्धि करती है। दूसरों के सुखों को नहीं चाहती हुई यह आन्तरिक दोषों को ही देखती है। ऐसी सदा ही दोनों से दूषित मलिन और पापमयी माया को छोड़ दो।

यम नियम समाधि ध्वंसिनीं पापवृत्ति,
विमल विशद बुद्धेर्नाशने राक्षसी स्त्रीम्।
निखिल कलुष वृत्यासाधुवृत्तस्य हन्त्री,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ।।५।।

यह माया यम, नियम और समाधि को नष्ट करने वाली है, यह साक्षात् पाप रूप आचरण है, निर्मल एवं प्रशस्त बुद्धि को भी नष्ट करने में यह राक्षसी स्त्री के समान है। यह सम्पूर्ण कषाय वाली वृत्ति होने से साधुओं के चारित्र को नष्ट करने वाली है, अतः ऐसी सदा ही दोषों से दूषित मलिन माया पापमयी को छोड़ दो।

नरक पशुगतेर्या कारणं कीर्त्तिता वैः,
गरलमिव तपोध्यानादि संहार कर्त्री।
उचित मनुचितंवाऽप्रेक्ष्य सद्यः प्रयुक्तां,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ।।६।।

माया नरक गति और तिर्यंच गति का कारण कही गई है और तप तथा ध्यान आदि का विष की तरह विनाश करने वाली है। उचित अनुचित का

ध्यान नहीं रखकर तत्काल कुछ का कुछ बोल देना ही माया की अवस्थिति है, ऐसी सदा ही दोषों से दूषित मलिन पापमयी माया को छोड़ दो ।

विनय विरति शिष्टाचार हन्त्रीं विधात्रीं,
वचन कुटिलताया को नु विज्ञातुमीशः ।
सपदि सुगण गंधं ज्ञानरत्नं च लुम्पेत्,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ।।७।।

यह माया विनय धर्म को, विरति धर्म को और शिष्टाचार को नष्ट कर देती है । वचनों में यह कुटिलता को उत्पन्न करने वाली है, इसकी दुष्टता को समझने में कौन समर्थ है ? यह माया शीघ्र ही सत् गुणों के अस्तित्व को एवं ज्ञान रत्न का नष्ट कर देती है अतः ऐसी सदा ही दोषों से दूषित मलिन पापमयी माया को छोड़ दो ।

शशक शिरसि शृंग पुष्प माकाराजं वा,
भवति किमु ? भवेद्वा चिन्तनं व्यर्थ मेव ।
तदिव जगुर सारां श्रेयसा शून्य सारां,
त्यजतु मलिन मायां दोष दुष्टां सदैव ।।८।।

जैसे कोई यह कहे कि "खरगोश के शिर पर सींग होता है" अथवा "आकाश में उत्पन्न होने वाला फूल होता है ।" तो ऐसा चिन्तन करना और कहना व्यर्थ ही है, वैसे ही यह कहना कि माया में सार तत्त्व रहा हुआ है अथवा वह कल्याण प्रद है तो यह भावना मिथ्या है और शून्य रूप है अतः ऐसी सदा ही दोषों से दूषित मलिन पापमयी माया को छोड़ दो ।

(अ०) माया सर्व विपददात्री, हन्त्री सकल सम्पदाम् ।
कर्त्री कुकर्म कार्याणां, प्रियोदयेन कथ्यते ।।९।।

माया सभी प्रकार की विपत्तियों को देने वाली है, सभी प्रकार की सम्पत्तियों का हरण करने वाली माया है और यह कुकर्म एवं कुकृत्यों को करने तथा कराने वाली है, ऐसा विचार पूर्वक कथन प्रिय सुशिष्य उदयमुनि द्वारा किया जाता है ।
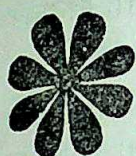
स्मरण-शक्ति-क्षीणता के कारण और निवारण

☐ समरण श्रुतप्रज्ञ

आज की सबसे बड़ी समस्या है—"स्मृति दौर्बल्य, याद न रहना, भूल जाना।" विद्यार्थी के सामने यह प्रमुख समस्या है। वृद्धावस्था में भी व्यक्ति इस समस्या से परेशान रहता है। स्मृति दौर्बल्य से पीड़ित व्यक्तियों के लिए यह जानना जरूरी है कि स्मरण-शक्ति का सम्बन्ध शरीर के किस अंग के साथ है? किन-किन कारणों से स्मरण-शक्ति घटती है और कैसे इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है?

शरीर-विज्ञान की दृष्टि से स्मरण-शक्ति का केन्द्र मस्तिष्क है। मस्तिष्क की विशेष प्रकार की कोशिकायें जिन्हें न्यूरोन्स के नाम से पहचानते हैं, वे ही हमारी स्मरण-शक्ति के लिए जिम्मेवार हैं। इनमें किसी भी प्रकार की विकृति होना स्मृति दौर्बल्य का कारण बनती है। स्मृति दौर्बल्य के कई कारण हो सकते हैं। शरीर-विज्ञान की दृष्टि से उसके प्रमुख कारण इस प्रकार हैं :—

(१) **मस्तिष्कीय कोशिकाओं तक विषय-वस्तु का न पहुँचना**—स्मृति दौर्बल्य का यह प्रमुख कारण है। जो हम पढ़ते हैं, वह जब तक भीतरी कोशिकाओं के प्रकोष्ठ में अंकित नहीं होता है, तब तक हम विषय-वस्तु को याद नहीं रख पायेंगे। प्रश्न होता है, कि जो हम पढ़ते हैं, वह भीतरी कोशिकाओं तक क्यों नहीं पहुँच पाता? उसका कारण है—"पठनीय विषय के प्रति अरुचि होना।" जहाँ रुचि नहीं है वहाँ एकाग्रता भी नहीं होगी और एकाग्रता के अभाव में वह बात भीतर तक नहीं पहुँच पाती। जब हम उपन्यास पढ़ते हैं तब वह सारा का सारा क्यों याद रह जाता है? क्योंकि वहाँ रुचि है। जहाँ रुचि है वहाँ एकाग्रता भी रहती है। अरुचि के कारण मन किसी विषय में नहीं लग पाता। मन के न लगने से मन विक्षिप्त होकर चंचल हो जाता है। इससे पठनीय विषय कोशिकाओं के प्रकोष्ठों में अंकित नहीं हो पाता।

(२) **मस्तिष्कीय कोशिकाओं का क्षीण होना**—हमारे नाड़ी तन्त्र के मुख्य दो अंग हैं—मस्तिष्क और सुषुम्ना। इन अंगों के कोशिकाओं की यह विशेषता है कि ये एक बार नष्ट होने के बाद उनका पुनर्निर्माण नहीं होता। नाड़ी तन्त्र को छोड़कर शेष सभी तन्त्र की कोशिकाओं का पुनर्निर्माण होता है। मस्तिष्क की कोशिकाओं के क्षीण होने के बाद उनका पुनर्निर्माण नहीं होता।

ये कोशिकाएँ जितनी क्षीण होती रहेंगी, स्मरण-शक्ति में उतना ही ह्रास होता चला जाएगा। इनके क्षीण होने के कारण हैं—क्रोध, भय, चिन्ता, मानसिक तनाव और नशीले पदार्थों का सेवन।

(३) **मस्तिष्कीय कोशिकाओं का निष्क्रिय होना**—मस्तिष्कीय कोशिकाएँ पूर्ण विकसित न होने से मस्तिष्क दुर्बल रह जाता है। जिन कोशिकाओं को काम में नहीं लिया जाता, वे कोशिकाएँ निष्क्रिय पड़ी रहती हैं और वे अपनी ग्राहक शक्ति खो देती हैं, जिससे स्मरण-शक्ति पूर्ण विकसित नहीं हो पाती। आज विज्ञान ने भी सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य अपनी मस्तिष्कीय क्षमता का मुश्किल से ३ या ४ प्रतिशत उपयोग करता है। मस्तिष्क की शेष क्षमता अभी सुषुप्त पड़ी हैं।

(४) **धमनियों में कॉलेस्ट्रोल का जम जाना**—चर्बी युक्त पदार्थों में कॉलेस्ट्रोल की मात्रा अधिक होती है। ऐसे पदार्थों के अधिक सेवन से रक्त की धमनियों में वह परतों के रूप में जमने लगता है, जिससे मस्तिष्क को पर्याप्त रक्त नहीं मिल पाता और कोशिकाएँ कार्यक्षम नहीं बन पातीं।

उपर्युक्त सारे कारणों के सन्दर्भ में स्मृति-विकास के लिए निम्न बातें आवश्यक हैं :—

(१) पठनीय विषय के प्रति रुचि को जागृत करना, मन की चंचलता को कम कर एकाग्रता की क्षमता को बढ़ाना।

(२) क्रोध, चिन्ता, भय, तनाव और नशीले पदार्थों के सेवन से बचना ताकि मस्तिष्क की कोशिकाओं को क्षीण होने से बचाया जा सके।

(३) मस्तिष्कीय कोशिकाओं की निष्क्रयता को दूर किया जाए।

(४) चर्बी युक्त भोजन से बचा जाये जिससे कि धमनियों में कॉलेस्ट्रोल जमा न हो सके एवं जो धमनियों में जमा हो गया है उसे दूर करने के लिए प्रयत्न किया जाए।

जीवन-विज्ञान का एक सरल एवं अति उपयोगी प्रयोग है—महाप्राण ध्वनि। यह गले और नाक से भंवरे की तरह निकलने वाली एक प्रकार की आवाज है। इस प्रयोग के द्वारा हम स्मरण शक्ति के क्षय के उपर्युक्त कारणों को मिटाकर स्मरण-शक्ति को बढ़ा सकते हैं, क्योंकि महाप्राण ध्वनि करने से मन का चांचल्य शान्त होता है, मन की एकाग्रता बढ़ती है।

(२) इस ध्वनि के प्रयोग से श्वास लम्बा और गहरा बनता है, चित्त शान्त होता है, जिससे चिन्ता, तनाव आदि भावनात्मक संवेगों पर नियन्त्रण स्थापित होता है। यदि इस ध्वनि के प्रयोग में गहरा रस आने लग जाए तो

नशीले पदार्थों के सेवन का रस भी कम हो जाए जिससे कोशिकाओं को क्षीण होने से बचाया जा सकता है।

(३) मस्तिष्कीय कोशिकाओं को सक्रिय और जागृत करने के लिए महाप्राण ध्वनि एक रामबाण प्रयोग है। ध्वनि के सूक्ष्म एवं शक्तिशाली गुंजन से मस्तिष्कीय कोशिकाओं में प्रकंपन पैदा होने लगते हैं। इससे कोशिकाओं की निष्क्रियता दूर होती है। उनमें प्राण का संचार होता है। इससे कोशिकाओं की कार्यक्षमता और ग्राहकता बढ़ती है। परिणामतः हम सुने हुए या पढ़े हुए विषय को याद रखने में सक्षम बन पाते हैं।

(४) ध्वनि के प्रकम्पनों का प्रभाव रक्त की धमनियों पर भी पड़ता है। धमनियों में जो कॉलेस्ट्रोल की परतें जम जाती हैं, ध्वनि के सूक्ष्म प्रकम्पनों से वे परतें पिघलने लगती हैं। धमनियों का रास्ता साफ होने लगता है। जिससे मस्तिष्क की कोशिकाओं को पर्याप्त शुद्ध रक्त मिलता है और उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

कैसे करें महाप्राण ध्वनि—एक आसन पर सीधे बैठें। दोनों हाथों को ध्यान की मुद्रा में रखें। होठ बन्द व दांत खुले रहें। आँखें कोमलता से बन्द रखें। लम्बा श्वास भर कर गले से भंवरे की तरह आवाज निकालें। एक श्वास में ध्वनि की एक ही आवृत्ति करते समय ध्यान ज्ञान-केन्द्र पर मस्तक में चोटी के स्थान पर रखें। प्रारम्भ में नौ बार करें। फिर धीरे-धीरे अभ्यास को बढ़ाएँ।

ध्वनि कब करें ?

(१) प्रातः उठने के बाद शौच आदि कार्य से निवृत्त होकर एवं रात्रि को शयन के समय इसका अभ्यास करें।

(२) पढ़ने बैठें उसके पूर्व इस ध्वनि का अभ्यास करें।

(३) भोजन के पश्चात् दो घण्टे का समय छोड़कर इसे कभी भी किया जा सकता है।

मैं अपने अनुभवों के आधार पर एवं आज तक शिक्षा के क्षेत्र में हुए प्रयोगों के आधार पर यह कह सकता हूँ कि जीवन-विज्ञान के इस महाप्राण ध्वनि के प्रयोग से निश्चित ही स्मरण-शक्ति को बढ़ाया जा सकता है, मन की चंचलता और उसके भटकाव को शान्त कर उसे एकाग्र बनाया जा सकता है। इसके नियमित एवं विधिवत अभ्यास से स्मरण-शक्ति क्षीणता की समस्या से सदा के लिए छुटकारा पाया जा सकता है।

—जैन विश्व भारती, लाडनूं (नागौर)

दो कविताएँ

[१]

चिन्ता/चिता/चिन्तन

☐ मुनि श्री तरुणसागरजी

हे सखे !
चिंता और चिता में,
यों तो अन्तर एक मात्र बिन्दु का;
पर सच में देखा जाय,
तो अन्तर है एक सिन्धु सा,
चिंता और चिता दोनों ही अग्नि हैं,
पर एक जलाती जीवित मन को,
एक जलाती मृतक तन को
दोनों मिलकर कर देती हैं
तबाह जीवन-चमन को ।
तुझे बाल की चिन्ता है,
फिर माल की चिन्ता है ।
फिर गाल की चिन्ता है,
फिर खाल की चिन्ता है ।
ससुराल की चिन्ता है,
ससुराल के माल की चिन्ता है ।
तेरे लाल की चिन्ता है,
लाल के भविष्य काल की चिन्ता है ।
पत्नी के विरह काल की चिन्ता है ।
अपने कराल काल की चिन्ता है ।
चिन्ता ने चेतना की बना दी चिता,
चिता ने सोख ली जीवन-सरिता,
चिन्ता को छोड़कर, चिता से मुख मोड़कर,
कर चैतन्य चित् चमत्कार का
चिन्तन और मनन ।
रे चपल मन !
कर तू अर्हंत् का भजन ।।

[२]

समाचार

☐ डॉ. सत्यपाल चुघ

रोज़ रोज़
लाचार पढ़ता ही रहा
न बन सका
समाचार खुद,
यदि बन भी पाता
अन्ततः मिलता वही
एक बासी से
अखबार का व्यवहार,
हाँ, भीतर न हो
कोई जानदार
कत्ल हुए जज्बात का
जुझारू ज्वार
तब रह सकता
सुर्खियों में
फक़त शोशेदार,
जब जागेगा
इतिहास का अहसास
मानवता के हित
या विश्वजित
कोई नया प्रयास,
तब पढ़ा जाता रहेगा
सत्साहस का
समाचार वह
चिर नया

—10, स्टॉफ क्वार्टर्स
किरोड़ीमल कालेज, दिल्ली-110007
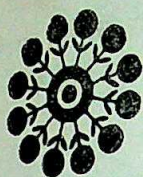
स्वाध्याय का महत्त्व

□ श्री जवाहरलाल बाघमार

भारतीय संस्कृति में स्वाध्याय का स्थान बहुत ऊँचा एवं पवित्र माना गया है। पूर्व काल में भारतीय विद्यार्थी गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त कर जब विदा होता था तो उस समय आशीर्वाद के रूप में आचार्य की ओर से यही महावाक्य मिलता था कि—

'स्वाध्यायान्मा प्रमाद:'

हे प्रिय वत्स ! तू कभी भूल कर भी स्वाध्याय करने में प्रमाद न करना। कितना सुन्दर उपदेश है। स्वाध्याय के द्वारा ही हित और अहित का ज्ञान होता है, पाप और पुण्य का पता चलता है, कर्तव्य—अकर्तव्य का बोध होता है। स्वाध्याय हमारे अंधकारपूर्ण जीवन-पथ में दीपक के समान है।

स्वाध्याय के द्वारा हम धर्म-अधर्म का पता लगा लेते हैं और जरा विवेक का आश्रय लें तो अधर्म को छोड़कर धर्म के पथ पर चलकर जीवन को प्रशस्त व उज्ज्वल बना सकते हैं। शास्त्रकारों ने स्वाध्याय को नन्दन-वन की उपमा दी है।

स्वाध्याय वाणी की तपस्या है। उसके द्वारा हृदय का मल धुलकर साफ हो जाता है। स्वाध्याय अन्त:प्रेरणा है। इसी के अभ्यास से बहुत से पुरुष आत्मोन्नति करते हुए आत्मा से परमात्मा हो गये। अन्तर का ज्ञान-दीप स्वाध्याय के बिना प्रज्वलित हो ही नहीं सकता।

आत्म-कल्याणकारी पठन-पाठन रूप श्रेष्ठ अध्ययन का नाम ही स्वाध्याय है। यदि अच्छी तरह से निम्नलिखित नियमों पर ध्यान दिया जाये तो स्वाध्याय का अपूर्व आनन्द प्राप्त किया जा सकता है—

(१) एकाग्रता।

(२) बराबर करते रहना, कड़ी नहीं टूटना।

(३) सदाचार, भक्ति धर्म सम्बन्धी पुस्तकें पढ़नी चाहिये, राग-द्वेष की नहीं।

(४) स्वाध्याय के समय शुद्ध संकल्प अवश्य ही अन्तर्ज्योति प्रदान करेगा । मन में यह दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि पाठ के द्वारा हमारी अन्तरंग आत्मा में प्रकाश फैल रहा है।

(५) स्वाध्याय का स्थान पवित्र और शुद्ध वातावरण वाला होना चाहिये ।

स्वर्गीय आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी महाराज साहब ने हमेशा स्वाध्याय पर ही जोर दिया । आचार्य प्रवर हमेशा कहा करते थे कि सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र से ही व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व का कल्याण हो सकता है । स्वाध्याय इन सब का मूल है । इसके साधन से ज्ञान, दर्शन और चारित्र निर्मल रखा जा सकता है ।

स्वाध्याय चित्त की स्थिरता और पवित्रता के लिये सर्वोत्तम उपाय है । जीवन को ऊँचा उठाने का अमोघ उपाय है । इसलिये हर व्यक्ति को स्वाध्याय प्रति दिन करना चाहिये क्योंकि स्वाध्याय करने से बल-वृद्धि होगी, आनन्द की अनुभूति और नूतन ज्योति की प्राप्ति होगी ।

—६, चन्द्रपा मुदली स्ट्रीट, साहूकार पेठ, मद्रास-७९

एक जनवरी से 'जिनवाणी' पत्रिका के शुल्क में वृद्धि

वर्तमान कागज़ की महंगाई और पोस्टेज दरों में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण "जिनवाणी" पत्रिका के शुल्क में बढ़ोतरी करने का निर्णय लिया गया। यह बढ़ोतरी (नया शुल्क) दिनांक १ जनवरी, १९९२ से की गई है—

क्र.सं.	विवरण	वर्तमान शुल्क	संशोधित शुल्क
१.	स्तम्भ सदस्यता	रु. १,००१/-	रु. २,०००/-
२.	संरक्षक सदस्यता	रु. ५०१/-	रु. १,०००/-
३.	आजीवन सदस्यता (देश में)	रु. २५१/-	रु. ७५०/-
४.	आजीवन सदस्यता (विदेश में)	रु. ७५१/-	डालर १००/-
५.	त्रिवार्षिक सदस्यता	रु. ५५/-	रु. ८०/-
६.	वार्षिक सदस्यता	रु. २०/-	रु. ३०/-

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

बरात बच्चों की

☐ श्री राजेन्द्रप्रसाद जैन

ठीक है शिक्षा के प्रचार-प्रसार एवं समाज-सुधारकों के सद्‌प्रयासों से वर्तमान में बरातियों के आचार-विचार एवं व्यवहार में परिवर्तन आया है। कहीं-कहीं तो बरातियों के आदर्श-व्यवहार की सराहना की चर्चा भी सुनने को मिलती है फिर भी बीमारी पूरी तरह नहीं मिटी है। आज भी कई स्थानों पर अपने नाज-नखरों और शाही शान-शौकत के परिवेश में स्वयं को एक दिन के सुलतान समझ लेने वाले बराती अपनी निम्न स्तरीय हरकतों के ताबे दोनों पक्षों को परेशान करते रहे हैं। ऐसे बरातियों की हठधर्मी, नाज-नखरों से त्रस्त बीकानेर के अखिल कुंडीया सारस्वत समाज के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री सूरजमलजी सारस्वत ने एक अद्‌भुत ऐतिहासिक आदर्श निर्णय लेकर उसे साहसपूर्वक क्रियान्वित कर एक ऐसा कीर्तिमान स्थापित किया जो आज भी सर्वत्र सराहा जा रहा है।

हुआ यों कि १७ मई, सन् ८१ को उनके लघु भ्राता की शादी की बरात बीकानेर से रामरस गई। उन्होंने बरात में युवकों के वयस्यों के स्थान पर देवत्व के प्रतीक, मन के सच्चे, अबोध बच्चों को लिया। कुछ बच्चों की उम्र तो तीन-तीन साल की थी।

सारे नगर में जहां यह अद्‌भुत बरात चर्चा का विषय बनी रही, वहीं श्री सूरजमलजी सारस्वत के समाज सुधार की भावना में आबद्ध इस सूझबूझ एवं साहसपूर्ण कदम की सर्वत्र मुक्त-कंठ से प्रशंसा की गई।

वधू-पक्ष ने बाल-बरातियों का बड़ा भावभीना आत्मीय स्वागत करते हुए उन्हें भावी पीढ़ी का पथ-प्रदर्शक बताया।

इस बरात की सबसे सुखद उपलब्धि यह रही कि नन्हे मासूम बच्चों ने अपने कर्तव्य-बोध एवं कर्तव्य-परायणता का परिचय देते अपने अनुशासन की अमिट छाप छोड़ सबको आश्चर्यचकित कर दिया।

ऐसा ऐतिहासिक आयोजन करने वाले श्रद्धेय सारस्वतजी ने जहाँ एक ओर समाज को नया दिशा-बोध दिया, वहीं दूसरी ओर बाल-जगत् में मन के सच्चे मासूम बच्चों के लिए बरातों में जाने का एक नया मार्ग प्रशस्त कर दिया।

वस्तुत: बरात-इतिहास में एक अद्‌भुत, अभूतपूर्व, उजला पृष्ठ जोड़ देने वाले श्री सारस्वतजी बधाई के पात्र हैं।

—एडवोकेट, भवानीमंडी (राजस्थान)
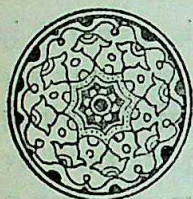
मैत्री-भाव*

प्रस्तोता : **श्री पी० एम० चौरड़िया**

[१]

(१) **प्रश्न**—मैत्री क्या है ?

उत्तर—(१) मैत्री करुणा का साकार रूप है। यह करुणा की सार्थक अभिव्यक्ति है।

(२) 'मैत्री परेषां हित चिन्तनं यत्'

अर्थ—अन्य जीवों का हित-चिन्तन मैत्री है।

(३) मैत्री वह आध्यात्मिक शक्ति है जिसके संवर्द्धन तथा परिपालन से जीवन सुखी हो जाता है। मैत्री का दूसरा नाम अहिंसा है।

(२) **प्रश्न**—मैत्री भावना क्या है ?

उत्तर—जगत् का कोई प्राणी पाप न करे, कोई भी प्राणी दुःख का भाजन न हो, समस्त प्राणी दुःख से मुक्त हो जाएँ और सुख का अनुभव करें, यही मैत्री भावना है।

(३) **प्रश्न**—मैत्री भावना का मूल क्या है ?

उत्तर—दूसरों के हित की चिन्ता करना व दूसरों के लिए मंगल कामना करना, यही मैत्री भावना का मूल है।

[२]

(१) **प्रश्न**—मैत्री का अभ्यास अकेले नहीं होता। यह जहाँ कहीं भी उपलब्ध होता है, वहाँ चतुर्मुख होते हैं। वे चतुर्मुख कौन-कौनसे हैं ?

*श्री एस. एस. जैन युवक संघ, मद्रास द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिसमें स्वाध्याय संघ, युवक संघ एवं बालिका मण्डल ने भाग लिया। —सम्पादक

उत्तर—(१) मैत्री (२) करुणा (३) मुदिता (४) उपेक्षा ।

(२) **प्रश्न**—शास्त्रों में विश्व मैत्री भावना किसे कहा है ?

उत्तर—संसार के सभी प्राणी कर्म-बंधन से मुक्त हों—जन्म, जरा और मृत्यु की दुःख-परम्परा से छूट कर मोक्ष प्राप्त करें। इसी भावना को शास्त्रों में विश्व मैत्री भावना कहा है ।

(३) **प्रश्न**--सच्चे मित्र के क्या लक्षण हैं ?

उत्तर—एक दूसरे के सुख-दुःख में भागी होना, दुःखी का दुःख निवारण कर उसे अपने समान सुखी बनाना, मित्र के दोष नष्ट हो जाएँ तथा गुण प्रकट हों, यह प्रयास करना ।

[३]

(१) **प्रश्न**—'अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिय सुप्पट्ठिओ'
इसका अर्थ बताइये ?

उत्तर—आत्मा स्वयं ही अपना मित्र और अपना शत्रु है ।

(२) **प्रश्न**—'आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सः पश्यति'
इन शब्दों का अर्थ बताइये ?

उत्तर—जब आत्मा सबको अपने समान समझेगी तथा सबको मित्र समझेगी, उसका कोई शत्रु हो ही नहीं सकता ।

(३) **प्रश्न**—'मेत्ति भूएसु कप्पए' इसका क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—सभी प्राणियों से मित्रता की कल्पना करो, मैत्री भाव की वृष्टि करो ।

[४]

(१) **प्रश्न**—"माता-पिता या अन्य बन्धु अपने प्रियजनों का जितना हित कर सकते हैं, उससे अधिक हित उनका वह चित्त कर सकता है, जो सम्यक्-प्रणिहित हो ।"

उपर्युक्त विचार किस ग्रन्थ से लिए गए हैं ?

उत्तर—'धम्मपद' से ।

(२) **प्रश्न**—'तुम सहज रूप से प्राणी मात्र को अपना मित्र स्वीकार करो। सहजावस्था में तुम्हारा कोई शत्रु रह ही नहीं जाएगा।'

उपर्युक्त उत्तम विचार कौनसे महापुरुष ने व्यक्त किए हैं ?

उत्तर—भगवान महावीर ने।

(३) **प्रश्न**—"जो मैत्री जल एवं दूध के समान नहीं है, उससे क्या लाभ ? जल जब दूध में मिलता है, तो दूध को अधिक बना देता है और उबलने पर वह पहले जलता है अर्थात् आपत्ति में भी वह पहले काम आता है।"

उपर्युक्त विचार किस ग्रन्थ से लिए गए हैं ?

उत्तर—वज्जालग्ग (६/३) से।

[५]

(१) **प्रश्न**—"मैत्री भावना जीवन में अभय का संचार करती है।"

यह कथन किस प्रकार सही है ?

उत्तर—जब हमें यह मालूम होता है कि अमुक व्यक्ति हमारा दुश्मन है, तब हमारे मन में उस व्यक्ति से सावधान रहने की भावना जाग्रत हो जाती है, उसके प्रति विश्वास नहीं रहता। दूसरी ओर जब हमें यह मालूम होता है कि यह व्यक्ति हमारा हितैषी है, मित्र है, तब हमारा मन आनन्द-विभोर हो जाता है, हृदय प्रसन्नता से भर जाता है। हमें उस व्यक्ति से बिल्कुल भी शंका या भय नहीं रहता। इससे यह प्रमाणित होता है कि मैत्री भावना जीवन में अभय का संचार करती है।

(२) **प्रश्न**—'पर हित चिन्ता मैत्री'—मैत्री का यह स्वरूप निवृत्ति मार्ग है अथवा प्रवृत्ति मार्ग ?

उत्तर—प्रवृत्ति मार्ग।

(३) **प्रश्न**—सब जीवों के प्रति हमारे हृदय में मैत्री भावना होना आवश्यक क्यों है ?

उत्तर—जीव मात्र के प्रति द्वेष या वैर भाव हमारी अन्तरंग साधना में बाधक होता है। जब तक इस संसार में एक भी जीवात्मा के प्रति वैर भाव

रहेगा, तब तक आत्मा की मुक्ति सम्भव नहीं है। अतः मोक्ष की प्राप्ति के लिए हृदय में मैत्री भावना का होना आवश्यक है।

(६)

(१) **प्रश्न**—'मित्ति मे सव्व भुएसु।'

अर्थ—संसार के सभी प्राणियों से मित्रता रखो।

उपर्युक्त वाणी किस सूत्र से ली गई है ?

उत्तर—'आवश्यक सूत्र' से।

(२) **प्रश्न**—'मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे'

अर्थ—संसार के समस्त जीव समूह को मित्र की दृष्टि से देखें।

उपर्युक्त विचार कहाँ प्रस्तुत किये गए हैं ?

उत्तर—'उपनिषद' में।

(३) **प्रश्न**—'याश्च पश्यामि याश्च न तेषु मा सुमतिं कृधि'

अर्थ—हे प्रभु ! ऐसी कृपा कीजिए, जिससे मैं मनुष्य मात्र के प्रति, चाहे मैं उनको जानता हूँ अथवा नहीं, सद्भावना रख सकूँ।

उपर्युक्त उत्तम विचार कहाँ से लिए गए हैं ?

उत्तर—'अथर्ववेद' से (१७/१/७)

(७)

(१) **प्रश्न**—सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धर्मानुष्ठानों के साथ मैत्री भावना का होना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर—मैत्री भाव के बिना आत्मा विशुद्ध भाव को प्राप्त नहीं कर सकती और बिना विशुद्ध भाव के आत्मा धर्म का आराधक नहीं बन सकती। अतः सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धर्मानुष्ठानों के साथ मैत्री भावना का होना अत्यन्त आवश्यक है।

(२) **प्रश्न**—मैत्री भावना का फल क्या है ?

उत्तर—मैत्री भावना का फल, काय, वचन तथा मन को संयमित कर अपूर्व शान्ति एवं परम सुख को प्राप्त करना है। यही जीवन की चरम प्राप्ति है और यही मुक्ति या निर्वाण है। फलतः मैत्री भावना लौकिक सुव्यवस्था के साथ-साथ लोकोत्तर शान्ति का भी मुख्य आधार है।

(३) **प्रश्न**—अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन अपनी निन्दा करने वालों को कैसे खत्म करते थे ?

उत्तर—उनको मित्र बनाकर।

(८)

(१) **प्रश्न**— **मैत्री भावना**

(तर्ज—दिल लूटने वाले जादूगर....)

मानव-भव सफल बनाने को, हम प्राणि-मात्र के मित्र बनें।
व्यवहारों से संस्कारों से, वाणी से पूर्ण पवित्र बनें।।टेर।।

दुश्मन है कोई नहीं हमारा, हम सारे भाई-भाई,
हम करें भलाई प्राणिमात्र की, यही भावना सुखदाई।
आदर्श बनें हम ज्ञान बनें, हम दर्शन सच्चारित्र बनें।।१।।

उपर्युक्त गीतिका के रचयिता कौन हैं ?

उत्तर—महासती श्री प्रभावती जी।

(२) **प्रश्न**—मैत्री-भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे।
दीन-दुःखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे।।
दुर्जन-क्रूर कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्य-भाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे।।

उपर्युक्त छन्द के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—पंडित जुगलकिशोरजी मुख्तार 'युगवीर'।

(३) **प्रश्न**— **मैत्री का राग**

(तर्ज—मैं पल दो पल का शायर हूँ....)

अब द्वेष वैर की रात गई, मैत्री का हुआ उजाला है।
यह समय आज का सुन्दर है, यह विश्व प्रेम का मेला है।।टेर।।

लाखों ही दुनिया में आये, कई आग लगाकर चले गये,
कई जंग मचा कर चले गये, कई खून बहाकर चले गये।
धरती का नक्शा बदलेंगे, हम जग को स्वर्ग बनायेंगे,
बिछुड़े भाई को भाई से, भाई के गले लगायेंगे ।।१।।

उपर्युक्त स्तवन के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—उपाध्याय प्रवर पंडित रत्न श्री केवल मुनिजी म. सा.।

(९)

(१) **प्रश्न**—'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' इन शब्दों का अर्थ बताइये ?

उत्तर—जीव एक दूसरे के उपकार को ग्रहण करते और एक दूसरे के आश्रय से आगे बढ़ते हैं।

(२) **प्रश्न**—'मित्ति भावमुवगए यादि जीवे भावविसोहीं काऊण
निब्भए भवइ'

अर्थ—मैत्री-भाव को प्राप्त हुआ जीव भावना को विशुद्ध बनाकर निर्भय हो जाता है।

उपर्युक्त आगम की वाणी किस शास्त्र से ली गई है ?

उत्तर—उत्तराध्ययन सूत्र से (२९/१७)

(३) **प्रश्न**—मित्र स्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।।

अर्थ—मैं मनुष्य तो क्या, सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूँ। हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें।

उपर्युक्त उत्तम विचार कहाँ से लिये गये हैं ?

उत्तर—यजुर्वेद से (३६/१८)।

(१०)

(१) **प्रश्न**—"तुम्हें जो सुनना है अपने कानों से सुनो, संस्कारों से प्रेरित मन के द्वारा न सुनो।

—सन्त कन्फ्यूशियस

उपर्युक्त शब्दों का क्या रहस्य है ?

उत्तर—कान से सुनना और होता है, मन से सुनना और होता है। कान से सुनने का अर्थ है—जितना कहा उतना ही सुनना। संस्कार से प्रेरित मन से सुनने का अर्थ हैं, जो नहीं कहा है, वह भी सुनना। संस्कार से प्रेरित मन अपने ही अन्तर में होने वाले द्वन्द्वों की ध्वनि को सुनता रहता है, परिणामस्वरूप वैर-विरोध की कड़ी टूट नहीं पाती।

(२) **प्रश्न**—मैत्री भावना को धर्म ध्यान का रसायन क्यों कहा गया है ?

उत्तर—जिस प्रकार सुवर्ण भस्म, कस्तूरी, लोह भस्म आदि का उपयोग करने से शरीर हृष्ट-पुष्ट बनता है, उसी प्रकार मैत्री आदि भावनाओं के भावन से आत्मा पुष्ट बनती है।

(३) **प्रश्न**—'मैत्री भाव से युक्त क्रिया ही धर्म कहलाती है।'

यह किस ग्रन्थ में कहा गया है ?

उत्तर—हरिभद्र सूरि रचित 'धर्म बिन्दु' ग्रन्थ में।

—89, Audiappa Naicken Street, Sowkarpet,
Madras-600 079

सन्तों की होली

भाई हो रही होली, सन्त बसन्त की बहार में ।।भाई।।टेर।।
महाव्रत पंचरंग फूल महक ले, भवि मधुकर गुंजार में ।।भाई।।
ज्ञान-गुलाल लाल रंग उछरे, अनुभव अमलाकान्तार में ।।भाई।।
क्रिया-केसर रंग भरे पिचकारी, खेले सुमति प्रिया संग प्यार में ।।भाई।।
जप-तप-डफ-मृदंग-चंग बाजे, जिन-गुण गावे राग धमार में ।।भाई।।
'सुजाण' या विधि होली मची है, सन्तन के दरबार में ।।भाई।।

—मुनि श्री सुजानमलजी म. सा.

रूपक :
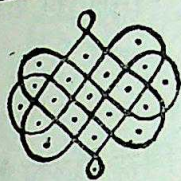
आइये, कुछ सोचें !

□ श्री ऋषभराज बाफणा

[१]

पुराने सन्तजन एक कहानी सुनाया करते हैं। किसी गडरिये को जंगल में बकरियाँ चराते-चराते एक मणि मिल गई। गडरिये ने उसे चमकदार पत्थर समझा और हाथ में उछालते-उछालते शाम को घर की ओर चला। रास्ते में उसे एक बनिया मिला। उसने गडरिये के हाथ में मणि देखी और बोला—यह पत्थर मुझे दे दे, कितने पैसे लेगा ? गडरिया बोला—एक रुपया लूंगा। बनिये की मोलभाव की आदत। पचास पैसे–साठ पैसे–फिर अस्सी पैसे तक देने को राजी हुआ। पर गडरिया बोला—मैं एक रुपये से कम नहीं लूंगा। वह आगे चल दिया। आगे जाकर दूसरा बनिया मिला। उसने भी मणि देखी और बोला—इस पत्थर के कितने पैसे लेगा ? उसने कहा—एक रुपया। दूसरे वाले बनिये ने दो रुपये का नोट निकाला। उसको दिया और मणि ले ली। तब तक पहले वाला बनिया वहाँ आ पहुँचा और गडरिये से बोला—तू तो लुट गया। तूने मणि को पत्थर के मोल बेच दी। बेशकीमती चीज थी। गडरिया तपाक से बोला—बेशकीमती चीज को तूने २० पैसे के लिए गंवा दी। मूर्ख मैं हूँ या तू ? अब पछताने से क्या होगा ?

सोचिये ! मणि मिली। एक ने अज्ञान से गंवा दी दूसरे ने लोभ से। मानव जीवन के महत्त्व को जो नहीं जानते वे अज्ञानी गडरिये हैं और जो सब जानते हुए भी जिसे विषय और तृष्णा के लिए गंवा रहे हैं, वे लोभी बनिये हैं।

[२]

तू देह नहीं, देहातीत आत्मा है। यह देह तो पुद्गल की है। पुद्गल 'पर' है इसलिए कभी भी अपनी नहीं हो सकती। अतः तू इस देह को अपनी नहीं कह सकता। दूसरों की वस्तु को अपना बनाने का अल्प-आचरण भी चौर्य कर्म का आचरण है। क्या चोरी करना अच्छी बात है ? किसी प्रियजन के घर में मेहमान के तौर पर कुछ दिन के लिए रहने आया तू उसे अपना घर मत समझ। विवेकपूर्वक उसकी सार-संभाल व सहानुभूति रखना और बात है लेकिन उसे अपना समझना भयंकर भूल है। अवसर आने पर बिना किसी हील-हुज्जत के

प्रसन्नतापूर्वक यह घर छोड़ने को तैयार रह। पाँच भूतों का यह शरीर तेरा घर है। काल की सूचना आने पर प्रसन्नतापूर्वक उसे सौंप दे और परलोक की यात्रा के लिए तैयार रह।

[३]

धर्म संतरे के भीतर का गूदा है। सम्प्रदाय एवं बाहरी चिह्न छिलका है। यह सत्य है कि छिलके के बिना नंगा सन्तरा कभी नहीं होता परन्तु यह भी सत्य है कि छिलका उतारे बिना सन्तरे का वास्तविक स्वाद भी नहीं लिया जा सकता न वह खाया जा सकता है।

वेश, मर्यादाएँ, क्रियाकाण्ड छिलका है। सत्य, अहिंसा, वीतराग भाव आदि सन्तरे का गूदा है। रस चाहने वाले छिलका उतार कर गूदा ग्रहण करते हैं। वास्तव में धर्म चाहने वाले वेषभूषा व बाह्य क्रिया, कर्मों की परत उतार कर अन्दर के निर्मल व सरस धर्म के दर्शन करते हैं।

[४]

जब तक देह में अहं भाव है और बाह्य वस्तुओं में ममत्व है तब तक आत्मा बहिरात्मा है। जब देह और आत्मा में भेद की अनुभूति होती है, तब अन्तर्दृष्टि खुलती है। बाह्य पदार्थों से ममत्व छूटने लगता है तब आत्मा अन्तरात्मा की स्थिति में पहुँचती है।

—सुदर्शन पलसेज, H. 2, M. I. D. C., अजन्ता रोड,
जलगाँव-४२५००३

लेखकों से निवेदन

- 'जिनवाणी' में जैन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य एवं संस्कृति तथा नैतिक उन्नयन व सामाजिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं। रचनाएँ मौलिक, अप्रकाशित, प्रेरणादायक एवं संक्षिप्त हों।
- रचना भेजते समय उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लेवें। अस्वीकृत रचना वापस करना सम्भव नहीं है।
- रचना कागज के एक ओर स्पष्ट अक्षरों में लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो।
- स्तरीय रचनाओं के लिए नियमानुसार मानदेय देने की व्यवस्था है।

—सम्पादक
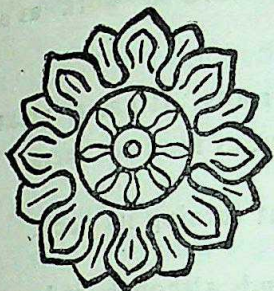
Do you know about The different Animals & Birds ?

☐ Peela Ramakrishna

1. The tallest animal in the world is the giraffe. Its height is 18 ft.
2. We are under the impression that man alone can laugh and no animal can ever laugh. But the hyena is the only animal that can laugh well like man.
3. The bats do immense good to men by eating up insects which destroy crops.
4. The reindeer is an animal of immense use to the natives of the North Pole Region.
5. Leonard, a Russian who trained the birds proved that besides producing sweet notes, they can also sing melodious songs and sing in chorus.
6. In Japan, the dogs are being trained to lead the blind right along the proper way.
7. Karthar Rosen, a Londoner started in London a school for the training of the dogs.
8. About 150 years ago, Lord Byron had a dog, named Bosts pain which he tamed and fondled. His love for the dog was so immense that when it died he was overcome by the pangs of separation from it and expressed his mental agony in poetry.
9. In Japan, the zoo authorities hold a condolence meeting on a day every year for the peace of souls of the dead animals.

10. In London, a chimpanzee named, Anthony used to work as a bus conductor.

11. Chimpanzees feed upon fruits, nuts and roots. It has a great liking for plantains. The papaws are a delicious food to them.

12. The giraffe can see things at its back without turning its neck.

13. The giraffe cannot produce articulate sounds although it has a tongue.

14. As it does not know swimming, the sooner the camel gets into water the sooner it drowns.

15. It is only when thirsty that the snakes drink milk.

16. The fly can fly up 818 miles an hour.

17. At the time of birth the young of the elephant weighs 160 to 200 lbs.

18. The cat finds its way through its moustache.

19. The ostrich is the largest of birds and remarkable for its speed in running.

20. While in sleep or awake, the fish and the snakes do not close their eyes.

21. Among the animals and birds, Vanabilao is the animal noted being an Engineer.

22. Of all birds, the ostrich can jump highest. It can spring down to a depth of 400 ft.

23. The Plygowestein, an infinitely small living being does not die either in the boiling or in the snow at the poles

24. The elephant can lift up with its trunk heavy loads weighing as much as a ton.

25. The giraffe takes its sleep in a standing position.

26. The snakes smell with their tongue.

27. The birds can hear well with their ears behind their wings.

28. Of all birds the vulture can fly to the greatest hight of 30,000 ft.

29. The vulture has the keenest sight. It can clearly see things lying on the ground at a depth of 3 miles.

A kind of crow named 'Chay' can fly to a height of 27,000 ft.

30. The bird named 'Baze' can see things as clearly as through a microscope. It can see down from a height of 1,000 ft. things on the ground hidden under grass.

31. As animal named 'Racoon' washes and then only eat things.

32. Tartegrad an animal can live in the moisture without food.

33. Throughout its life, the spider does the same work.

34. In an American Zoo, there is a cub of an American lion. In the history of the world it is noted for its friendliness with other animals. It gives many television programmes playing with other animals and the young of the sheep. What is particular about it is that it never touches flesh and feeds entirely upon vegetarian food. Its name is Tyke.

35. The ants express their ideas and feelings among themselves through feelers.

36. The Penguin, a water-bird lays eggs in its standing position.

37. The frog makes a longer jump than man.

38. The frog is not a harmful creature.

39. Of all creatures, the snail moves slowest. "It takes three weeks' time to move a mile.

40. The cuccoo does not build nest.

41. The biologists have proved the segaiety of ants. They can solve any intricate problems.

42. The biologists by researches have also found out that in search of food, the ants can go even to places far-off and unknown and come back to the starting place with food for other ants.

43. The blue-hale is the biggest animal in the world. It weighs 300 tons, equal to total weight of 24 elephants, 92 horses, 150 oxen and 450 lions.

44. Man can be trained to walk up to 22 miles an hour. a panther can run 70 miles an hour, a lion and a deer 50 miles, horse 48 miles, the kangaroo 30 miles, the elephant 25 miles, the whale 32 miles and hunting dog 36 miles.

45. The hawk can fly 62 miles an hour, the pigion 39 miles, bee 6½ miles and the bird Emus 40 miles.

46. The whale can continuously be in water for 20 minutes.

47. The length of life of the following animals and birds is given below :—

The tortoise-150 years, the crow and the whale 100 years each, the large-sized goose 80 years, vultures, owls and parrots 60 years, the hawk 50 years, the crocodile, the lion, the rhinoceros and the hippopotamus each 40 years, the bear 30 years, the cow, the chimpanzee 25 years each, wolf, cat, frogs, ostrech, cuccoo, lark, each 20 years, the giraffe 17 years, the tiger, mungoose, bat 15 years each, goat and sheep 15 years each, the dog 14 years, lizard 10 years, wild cat 8 years, fox 7 years, squirrel 5 years and rat and mouse 3 years each.

—Courtesy : All India Radio, Visakhapatnam

☐☐☐

महिला स्तम्भ
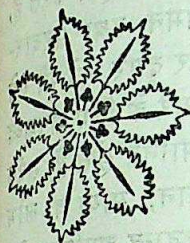
जैन-दर्शन के सिद्धान्त और अर्थव्यवस्था में सुधार

□ सुश्री प्रकाशलता बोर्दिया

हमारी आर्थिक स्थिति कितनी कमजोर और खस्ता हाल हो चुकी है। इसका सही अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष से कर्ज लेने के लिए तीन दिन में दो बार रुपये का अवमूल्यन किया गया। विदेशी व्यापार के सिलसिले में नये नीति-निर्देश जारी किये गये और अब चोरी छिपे रहन रखने के लिए लगभग २५ टन सोने की दूसरी खेप विदेश भेजी गयी। मजबूरी और लाचारी का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है?

हमारी आर्थिक दुर्दशा के बीज भ्रष्टाचार, कर-चोरी व अनैतिक आचरण में निहित हैं। अतः अर्थव्यवस्था में सुधार लाने के लिये लोगों के नैतिक आचरण को ऊँचा उठाना होगा। जैसाकि कहा जाता है—

If wealth is lost, nothing is lost;
If health is lost, something is lost;
If character is lost, everything is lost.

यदि देश के व्यक्तियों का चरित्र, नैतिक आचरण उज्ज्वल है, उनमें परोपकार व देश-प्रेम की भावना है तो निश्चित रूप से वह देश शीघ्र ही सभी क्षेत्रों में उन्नति कर लेता है। **जापान** इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। जापान के लोगों के परिश्रम, आचरण व देश हित की भावना ने एक छोटे से देश को विश्व के विकसित देशों की श्रेणी में ला दिया है।

जैन दर्शन में अहिंसा, सत्य, अचौर्य ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह पर बल दिया गया है। 'अहिंसा' का तात्पर्य है—मन-वचन व काया द्वारा किसी भी जीव को कष्ट नहीं पहुँचाना। सत्य का तात्पर्य है—मन-वचन व काया द्वारा झूठ न बोलना, न बोलवाना। अचौर्य—मन-वचन-काया द्वारा न चोरी करना, न करवाना। ब्रह्मचर्य का तात्पर्य केवल यौन-संबंध अर्थात् स्त्री-पुरुष विषयक सम्बन्ध स्थापित करना ही नहीं है, वस्तुतः इसके अन्तर्गत व्यक्ति के मन, वचन एवं वाणी से सम्बन्धित समस्त प्रक्रिया एवं कार्य-कलाप आ जाते हैं। इन्द्रियां

जिसे फुसला नहीं सकतीं, मन जिसे विचलित नहीं कर सकता। परिग्रह का अर्थ ममत्व भाव है, इसलिए जिनसे ममत्व-भाव है वे सभी वस्तुएँ परिग्रह में हैं। **'प्रश्न व्याकरण'** सूत्र में कहा गया है कि 'परिग्रह के लिए लोग हिंसा करते हैं, झूठ बोलते हैं, अच्छी वस्तु में बुरी वस्तु मिलाते हैं, परदारगमन तथा परदार-हरण करते हैं, क्षुधा, तृषा आदि कष्ट स्वयं भी सहते हैं और दूसरे को भी ऐसे कष्ट में डालते हैं, कलह करते हैं, दूसरे का बुरा चाहते हैं, दूसरे के लिए अपशब्द कहते हैं, दूसरे का अपमान करते हैं तथा स्वयं भी अपमानित होते हैं, सदैव चिन्तित रहते हैं और बहुतों का हृदय दु:खाते हैं। क्रोध, मान, माया व लोभ का उत्पादक परिग्रह ही है।" अत: जैन-दर्शन का मूलभूत सिद्धान्त अपरिग्रह है।

जैन-दर्शन के पाँचों सिद्धान्तों को जीवन में अपनाकर ही देश की अर्थ-व्यवस्था में सुधार लाया जा सकता है। श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने जो आंकड़े प्रस्तुत किये हैं, वे सचमुच आँखें खोल देने वाले हैं। जैसे १९८२–९१ के बीच में भारतीयों ने गैर कानूनी तौर पर ५१.३ बिलियन अमरीकी डालर यानी १,०२,८४६ करोड़ रुपये की भारतीय सम्पदा विदेशों में चोरी से जमा कर दी। उन्होंने कहा कि पिछले दशक में ३६ बिलियन डालर की सोने की तस्करी हुई, आयात का बीजक अधिक बाँधकर ४ बिलियन डालर का घपला किया गया और निर्यात का बीजक कम बाँधकर ३.९ बिलियन डालर की चोरी की गयी। इस तरह कुल ५१.३ बिलियन लूट लिये गये।

अत: जैन-दर्शन के मूलभूत सिद्धान्तों—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह को व्यवहार में अपनाकर ही ५१.३ बिलियन डालर की भारतीय सम्पदा को बचाकर देश की अर्थव्यवस्था में सुधार ला सकते हैं।

हमारे यहाँ लोगों के निजी कब्जे में कम-से-कम ७,००० टन से अधिक सोना है। सोने का अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य प्रति टन १.२ करोड़ डालर है। अतः लोगों के पास का सोना ८.४ अरब डालर मूल्य का है जो हमारे कुल विदेशी कर्ज से ज्यादा है। इस विशाल भंडार का उपयोग हमें अपनी देनदारियाँ चुकाने के लिए करना चाहिए, क्योंकि सोने के और चाहे जो गुण हों, उसमें चक्रवृद्धि ब्याज जैसी खूबी नहीं है। पिछले दशक में रिजर्व बैंक को इस बेशकीमती धातु को बचाये रखने के लिए काफी कुछ गंवाना पड़ा है। कई साल से हमारा सरकारी भंडार ३३१ टन पर कायम है। १९८० में जब सोने की कीमत ८०० डॉलर प्रति आउंस से कुछ अधिक थी तब इसका मूल्य ८ अरब डॉलर से कुछ अधिक था। अगर हमने इस भंडार को डॉलर में बदल लिया होता और उस राशि को ७ फीसदी के न्यूनतम ब्याज दर पर उठा दिया होता तो वह राशि आज १९ अरब डॉलर हो जाती। इसके विपरीत सोना भंडार में रखने के कारण आधी कीमत

खो चुका है और अब ४ अरब डॉलर से कुछ अधिक का ही रह गया है। इसके अलावा हम १० साल का ब्याज भी गंवा चुके हैं। अतः जैन-दर्शन के अपरिग्रह सिद्धान्त के अनुसार किसी भी वस्तु से ममत्व न रखने की गहन व्याख्या कर लोगों को समझाया जाये व इसे जीवन में उतारने के लिये प्रेरित किया जाये। उनमें अपनी आवश्यकताओं को कम से कम रखने तथा सोना व मिट्टी को समान समझने के विचारों व भावनाओं का विकास किया जाये। जैसा कि कहा गया है कि—

गोधन गज धन रतन धन, कंचन खान सुखान ।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूल समान ॥

इस भावना का व्यक्तियों में अधिक से अधिक विकास किया जाये। जैसाकि अर्थशास्त्री **प्रो० जे० के० मेहता** ने भी कहा है कि मानव को अधिक सुख, शांति व सन्तोष की प्राप्ति आवश्यकता विहीनता की स्थिति में ही हो सकती है और इसी स्थिति में व्यक्ति का अधिकतम कल्याण सम्भव है। लोगों को पैदल चलने के लौकिक व पारलौकिक गुण बताकर पैट्रोल बचत को प्रोत्साहन दिया जाये।

अतः व्यक्तियों को अपने धन को सोने के रूप में न रखकर देश के विकास में लगा देना चाहिये तथा जो आभूषण उनके पास हैं, उन्हें विदेशी कर्ज चुकाने में दे देने चाहिए, जिससे विदेशों में भारत की साख बनी रहेगी तथा अर्थव्यवस्था में तेजी से सुधार सम्भव होगा। अतः समस्त पाठकगण को जैन दर्शन के सिद्धांतों के माध्यम से लोगों में देश-प्रेम, परोपकार, कर्तव्य-पालन, शारीरिक श्रम के प्रति लगाव, अपनी आवश्यकताओं को न्यूनतम करने, अपरिग्रह—सोने के आभूषणों से अममत्व आदि भावनाओं का अधिक से अधिक विकास करना चाहिए, जिससे देश आर्थिक संकट का समाधान करने में सफल हो सके।

—प्रवक्ता अर्थशास्त्र, श्री जवाहर विद्यापीठ शिक्षक
महाविद्यालय, कानोड़-३१३६०४ (जिला : उदयपुर)

- यदि धन धान्य परिपूर्ण यह सारी सृष्टि किसी एक व्यक्ति को देदी जाय तब भी उसे सन्तोष होने का नहीं, क्योंकि लोभी आत्मा की तृष्णा दुष्पूर होती है।
- जो परिग्रह-संग्रहवृत्ति में व्यस्त हैं, वे संसार में अपने प्रति वैर की ही अभिवृद्धि करते हैं।

—भगवान् महावीर

बाल कथामृत* (६६)

□ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि मण्डल द्वारा प्रदान की जायेगी। इसके अलावा वर्ष भर के लिए निम्न १३ प्रोत्साहन पुरस्कार भी प्रदान किये जायेंगे। १. श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन एडवोकेट, भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी श्रीमती बसन्तीबाई की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का एक पुरस्कार। २. श्री रिखबराजजी कर्णावट, जोधपुर की ओर से उनके पिता श्री पनराज जी कर्णावट की पुण्यस्मृति में १० रुपये का एक पुरस्कार। ३. श्री कैलाशजी बोहरा, भवानीमण्डी की ओर से उनके पिता श्री शान्तिलालजी की स्मृति में ११) रु० का एक पुरस्कार। ४. जे. एल. जैन ट्रस्ट, इन्दौर द्वारा ११) रु० का एक पुरस्कार। ५. ६. ७. ८. श्री रिखबचन्दजी कांकरिया, मद्रास की ओर से उनके पिता श्री मोहनलालजी कांकरिया, माता श्रीमती झणकारबाई कांकरिया की पुण्य स्मृति में तथा पूज्य महासती श्री सरलाजी एवं विमलाजी की दीक्षा स्मृति एवं धर्मपत्नी श्रीमती पिस्तादेवी के दो वर्षी तप करने के उपलक्ष्य में १०-१०) रु० के चार पुरस्कार। ९. श्री रघुदासजी जैन, सवाईमाधोपुर की ओर से उनके पिता श्री रामजसजी जैन एवं माता श्रीमती मोत्यादेवी जैन की पुण्यस्मृति में १०) रु० का एक पुरस्कार। १०. ११. श्री विनयचन्दजी जैन, दिल्ली की ओर से ११-११) रु० के दो पुरस्कार उनके पिता श्री प्रेमचन्दजी जैन एवं माता श्रीमती इन्द्राकुमारी जैन की पुण्यस्मृति में। १२. श्री सुरेश राजेन्द्रकुमारजी मेहता, बम्बई की ओर से ११) रु० का एक पुरस्कार अपने दादाजी श्री घेवरचन्दजी मेहता की पुण्यस्मृति में। १३. श्री प्रकाशचन्दजी शिशोदिया, रामपुरा की ओर से ११) रु० का एक पुरस्कार अपनी मातुश्री श्रीमती भँवरबाईजी की स्मृति में।

—सम्पादक

गलती की पहचान

□ श्री अशोक जैन

अध्यापकजी ने जैसे ही कक्षा छोड़ी, मनु अपनी जगह छोड़कर बाहर निकल आया। जेब से टाफियाँ निकाल कर उसने बुलन्द आवाज में कहा—

*श्री राजीव भानावत द्वारा सम्पादित — परीदास स्तम्भ।

तुम टाफी खाकर खेलो,
मन माना नम्बर ले लो ।

और उसने एक साथ ही दो टाफियाँ अपने मुंह में भर लीं । उसकी एक्टिंग से क्लास ठहाकों से गूँज उठी । "मनु, याद है न, परसों चाट खिलाई थी । आज तुम मुझे टाफियाँ नहीं खिला रहे हो ।" अमर ने अधीर होकर पूछा । उसे भय था कि कहीं मनु ही सारी खुद न खा जाये ।

"याद है, भला ! दोस्त भी भुलाये जाते हैं ? ले तू भी चख....तू भी क्या याद करेगा कि किसी दिलेर से दोस्ती की थी ।" मनु ने चूरण की पुड़िया और टाफी उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा । दो-चार और लड़कों को बाँटकर उसने जेब में बचे पैसों को टटोला । उसने मन ही मन खर्चे का हिसाब लगाया—एक दौर चाट का भी चल सकता था । पिछले दस-पन्द्रह दिनों से उसकी जेब गर्म थी । इससे पूर्व उसे कभी भी पचास पैसे प्रतिदिन से अधिक नहीं मिले थे । महज अठन्नी में भला क्या खरीदा जा सकता था ? भगवान करे, पापा का पर्स हमेशा भरा मिले । इससे उसे ऐसे अवसर रोजाना मिलते रहेंगे । पैसा रहने से कितने काम आसानी से निपट जाते हैं । जैसे यारों को खिला-पिलाकर उनकी होमवर्क की कापियाँ नकल के लिए आसानी से मिल जाती हैं ।

कहने को तो मनु अध्ययन कर रहा था किन्तु उसकी तेज निगाहें किताब की आड़ में पूरे घर में फिर रही थीं । जैसे ही माँ ने पिताजी को खाने के लिए बुलाया, वह दबे पाँव खूँटी पर लटकी पैंट तक पहुँच गया । जल्दी से उसने पैंट की जेबों को टटोलना शुरू कर दिया । पर्स हाथ में आते ही उसे खोलकर देखा, अन्य दिनों की तरह छोटे-छोटे नोट नहीं थे । हताश होकर उसने एक बीस रुपये का नोट अपनी जेब के हवाले किया—"यही सही आज ।"

"मनु, जरा पापा को पानी देना बेटे !"—माँ का स्वर सुनाई दिया । पल-भर के वास्ते उसके हाथ काँप उठे । पर्स हाथ से छूटते-छूटते बचा । उसने झट से पर्स बन्द कर पैंट की जेब में ठूँस दिया । रसोई में पापा की आँखें उससे मिलीं—"क्यों मनु, आज स्कूल नहीं जाना है क्या ?" उसने गर्दन झुका कर जबाब दिया—"जी जाना है ।"

"तो फिर झटपट खा लो । माँ की तबियत ठीक नहीं है ।........कुछ देर आराम कर लेंगी ।" पापा ने हाथ धोते हुए कहा ।

"जी अच्छा ।"—मनु ने माँ की ओर देखकर कहा ।

पिताजी के ऑफिस जाते ही मनु ने दो-चार कौर निगले और बस्ता लेकर तैयार हो गया ।

"मनु....ओ मनु, इधर आ!"—माँ की आवाज सुनकर वह जल-भुन गया । माँ बीमार क्या पड़ीं, पूरे घर को अपने साथ खटिया पर समेट लिया । झल्लाते हुए उसने अपना बस्ता नीचे पटक दिया । "क्या बात है, जल्दी बताओ ! देखती नहीं, मेरे स्कूल का समय हो रहा है !"—मनु ने कहा ।

"बेटे, अलमारी में मेरी दवा की शीशी रखी हुई है ! ले आओ !"—माँ ने बड़े लाड़ से कहा—"देख न दर्द से....!" माँ की बात पूरी भी न हुई थी कि मनु ने दवा की वह बोतल तिपाई पर पटक दी और तेजी से बाहर निकल गया । बाहर निकलते-निकलते उसने माँ की आवाज सुनी । दवा समाप्त होने पर वह अपने भाग्य को कोस रही थी । मनु के होठों पर मुस्कान थी और दिमाग में बीस रुपये का नोट नाच रहा था ।

इण्टरवैल की घण्टी बजते ही वह चाट वाली दुकान को ओर बढ़ गया । वहाँ पहुँचते ही उसने चहक कर कहा—"जल्दी से पाँच जगह गोलगप्पे दे दो ।" आँखों ही आँखों में उसने साथियों को गिना । जेब से कागज में लिपटे हुए नोट को बाहर निकाला । खोलते ही डाक्टरी नुस्खे की पर्ची बाहर निकली । "यह क्या है मनु ?" अमर ने उत्सुकता से पूछा ।

"देखते नहीं, इसमें माँ की दवाओं का नाम लिखा है ।" नोट का आधा भाग बाहर निकल गया था । मनु ने अपने साथियों पर निगाहें डालीं । वे सभी मनु की दिलेरी की तारीफ कर रहे थे । मनु ने नोट पूरा बाहर निकाला तो उसके साथ कागज का एक छोटा-सा टुकड़ा नीचे गिर पड़ा । उसने झुककर उसे उठाया और खोला । यह तो पापा की लिखावट है । उसने जल्दी से पढ़ा—

"भाई चोर, यह मेरे पर्स की अन्तिम अमानत है । इन रुपयों से तुम्हारी माँ की दवा खरीदनी है । उनका खाँसना और कराहना शायद तुम्हें याद हो । माँ के लिए तुम्हारे दिल में कोई जगह न हो, तो बेझिझक तुम इन्हें खर्च कर सकते हो—पापा ।"

पत्र पढ़ते ही मनु काँप उठा । उसे लगा, उसके पैरों के नीचे की जमीन खिसक रही है । "नहीं, नहीं, मैं इन्हें खर्च नहीं करूँगा ।"—मनु ने जोर से

चीखकर कहा। उसने भरे दिल से उस पत्र को मोड़कर जेब के हवाले कर दिया। आश्चर्य से अपनी ओर देखते मित्रों से उसने कहा—"माफ करना साथियो।" और वह बेहताशा दौड़ पड़ा।

कई जगह वह गिरते-गिरते बचा। ठोकरें खाने से उसके घुटने छिल गए थे। लेकिन वह खुद को भूल चुका था। उसकी आँखों में माँ का रक्तहीन चेहरा और कराहती आवाज बार-बार उभरने लगी। माँ के प्रति अपने बर्ताव को याद कर उसका दिल भीतर ही भीतर रो पड़ा। दवाइयों की कई दुकानों का चक्कर वह पूरा कर चुका था। कहीं भी दवा न मिली थी। अगर यह दवा नहीं मिली तो.... । यह बात सोचने-भर से उसका दिल बैठने लगा। "राज मेडिकल स्टोर्स" में घुसकर उसने दवा की पर्ची काउण्टर पर रख दी।

काउण्टर पर बैठे वृद्ध ने उसे ऊपर से नीचे तक घूरा, फिर पूछा—"क्या चाहिए ?"

"जी, यह बोतल वाली दवा।"

"यह तो शायद खत्म हो गई। कहो तो दूसरी.... ।"

"जी नहीं, यही शीशी वाली दवा चाहिए। जरा कोशिश कीजिए प्लीज।"

"देखता हूँ। अगर कोई शीशी बची होगी तो जरूर मिल जाएगी।"—वृद्ध ने कहा और दुकान में तलाश कर एक बोतल ले आया। "ले लो बेटा, तुम्हारी किस्मत अच्छी है। यह आखरी ही बची थी।"—वृद्ध ने कहा। मनु ने दाम चुकाया और बोतल लेकर घर की ओर दौड़ पड़ा।

धड़कते हुए दिल से वह घर में घुसा। धीरे से उसने माँ को आवाज दी—"माँ, देखो, मैं तुम्हारे वास्ते दवा ले आया हूँ। माँ ने आँखें खोलकर उसकी ओर मुस्करा कर देखा। उसने दवा की शीशी खोलकर चम्मच-भर दवा माँ की ओर बढ़ा दी।

"मेरा मन कहता था कि मेरा मनु चोर नहीं है। देखा तुमने ?"—पापा ने मनु की पीठ थपथपायी। वे दफ्तर से अभी-अभी लौटे थे और मनु के हाथों में दवा की बोतल देख सारा माजरा समझ चुके थे।

"पापा, मुझे माफ कर दीजिए। मुझसे गलती हो गई।" उसने माँ के आँचल में सिर छुपा कर कहा।

"नहीं बेटे, तुमने अपनी गलती पहचान ली । अपनी गलती सुधार लेना ही काफी है । तुम तो सुबह के भूले हो । देर-सबेर घर लौटना ही था । सुबह का भूला शाम को घर लौट आए तो वह भूला नहीं कहलाता ।"—पापा ने मुस्करा कर कहा ।

—श्रीश्रीमाल भवन, बन्दा मार्ग, भवानीमंडी (राज०)

अभ्यास के लिए प्रश्न

उक्त कहानी को पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

१. मनु की बुरी आदत क्या थी ?

२. वह कैसे सुधरी ?

३. 'माँ की आवाज सुनकर वह जल-भुन गया ।' क्यों ?

४. कागज के छोटे टुकड़े पर क्या लिखा हुआ था ?

५. 'माफ करना साथियो ।' मनु ने ऐसा क्यों कहा ?

६. मनु ने अपनी कौनसी गलती पहचान ली ?

७. यदि आपके घर में कोई बीमार हो तो आप उसकी सेवा कैसे करेंगे ?

८. 'उसका दिल भीतर ही भीतर रो पड़ा ।' क्यों ?

९. आप कोई ऐसा घटना-प्रसंग लिखिए जिससे निम्न उक्ति का आशय स्पष्ट हो जाये—

'सुबह का भूला शाम को लौट आए तो भूला नहीं कहलाता ।'

•□•

नोट :—छात्रावासों के गृहपतियों व हिन्दी धार्मिक अध्यापकों से निवेदन है कि वे अपनी कक्षाओं में बच्चों से इस कहानी के उत्तर लिखकर भिजवायें।

—सम्पादक

समाज–दर्शन

उपाध्याय प्रवर के हिरण्ये का सफल ऑपरेशन

परमाराध्य स्व० आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० के सुशिष्य उपाध्याय श्री मानचन्द्र जी म० सा० के हिरण्ये का ऑपरेशन विख्यात सर्जन डॉ० आर० के० हरणेजा ने श्री वर्द्धमान चिकित्सालय, घोड़ों का चौक, जोधपुर में दिनांक १३ फरवरी को सफलतापूर्वक किया। उपाध्याय प्रवर के स्वास्थ्य में पूर्ण समाधि है।

उपाध्याय श्री के ऑपरेशन की जानकारी मिलने पर ज्ञानगच्छिय श्रुतधर श्री प्रकाश मुनिजी म० सा०, साधुमार्गी श्री सम्पत मुनिजी म० सा०, रावटी विराजित अनुयोग प्रवर्तक श्री कन्हैयालाल जी म० सा० 'कमल' की ओर से श्री विनय मुनिजी 'वागीरा', महावीर भवन विराजित घोर तपस्वी श्री सहज मुनिजी म० सा० व श्री राम मुनिजी म० सा० 'निर्भय' तथा अनेकानेक नगरों तथा ग्रामों के श्रावक-श्राविकाएँ सुख-शान्ति की पृच्छा करने पधारे। दर्शनार्थियों का आवागमन बराबर बना हुआ है।

सन्त-विहार-चर्या

परम पूज्य आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म० सा० आदि ठाणा ४ दिनांक १४-२-९२, शुक्रवार को विहार कर नाकोड़ा जी पधारे। **नाकोड़ा जी** में जयपुर से सर्वश्री सुमेरसिंह जी बोथरा, पदमचन्द जी कोठारी, मनोहरलाल जी बम्ब व मंजुला बम्ब दर्शनार्थ आये। आचार्य प्रवर नाकोड़ा जी से दिनांक १५-२-९२ को विहार कर **सिडली** ग्राम पधारे। यहाँ पर दो दिन विराजना हुआ। दिनांक १६-२-९२ को सिडली में श्री डी० आर० मेहता, श्री आनन्द जी चौपड़ा दर्शनार्थ आये। धर्म ध्यान का ठाठ रहा। आचार्य प्रवर दिनांक १७-२-९२ को विहार कर **करना** ग्राम पधारे। रा० प्रा० पाठशाला में विराजे। यहाँ पर श्री शान्तिकुमार जी कोठारी जयपुर वाले सपत्नीक आये। मद्रास वाले आनन्द कुमार जी चोरड़िया, कमल जी कांकरिया व उनके साथ रायपुर के प्रदीपकुमार जी धारीवाल आदि सभी धर्मप्रेमी सुश्रावक मय परिवार आये। सायंकाल जयपुर से श्री गुलाबसिंह जी दरड़ा व जोधपुर के आर० एन० मजुमदार, राजेन्द्र जी चोपड़ा आदि आये। करना से विहार कर आचार्य प्रवर **प्रान**

डंडाली ग्राम पधारे। यहाँ पर श्री धनपतराज जी चोरड़िया दर्शनार्थ आये। यहाँ से विहार कर आचार्य प्रवर सणपा, सरण, ओकासरिया, चवा, रावतसर, नगने की ढाणी, कुडला होते हुए बाड़मेर पधारे। यहाँ कुछ दिन विराजने की संभावना है।

रोचक व्याख्याता श्री ज्ञान मुनिजी म० सा०, वयोवृद्ध श्री दया मुनिजी म० सा०, श्री राम मुनिजी म० सा० आदि ठाणा ३ सुख शान्तिपूर्वक पीपाड़ विराज रहे हैं। पं० र० श्री शुभेन्द्र मुनिजी के ब्यावर से जयपुर की ओर पधारने की सम्भावना है। महासती शासन प्रभाविका श्री मैना सुन्दरी जी म० सा० आदि ठाणा ८ सुख शान्तिपूर्वक गंगापुर विराज रहे हैं। शान्त स्वभावी महासती श्री शान्ति कंवर जी आदि ठाणा ४ मेड़तासिटी विराज रहे हैं। महासती श्री सुशीला कंवर जी म० सा० आदि ठाणा ५ सिवाना विराज रहे हैं।

महासती श्री तेजकंवर जी म० सा० ठाणा ३ से दूदू से विहार करके जयपुर शहर में बारह गणगौर के स्थानक में सुखसातापूर्वक विराज रहे हैं।

स्व० आचार्य श्री का ७२वां दीक्षा दिवस तप-त्याग के साथ सम्पन्न

परमाराध्य महामहिम आचार्य भगवन पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म० सा० का ७२वां दीक्षा दिवस माघ शुक्ला द्वितीया, बुधवार, दिनांक ५ फरवरी १९९२ को त्याग-तप के साथ मनाया गया।

कनाना में आचार्य भगवन का दीक्षा दिवस उन्हीं के पट्टधर परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म० सा० के पावन सान्निध्य में त्याग-तप के साथ मनाया गया। बालोतरा नगर के अलावा आसपास के कई ग्रामों के श्रद्धालुओं ने प्रवचन श्रवण का लाभ प्राप्त किया। बालोतरा नगर के युवक काफी संख्या में आचार्य भगवन के दीक्षा दिवस के प्रसंग से श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गुण कीर्तन की भावना से उपस्थित हुए थे वहीं जोधपुर से युवक संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफणा, श्री चंचलचन्द जी सिंघवी, कार्याध्यक्ष युवारत्न श्री आनन्द जी चौपड़ा, सहमंत्री श्री रतन जी सुराना आदि युवक संघ के पदाधिकारीगण भी कनाना में उपस्थित थे। साप्ताहिक संगोष्ठी कार्यक्रम में कनाना, बालोतरा एवं अन्य स्थानों से आए युवकों ने भाग लिया। युवक संघ के पदाधिकारियों का युवकों से सम्पर्क लाभप्रद रहा। बालोतरा के युवकों ने अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ की बालोतरा शाखा स्थापित करने का निर्णय किया। कनाना में आचार्य भगवन के दीक्षा दिवस के प्रसंग पर बालोतरा में युवक संघ की शाखा की घोषणा ही नहीं अपितु विधिवत स्थापना की गई एवं

युवारत्न श्री शांतिलाल जी अन्याव को वालोतरा शाखा का संयोजक बनाया गया।

बालोतरा के युवक आचार्य भगवन के जन्म दिवस पर बालोतरा में युवक संघ की शाखा स्थापित करने का चिन्तन कर रहे थे परन्तु जोधपुर से युवारत्न बन्धुओं की बस रास्ते में खराब हो जाने से विलम्ब से पहुँची अतः बालोतरा के युवकों ने आचार्य भगवन के दीक्षा दिवस पर शाखा खोलने का मानस बना लिया था जिसकी परिणति सभा में हुई। कार्याध्यक्ष श्री आनन्दजी चौपड़ा ने युवकों को सम्बोधित किया।

जोधपुर में उपाध्याय श्री मानचन्द्र जी म० सा० आदि संत-सतीगणों के पावन सान्निध्य में त्याग-तप के साथ यह दिवस मनाया गया। तत्त्व चिन्तक श्री प्रमोद मुनिजी म० सा० ने मंगलाचरण कर प्रवचन प्रारम्भ करते हुए उत्तराध्ययन सूत्र के २४वें अध्याय की गाथा के सन्दर्भ में एक-एक समिति और गुप्ति के विविध प्रसंग प्रस्तुत करते हुए आचार्य भगवन के गुण कीर्तन किए। उपाध्याय श्री ने फरमाया कि "जिस सुबेला में शुभ कार्य होता है वह समय अमर हो जाता है" ये शब्द आचार्य भगवन ने नेहरू पार्क स्थानक में इसी दीक्षा-तिथि पर फरमाये थे। गुरुदेव ने जन्म से लेकर अन्तिम समय तक एक से बढ़कर एक अनेक कीर्तिमान स्थापित किये। उपाध्याय प्रवर ने मनुष्य के जन्म को शरीर से जन्म होना और दीक्षा को संस्कार से जन्म होना बताया। उन्होंने कहा कि आचार्य भगवन अपने आपको संघसेवक कहते थे। उनकी सेवा भावना अद्वितीय थी। वे सेवा में सदा तत्पर रहते थे। उन्होंने अपने संतों की सेवा तो की ही—आपको ध्यान में है बाबाजी भोजराज जी महाराज, अमरचन्द जी महाराज की कैसी सेवा की? अन्यान्य सम्प्रदाय के संतों को जिन्हें भी सहयोग की आवश्यकता हुई, उन्होंने सहयोग दिया। कोई संत बीमार हो, आचार्य भगवान सेवा में तत्पर हो जाते। उन्होंने एकल विहारी संतों को भी सहयोग दिया। इसके पीछे उनकी भावना थी कि संयम-मार्ग से कहीं कोई विचलित नहीं हो जाय। स्वामी श्री चौथमल जी महाराज को संथारे के समय साझ दिया। उस समय आचार्य भगवन ने उन्हें स्व-रचित भजन सुनाये जिनमें "मैं उस नगरी का भूप" और "मेरे अन्तर भया प्रकाश" भजनों की रचना गुरुदेव ने स्वामी जी महाराज को साझ देने के लिए की थी। वे ही भजन आचार्य भगवन के अन्तिम समय इतने साझ देने वाले बने कि जब भी गुरुदेव का मन उदासीन होता, संत उन भजनों को गाते।

उपाध्याय प्रवर ने कँवरलाल जी महाराज, भैरू मुनिजी महाराज, मांगीलाल जी महाराज आदि कई संतों के सहयोग के उदाहरण प्रस्तुत किये।

आचार्य भगवन ने ऐसे-ऐसे क्षेत्र संभाले जहां स्थानकवासी संत कम जाते थे। पल्लीवाल, पोरवाल, बाड़मेर, बालोतरा जैसे क्षेत्रों में जहाँ नमस्कार मंत्र तक लोगों को नहीं आता था। वहाँ पधार कर उन क्षेत्रों को संभाला। उनका समाज पर बहुत बड़ा उपकार रहा।

गंगापुर सिटी में विदुषी महासती श्री मैना सुन्दरी जी म० सा० ठाणा ८ के सान्निध्य में तप-त्यागपूर्वक यह समारोह आयोजित किया गया। इसमें सवाई माधोपुर के वरिष्ठ स्वाध्यायियों ने भाग लिया व आचार्य श्री का गुणानुवाद किया। इस अवसर पर श्री रामस्वरूप जी जैन व उनकी पत्नी श्रीमती सुगनी देवी निवासी फाजिलाबाद ने सजोड़े ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया।

संस्कार-निर्माण शिविर एवं उच्च शिक्षा का स्वर्ण अवसर

जयपुर—श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर के तत्त्वावधान में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर की परीक्षाओं की समाप्ति के पश्चात् एक पंच दिवसीय संस्कार निर्माण शिविर लगाया जायेगा। इस शिविर में इस वर्ष सन् १९९२ में कक्षा ११, १२ व बी. ए. प्रथम वर्ष में प्रवेशार्थी छात्रों को प्रवेश दिया जायेगा। इस शिविर का मुख्य उद्देश्य—(१) जीवन के सर्वांगीण विकास व सदैव प्रसन्न रहने के लिए आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति से तत्त्वज्ञान पूर्वक संस्कार निर्माण का शिक्षण देना तथा (२) शिविरार्थियों में से इस संस्थान में प्रवेशार्थी छात्रों का चयन करना है। इस संस्थान में छात्रों को उच्च स्तरीय संस्कृत आदि विषयों का अध्यापन कराया जाता है। जिससे छात्र हायर सेकेन्ड्री, बी. ए. व एम. ए. परीक्षा में वरीयता सूची में उच्च स्थान पाते हैं जिससे इन्हें आयुर्वेदिक कॉलेज. बी. एड., शिक्षा शास्त्री, आर. ए. एस., व्याख्याता आदि सेवाओं में जाने का एवं आत्म-निर्भर बनने का लाभ मिलता है, नौकरी के लिए इधर-उधर नहीं भटकना पड़ता है। संस्थान में भोजन, आवास आदि की निःशुल्क व्यवस्था है।

शिविर में प्रवेशार्थी छात्र अपना नाम, पिता का नाम, गोत्र, निवास स्थान, पता, धार्मिक ज्ञान एवं गत दो वर्षों की विद्यालयीय परीक्षाओं में प्राप्त अंक (अंक सूची अलग से संलग्न करें) का विवरण देते हुए निम्नांकित पते पर २० अप्रेल तक आवेदन पत्र भेजें ताकि उन्हें स्वीकृति एवं शिविर तिथि की सूचना समय पर भेजी जा सके।

नोट—शिविर में आमंत्रित छात्रों को आवागमन का किराया भी दिया जायेगा।

—कन्हैयालाल लोढ़ा
अधिष्ठाता, श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान
साधना भवन, ए-९, महावीर उद्यान पथ
बजाज नगर, जयपुर-३०२०१५

हार्दिक अभिनन्दन एवं बधाई

बीकानेर—आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य में १६ फरवरी को २१ मुमुक्षु आत्माओं ने भागवती दीक्षा ग्रहण की। इनके नाम हैं—राजीव सेठिया, बीकानेर, इन्द्रेश कोठारी, चिकारड़ा, सुश्री सीमी सेठिया, बीकानेर, सुश्री कान्ता गोलेछा, बीकानेर, सुश्री सरोज भूरा, बीकानेर, सुश्री कुमुद दस्साणी, बीकानेर, सुश्री मणिप्रभा गुलगुलिया, बीकानेर, सुश्री कविता जैन, श्यामपुरा, सुश्री अनिता लोढ़ा, खण्डेला, सुश्री मधु सुराणा, गंगाशहर, सुश्री रीना बच्छावत, भीनासर, सुश्री इन्दुबाला हीरावत, देशनोक, सुश्री अन्जु हीरावत, देशनोक, सुश्री जयश्री भूरा, देशनोक, सुश्री संगीता सांखला, बालेसर, सुश्री जयन्ती जैन श्यामपुरा, सुश्री धैर्यप्रभा जैन, वीसनीया, सुश्री मंजु नाहर, भदेसर, सुश्री लता काजल, जम्मू, सुश्री सूरज नवलखा, जगपुरा, सुश्री चन्दनबाला हीरावत, देशनोक।

समारोह के मुख्य अतिथि थे सांसद गुमानमल लोढ़ा। इस अवसर पर सर्वश्री गणपतराज बोहरा, मानव मुनि, पी० सी० चौपड़ा, संघ अध्यक्ष श्री भँवर लाल बैद, डॉ० नरेन्द्र भानावत, उमरावमल चौरड़िया, वीरेन्द्र कोठारी आदि ने दीक्षार्थियों को इस भौतिक युग में आध्यात्मिकता अपनाने के लिए बधाई दी। विशेष अतिथि न्यायमूर्ति श्री यू० एन० भाचावत एवं समारोह के अध्यक्ष राज्य मंत्री श्री देवीसिंह भाटी ने अपनी शुभकामनाएँ अर्पित कीं। समारोह का संचालन दीक्षा महोत्सव समिति के अध्यक्ष श्री रिखबचन्द जैन, संयोजक श्री भँवरलाल कोठारी एवं संघ मंत्री श्री चम्पालाल डागा ने किया।

कुरुक्षेत्र—यहाँ ९ फरवरी को श्री रमेश मुनिजी के शिष्य श्री कमल मुनि 'कमलेश' के सान्निध्य में वैरागी जवाहर पाठक ने जैन भागवती दीक्षा ग्रहण की।

बम्बई—श्रमणसंघीय महासती स्व० श्री पन्नादेवी जी की प्रशिष्या साध्वी अर्चना श्री को **'जैन-दर्शन के आलोक में मध्ययुगीन सन्तकाव्य'** विषय पर बम्बई विश्वविद्यालय ने पी-एच. डी. की उपाधि से विभूषित किया है। साध्वी अर्चना श्री ने अपना शोध प्रबंध एस. आई. ई. एस. कॉलेज, शीव (बम्बई) के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० रविनाथसिंह के मार्गदर्शन में तैयार किया। डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी व डॉ० नरेन्द्र भानावत इसके परीक्षक थे।

बम्बई—भारत जैन महामंडल के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर दिनांक १ फरवरी, ९२ शनिवार को अखिल भारतीय स्तर की चार प्रतिभाओं का सम्मान किया गया।

ये हैं अहमदाबाद के पं० दलसुभाई मालवणिया, दिल्ली के श्री यशपाल जैन, जलगाँव के श्री सुरेश दादा जैन तथा वीरभूम (पश्चिम बंगाल) की श्रीमती मनोहरी देवी आंचलिया।

जयपुर—गलता तीर्थ के पीछे दिल्ली बाईपास रोड पर खटीकों की मंडी के पास निर्माणाधीन आधुनिक बूचड़खाने का विरोध करने के लिए श्री हरिश्चंद्र जी बडेर की अध्यक्षता एवं श्रीमती सरस्वती जैन के संयोजन में एक संघर्ष समिति का गठन किया गया था। इसके प्रवक्ता श्री कैलाश बम्ब ने बताया कि श्री केशरीचन्द जी नवलखा के नेतृत्व में एक शिष्टमण्डल मुख्यमंत्री श्री भैरोंसिंह जी शेखावत से मिला। श्री शेखावत जी ने इस कार्य को रोक देने का आश्वासन दिया। एतदर्थ हार्दिक धन्यवाद।

कलकत्ता—२२ दिसम्बर को प्रमुख समाजसेवी श्री दीपचन्द जी भूरा का ७५ वर्ष पूरे करने पर उनकी बहुविध समाजसेवाओं के उपलक्ष्य में सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। श्री भूरा ने अपने वैवाहिक जीवन के ६० वर्ष भी आज पूरे किये। अतः उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मगनीदेवी का भी समाज द्वारा अभिनन्दन किया गया। गद्‌गद् स्वरों में श्री दीपचन्द भूरा ने कहा—'यूं देखा जाये तो मैं अब संन्यास की स्थिति में आ चुका हूँ लेकिन काम करते रहने की कुछ ऐसी आदत पड़ गई है कि कुछ न कुछ रचनात्मक कार्यों से जुड़े रहने को मन करता है—यही कामना है कि अंतिम सांस तक जनसेवा करूं।' अमृत महोत्सव की अध्यक्षता श्री संचालाल जी बाफना ने की। प्रधान अतिथि थे श्री कन्हैया लाल जी सेठिया। इस मौके पर असम के पूर्व डिप्टी स्पीकर श्री रवीन्द्रनाथ सेन सहित बिहार के आवास मंत्री नलिनी रंजनसिंह, डॉ० सागरमल जैन तथा पं० दलसुखभाई मालवणिया भी उपस्थित थे। सर्वश्री केशरीचन्द सेठिया, पारसमल चोरड़िया, भँवरलाल नाहटा, सरदारमल कांकरिया, सुन्दरलाल दुगड़ ने भी भूराजी की सेवाओं पर प्रकाश डाला। इस शुभ अवसर पर लगभग ३५ विभिन्न संस्थाओं के पदाधिकारियों ने श्री भूराजी को शाल तथा चद्दर ओढ़ाकर सम्मानित किया। कई मानपत्र तथा प्रतीक भी उन्हें दिये गये।

इस अवसर पर श्री दीपचन्द जी भूरा के जीवन पर एक स्मारिका भी वितरित की गई जिसका विमोचन पं० दलसुख मालवणिया ने किया। समारोह का संचालन श्री भूपराज जैन ने किया।

संक्षिप्त समाचार

जयपुर—"जिनवाणी" पत्रिका के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव पर वर्ष १९९३ में प्रकाशित किये जाने वाले विशेषांक के लिए गठित वित्त समिति के संयोजक

श्री नवरत्नमलजी जैन (मुणोत) के जयपुर पधारने पर उनकी अध्यक्षता में १० फरवरी को एक बैठक आयोजित की गई जिसमें विज्ञापन राशि एकत्रित करने के लिए क्षेत्रिय समितियाँ गठित की गईं।

हुबली—राजस्थान यूथ फैडरेशन के तत्वावधान में २६ जनवरी से ६ फरवरी तक जयपुर पांवदान शिविर आयोजित किया गया जिसमें ४१२ विकलांग भाई-बहिनों को जयपुर पांव व केलीपर निःशुल्क प्रदान किये गये। समारोह की अध्यक्षता जी० एम० पाटील ने की। मुख्य अतिथि थे महावीर विकलांग सहायता समिति, जयपुर के संस्थापक सचिव श्री डी० आर० मेहता। फैडरेशन के अध्यक्ष श्री महेन्द्रकुमार सिंघी एवं शिविर के संचालक श्री जयन्तीलाल चौपड़ा ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

वाराणसी—सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के प्राकृत एवं जैनागम विभाग के अध्यक्ष डॉ० गोकुलचन्द जैन के निर्देशन में डॉ० सुनीता जैन ने 'प्रवचनसार', डॉ० महेन्द्रकुमार जैन ने 'अष्टपाहुड', डॉ० ऋषभचन्द जैन ने 'नियमसार', डॉ० कमलेश जैन ने 'पारिभाषिक शब्दावली' तथा श्रीराम मिश्र ने 'वसुनन्दी के उपासकाध्ययन' पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्वीकृत शोध परियोजना के अन्तर्गत कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है।

लखनऊ—इतिहास मनीषी स्वर्गीय डॉ. ज्योतिप्रसादजी जैन की ८०वीं जयन्ती पर एक विचार गोष्ठी आयोजित की गई। जिसमें डॉ. साहब की साहित्य-सेवा पर विद्वानों ने प्रकाश डाला।

जोधपुर—अनुयोग प्रवर्तक मुनि श्री कन्हैयालालजी म. "कमल" द्वारा सम्पादित 'निशीथ' सूत्र गुटका मुनिराज एवं महासतीजी को स्वाध्याय एवं कंठस्थ करने हेतु श्री सूरजमलजी गेहलोत, सूरसागर, जोधपुर वालों की तरफ से भेंट भेज रहे हैं। इस पते पर से प्राप्त करें—पता—डॉ. सोहनलाल संचेती, संचेती भवन, केसरवाड़ी, चांदी हाल, जोधपुर–३४२ ००२।

जलगांव—महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ के तत्त्वावधान में दि. १९-१-९२ से २५-१-९२ तक प्रचार प्रसार कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें वरिष्ठ स्वाध्यायी साधक श्री फूलचन्दजी मेहता, उदयपुर, श्री हीरालालजी मंडलेचा, जलगाँव आदि ने गाँव-गाँव में जाकर सामायिक-स्वाध्याय की प्रेरणा प्रदान की। २५ गाँवों में कार्यक्रम सम्पन्न हुए जिनमें जलगाँव, जामनेर, पाचोरा, चोपड़ा, शिरपुर, सिन्दखेड़ा, बोरकुण्ड, शेन्दुर्णी, फत्तेपुर आदि मुख्य हैं। श्री मेहता की प्रेरणा से अनेक व्यक्तियों ने सामायिक, स्वाध्याय के नियम ग्रहण किये।

इन्दौर—कुन्द-कुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर द्वारा १२-१३ जनवरी, १९९२ के मध्य जैन विद्या संगोष्ठी एवम् "अर्हत्वचन" पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। **पं. पूज्य उपाध्याय मुनि श्री गुप्तिसागरजी** एवम् **मुनि श्री निजानन्द सागरजी** के मंगल सान्निध्य में सम्पन्न इस संगोष्ठी का उद्घाटन १२-१-९२ को **संहितासूरि पं. नाथूलालजी शास्त्री** की अध्यक्षता में **पद्मश्री बाबूलालजी पाटोदी** ने किया। इस अवसर पर अर्हत्वचन वर्ष-२ (दिसम्बर, ८९ से सितम्बर, ९०) के ४ अंकों में प्रकाशित ३ सर्वश्रेष्ठ लेखों के लेखकों को क्रमशः रु० १००१.००, ७५१.०० तथा ५०१.००, स्मृति चिह्न, शाल एवं श्रीफल समर्पित कर सम्मानित किया गया। ये लेखक व लेख हैं—**डॉ. पारसमल अग्रवाल**, रीडर भौतिकी अध्ययनशाला विक्रम वि. वि., उज्जैन, (जैन दर्शन एवं आधुनिक विज्ञान)। **डॉ. ए. व्ही. नरसिंहमूर्ति**, प्राध्यापक भा. इ. सं. एवं पुरातत्त्व, मैसूर वि. वि., मैसूर (Sri Bhuvalaya of Kumudendu)। **डॉ. परमेश्वर झा**, प्राचार्य को-ऑपरेटिव कॉलेज, बेगूसराय (बिहार), (Jaina Astronomical Texts Belonging to Presiddhantic Period of Ancient India)।

संगोष्ठी के चार तकनीकी सत्रों में विद्वानों ने अपने शोध निबन्ध प्रस्तुत किये। संयोजन किया 'अर्हत्वचन' के सम्पादक श्री अनुपम जैन ने।

बम्बई—१९ जनवरी, १९९२ को अहिंसा भवन में अ. भा. श्वे. स्था. जैन कॉन्फ्रेंस, दिल्ली की साधारण सभा में कॉन्फ्रेंस के अध्यक्ष पद के लिए आगामी तीन साल के लिए श्री पुखराजमल एस. लुंकड़ को पुनः सर्वसम्मति से निर्विरोध अध्यक्ष चुना गया। अध्यक्ष महोदय ने नई कार्यसमिति में इस प्रकार पदाधिकारियों की घोषणा की है—

उपाध्यक्ष : श्री वंकटलाल कोठारी–पूना, श्री नृपराज एस. जैन–बम्बई, श्री जे. डी. जैन–गाजियाबाद, श्री नेमीचन्द जैन–इन्दौर, श्री मांगीलाल बाफना–बैंगलोर, श्री उमरावमल चोरड़िया–जयपुर, श्री रामेश्वरदास जैन–दिल्ली, श्री हीरालाल जैन–लुधियाना।

महामंत्री : श्री शांतिलाल छाजेड़–बम्बई।

मंत्री : श्री उत्तमचन्द रूणवाल–बैंगलोर, श्री निर्मलकुमार जैन–दिल्ली, श्री नेमीचन्द बोथरा–पाली।

कोषाध्यक्ष : श्री कांतिलाल जैन–बम्बई, युवाध्यक्ष–श्री अशोकजी समर्थमलजी बोरा–अहमदनगर।

महिला अध्यक्ष : डॉ. विद्यु त जैन–गाजियाबाद ।

जोधपुर—श्री बैद मेहता परिवार संगठन के सभी महानुभावों का परिचय उपलब्ध कराने की दृष्टि से बैद मेहता निर्देशिका (Directory) का प्रकाशन किया जा रहा है। उसमें सभी बैद मुथा बन्धु निम्नानुसार विवरण शीघ्र भिजवायें :—

(१) अपना नाम, (२) पिता का नाम, (३) आयु, (४) शैक्षणिक योग्यता, (५) व्यवसाय, (६) निवास का पता, फोन नम्बर सहित।

सम्पर्क सूत्र—श्री वैद मेहता परिवार संगठन, जोधपुर
—C/o श्री भीकमचन्द वैद मेहता, लाम्बिया हाउस की गली में
मकराणा मौहल्ला, जोधपुर–३४२ ००२ (राज.)

कलकत्ता—श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा के चुनाव में अध्यक्ष, श्री रिखबदासजी भंसाली, उपाध्यक्ष, श्री भंवरलालजी कर्णावट, मन्त्री, श्री रिधकरणजी बोथरा, सह-मन्त्री, श्री कंवरलालजी मालू, श्री सुभाषजी बच्छावत, कोषाध्यक्ष, श्री भंवरलालजी दस्सानी व ट्रस्टी, श्री कन्हैयालालजी मालू, श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया, श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री भंवरलालजी बैद चुने गये।

मेड़तासिटी—स्थानकवासी जैन श्रावक संघ के चुनाव में श्री बुधराजजी जामड़, अध्यक्ष, श्री पारसमलजी चौपड़ा, उपाध्यक्ष, श्री लुणकरणजी कोठारी, मंत्री व श्री गौतमचन्दजी कोठारी, कोषाध्यक्ष चुने गये।

सवाईमाधोपुर—श्री महावीर जैन शिक्षण संस्थान के चुनाव में अध्यक्ष, सुबाहु जैन, उपाध्यक्ष, श्री धर्मचन्द श्यामपुरा, मंत्री, श्री कुशल जैन गोटेवाला, सह-मंत्री, श्री मदनलाल करेला वाले, कोषाध्यक्ष, श्री बिमलचन्द बैंक वाले एवम् श्री बाबूलाल समीधी वाले, श्री मोहनलाल सर्राफ, श्री महेन्द्र जैन, रामपुरा, श्री रघुवीर जैन, श्री पारसचन्द बोहरा, श्री त्रिलोकचन्द मास्टर सदस्य चुने गये। सहवरण हेतु दो सदस्य श्री रघुनाथदासजी जैन व श्री चौथमलजी बैंक वाले को पूर्व की भाँति क्रमशः परामर्शदाता एवं वित्त नियन्त्रक का पद भार सौंपा गया।

सिकन्दराबाद—विश्व जैन परिषद् के अध्यक्ष, श्री० मुणोत हस्तीमलजी जैन के नेतृत्व में समग्र जैन समाज के एकीकरण व जागरण की दिशा में अठारह दिवसीय एक अभूतपूर्व अभियान का संचालन किया गया। अपनी-अपनी साम्प्रदायिक मान्यताओं को रखते हुए जैन धार्मिक पर्वों को विशेष कर

महावीर जयन्ती, पर्युषण के बाद सामूहिक क्षमापना दिवस एक साथ मिलकर मनाने, युवकों व बालकों में धार्मिक संस्कार जगाने, समाज सेवा तथा शिक्षा की आवश्यकता पर बल देने हेतु एक अभियान ११ जनवरी, १९९२ से २८ जनवरी, १९९२ तक चलाया गया। इससे महाराष्ट्र व राजस्थान के कई नगरों व गाँवों में एकता व संगठन की लहर व्याप गई और हर जगह अभियान के लक्ष्य का हार्दिक स्वागत किया गया।

शोक-श्रद्धांजलि

जयपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक, प्रमुख समाज सेवी एवं सुप्रसिद्ध रत्न व्यवसायी श्री खेलशंकर दुर्लभजी का ८१ वर्ष की आयु में १३ फरवरी को निधन हो गया। आप मूलतः मोरबी (गुजरात) के निवासी थे। पर राजस्थान के जनजीवन में रस-बस गये। आपकी एक फर्म मैसर्स के. एस. दुर्लभजी और दूसरी फर्म आर. वाई. दुर्लभजी पन्ना, व्यवसाय के क्षेत्र में विश्व प्रसिद्ध हैं। जवाहरात व्यवसाय और उद्योग के विकास के लिए आपके विशिष्ट योगदान के फलस्वरूप भारत सरकार ने १९७१ में आपको 'पद्मश्री' के अलंकरण से सम्मानित किया।
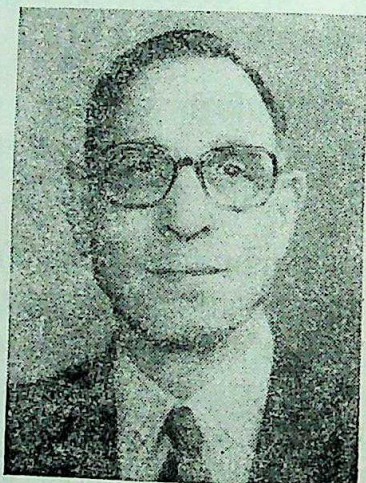
खेलू भाई के नाम से प्रसिद्ध आपका व्यक्तित्व धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं चिकित्सा क्षेत्र में भी सदैव स्मरण किया जाता रहेगा। आप कई संस्थाओं से जुड़े रहे। व्यवसाय के क्षेत्र में भारत सरकार की व्यापार सलाहकार परिषद् के तथा धार्मिक क्षेत्र में श्री सोमनाथ मंदिर सलाहकार एवं विकास समिति के आप सदस्य रहे। राजस्थान चैम्बर ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज, ज्वैलर्स एसोसियेशन, गुजराती समाज, जयपुर चैम्बर, स्थानकवासी जैन श्रावक संघ आदि के आप अध्यक्ष रहे।

संतोकबा दुर्लभजी ट्रस्ट के तहत आपने जयपुर में आधुनिक चिकित्सा पद्धति के साधनों से सुसज्जित संतोकबा दुर्लभजी अस्पताल का शुभारम्भ

किया। राजगृही (बिहार) में उपाध्याय श्री अमर मुनिजी की प्रेरणा से स्थापित वीरायतन के आप वर्षों तक अध्यक्ष रहे। आपके निधन से निश्चिय ही एक बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी समाज सेवी एवं रत्न व्यवसायी की अपूरणीय क्षति हुई है।

औरंगाबाद—प्रसिद्ध उद्योगपति एवं प्रमुख समाजसेवी श्री संचालालजी बाफना का ७३ वर्ष की आयु में १० जनवरी को असामयिक निधन हो गया। आप अपनी उद्यमशीलता, व्यवहार कुशलता, कर्तव्यपरायणता, उदारता आदि के लिए प्रसिद्ध थे। समाजसेवा के विभिन्न क्षेत्रों में आपने कई महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित किये। दृष्टि-विहीनों के लिए धुलिया में आपने पाठशाला स्थापित की। औरंगाबाद में स्वर्गीय तारामती बाफना ब्लाइण्ड वेलफैयर एण्ड रिसर्च सेन्टर स्थापित किया जहाँ बहुत बड़ी संख्या में नेत्र विहीन बालक-बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त करते हैं। 'संचालाल बाफना फाउण्डेशन ट्रस्ट की ओर से इनके रहन-सहन, भोजन-शिक्षण आदि की निःशुल्क व्यवस्था की जाती है। अपने जन्म स्थान फागना में आपने-अपने पिता श्री छगनमलजी की स्मृति में एक शिक्षण संस्थान की स्थापना की जहाँ प्राइमरी से लेकर महाविद्यालय स्तर तक शिक्षण दिया जाता है।

श्री बाफनाजी कई धार्मिक, सामाजिक, व्यावसायिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं के अध्यक्ष, मंत्री और कोषाध्यक्ष रहे। इनमें प्रमुख हैं—धुलिया की म्युनिसिपल कौंसिल, रेडक्रॉस सोसायटी, कोआपरेटिव बैंक, जैन ओसवाल बोर्डिंग, फतेहचन्द शिक्षा समिति चिंचवड़, पूना, ओसवाल मित्र मण्डल, बम्बई, भारत जैन महामण्डल, बम्बई आदि। अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेन्स के आप वर्षों तक अध्यक्ष रहे। आपकी अध्यक्षता में पूना का श्रमण सम्मेलन एवं जैन कॉन्फ्रेन्स का अमृत महोत्सव, इन्दौर में सम्पन्न हुआ। साहित्य और संस्कृति के प्रति आपका विशेष प्रेम था। विद्वानों के प्रति आपके मन में स्नेह और आदर का भाव था। अ. भा. जैन विद्वत् परिषद के आप आधार स्तम्भ सदस्य थे। आप अपने पीछे

भरापूरा परिवार छोड़ गये हैं। आपके सुपुत्र श्री प्रकाशजी बाफना ने आपकी पुण्य स्मृति में धर्मार्थ कार्यों के लिए विशेष अनुदान की घोषणा की है। आपके निधन से एक प्रमुख उद्योगपति एवं निर्भीक समाजसेवी की कमी हुई है।

धनोप—यहाँ के प्रतिष्ठित वयोवृद्ध श्रावक श्री कनकमलजी लोढ़ा का ८८ वर्ष की आयु में २५ जनवरी को निधन हो गया। आप समाज-सेवी, मिलनसार, धर्मप्रेमी व सरल आत्मा थे। आप जैन दर्शन के प्रमुख विद्वान् श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा के चाचा थे।

अहमदनगर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री पन्नालालजी बोहरा का १७ जनवरी को असामयिक निधन हो गया। आप अनन्य गुरुभक्त एवं सेवाभावी थे। सामायिक, स्वाध्याय का आपका नियमित क्रम चलता था। मरणोपरान्त आपके नेत्रों का दान करने से एक नेत्र से तीन वर्ष की बच्ची को और दूसरे नेत्र से ३५ वर्षीय महिला को ज्योति मिली।

जोधपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री रतनचन्दजी भण्डारी सुपुत्र स्व. श्री परमातमाचन्दजी भण्डारी का २७ जनवरी को असामयिक निधन हो गया। आप अनन्य गुरु भक्त व धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे।

जोधपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री गणपतचन्दजी भण्डारी सुपुत्र स्व. श्री सुकुनचन्दजी भण्डारी का २८ जनवरी को असामयिक निधन हो गया। आपका सामायिक, स्वाध्याय का नियमित क्रम चलता था। आप धर्मनिष्ठ सरल आत्मा थे।

जोधपुर—यहाँ की धर्मनिष्ठ श्राविका श्रीमती सिरेकंवर बाई भण्डारी का आठ दिवसीय संथारापूर्वक ६ फरवरी को पण्डित मरण हो गया। आप के कई व्रत-प्रत्याख्यान थे और नियमित धर्म आराधना चलती थी। आप धर्म प्रेमी सुश्रावक श्री दौलतसिंहजी, मोहनसिंहजी, गुलाबसिंहजी एवं गणपतसिंहजी भण्डारी की मातुश्री थीं।

तिरुवानपीयूर-मद्रास—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री जवरीलाल जी बाघमार रजलानी वाले के होनहार युवा पुत्र श्री महेशकुमार का ३० वर्ष की अल्प आयु में २५ दिसम्बर को आकस्मिक निधन हो गया।

मेड़तासिटी—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री जौहरीलालजी ओस्तवाल का १२ फरवरी को आकस्मिक निधन हो गया। आप धर्म-प्रेमी एवं कर्मठ समाजसेवी थे। आपने कई जन-उपयोगी भवनों का

निर्माण करवाया। होम्योपैथिक अस्पताल का शुभारम्भ भी आपके द्वारा हुआ। साधु-सन्तों की सेवा में आप सदैव आगे रहते थे। श्री जयमल जैन छात्रावास के आप उपाध्यक्ष थे।

पीपाड़ शहर—यहाँ की धर्मनिष्ठ श्राविका श्रीमती गुटिया बाई धर्मपत्नी स्व. श्री मिश्रीमलजी मूथा का १ फरवरी को ८१ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आचार्य श्री के प्रति आपकी अटूट श्रद्धा थी एवं आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करती थीं। अन्तिम समय में आपने पं. रत्न श्री ज्ञान मुनिजी से प्रत्याख्यान एवं मंगलिक ली थी। आप श्री ज्ञानचन्दजी प्रेमचन्दजी मूथा की मातुश्री थीं।

केसुन्दा—यहाँ धर्मनिष्ठ श्राविका श्रीमती भूलीबाई धर्मपत्नी स्व. श्री कस्तूरचन्दजी दक का १० फरवरी को असामयिक निधन हो गया।

जयपुर—वरिष्ठ पत्रकार श्री कानमलजी ढढ्ढा का ७० वर्ष की आयु में २१ फरवरी को असामयिक निधन हो गया। आपने आजादी के पूर्व १९४५ में पत्रकारिता में प्रवेश किया। उस समय आप जयपुर के प्रमुख पत्र साप्ताहिक 'लोकवाणी' से जुड़े और बाद में 'लोकवाणी' दैनिक के सम्पादकीय विभाग में काम करने लगे। जयपुर के कई वरिष्ठ पत्रकारों को आपने पत्रकार कर्म से दीक्षित किया। आपने 'साप्ताहिक न्यूजवीक' का पहले अंग्रेजी में और बाद में हिन्दी में प्रकाशन किया। १९६३ में आप 'राजस्थान पत्रिका' से जुड़े और १९८६ में यहाँ से सेवा-निवृत्त हुए। 'पत्रिका' में आपने मुख्यतः सम्पादकीय लेखन का काम किया। कई वर्षों तक आपने पत्रिका में 'नीति-अनीति' स्तम्भ के तहत देश के राजनीतिक घटनाक्रम का विश्लेषण प्रस्तुत किया। आप अपने पीछे वयोवृद्ध माँ, पत्नी, एक पुत्र व एक पुत्री छोड़ गये हैं। आपके पुत्र श्री अजय ढढ्ढा 'राजस्थान पत्रिका' में वरिष्ठ संवाददाता हैं।

जयपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री नौरतनमलजी बोगावत का २१ फरवरी को असामयिक निधन हो गया। आप श्री प्रेमराजजी बोगावत के भ्राता थे।

बम्बई—जयभगवान एक्युप्रेशर सर्विस (इन्टरनेशनल) के प्रमुख आचार्य श्री चिमनभाई दवे का ५ जनवरी को निधन हो गया। आप निःस्वार्थ समाजसेवी, करुणा हृदय एवं अहिंसक-चिकित्सा पद्धति के विशेषज्ञ एवं प्रसारक चिकित्सक थे।

जोधपुर—जैन समाज के जानेमाने सामाजिक कार्यकर्ता श्री माणकचन्दजी संचेती की मातुश्री श्रीमती किशोरकंवर संचेती धर्मपत्नी स्व. श्री खींवराजजी संचेती का १२ फरवरी, १९९२ को संथारापूर्वक निधन हो गया। यह संथारा घोर तपस्वी पंजाबी गुरुदेव श्री सहजमुनिजी एवं राममुनिजी ने करवाया। जोधपुर शहर में विराजित ज्ञानगच्छ के आगमज्ञाता श्री प्रकाशमुनिजी, रत्नवंश के उपाध्याय पं. रत्न श्री मानमुनि जी म. सा. तथा अन्य जैन साधु-साध्वियों ने श्रीमती किशोरकंवर को धर्मोपदेश दिये। ७५ वर्षीय श्रीमती किशोरकंवर आजीवन धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में रुचि लेती रहीं।

जयपुर—प्रतिष्ठित श्रावक श्री गंगामलजी लोढ़ा के सुपुत्र श्री दशरथमलजी लोढ़ा का २८ फरवरी को ५५ वर्ष की आयु में दिल्ली में आकस्मिक निधन हो गया। आप नाइजिरिया में प्रशासनिक अधिकारी थे। अ. भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के महामंत्री श्री जगदीशमलजी कुंभट के आप बहनोई थे।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ. भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोकविह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं। —सम्पादक

दो खयाल

□ श्री शिवनाथ

(१) सोच रहा हूँ

किसने आज आरोपित की है
नफ़रत भला, धरा कुक्षी में ?
किसने शांत-महासागर के,
जल में इतना ज़हर मिलाया ?
कौन है, जिसने धूमिल की है,
धूल उड़ाकर, नीलिमा ?
सोच रहा हूँ, मानव को,
इससे 'अच्छा' कोई काम नहीं था ?

(२) अस्तित्व

आप जो कहते हैं
बिलकुल ठीक है,
झूठ तो वह भी नहीं था
हमें जो मित्रवर तुम्हें कहते रहे,
आओ ! अब भी वक्त है
कि मान लें कड़वी सच्चाई
अपने अस्तित्व जरा पहचान लें।

—३२७, फेज-६, माहोली-१६० ०५३
(चंडीगढ़)

Shri Bhudhar Kushal Dharam Bandhu Kalyan Kosh, Jaipur

AUDITORS' REPORT

We have examined the Balance Sheet of SHRI BHUDHAR KUSHAL DHARAM BANDHU KALYAN KOSH, JAIPUR as at 31st March, 1991 and the Income and Expenditure Account for the year ended on that date which are in agreement with the books of account maintained by the said Trust.

We have obtained all the information and explanations which to the best of our knowledge and belief were necessary for the purpose of the audit. In our opinion, proper books of account have been kept by the aforesaid trust as far as appears from our examination of the books.

In our opinion and to the best of our information and according to explanations given to us, the said accounts give a true and fair view :—

(i) In the case of the Balance Sheet of the state of affairs of the above named samiti as on 31st March, 1991 and

(ii) In the case of the Income & Expenditure Account of the excess of income over expenditure for its accounting year ended on 31st March 1991.

The Prescribed particulars are annexed hereto.

For N. C. DHADDA & CO.
(S. K. JAIN)
Partner
Chartered Accountants

Place : JAIPUR
Dated : January 23rd, 1992

Annexure to Audit Report of even date for the Year ended on 31.3.1991

Statement of Particulars.

1. **Application of Income for Charitable or Religious Purposes.**
Amount of income of the previous year applied to Charitable or religious purposes in India during that year. Rs. 2,87,924.46p.
2 to 8, II, and III

For N. C. DHADDA & CO.
(S. K. JAIN)
Partner
Chartered Accountants

Place : Jaipur.
Dated Jan. 23rd, 1992

Shri Bhudar Kushal Dharam Bandhu

Income and Expenditure Account for

Previous year Amount (Rs.)	Expenditure	Current year Amount (Rs.)
2,63,196.00	To Cash grants to poor, grants for Medical & Education	2,74,508.00
8,688.20	To Postage Expenses	11,411.20
10.00	To Bank Commission	2.00
—	To Stationery	49.50
529.40	To Miscellaneous Expenses	1,503.75
0.40	To Differences in Trial Balance	10.01
—	To T.D.S. Written off	440.00
9,583.02	To Excess of Income over Expenditure	3,856.60
2,82,007.02		2,91,781.06

Balance Sheet as on

Previous year Amount (Rs.)	Liabilities		Current year Amount (Rs.)
13,78,292.33	**General Fund :**		
	As per last Balance Sheet	13,78,292.33	
	Add : Donation received during the year	4,67,511.00	
	Excess of Income over Expenditure for the year	3,856.60	18,49,659.93
13,78,292.33			18,49,659.93

JAIPUR

Dated : 23 Jan., 1998

Kalyan Kosh, Jaipur

the year ended on 31st March, 1991

Previous year Amount (Rs.)	Income	Current year Amount (Rs.)
1,05,351.00	By Donation	1,14,545.54
1,76,656.02	By Interest on Deposits	1,77,235.52
2,82,007.02		2,91,781.06

31st March, 1991

Previous year Amount (Rs.)	Assets		Current year Amount (Rs.)
	Deposits : (Including accrued interest)		
1,50,000.00	Cement Corporation of India Ltd.	1,50,000.00	
10,50,000.00	Steel Authority of India Ltd.	13,00,718.00	
1,03,394.01	Indian Telephone Industries Ltd	1,00,000.00	15,50,718.00
6,434.00	Income-tax Deducted at sources		3,301.00
46,363.91	Balance with New Bank of India in S/B A/c		2,74,724.97
22,100.41	Cash in hand		20,915.96
13,78,292.33			18,49,659.93

AUDITOR'S REPORT

As per our report of even date

For N. C. DHADDA & CO.

(S. K JAIN)

Partner

Chartered Accountants
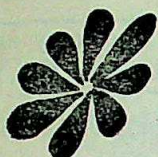
साहित्य-समीक्षा

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

(१) **जैन महाभारत (१) प्रीत मेरी कभी न छूटे**—श्री भगवती मुनि 'निर्मल', प्र० श्री वर्द्धमान जैन ज्ञान पीठ, तिरपाल (उदयपुर), पृ० ३२०, मू० ३५.०० ।

श्री भगवती मुनि 'निर्मल' ने जैन मान्यता-अनुसार आधुनिक भाव भाषा-शैली में तीन खण्डों में महाभारत का लेखन किया है। इस प्रथम खण्ड में बाइसवें तीर्थङ्कर भगवान अरिष्टनेमि के पूर्व भव, राजुल का उनके साथ पूर्व भव का सम्बन्ध, उनके जन्म, विवाह की तैयारी, पशुओं पर दयाकर तोरण से वापस लौटना, दीक्षित होना, तपस्या करना व निर्वाण प्राप्त करना आदि का इतिहास वर्णित है। यह सारा वृत्त भगवान अरिष्टनेमि के गणधर वरदत्त के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इसमें भगवान अरिष्टनेमि के समकालीन राजवंशों, कौरव-पाण्डव, श्रीकृष्ण, बलदेव, द्रौपदी आदि का वर्णन है। इसमें कई ऐसे मौलिक प्रसंग हैं जिनका उल्लेख वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत में नहीं है। इस खण्ड में अरिष्टनेमि और राजुल के पूर्व भवों की प्रीति को अमर प्रीति के रूप में परिणत होते दिखाया गया है। अतः इसका शीर्षक सार्थक है।

(२) **श्री जैन रामायण**—प्रवर्तक श्री सूर्य मुनिजी, प्र० पूज्य श्री नन्दाचार्य साहित्य समिति, मेघ नगर (झाबुआ), पृ० २८०, मू० १५.०० ।

जैन रामायण की अपनी विशिष्ट परम्परा रही है। प्राकृत में विमलसूरि और अपभ्रंश में स्वयंभू रचित 'पउम चरिय' प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। जैन-परम्परा में राम आठवें बलदेव माने गये हैं और 'पद्म' नाम से अभिहित हैं। लोक भाषाओं में जैन कवियों ने राम के चरित्र को अपनाकर अनेक काव्य ग्रन्थों की रचना की है। इसी परम्परा में यह ग्रन्थ है। विभिन्न राग-रागिनियों में चार भागों में यह ग्रन्थ रचित है। यह रामायण अत्यन्त लोकप्रिय रही है। प्रस्तुत प्रकाशन तीसरा संस्करण है। इसमें राम-सीता के पावन चरित्र का जो आख्यान किया गया है, वह बड़ा प्रेरक है।

(३) **प्राकृत एवं जैन विद्या शोध-संदर्भ**:—डॉ० कपूरचन्द जैन, प्र० श्री कैलाशचन्द जैन स्मृति न्यास, खतौली–२५१२०१, पृ० १६४, मू० ६०.०० ।

विगत वर्षों में देश-विदेश के विश्वविद्यालयों में प्राकृत एवं जैन विद्या की विभिन्न शाखाओं में शोध कार्य तेजी से आगे बढ़ा है पर उसकी जानकारी समग्रतः उपलब्ध नहीं थी। इस कृति में डॉ० जैन ने बड़े श्रम एवं निष्ठापूर्वक भारतीय विश्वविद्यालयों के विभिन्न विभागों में सम्पन्न लगभग ६०० एवं विदेशों

में सम्पन्न ४५ शोध प्रबन्धों की उपयोगी संदर्भों के साथ विषयवार सूची प्रस्तुत की है। इस क्षेत्र में शोध कराने वाले निर्देशकों एवं सहयोगी शोध संस्थाओं के नाम-पते भी दिये हैं। यही नहीं, इस दिशा में सम्भावित शोध विषयों की एक तालिका भी प्रस्तुत की है। विद्वानों एवं शोधकर्ताओं के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी एवं मार्गदर्शक है।

(४) **जयोदय महाकाव्य (उत्तरांश)**:—महाकवि भूरामल, हिन्दी रूपान्तरण एवं सम्पादन डॉ० पन्नालाल साहित्याचार्य, प्र० ज्ञानोदय प्रकाशन, पिसनहारी, जबलपुर-३, पृ० ७००, मू० ८०.०० ।

जयोदय महाकाव्य का यह उत्तरांश है। इसमें चौदह से लेकर अट्ठाईस सर्ग मूल संस्कृत, उसकी संस्कृत टीका एवं हिन्दी रूपान्तरण के साथ संकलित हैं। इसमें प्रथम तीर्थङ्कर ऋषभदेव के पुत्र चक्रवर्ती भरत के प्रधान सेनापति जयकुमार और उनकी पत्नी सुलोचना की कथा वर्णित है। सुलोचना के पिता राजा अकम्पन ने सुलोचना के विवाह के लिए **स्वयंवर** का आयोजन किया। जिसमें भरत चक्रवर्ती के पुत्र अर्ककीर्ति आदि अनेक राजपुत्र, विद्याधर आदि सम्मिलित हुए। सुलोचना ने जयकुमार का वरण किया। इससे अपमानित अनुभव कर अर्ककीर्ति ने जयकुमार से युद्ध किया पर विजय जयकुमार की हुई। महाराजा अकम्पन ने अपनी छोटी पुत्री रत्नमाला का विवाह अर्ककीर्ति के साथ कर विद्वेष को शांत किया। महाकवि भूरामल (आचार्य ज्ञान सागर) ने इस कथा को आधार बनाकर इस महाकाव्य की रचना की है जो भावपक्ष एवं कला पक्ष की दृष्टि से उच्चकोटि का बन पड़ा है। इसका पूर्वांश पहले प्रकाशित हो चुका है। यह उत्तरांश है जिसमें मूल के साथ स्वयं कवि द्वारा की गई स्वोपज्ञ संस्कृत टीका और डॉ० पन्नालालजी द्वारा किया गया हिन्दी रूपान्तरण दिया गया है। संस्कृत महाकाव्यों की परम्परा में इस महाकाव्य का विशेष गौरव और महत्त्व है।

(५) **मुनिद्वय जीवन-दर्पण**:—श्री उदय मुनि, सं० अभय भटेवरा, प्र० श्री दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय, महावीर बाजार, ब्यावर, पृ० १६०, मू० ज्ञानवर्द्धन।

इसमें उग्रविहारी पं० रत्न श्री गणेशमुनिजी एवं घोर तपस्वी श्री पन्नालालजी म. सा. के संयमी जीवन की झाँकी और व्यक्तित्व को उजागर करने वाले श्रद्धा-सुमन गद्य और पद्य में संकलित किये गये हैं जो बड़े प्रेरणादायी हैं।

(६) **आनन्द के आलोक में**:—ताराचन्द लोढ़ा 'आनन्द', प्र० श्री जैन श्री संघ, बालाघाट, पृ० ११६, मू० चिन्तन।

इसमें आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी म० सा० के जीवन एवं संयम-साधना को ४०१ छन्दों में काव्यबद्ध किया गया है। भाषा सहज, सरल और प्रवाहमयी है।

साभार प्राप्ति स्वीकार

'जिनवाणी' की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

३०७६ रु. २५१/– स्थानकवासी जैन नवयुवक मण्डल, नवसारी

३०७७ रु. ३५०/– श्री भारतप्रकाश दीपक कुमार ओस्तवाल, मेड़ता सिटी

३०७८ रु. ५००/– श्री भैरूलाल जी अशोक कुमार जी बाफणा, बालोतरा

'जिनवाणी' को सहायतार्थ भेंट

५०१/– स्थानकवासी जैन नवयुवक मण्डल, नवसारी,
आचार्य गुरुदेव की जन्म जयन्ती के उपलक्ष में भेंट

५००/– श्री भारतप्रकाश जी ओस्तवाल, मेड़ता सिटी
पूज्य पिताजी श्री जौहरीलाल जी ओस्तवाल की पुण्य स्मृति में भेंट

२००/– श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, मेड़ता सिटी
पर्युषण पर्व के उपलक्ष में भेंट

२००/– श्री प्रकाशचन्द संचालाल जी बाफना, औरंगाबाद
पूज्य पिताजी श्री संचालाल जी बाफना की पुण्य स्मृति में भेंट

१०१/– श्री नेमीचन्द जी ढड्ढा, सी. ए., जयपुर
सुपुत्र मनीष ढड्ढा, के. सी. ए. (इन्टर) में उत्तीर्ण होने के उपलक्ष में भेंट

१०१/– श्री धनराजजी पुत्र श्री केवलचन्द जी चौपड़ा, बालोतरा
श्री हीराचन्दजी म. सा. के आचार्य पद ग्रहण के पश्चात् प्रथम बार बालोतरा में शुभागमन के उपलक्ष में सप्रेम भेंट

१०१/– श्री सुगनचन्द जी भण्डारी, जोधपुर
बहनोई श्री खेतमलजी लूणिया की पुण्य स्मृति में भेंट

१०१/– श्री दिलीपजी भण्डारी, रत्नागिरी
पूज्य दादीजी सुवाबाई जी की द्वितीय पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/– श्री भैरूलालजी अशोक कुमार जी बाफना, बालोतरा
आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा. का ८२वां जन्म दिवस बालोतरा में मनाने के उपलक्ष में सप्रेम भेंट

१००/– श्रीमती स्नेहलता तलेरा, मन्दसौर
पौत्र रत्न हुआ, इस खुशी में सप्रेम भेंट

१००/– श्री सोहनलाल जी हुण्डीवाल, मद्रास
आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. की जन्म जयन्ती के उपलक्ष में भेंट

५१/– श्री शांतिलाल जी श्रीश्रीमाल, भवानीमण्डी
सुपुत्री अनिता का विवाह दिनांक २३-१-९२ को सम्पन्न होने के उपलक्ष में भेंट

५१/– श्री जवरीलाल जी पुत्र श्री चन्दनमलजी ढेलडीया, बालोतरा
श्री हीराचन्दजी म. सा. के आचार्य पद ग्रहण करने के पश्चात् प्रथम बार बालोतरा में शुभागमन के उपलक्ष में भेंट

५१/– श्री राणमलजी लूपतराज जी सालेसा, बालोतरा
आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. का ८२वां जन्म दिवस बालोतरा में मनाने के उपलक्ष में भेंट

५१/– श्री कमलकिशोरजी पीयूषकुमार जी कटारिया, रायपुर
आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के ७२वें दीक्षा दिवस के उपलक्ष में सप्रेम भेंट

२१/– श्री माणकचन्द जी बोहरा, पचपहाड़
सुपौत्र कमलेशकुमार का सौ. कां. कल्पना के संग विवाह होनें के उपलक्ष में भेंट

११/– श्री मीठालाल जी बोहरा, मण्डवा
सुपुत्र जगदीश के अठाई तप के उपलक्ष में भेंट

११/– श्री राजेशकुमार जी पोरवाल, भवानीमण्डी
आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. की ८२वीं जन्म जयन्ती पर सप्रेम भेंट

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल को भेंट

५००१/– श्री गणेशमलजी भण्डारी, बैंगलोर
सुपुत्र चि. गौतमचन्द के विवाह उपलक्ष में भेंट

१०१/– श्री नेमीचन्दजी ढड्ढा, जयपुर
सुपुत्र मनीष ढड्ढा के सी. ए. (इन्टर) में उत्तीर्ण होने के उपलक्ष में भेंट

१००/– श्री सम्पतराज जी, चम्पालाल जी, धरमीचन्द जी, शान्तिलाल जी खाबिया, मैसूर
सौ. कां. आशा कुमारी के विवाह के उपलक्ष में भेंट

साहित्य प्रकाशन के आजीवन सदस्य ५०१ रु०

४२१ श्री सम्पतराज जी बोथरा, जोधपुर

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

"जिनवाणी" का विवरण

(नियम संख्या 8)

1. प्रकाशन स्थल	:	जयपुर
2. प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
3. मुद्रक का नाम	:	फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
4. राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	जौहरी बाजार, जयपुर–3
5. प्रकाशक का नाम	:	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	बापू बाजार, जयपुर–3
6. सम्पादक का नाम	:	डॉ. नरेन्द्र भानावत, डॉ. शांता भानावत
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	सी-235-ए, दयानन्द मार्ग
	:	तिलक नगर, जयपुर–4
7. स्वामित्व	:	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल (पारमार्थिक संस्थान) बापू बाजार, जयपुर–3

मैं चैतन्यमल ढढ्ढा, मन्त्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया विवरण सही है।

दिनांक : 1-3-92

चैतन्य ढढ्ढा
प्रकाशक

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूपी नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं।

उत्तराध्ययन २३/७३

'जिनवाणी' का ५०वें वर्ष में प्रवेश

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

यह हमारे लिए परम सन्तोष और गौरव की बात है कि इस अंक के साथ 'जिनवाणी' का ५०वें वर्ष में प्रवेश हो रहा है। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० की प्रेरणा से जनवरी, १९४३ में श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़ से श्री फूलचन्द जैन 'सारंग' के सम्पादन में इसका प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। उस समय विश्व में द्वितीय महायुद्ध का संकट चल रहा था और इधर भारत में आजादी के लिए राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के नेतृत्व में स्वन्तत्रता संग्राम लड़ा जा रहा था। हिंसा, आतंक और दमनकारी वातावरण से मानवता को उबारते हुए अहिंसा, प्रेम, समता और शान्ति का कल्याणकारी सन्देश देने के उद्देश्य से 'जिनवाणी' का प्रकटीकरण हुआ।

अर्द्धशती की अपनी जीवन-यात्रा में जिनवाणी पत्रिका कई उतार-चढ़ावों से गुजरी पर सतत चलती रही। भोपालगढ़ से सम्पादन-कार्य होते हुए भी इसका प्रकाशन जोधपुर से होता रहा। श्री विजयमलजी कुम्भट इसकी व्यवस्था देखते थे। १९५४ में जोधपुर से इसका कार्यालय जयपुर स्थानान्तरित कर दिया गया और श्री भंवरलालजी बोथरा इसकी प्रकाशन व्यवस्था देखते रहे। १९६७ में श्री नथमलजी हीरावत इससे जुड़े और इसकी साज-सज्जा में परिवर्तन आया। तब से यह पत्रिका फ्रैण्ड्स प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स द्वारा मुद्रित हो रही है और इसके स्तर में निरन्तर निखार आता रहा है।

आज पत्रकारिता के क्षेत्र में जैन पत्रकारिता की अपनी विशिष्ट पहचान है। यह पत्रकारिता गैर व्यावसायिक रूप में सामाजिक जागरण, नैतिक उन्नयन और सांस्कृतिक आन्दोलन से जुड़ी हुई है। 'जिनवाणी' जैन धर्म, दर्शन, इतिहास और संस्कृति की पत्रिका के रूप में विवेक, ईमानदारी, प्रामाणिकता और सामंजस्य के साथ अपना दायित्व निभाती रही है। विगत ४९ वर्षों में 'जिनवाणी' ने जैन धर्म-दर्शन के मूल तत्त्वों को सहज सरल भाषा में पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया है, जैन स्रोतों के आधार पर इतिहास को कई नये तथ्य और नये आयाम दिये हैं, साहित्य के क्षेत्र में कई अज्ञात कवियों, लेखकों और उनकी कृतियों को उजागर किया है, समाज में व्याप्त मिथ्या मान्यताओं, अन्धविश्वासों और कुरीतियों पर चोट की है, सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप की आराधना में प्रेरणा देने वाले विचारों और तथ्यों को प्रकाशित किया है।

समय-समय पर 'जिनवाणी' पत्रिका में कई स्तम्भ प्रारम्भ किये जाते रहे हैं। महिलाओं, बच्चों और युवकों के लिए विशेष सामग्री समाहित की जाती रही है। प्रामाणिक जीवन जीते हुए समाज-सेवा में अपना जीवन खपा देने वाले व्यक्तियों को भी प्रकाश में लाया गया है। वर्तमान में 'बालकथामृत' और 'प्रश्न मंच कार्यक्रम' दो विशेष स्तम्भ विगत कई वर्षों से चल रहे हैं। 'साहित्य-समीक्षा', 'समाज-दर्शन', 'शोक-श्रद्धांजलि' और 'साभार प्राप्ति स्वीकार' 'जिनवाणी' के नियमित स्तम्भ हैं। इनसे साहित्य और समाज की अद्यतन गतिविधियों की सूचना मिलती रहती है। 'अपनी बात' के रूप में सम्पादकीय विचार प्रायः दिये जाते रहे हैं। आचार्य श्री एवं अन्य संत-सतियों के प्रवचन और उद्बोधन भी नियमित प्रकाशित किये जाते हैं जो पाठकों को आध्यात्मिक स्फुरणा देने में प्रेरक और मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं।

'जिनवाणी' की प्रसार-संख्या वर्तमान में लगभग ४३०० है। देश के प्रमुख विश्वविद्यालयों के केन्द्रीय पुस्तकालयों, प्रमुख शोध-संस्थानों एवं सूचना केन्द्रों में यह पत्रिका प्रायः निःशुल्क भेजी जाती है। शोध-संदर्भ के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है। कई शोध-प्रबन्धों में 'जिनवाणी' की सामग्री उद्धृत होती रहती है। विदेशों में भी इसके सदस्य हैं अतः प्रायः एक लेख अंग्रेजी भाषा में भी देने का प्रयत्न रहता है। प्रेरक प्रसंग, बोधकथा, सूक्तियों और कविताओं का समावेश भी प्रायः किया जाता है।

नये लेखकों को प्रोत्साहित करने का लक्ष्य बराबर बना रहता है। 'जिनवाणी' पत्रिका को ही यह श्रेय है कि उसने लेखकों को मानदेय देने की व्यवस्था आज से २५-३० वर्ष पूर्व की। विशेषांकों की परम्परा में भी 'जिन-वाणी' ने एक नई दिशा दी और किसी एक विषय पर विभिन्न दृष्टियों से विचार सामग्री प्रस्तुत करते हुए वृहत् काय विशेषांक प्रकाशित किये। 'ध्यान', 'जैन संस्कृति और राजस्थान', 'कर्म सिद्धान्त', 'अपरिग्रह' आदि विशेषांक बड़े चर्चित रहे।

आज 'जिनवाणी' का जो स्वरूप है, उसे प्रतिष्ठित करने में विद्वान् आचार्यों, मनीषी संतों, लेखकों, श्रीमंतों, दानदाताओं सदस्यों, पाठकों, व्यव-स्थापकों आदि का आधारभूत सहयोग रहा है। उन सबके प्रति आभार प्रकट करते हुए हम यह कामना करते हैं कि यह स्नेह, सहयोग और सद्भाव निरन्तर बना रहे और 'जिनवाणी' सदैव फलती-फूलती रहे।

एकनिष्ठा प्रभु प्रीति*

□ स्वर्गीय आचार्य श्री हस्ती

भक्त जब भगवान की प्रार्थना करता है तो अपने चित्त को, अपनी वृत्तियों को और अपने जीवन को प्रार्थ्य के प्रति समर्पित कर देता है। यह समर्पण का भाव एकनिष्ठा से उत्पन्न होता है। एकनिष्ठा का अर्थ है मेरा आराध्य ही सब कुछ है, वही मेरा सर्वस्व है, इस प्रकार की प्रगाढ़ आन्तरिक अनुभूति। इसी एकनिष्ठा अनुभूति की दशा में आचार्य मानतुंग के मुख से सहसा उद्गार निकल पड़ते हैं—

बुद्धस्तवमेव विबुधार्चित बुद्धिबोधात् ।
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रय शंकरत्वात् ।।

प्रभो ! तू ही बुद्ध है, अन्य नहीं। तेरे सिवाय किसी अन्य बुद्ध को मैं नहीं जानता। मैं इधर-उधर के बुद्धों की कल्पना नहीं करता। क्योंकि तू ही बोधमय है, देवताओं के द्वारा तेरे ही बोध की अर्चना की जाती है। देवगण तेरे ही ज्ञान का सम्मान करते हैं। तेरे ज्ञान के चमत्कार से समस्त सुरगण भी सुपरिचित हैं। अतः मेरे लिए तू ही बुद्ध है।

भगवन् ! तू ही 'शंकर' है। 'शं' का अर्थ है—कल्याण और 'कर' का अर्थ है—करने वाला। तू जगत् के जीवों का कल्याण करने वाला है, अतएव शंकर है। जिसकी जटा-जूट से गंगा का प्रवाह उद्गत होता है, जिसके गले में खोपड़ियों की माला हो, जो सांप को लपेटे हो और पार्वती जिसकी अर्धांगिनी हो, मैं ऐसे किसी शंकर को नहीं जानता। मैं तुझको ही शंकर स्वरूप से जानता हूं, क्योंकि तू लोक का कल्याण करने वाला और सुख उत्पन्न करने वाला है।

अब प्रस्तुत प्रसंग की बात आती है। आचार्य कहते हैं—प्रभो ! तू ही विधाता है—उत्पादक है, स्रष्टा है—धाताऽसि धीर ! शिवमार्गविधेर्विधानात्। दुनियां के लोग एक निराले ही विधाता की कल्पना करते हैं। वह विधाता इस सृष्टि का जनक है। उसने अपने हाथ की सफाई से एक अण्डा बना दिया।

*आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित।

अण्डा फटा तो उससे आकाश और पाताल बन गये । उनमें नाना प्रकार के जीव किलबिलाने लगे, आदि-आदि । मगर मैं ऐसे किसी तर्क विरुद्ध विधाता को नहीं मानता । सच्चा विधाता तू है, क्योंकि तूने मोक्ष मार्ग का विधान किया है । भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग का उपदेश दिया है । अतएव तू ही वास्तव में धाता-विधाता है ।

'नमोत्थुणं' के पाठ में आप 'आइगराणं' पढ़ते हैं । तो अरिहन्त भगवान् धर्म की आदि करते हैं, धर्म का विधान करते हैं, अतएव वे विधाता हैं ।

अन्त में आचार्य कहते हैं—व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ।

अर्थात्—इन सब विशेषताओं के कारण मैंने स्पष्ट समझ लिया कि तू ही 'पुरुषोत्तम' पुरुषों में उत्तम है । पुरुषोत्तम वासुदेव, विष्णु या कृष्ण माने जाते हैं । उनके नाम की संगति बिठलाते हुए स्तुतिकार कहते हैं -- जिस विराट् व्यक्तित्व में बुद्ध, शंकर और विधाता का समावेश, वही तू 'पुरुषोत्तम' कहला सकता है ।

इस प्रकार अरिहन्त भगवान को विधाता के रूप में समझाया गया । गहन चिन्तन करने वाले हमारे आचार्य ने कहा—तीर्थंकर शरीरधारी होने के कारण बोध देने वाले, ज्ञान देने वाले, शिव मार्ग का विधान करने वाले हैं । हमारे कल्याण में उनके तीनों योगों का उपयोग होता है । अतएव उनके सामने प्रार्थना इस रूप में की गई कि उनसे कुछ मिलता है । मगर यह व्यवहार नय की विचारधारा है । कर्तापन के दो रूप बतलाए जा चुके हैं । एक वह जिसमें कर्त्ता का सीधा योग प्रयुक्त नहीं होता, बल्कि जिससे परोक्ष रूप में कुछ लाभ मिलता है । साधारणतया प्रथम प्रकार के कर्तृत्व को लोग अनुभव करते हैं और स्वीकार करते हैं, मगर दूसरे प्रकार के परोक्ष कर्तृत्व का अनुभव नहीं करते या उसे कर्ता नहीं कहते । फिर भी उससे लाभ मिलने के कारण उनका सेवन जरूर करते हैं । इस तथ्य को समझने के लिए एक उदाहरण लीजिए ।

नीरोगता की प्राप्ति के लिए रोगी चिकित्सक की सेवा करता है और उसके दर पर पहुँचता है । साथ ही वायु सेवन के लिए भी जाता है और प्रकृति का भी सेवन करता है । वायु एवं प्रकृति के सेवन से रोगी को अवश्य कुछ लाभ होता है । स्वास्थ्य में कुछ तरक्की होती है । घूमने से प्रसन्नता का अनुभव होता है और शरीर में कुछ स्फूर्ति-सी मालूम होती है । परन्तु आप कभी यह नहीं कहते कि हवा ने हमें शक्ति प्रदान की है और निरोग कर दिया है । ऐसा न बोलने पर भी हवा का सेवन करते अवश्य हैं । अहसान तो डाक्टर साहब

का ही माना जाता है कि अमुक डाक्टर साहब ने मुझे पुनर्जीवन दिया ! फिर भी क्या वायु जीवनदान देने वाली नहीं है ? क्या सूर्य ने कुछ भी नहीं दिया है ?

इस समय सूर्य की जो सौम्य रश्मियाँ गिर रही हैं और मध्याह्न में जो प्रखर किरणें गिरने लगती हैं, उनमें क्या जीवन देने का स्वभाव नहीं है ? अवश्य उनमें यह स्वभाव विद्यमान है । हम जीवनदान दें, किसी को पोषण दें, इस प्रकार की भावना न होने पर भी किरणें जीवन देती हैं, पोषण देती हैं । उन किरणों का जो विशेष विधि से संग्रह करते हैं, वे रोग में लाभ उठा लेते हैं और जो संग्रह नहीं करते, कुछ लाभ नहीं उठाते । वे इतना भर समझते हैं कि सूर्य उगा और अस्त हो गया । लगभग ऐसा ही रूप है सिद्ध परमात्मा का ।

सिद्ध परमात्मा की स्तुति करना, उनका ध्यान करना और चिन्तन करना अन्त:करण में ज्ञान-किरणों का पहुँचना है । सूर्य की मनोभावना यह नहीं होती कि मैं किसी को नीरोग करूँ और किसी को रोगी बनाऊँ, तथापि उसका विधिवत् सेवन करने वाले नीरोगता प्राप्त कर लेते हैं, और सेवन न करने वाले उस लाभ से वंचित रहते हैं । नैचरोपैथी (प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति) कुछ ऐसी ही पद्धति है । दूसरी पद्धतियों में भी काँच के सहारे सूर्य किरणों के संग्रह द्वारा लाभ उठाया जाता है । चिकित्सक उनसे लाभ उठाते हैं और कई रोगियों को स्वस्थ कर देते हैं, वही किरणें आम जनता के घरों में, आंगनों में और अन्य स्थानों में भी पड़ती हैं, मगर वे उनसे कोई लाभ नहीं उठाते । तो क्या यह कहा जा सकता है कि सूर्य ने एक को लाभ पहुँचाया और दूसरे को नहीं पहुँचाया ? क्या सूर्य को आप कर्त्ता कहते हैं ? नहीं । सूर्य की किरणों से लाभ पाकर भी आप चिकित्सक की प्रशंसा करेंगे, उसके प्रति कृतज्ञ होंगे, सूर्य की किरणों का अहसान नहीं मानेंगे । तो यही बात सिद्ध परमात्मा के विषय में समझनी चाहिए । सिद्ध परमात्मा करते कुछ नहीं हैं, तथापि उनके ध्यान से, चिन्तन से आत्मा को पोषण मिलता है, आत्मा 'स्वस्थ' बनती है ।

जैसे अंजन नहीं चाहता कि मैं किसी की नेत्र ज्योति बढ़ाऊँ, तथापि उसके सेवन से नेत्र की ज्योति बढ़ती ही है, उसी प्रकार निष्काम-निस्पृह एवं वीतराग सिद्ध परमात्मा भले ही किसी को लाभ पहुँचाना न चाहें, मगर उनके सेवन से—उनके ध्यान और स्तवन से अवश्य ही लाभ पहुँचता है । सिद्ध भगवान की अलौकिक ज्ञान किरणों को, चिन्तन के काच के सहारे, यदि हम अपने अन्त:करण में केन्द्रित करेंगे तो अज्ञान दूर होगा, मन की अशान्ति दूर हो जाएगी और चित्त की आकुलता विनष्ट हो जाएगी ।

इस प्रकार सिद्ध भगवान का स्तवन करने वाला भक्त यही कहेगा कि मुझे सिद्ध परमात्मा के स्तवन—कीर्त्तन से अपूर्व लाभ प्राप्त हुआ है; मगर, जिसने ऐसा नहीं किया, वह यही सोचेगा कि वाह, यह भी खूब कहा ! सिद्धों से कुछ लाभ मिलता होता तो मुझे भी क्यों न मिल जाता ? मुझे कुछ मिला नहीं, इन्हें कैसे मिल गया ! एक कवि ने अपनी भाषा में कहा है—

शरणे तिरणे आयो जी ।
तारक हो प्रभु नांय, लोक यों तर्क उठायो जी ।
ज्यों सेठ तूमड़ी कमर बांध के सागर तिरियो जी
त्यों जिन नाम ध्यान धर चेतन भवोदधि तिरियोजी
जो प्रभु तारक नहीं हुआ तो तारक नाम लजायो जी
शरणे तिरणे आयो जी ।

भक्त ने शंका को निवारण करने के लिए प्रार्थना में ही यह शंका उपस्थित कर दी है कि—प्रभो ! मैं प्रार्थना करता हूँ, स्तुति करता हूँ, लेकिन मेरे सामने एक बड़ी समस्या पैदा हो गई है । वह यह कि तुम तारक हो भी या नहीं ? कुछ लोग कहते हैं कि भगवान तारने वाले हैं और कुछ कहते हैं—नहीं, भगवान कुछ नहीं हैं । तो मैं क्या समझूं ? क्या मानूं ? दोनों ओर बहुत से तर्क हैं । एक कहता है—अगर भगवान तारने वाले हैं तो संसार का कोई भी प्राणी डूबा हुआ नहीं रहना चाहिए । वह अपनी भुजाओं से सभी को उबार क्यों नहीं लेता ? इस बात को कवि की भाषा में कहें तो यों है—

जो प्रभु तारक होवे, तो क्यों जगत डुबायो जी ।

और यदि—

जो प्रभु तारक नहीं हुवे तो, जगतपति नाम लजायो जी ।

कहने का ढंग कितना सुन्दर है । अगर प्रभो ! तुम तारक हो तो जगत् डूबा क्यों जा रहा है ? और यदि तारक नहीं हो तो त्रिलोकीनाथ, देवाधिदेव, दीनानाथ आदि-आदि नाम क्यों धारण किये हैं ? इन सब नामों को क्या गलत समझा जाय ?

यह भक्त का प्रश्न है । इसका समाधान करते हुए शास्त्रकार कहते हैं—इस प्रश्न पर दो दृष्टियों से विचार करना है—परमार्थ दृष्टि से और व्यवहार दृष्टि से । परमार्थ दृष्टि से या निश्चय दृष्टि से अगर कोई लड़का कहता है

कि 'अध्यापक क्या पढ़ाता है ? वह कुछ भी नहीं पढ़ाता । यह तो मैं स्वयं ही पढ़ता हूँ । तो वह गलत नहीं कहता, वास्तव में पढ़ता तो लड़का ही है । अध्यापक भले ही जान लड़ा दे, अच्छे से अच्छे ढंग से समझावे, किन्तु लड़के का मन यदि दूसरी ही ओर हो और वह अध्यापक की बात पर ध्यान ही न दे तो क्या होगा ? क्या वह परीक्षा में सफल हो सकेगा ? दूसरी ओर आजकल के सरकारी कॉलेजों को देखिए और वहां की शिक्षण-विधि को देखिए । वहाँ घण्टा दो घण्टा बोलने की परिपाटी है । प्रोफेसर लेक्चर दे देता है । ३५-४० मिनिट का पीरियड होता है । इस पीरियड में प्रोफेसर बोलता है । विद्यार्थी समझ गया तो उसका सौभाग्य, न समझा तो उसका दुर्भाग्य ! प्रोफेसर साहब को इसकी चिन्ता नहीं मगर लगन वाला विद्यार्थी पुस्तकों के सहारे कुंजियों का आश्रय लेकर अपने सहपाठियों की सहायता से अथवा किसी दूसरे अध्यापक के सहयोग से अपनी तैयारी कर लेता है और परीक्षा में सफलता प्राप्त करता है । अगर यह कक्षा के लेक्चर के भरोसे ही रह जाता है तो अनुत्तीर्ण हो जाता है ?

इस दृष्टि से अगर सोचते हैं कि बालक स्वयं पढ़ते हैं और अपने परिश्रम से ही ज्ञान प्राप्त करते हैं, अध्यापक उनमें ज्ञान डाल नहीं सकता, तो कुछ गलत नहीं है । दूसरी ओर यह भी सत्य है कि यदि अध्यापक न पढ़ावे, गुर न बतावे और कठिन स्थलों को न समझावे तो असहाय बच्चे क्या कर लेंगे ?

इस प्रकार अध्यापक में कर्त्तापन भी सिद्ध है और अकर्त्तापन भी सिद्ध होता है । जैन सिद्धान्त के अनुसार ये दोनों दृष्टियां अपेक्षाभेद से सत्य हैं । और जैन सिद्धान्त ही नहीं, वैदिक परम्परा और हमारा अनुभव भी इस तथ्य को स्वीकार करते हैं किप्र त्येक मनुष्य स्वयं ही अपने हित-अहित और सुख-दुःख का कर्त्ता है । फिर भी निमित्त की अपेक्षा तो रहती ही है । इसी कारण गीता में जहां यह कहा गया है—उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानम् ।

वहीं यह भी कहा गया है—निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् !

पहले कहा गया है कि अपना उद्धार आप ही और अपने ही से करना चाहिए, क्योंकि कोई किसी दूसरे का उद्धार या सुधार नहीं कर सकता । दूसरे उद्धरण में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं—तेरे द्वारा जो कुछ होना है, उसमें तू निमित्त मात्र है ।

महाभारत प्रारम्भ होने से पहले पाण्डवों ने कृष्ण की सहायता चाही और दुर्योधन ने भी । कृष्ण ने कहा—मैं दोनों को निराश नहीं कर सकता ।

एक ओर मेरी समग्र सेना होगी और दूसरी ओर मैं रहूँगा, परन्तु मैं युद्ध में शस्त्र नहीं उठाऊँगा । अर्जुन ने सेना के बदले कृष्णजी को ही पसन्द किया। तब वह बोले—'मुझे चाहते हो, मगर मैं करूँगा क्या ?' पाण्डव ने कहा—'आप कुछ करें अथवा न करें, हमारा पथ-प्रदर्शन करते रहना । इसी में हमारी विजय है।'

महाभारत जैसे घोर युद्ध में कृष्ण ने क्या किया ? हाथ भी हिलाया ? उन्होंने शस्त्र हाथ में नहीं लिया । फिर भी उनके मार्ग-दर्शन के कारण पाण्डवों को विजय मिली । निमित्त मात्र बनने का. वैदिक परम्परा का यह एक स्पष्ट उदाहरण है ।

जैन सिद्धान्त कहता है—जो कुछ करना है. आत्मा को ही करना है, क्योंकि—अप्पा कत्ता विकत्ताय ।

आत्मा ही कर्त्ता-हर्त्ता है, किन्तु 'परमात्मा' अरिहन्त से और सिद्ध से, मार्ग-दर्शन लेना है । उनसे किरणें लेनी हैं और किरणें पाने में उनकी स्तुति एवं प्रार्थना निमित्त-भूत हैं । अतएव व्यवहार भाषा में कहा गया है—

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा ।
सागरवरगम्भीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।

अर्थात् चन्द्रों से भी अधिक निर्मल, सूर्यों से भी अधिक प्रकाश करने वाले और सागर से भी अधिक गम्भीर सिद्ध भगवन्त मुझे सिद्धि का पथ प्रदर्शित करो ।

श्रावक सूत्र में भगवान के लिए 'पसीयन्तु' कहा गया है, 'दिन्तु' भी कहा है और 'दिसन्तु' भी कहा है । 'समाहिवरमुत्तमं दिन्तु' यहाँ भगवान से प्रार्थना की गई है—प्रभो ! आप मुझे श्रेष्ठ समाधि प्रदान करें । यह सब व्यवहार भाषा है और ये उद्‌गार व्यवहारनय की विचारधारा को प्रकट करते हैं । अरिहन्त भगवान सशरीर होने से हमारे कल्याण में निमित्त बनते हैं । सिद्ध भगवान मन, वचन और काय से अतीत होने के कारण यद्यपि अरिहन्त के समान निमित्त नहीं बनते, तथापि वे आध्यात्मिक विकास के चरम और परम आदर्श हैं । उनका परिपूर्ण विशुद्ध स्वरूप आदर्श बन कर ही साधक को प्रेरणा प्रदान करता है । अतएव उन्हें भी हम व्यवहार में प्रार्थ्य बनाते हैं ।

निश्चयनय की विचारधारा इससे निराली है । उसमें प्रार्थ्य और प्रार्थी जैसे भेद के लिए अवकाश नहीं है । वहाँ तो कहा जाता है—

तू सो प्रभु-प्रभु सो तू है, द्वैत कल्पना मेटो।
सच्चेतन आनन्द विनयचन्द, परमातम पद भेटो रे। सुज्ञानी ॥

यः परमात्मा स एवाहं, यौऽहम् सः परमस्ततः।
अहमेव मयाऽऽराध्यः, नान्यः कश्चिदिति स्थितिः ॥

जो परमात्मा है, वही मैं हूँ और जो मैं हूँ वही परमात्मा है। अतएव मैं ही मेरे द्वारा आराध्य हूँ। मेरे सिवाय अन्य कोई आराध्य-उपास्य-प्रार्थनीय नहीं हो सकता।

इस विचारधारा के अनुसार एक प्रकार की प्रार्थना ऐसी भी की जाती है जिसमें आत्मा की ही अभ्यर्थना होती है। अभी आप प्रार्थना के अन्त में बोल गये हैं—

तीरथनाथ सिधारथ सुत का नित नित सुमिरण कीजे।
दिन दिन बढ़े सवाई प्रभुता, सकल मनोरथ सीझे ॥

यह 'कीजे' आपने किससे कहा है ? हे चिदात्मन् ! इन भोगों के भयानक बीहड़ में कहाँ घूम रहे हो ? क्यों भटक रहे हो ? अगर शान्ति चाहते हो तो तीर्थनाथ का स्मरण करो। यहाँ अपने ही मन को प्रेरणा दी गई है। अपने आप से ही प्रार्थना की गई है। अपनी आत्मा से ही निवेदन किया गया है। अपनी अभ्यर्थना से साधक अपने संकल्प को बलवतर बनाता है, भावना में दृढ़ता पैदा करता है और साधना के उच्च से उच्चतर सोपानों पर आरोहण करने की क्षमता प्राप्त करता है। इससे उसे ज्ञान का प्रकाश प्राप्त होता है और ज्ञान का प्रकाश पा लेने पर अपने सही कर्तृत्व को समझ लेता है। मगर जब तक उसे ज्ञान का प्रकाश नहीं मिला है, तब तक अपने कर्तृत्व के विचार से अहं बुद्धि उत्पन्न न हो, विकारों से ग्रस्त न हो जाए और उसके सामने परमात्मा का जो महान् और उज्ज्वल आदर्श है, उसके प्रति निरन्तर आकर्षण बना रहे, उससे प्रेरणा मिलती रहे, और जब कभी जीवन में अशांति हो और सन्ताप हो तो किसी के समक्ष वह पुकार कर सके, इसके लिए वह परमात्मा के समक्ष स्तुति करता है। परमात्मा की स्तुति करते-करते और निश्चयनय के आत्मकर्तृत्व को ध्यान में रखते-रखते जब साधक उच्च भूमिका को स्पर्श करेगा तो स्वतः समझ लेगा कि परमात्मा तो निमित्त मात्र है। असली कर्तृत्व तो मेरी ही आत्मा में है।

भक्त की एक बड़ी आकांक्षा यही होती है कि उसे स्तुति करने की, शुभ विचारों में रमण करने की और शुभ आचरण करने की द्रव्य, क्षेत्र, काल

और भाव की दृष्टि से अनुकूलता मिलती रहे । क्योंकि बहुत से लोगों की परिस्थितियाँ ऐसी होती है कि उनको अनुकूल अवसर ही नहीं मिलता। चाहने पर भी शुभ काम करने में कोई अड़चन आ जाती है और तब उनका सोचना-समझना एक ओर धरा रह जाता है । कभी द्रव्य की प्रतिकूलता बाधक बन गई, शरीर में गड़बड़ हो गई, या पड़ौस में गड़बड़ हो गई । आप शान्तिपूर्वक ध्यान करना चाहते हैं, स्वाध्याय करना चाहते हैं, सत्संग का आनन्द उठाना चाहते हैं परन्तु नहीं उठा सकेंगे, क्योंकि द्रव्य की प्रतिकूलता बाधक जो बन गई है ।

क्षेत्र की बात सोचिए । अभी आप यहाँ बैठे हैं । साधुओं और साध्वियों का सान्निध्य है । सात्विक एवं प्रशान्त वातावरण है । सद्भावना की सरिता बह रही है । धर्म-पीयूष का पान कर रहे हैं । इस वातावरण में कुछ समय तक आप रहते हैं तो आपके मस्तिष्क की क्या स्थिति रहती है ? यही समय यदि घर पर बिताएँ तो क्या ऐसी शांति का लाभ हो सकेगा ? एक बच्चे ने अशुचि कर दी है, दूसरा नहा रहा है, तीसरा चाय के लिए रो रहा है, दो आपस में झगड़ रहे हैं, कोई दौड़-धूम मचा रहा है । सारे घर में हलचल मची है । इस प्रकार जहाँ हल्लागुल्ला हो, चीख-पुकार हो, दौड़-धूप हो, वहां अगर आप सामायिक करने बैठेंगे तो भी क्या आपका चित्त शान्त और स्थिर रह सकेगा ? इस प्रकार की अशान्तिकर घटनाएँ घरों में होती ही रहती हैं । इस प्रकार क्षेत्र का भी प्रभाव पड़ता है । खाने, पीने और घरेलू काम करने के लिए आपका घर भले ही अनुकूल हो परन्तु आत्मिक शांति प्राप्त करने के लिए, मन को शांत और स्वस्थ रखने के लिए, प्रार्थना के लिए, स्वाध्याय और सत्संग के लिए एकान्तमय धर्मस्थान ही उपयुक्त हो सकता है ।

इसी प्रकार काल भी निमित्त बनता है और इसी कारण विभिन्न अवसरों पर नाना प्रकार के पर्वों की कल्पना की गई है । समय-समय पर लोग महापुरुषों को याद करते हैं और इस रूप में वे पर्व आदि मानसिक प्रेरणा के कारण बनते हैं । यद्यपि काल में विचार शक्ति नहीं है । तिथि आप को पकड़ कर धर्माराधना में प्रवृत्त नहीं कराती । वह कोई उपदेश भी नहीं देती । फिर भी तिथियों के निर्माण से लाभ हुआ । अगर आचार्यों ने पंचतिथि का निर्माण न किया होता और उनका महत्त्व आपके मस्तिष्क में नहीं होता तो सप्तमी की अपेक्षा अष्टमी को, दसवीं की अपेक्षा एकादशी को और तेरस की अपेक्षा चौदस को जो विशेष धर्माराधन किया जाता है, वह शायद ही होता। इन तिथियों के दिन मस्तिष्क में जो थोड़ी बहुत प्रेरणा होती है, वह भी न होती । परन्तु जब पर्व का स्वरूप और महत्व सामने हो किसी भी तिथि के आने पर खयाल आ ही जाता है । चतुर्दशी आएगी तो आप सोचेंगे—आज

उपवास या पौषध करना है, ब्रह्मचर्य का पालन करना है, अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक धर्माराधना करनी है।

भाव भी निमित्त बनता है। उसकी निमित्तता इतनी स्पष्ट है कि अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। द्रव्य, क्षेत्र और काल की अनुकूलता होने पर भी यदि भाव की अनुकूलता न हुई तो वे सब बेकार हो जाते हैं। भाव सब में प्रधान है। प्रथम तो भाव के अभाव में किसी धर्मक्रिया में प्रवृत्ति ही नहीं होती और यदि हुई भी तो वह यथेष्ट फलप्रद नहीं होती। आचार्य कहते हैं—यस्मात् क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः।

भावविहीन क्रिया फल प्रदान नहीं करती है। अतएव प्रत्येक क्रिया में भाव ओतप्रोत रहना चाहिए। भाव क्रिया का प्राण है।

यह मन बहुत बार इधर-उधर विषय भोगों की तरफ भटकता रहता है, मगर प्रार्थना मन को स्थिर करके आत्मा को ताकत देती है। सन्त मुनियों ने प्रार्थना योग की आराधना करके अपने आपको लोकोत्तर परम पद का अधिकारी बना लिया। प्रार्थना उनके परम कल्याण का कारण बनी।

ज्ञान और कल्याण के दोनों कदम आगे बढ़ने पर ही आत्मा परमात्मा की ओर अग्रसर हो सकेगी। प्रार्थना के द्वारा सहज ही हम आगे कदम बढ़ाने की वह योग्यता प्राप्त कर सकते हैं। जो भव्य जीव प्रार्थना के वास्तविक स्वरूप को भली भाँति समझ कर अपने जीवन को प्रार्थनामय बनायेंगे और परमात्मा के प्रति एकनिष्ठा प्रीति जगायेंगे, वे इस लोक और परलोक में आनन्द के भाजन बनेंगे।

प्रार्थना

❖ हमारी गन्दगी हमने जब बाहर नहीं निकाली है, तब तक प्रभु की प्रार्थना करने का हमें कुछ हक है क्या?

—महात्मा गाँधी

❖ प्रार्थना सुबह की चाभी हो और शाम की चटखनी।

—मैथ्यू हैनरी

उद्बोधन
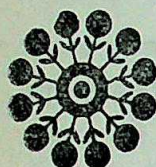
कामना नहीं भावना का महत्त्व है*

◆ प्रवचनकार **उपाध्याय श्री मानचन्द्रजी म. सा.**

कामना का सम्बन्ध संसार से है। इच्छाओं का होना ही कामना है। कामना में दुःख ही विद्यमान है क्योंकि कामना की कभी पूर्ति नहीं होती है, यह तो निरन्तर बढ़ती जाती है। इसकी कोई सीमा नहीं होती है जिससे व्यक्ति जीवन में दुःख ही दुःख का अनुभव करता है। इच्छाएँ आकाश के समान बढ़ती जाती हैं जिसकी पूर्ति करने में मानव अपनी अधिक शक्ति लगाता है पर उसका परिणाम शून्य ही रहता है। वस्तु के अभाव में मानव का दुःखी होना उचित नहीं है क्योंकि यदि अभाव दुःखी करने वाला हो तो सन्त मुनिराज भी दुःखी होने चाहियें। पर दुःख का कारण तो केवल कामना या लालसा है। जहाँ चाह है वहाँ आह है। इस प्रकार कामना या लालसा किसी भी सीमा में पूर्ण नहीं हो सकती।

कामना का सम्बन्ध केवल शरीर तक सीमित है, भौतिक उपलब्धियों की प्राप्ति तक ही है जबकि भावना का सम्बन्ध आत्मा से है। जैसे शरीर में आत्मा का महत्त्व है इसी प्रकार जीवन में भावना का महत्त्व है। मोक्ष मार्ग के साधनों में भावना अन्तिम साधना है। अन्य तीनों साधनों से अधिक महत्त्व भावना का है क्योंकि दान, शील, तप भी भावना के बिना बेकार हैं—

दान शील तप तीनों जाणो, भाव बिना ये सूना रे ।
दया बिना यह मनुज जमारो, भात अलूणा रे ।।
शुद्ध मन भावो रे या खास भावना मोक्ष ले जावे रे ।
शुद्ध मन भावो रे ।।

तीनों साधनों में प्रधान भावना है। यदि भावना नहीं तो दान, शील तप की ओर बढ़ा भी नहीं जा सकता है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि दान, शील, तप साधना रूप भव्य महल की नींव भावना ही है।

"यस्मातक्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्या"

---

* श्री चाँदमल बावेल द्वारा संकलित—सम्पादित प्रवचन।

अर्थात् हर कार्य भावों के बिना व्यर्थ है। उसका प्रतिफल कुछ भी नहीं होता है।

"भाव रहिओ न सिज्झई" (कुन्दकुन्द)

भावना से शून्य अर्थात् जिसके भाव कार्य के साथ नहीं हैं वह मनुष्य कभी सिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकता है।

"छिदंति भाव समणा, झाण कुठेरहि भवरुक्खं"

अर्थात् जो भाव से श्रमण है वही अपने भव-वृक्ष को कुठार से काट डालता है। साधना में भावों का अधिक महत्त्व है। कोई कितनी ही उच्च साधना करता हो, कितने ही कर्मकाण्ड करता हो किन्तु भावना के बिना उसका सही प्रतिफल नहीं मिलता है।

दवाई तो ले रहे हैं किन्तु बीमार हैं,
शास्त्र तो पढ़ रहे हैं किन्तु विकार है।
कर्मकाण्डों को कर लिया जाय भले ही,
किन्तु भावना के बिना सब भार है।।

तभी तो भगवान महावीर ने भावना पर बहुत गहन विश्लेषण करते हुए फरमाया है—"जे आसवा ते परिसवा, जे परिसवा ते आसवा"

अर्थात् जो आश्रव कर्म प्रवेश के मुख्य कारण हैं वे ही शुद्ध भावना के कारण कर्मक्षय के संवर के कारण बन सकते हैं एवं जो परिश्रव के, कर्मक्षय के कारण हैं वे कर्मबन्ध के कारण बन सकते हैं। इससे यह प्रमाणित हो गया कि भावना की शुद्धता-अशुद्धता कर्म-फल भोग को प्रभावित करती है। भावना की निकृष्टता के कारण अनन्त संसार बढ़ाया जा सकता है वहाँ इसकी उत्कृष्टता के द्वारा संसार-मुक्त भी हुआ जा सकता है। अर्थात् मोक्ष प्राप्ति केवल भावनाओं पर ही निर्भर है। भावना ही पतन की ओर ले जाती है और भावना ही उत्तम फल प्रदान करती है।

"परिणामो बन्धः परिणामो मोक्षः"

अशुद्ध भावना बन्ध का कारण और शुद्ध भावना मुक्ति का कारण है। 'भावना भवनाशिनी' भवों को नाश करने के लिये, संसार को कम करने के लिये शुद्ध भावों को ही स्वीकारा गया है। उत्तम भावना से हम अपने कर्म-शत्रुओं को पराजित ही नहीं अपितु जलाकर खाक भी कर सकते हैं। उसके बाद

नये कर्मों के बन्ध का प्रश्न ही नहीं रहेगा। यदि हमारे मन में दुर्भावना नहीं है तो सभी हमारे मित्र होंगे अर्थात् जैसी दृष्टि होगी वैसी सृष्टि होगी—

याद्दशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति ताद्दशी।'

जिसकी जैसी भावना होती है वैसी ही सिद्धि प्राप्त होती है। एक बार कृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठिर तथा दुर्योधन को कहा कि युधिष्ठिर तुम बुरे आदमियों की सूची तथा दुर्योधन तुम अच्छे आदमियों की सूची बनाकर लाओ। दोनों नगर में निकल पड़े। लौट कर दुर्योधन ने कहा कि कोई भी मुझे अच्छा आदमी नहीं मिला तथा युधिष्ठिर ने कहा कि मुझे कोई बुरा आदमी नहीं मिला अर्थात् दोनों की दृष्टियाँ विपरीत थीं।

जैन दर्शन में आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से १२ भावनाओं का उल्लेख मिलता है। (१) अनित्य भावना (२) अशरण भावना (३) संसार भावना (४) एकत्व भावना (५) अन्यत्व भावना (६) अशुचि भावना (७) आश्रव भावना (८) संवर भावना (९) निर्जरा भावना (१०) लोक भावना (११) बोधि दुर्लभ भावना और (१२) धर्म भावना। इन बारह भावनाओं के अतिरिक्त साधक जीवन को उच्च शिखर पर ले जाने के लिये व्यवहार शुद्धि की अपेक्षा से चार भावनाओं का उल्लेख मिलता है।

सत्वेषु मैत्री, गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा परत्वम्।
माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ, सदा ममात्मा विद्धातुदेव।।

गुणीजनों से नम्रता, अवगुण देख मध्यस्थ।
दुखी देख करुणा करो, मैत्री भाव समस्त।।

उक्त चार भावनाएँ इस प्रकार हैं—

(१) **मैत्री भावना**—इस भूतल पर बसने वाले चाहे वे मनुष्य हों या पशु-पक्षी अथवा कीट-पतंग हों, सब मेरे मित्र हैं। कोई मेरा शत्रु नहीं है क्योंकि संसार के समस्त प्राणियों के साथ मेरा अनन्त-अनन्त बार आत्मीयता का सम्बन्ध हो चुका है।

"मैत्री यस्मिन हित धी समग्रे" (अध्यात्म कल्पद्रुम) समस्त प्राणियों के प्रति हितैषी बुद्धि रखना–यही मैत्री भावना है। इस मैत्री भावना की परिधि बढ़ती-बढ़ती आत्म-समभाव की ओर होती चली जाती है जिससे राग-द्वेष का बीज क्षीण होता चला जाता है।

(२) **प्रमोद भावना**—गुणीजनों को देखकर अन्तःकरण में उल्लास होना, यही प्रमोद भावना है। "गुणेषु पक्षपातोय: सप्रमोद प्रकीर्तित" (योग

शास्त्र) गुणीजनों के प्रति अपना पक्षपात व्यक्त करना, गुणों की उचितता का समर्थन करना, इसको ही प्रमोद भावना कहा जाता है।

(३) **कारुण्य भावना**—पीड़ित प्राणी को देखकर हृदय में अनुकम्पा होना, पीड़ा का निवारण करने के लिये यथोचित प्रयास करना–कारुण्य भावना है। इस भावना की सजीवता पर ही व्यवहार तथा विचार से किसी को कष्ट नहीं पहुँचाया जावेगा। करुणा दु:ख मोक्ष धी: (योगसार) दुखी प्राणियों का दु:ख छुड़ाने की बुद्धि होना यही करुणा भावना है।

(४) **माध्यस्थ भावना**—जिनके विचारों से मेल नहीं खाता हो अर्थात् जो संस्कारहीन हैं; जिनमें किसी भी सद्वस्तु को ग्रहण करने की क्षमता नहीं है, जो गलत राह पर चल रहे हैं, जिनको सुधारने का प्रयास सफल नहीं हो रहा है, उनके प्रति उपेक्षा भाव रखना यही माध्यस्थ भावना है। अपने आप की प्रशंसा के प्रति उपेक्षा रखना भी माध्यस्थ भावना है।

इन भावनाओं से जीवन विराट् एवं समग्र बनता है। जिन आध्यात्मिक गुणों के धारण के लिये साधना-पथ अंगीकार किया जाता है, उनके बिकास के लिये ये भावनाएँ उपयोगी सिद्ध होती हैं। संसार में भी भावना के अनुकूल व्यवहार देखा जाता है। अत: भाव विशुद्धि आवश्यक है।

—C-४६, डॉ. राधाकृष्णन् नगर-भीलवाड़ा

- वाणी-विलास से विचार अधिक गहराई पर है, विचार से भावना अधिक गहराई पर है।

—फ्रेंच कहावत

- अगर विचार रूप है तो भावना रंग है।

—एमर्सन

- सबसे महान् भावना है—अपने को बिल्कुल भूल जाना।

—रस्किन

- राम की आग घर-घर में व्याप्त है, लेकिन हृदय की चमक न लगने से वह धुंआ होकर रह जाती है।

—संत कबीर
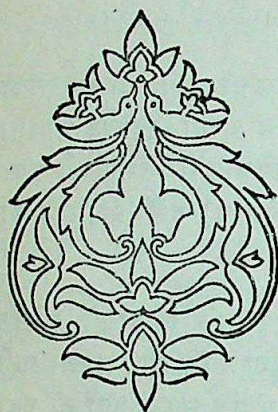
तथाकथित धार्मिकों से निजात पाएँ

□ प्रवर्तक श्री महेन्द्र मुनि 'कमल'

धर्म के नाम पर तथाकथित धार्मिकों द्वारा जिस तरह इन्सान-इन्सान के बीच दीवारें खड़ी की जा रही हैं, एकदम दुर्भाग्यपूर्ण है। धर्म ने कभी भी इन्सान को इन्सान से तोड़ा नहीं है अपितु हर बार जोड़ा है। जो जोड़ता है वह धर्म है, जो तोड़ता है वह सांप्रदायिकता उन्माद है। तथाकथित धार्मिक-जन, धर्म की अपार हानि कर रहे हैं। वे बारम्बार अपने को रेखांकित कर अपने को ही धर्म का पुरोधा बतला रहे हैं और एक भारी सैलाब उनके पीछे आँख मूंद कर चल रहा है। धर्म के वे ठेकेदार खोखली मीनारें बना रहे हैं।

आज प्रत्येक मनुष्य का जीवन सुख-दुःख, लाभ-अलाभ, जीवन-मरण, मान-अपमान इस प्रकार अनेक द्वन्द्वों से ओत-प्रोत है। अनुकूल और प्रतिकूल प्रत्येक परिस्थिति में प्रसन्नता और पीड़ा से ऊपर उठकर जो जीने का अभ्यास करता है, उसका विकास सुनिश्चित है। इस ऊपर उठने की क्रिया में धर्म का अवलम्ब बहुत ही कारगर होता है किन्तु आज इस अवलम्ब को कांधे देने वाले तथाकथित धार्मिकों ने एनवक्त पर कंधे हटा दिये हैं। उनका यह कपट मानव-मात्र के प्रति एक बहुत ही घिनौना कृत्य है।

भगवान् महावीर ने स्नेह और सद्भाव का वातावरण बनाए रखने के लिए सदैव प्रयास किए हैं। उन्होंने कोई सम्प्रदाय व पंथ प्रचलित नहीं किया। उन्होंने अपने समय में फैले हुए सभी धर्मों व धर्म प्रचारकों की कभी निंदा नहीं की। उन्होंने केवल सत्य धर्म, वीतराग मार्ग बतलाने का कार्य बड़ी निडरता से किया। पर महावीर के ही अनुयायियों ने भगवान् महावीर के इस उत्कृष्ट कार्य को अपनी स्वार्थधता के कारण व्यर्थ करने का बीड़ा उठा लिया है। उन्होंने धर्म की व्याख्या अपने अनुरूप बनाली है। अहिंसा, अनेकांत को एक तरह से दफना सा दिया है।

आज के नेतृत्वकर्ताओं की सारी ऊर्जा इस बात में लग गई है कि धर्म में प्रदर्शन का समावेश किस प्रकार हो, अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति किस प्रकार हो। इस प्रदर्शन की होड़ में हर कोई दौड़ नहीं लगा सकता। जो सक्षम हैं वे तो प्रदर्शन करके खाली नहीं होते परन्तु जो सक्षम नहीं हैं और इस होड़ में आ गये हैं, देखादेखी के वशीभूत या सामाजिक स्थिति में अपनी श्रेष्ठता बनाये रखने की भावना से प्रदर्शन करके भीतर ही भीतर खाली हो जाते हैं। जब वह खालीपन उनके नित्य कलापों को प्रभावित करता है तब वे भी प्रदर्शन की इस होड़ाहोड़ी की भला-बुरा कहने वाली भीड़ में शामिल हो जाते हैं।

धर्म में प्रविष्ट सम्प्रदायवाद, प्रदर्शन, स्वार्थ आदि विकृतियों को समय के रहते यदि दूर नहीं किया गया तो भविष्य में असुरक्षा की भावना तथा अश्रद्धा की अवस्थिति को नकारा नहीं जा सकता। सम्प्रदायवाद एवं प्रदर्शन को नहीं—अपितु मानवतावाद और दर्शन से संलग्न बनकर ही बढ़ती हुई अनास्थाओं को आस्था में परिवर्तित किया जा सकेगा और हमारा सबका यही प्रयत्न होना चाहिए।

• • •

धारावाही लेखमाला (८)

श्रावकधर्म : स्वरूप और चिन्तन

☐ श्री रमेश मुनि शास्त्री
(उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य)

अनर्थदण्ड के चार आधार स्तम्भ :

अनर्थदण्ड की व्याख्या के अनुसार पाँच आश्रवों से अनुप्राणित मन, वचन और काया से होने वाली अनर्थदण्ड रूप प्रवृत्तियों के चार आधार स्तम्भ हैं। वे इस प्रकार हैं।[1]

१—अपध्यानाचरित	२—प्रमादाचरित
३—हिंस्रप्रदान	४—पापोपदेश

संक्षेप में इन चारों का स्वरूप इस प्रकार है—

१—अपध्यानाचरित—अनर्थदण्ड का सर्वप्रथम आधार स्तम्भ 'अपध्यान' का आचरण है। इसका अभिप्राय है—अप्रशस्त ध्यान अर्थात् अशुभ विचारों में, बुरे विचारों में मन को एकाग्र करना। वैसे ध्यान के चार प्रकार हैं—आर्त्तध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान। इन चारों में से प्रत्येक के दो ध्यान अशुभ हैं, अप्रशस्त हैं। बाद के दो ध्यान शुभ हैं, प्रशस्त हैं। अनर्थदण्ड के अन्तर्गत प्रथम के दो ध्यान—आर्त्तध्यान व रौद्रध्यान हैं। निरर्थक अशुभ-विचारों में चित्त को एकाग्र करना, मानसिक अनर्थदण्ड है। मानव जब दुःख या विपत्ति में होता है तब कई प्रकार के विकल्प मन में उभरते रहते हैं। कभी वह मन में हीनता की भावना से प्रेरित होकर स्वयं को दीन, अशक्त, दुर्बल एवं पीड़ित अनुभव करता है। उसी उधेड़बुन में पड़ा रहता है। आर्त्तध्यान दुःखित-पीड़ित मानव को दुःख या व्यथा के कारण मन में उत्पन्न होने वाले दूषित विचार हैं। उन मलीन-विचारों के प्रवाह में आर्त्तध्यानी डूबता-उतरता रहता है। आर्त्तध्यानी मानव के मन के विकल्पों का विश्लेषण करते हुए उसके चार

१—तयाणंतरं च चउव्विहं अणट्ठादंडं पच्चक्खाइ। तं जहा—अवज्झाणाचरियं, पमायाचरियं, हिंसप्पयाणे, पावकम्मोवएसे।—उपासकदशांग १।४३॥

प्रकार हैं—१—अनिष्ट वस्तु या व्यक्ति का संयोग होने पर, २—इष्ट वस्तु या व्यक्ति का वियोग होने पर, ३—रोग आदि होने पर, तथा ४—इष्ट की प्राप्ति के लिये उत्पन्न चिन्ता या दुःख होना, अथवा अप्राप्त भोगों को प्राप्त करने की लालसा से तीव्र संकल्प (निदान) करना। ये चार प्रकार के आर्त्तध्यान अनर्थ-दण्ड हैं।

दूसरा अपध्यान रौद्र ध्यान है। जो आर्त्त ध्यान से भी भयंकर है। आर्त्त ध्यान में तो व्यक्ति व्यर्थ के बुरे विचार करके अपनी आत्मा का ही अहित करता है, किन्तु रौद्र ध्यान में अपनी आत्मा के अहित के साथ-साथ दूसरों का अहित करने का दुश्चिन्तन करता है। जिसका मानस अत्यन्त ही क्रूर, अति क्रोधी, अति लोभी, अति मोही, अति स्वार्थी एवं अति कपटी होता है, वह रुद्र कहलाता है। उस रुद्र यानी भयंकर आत्मा का ध्यान-स्वार्थ, क्रोध, लोभ, मोह एवं कपट आदि से उत्प्रेरित होकर दूसरों की हानि के लिए उत्पन्न विचारों में मन का एकाग्र होना रौद्रध्यान है। रौद्रध्यानी का रूप अत्यन्त क्रूर बनता जाता है। उसकी आँखें लाल हो जाती हैं। जरा से निमित्त से उसके तन-मन में आग लग जाती है और वह जरा-सी भूल पर दूसरे से बदला लेने को उतारू हो जाता है।

रौद्रध्यान के चार भेद हैं। उनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है—

१—हिंसानुबन्धी २—मृषानुबन्धी

३—स्तेयानुबन्धी ४—संरक्षणानुबन्धी

१—**हिंसानुबन्धी**—किसी की हिंसा होते देखकर प्रसन्न होना अथवा किसी को मारने-पीटने, सताने आदि हिंसा रूप घोर प्रवृत्ति के लिये मन में कल्पना करना हिंसानुबंधी रौद्रध्यान है।

२—**मृषानुबन्धी**—अपनी झूठी बात को सत्य सिद्ध करने तथा दूसरे की सच्ची बात को झूठी सिद्ध करने का उपाय सोचना, अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिये झूठा प्रपंच रचना, झूठे ग्रन्थ रचने की योजना सोचना, धर्म के नाम पर ठगने के लिये मिथ्यापूर्ण आडम्बर जाल बिछाने का उपाय सोचने में मन-मस्तिष्क को एकाग्र करना मृषानुबन्धी—रौद्रध्यान है।

३—**स्तेयानुबन्धी**—रौद्रध्यान का तीसरा भेद—स्तेयानुबन्धी है। चोरी करने की योजना बनाना, डकैती, लूट, अपहरण आदि करने के उपाय सोचना, ऐसे कार्यों में हर्ष मनाना, चोरी के नाना प्रकार के उपायों की उधेड़-बुन में डूबे रहना—स्तेयानुबन्धी रौद्रध्यान है।

४—**संरक्षणानुबन्धी**—यह रौद्रध्यान का चतुर्थ प्रकार है। जो भूमि, सम्पत्ति, मकान, बगीचा या साधन सामग्री अथवा पद-प्रतिष्ठा, सत्ता प्राप्त है, उसे दूसरों से बचाने के लिये अहर्निश चिन्तामग्न रहना संरक्षणानुबन्धी रौद्र-ध्यान है।

ये दोनों अशुभ ध्यान श्रावक के लिये त्याज्य हैं और उक्त ध्यान द्वय संसार की अभिवृद्धि के प्रमुख कारण हैं, अतः ये अपध्यान हैं। इसीलिये स्पष्टतः उल्लेख मिलता है—पाप की ऋद्धि की जय-पराजय, तथा युद्ध करने, पर स्त्री-गमन करने, चोरी आदि पाप कर्म करने का चिन्तन (अपध्यान) नहीं करना चाहिये। क्योंकि इनका फल सदैव पाप रूप होता है।[1] वास्तव में पाप की विजय तथा पुण्य की पराजय की इच्छा करना तथा इसी अनुसार घटनाओं पर विचार करने में डूबे रहना अपध्यान है। ऐसे अशुभ ध्यान करने से किसी का हानि-लाभ तो हो नहीं जाता। फिर व्यर्थ ही निरर्थक ऐसा अपध्यान क्यों किया जाए जो पाप रूप हो, अतः अनर्थदण्ड है। न्याय व न्यायी की विजय एवं अन्याय या अन्यायी की पराजय के विचार अपध्यान रूप नहीं हैं। यदि श्रावक विवेकपूर्वक विचार करे तो अपध्यान से बच सकता है। इष्ट-वियोग, अनिष्ट-संयोग, दुःख, चिन्ता आदि प्रसंगों में राग-द्वेष, मोह, क्रोध उत्पन्न हो, तब निमित्त की अपेक्षा उपादान का विचार करे, तो मन एकाग्र तथा शान्त रह सकता है। निमित्त तो केवल निमित्त मात्र है। सारा का सारा खेल तो उपादान का है। अतः व्यक्ति उपादान का विचार करे, तो दुर्ध्यान से बचकर सुध्यान में स्थित हो सकता है। [क्रमशः]

१—पुरुषार्थ सिद्धयुपाय—श्लोक १४४।।

लेखकों से निवेदन

- 'जिनवाणी' में जैन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य एवं संस्कृति तथा नैतिक उन्नयन व सामाजिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं। रचनाएँ मौलिक, अप्रकाशित, प्रेरणादायक एवं संक्षिप्त हों।
- रचना भेजते समय उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लेवें। अस्वीकृत रचना वापस करना सम्भव नहीं।
- रचना कागज के एक ओर स्पष्ट अक्षरों में लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो।

—सम्पादक

८३वीं जयन्ती (पौष शुक्ला चतुर्दशी) पर विशेष
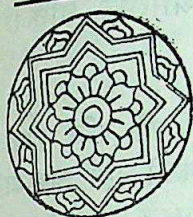
विशुद्ध श्रमणाचार के प्रतीक आचार्य हस्ती

□ श्री रेणुमल जैन

आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० इस युग की महान विभूति थे—विशुद्ध श्रमणाचार के प्रतीक, धर्म जगत् के प्रबल प्रहरी। उत्कट अध्यात्म-साधना में लीन एवं आत्मचिन्तन में निरन्तर निरत रहकर अनेक आध्यात्मिक उपलब्धियाँ प्राप्त कीं।

एक प्रसंग याद आ रहा है—एक रात करीब दस बजे आचार्य श्री ने पं० र० श्री हीरा मुनिजी को जगाया और कहा कि बहुश्रुत श्री समरथमलजी म० को संथारा करा रहा हूँ, तुम्हारी साक्षी है। सवेरे उनकी सेवा में विहार करना है, इस पर ध्यान रखना। सवेरा हुआ और आचार्य श्री ने उनके दर्शनार्थ विहार कर दिया। विचित्र बात थी। न कहीं से कोई सन्देश था, न पत्र। फिर भी दूर से ही संथारा करा देना और उनके दर्शनों के लिए चल देना।

(जिनवाणी–आचार्य श्री श्रद्धांजलि विशेषांक, पृ० २३७)

आपकी विशिष्ट साधना की लब्धि से सैंकड़ों भक्तों के दुःख बिना किसी जंत्र-मंत्र के स्वतः दूर हो जाते थे, जिससे जिन शासन की महत्ती प्रभावना हुई है। ऐसे चामत्कारिक सत्य घटनाओं के अनेक उदाहरण हमें उपलब्ध हैं। रास्ता भटकते यात्रियों के द्वारा आपको स्मरण करने पर तत्काल उन्हें मार्ग-दर्शक मिलता और मार्ग बताकर उसका गायब हो जाना, रजोहरण व मांगलिक से सर्प-जहर उतरना, सन्तों के संकट दूर करना, सैंकड़ों वर्षों से चली आ रही पशु-बलि को सामान्य कार्यकर्त्ता के माध्यम से ही सदैव के लिए रुकवा देना। नागराज के प्राण बचाना व उसका परम भक्त ही पुनः पुनः आचार्य श्री की सेवा में प्रगट होना तथा अन्तिम समय पर्यन्त तक उसके द्वारा भक्ति प्रदर्शित करना।

महासती शुभद्रा ने अपने अन्यमति पति को ही नहीं पूरे परिवार को धर्म में प्रतिष्ठित कर दिया था। धर्म के प्रति उसकी निष्ठा ने कच्चे धागों से बंधी चलनी से भी कुए से पानी खींच कर दिखा दिया। ऐसी आत्मिक शक्तियों के सामने प्राकृतिक शक्तियों को नतमस्तक होना पड़ता है।

अच्छे-अच्छे धर्म के धुरंधर भाई-बहिन जहाँ पशु-पक्षियों की बलि होती है, पंचेन्द्रिय जीवों की हत्या होती है, वहाँ जाकर मस्तक झुकाने एवं चढ़ावा चढ़ाने वाले मिल जाते हैं। उन्हें आचार्य श्री फर्माते थे कि अगर नवकार मंत्र पर पूरे विश्वास से पंच-परमेष्ठि की शरण में रहें तो न किसी देव की ताकत है न किसी देवी की ताकत और न किसी मानव अथवा किसी दानव की ही ताकत है कि उनमें से कोई भी किसी प्राणी के पुण्य और पाप के विपरीत उनके सुख-दुःख में उसके भोगने व त्यागने में बाधक बने। अतएव कठिन समय में भी धर्म के प्रति सच्चा श्रद्धावान बने रहना तथा सच्चे देव-गुरु-धर्म की आराधना करना। यही धर्म का सार है—

"दंसणमूलो धम्मो"

साधना के अनेक प्रकार हैं किन्तु जो साधना साधक को बहिरात्मा से अन्तरात्मा, अन्तरात्मा से महात्मा और महात्मा से परमात्मा बना दे, वही सर्वोत्तम साधना है। अध्यात्म योगी आनन्दघनजी 'सुमतिनाथ स्तवन' में कहते हैं—

बहिरातम तजी अन्तर आत्मा,
रूप थई-थिर भाव, सुज्ञानी,
परमातम नुं हो आतम भाववुं,
आतम–अर्पण दाव सुज्ञानी ।।सुमति० ५।।

आतम अर्पण वस्तु–विचारतां,
भरम टले मति दोष, सुज्ञानी
परम पदारथ सम्पत्ति संपजे,
आनन्दघन रस पोष सुज्ञानी ।।सुमति० ६।।

ऐसी उत्तम साधना ज्ञान-दर्शन चारित्र रूप रत्नत्रय से मण्डित होती है। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० की सम्पूर्ण जीवन-चर्या ऐसी उत्तम साधना से पूरित एवं अध्यात्म ऊर्जा से ओतप्रोत थी।

दिव्य नयन से परमार्थमय जिन मार्ग का दर्शन कर इस दिव्य-द्रष्टा ने अपनी संगीतमय दिव्य ध्वनि से इस दिव्य जिन मार्ग का अपने को दर्शन कराया। यह दिव्य ध्वनि इतनी अधिक अमृत-माधुरी से भरी है कि उसका पान करते तृप्ति होती नहीं। शांत सुधारस जलनिधि ऐसा यह दिव्य नाद अखूट रस वाला अक्षयनिधि है। "क्षणे क्षणे नवीनता पावे वह सुन्दरता" "क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदैव रूपं रमणीयताया" यह सौन्दर्य-लक्षण इस सत् कवि के काव्य में प्रत्यक्ष प्रतीत होता है।

आचार्य श्री अध्यात्म मार्ग में अति उच्च दशा को प्राप्त 'ज्ञानी' पुरुष थे। परम भक्ति-भाव निर्भर, चैतन्य रस के हिलोला उछालते। आपके प्रवचन आत्मानुभव के परम परिपाक रूप होकर, वाचते या सुनते अद्भुत आह्लाद देते हैं। मन का थाक उतार परम चित्त-प्रसन्नता देते हैं। उन वचनामृतों में ऐसा अद्भुत माधुर्य, प्रसाद और ओज भरा है, ऐसा उच्च चैतन्यवंत का कवित्व भरा है कि उसका रसास्वाद लेते आत्मा जानें तृप्त होती ही नहीं। बड़े-बड़े पण्डितों के आडम्बर भरे शास्त्रार्थों से अनन्त गुणा आनन्द और बोध पूज्य आचार्य प्रवर की सीधी-सादी, सचोट और स्वयंभ वचन-पंक्ति से उपजता है।

इस अवसर्पिणी काल में आचार्य श्री ने आध्यात्मिकता की दुन्दुभि बजा कर भौतिकता से फँसे सुप्त समाज को जगाया, अर्थ के ऊपर धर्म को प्रतिष्ठित किया। अनैतिकता के स्थान पर नैतिकता की प्रतिष्ठा की। साम्प्रदायिकता की सीमाओं को तोड़कर श्रमण संस्कृति के द्वारा मानवीय धर्म की प्रतिष्ठा की।

आपने कभी पुरुषार्थ में शिथिलता नहीं आने दी, कारण जीवन में कोई अहं नहीं था। आचार्य श्री ने योग, बोध और प्रेम में ही जीवन देखा। आपके व्यक्तित्व में इतना निखार आ गया था कि आप मानव से महामानव बन गये और जन-कल्याण में अपना जीवन समाप्त कर दिया। ऐसे महामानव की गौरव-गाथा को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

चाँदनी चवदस के जन्म का विशेष महत्त्व होता है। इसी महत्त्व को सार्थक किया परमपूज्य हस्तीमलजी म० सा० ने। ८२ वर्ष पूर्व मरुधरा के पीपाड़ शहर में माता रूपादेवी की कोख से श्री केवलचन्दजी बोहरा के घर पौष सुदी १४ को जन्म लेकर।

करीब ७० साल तक संयम की कठोर साधना में निरन्तर बढ़ते रहे। २१ अप्रैल ९१ को राजस्थान के निमाज गाँव में स्वर्गवास हुआ। ७० साल

तक स्व तथा पर कल्याण किया । जिसने अच्छी तरह जीना सीखा उसने अच्छी तरह मरना भी सीख लिया था । किसी का दिल न दुखाते अन्तिम साधना की । उपवास किया, बेला किया, तेला किया फिर पारणा न करके अत्यन्त प्रमोद भाव से संथारा लेकर अपने आंतरिक आत्मभावों की उत्कृष्टता का उदाहरण दुनिया के सामने रखा ।

जिस साधक ने विश्व को धर्म का सन्मार्ग बताया (गुरु हस्ती के दो फरमान—सामायिक स्वाध्याय महान) उस साधक ने संथारा लेकर समता का उत्कृष्ट यथार्थ रूप भी बताया । जीवन के अंतिम दिनों में उत्कृष्ट समताधारी ने १३ दिनों के संथारा काल में किसी प्रकार की उफ व आह तक नहीं की । अपने स्वरूप-रमण में मस्त बने रहे । निर्मोही बन गए ।

जीवन के अन्तिम काल में अत्यन्त समता के साथ आंतरिक साधना में लीन इस साधक की साधना ने हिंसक प्रवृत्ति के लोगों को अहिंसा की ओर आकर्षित किया । मुस्लिम भाइयों के मन में अपने आप इच्छा जागृत हुई कि एक महान् अध्यात्मयोगी हमारे गाँव में आकर अन्तिम साधना में लीन है । जब तक यह आत्मा विद्यमान रहेगी तब तक हम हिंसा के काम नहीं करेंगे । सैंकड़ों जीवों को अभयदान मिल गया इस अध्यात्म योगी 'अवधू विरला कोई' के निमित्त से । आचार्य प्रवर रचित स्तवन 'मैं हूँ उस नगरी का भूप, जहाँ नहीं होती छाया धूप' अक्षरशः मूर्त रूप हो गया । मर कर श्री मृत्युंजयी बन गए । "मैं खाली हाथ न चला जाऊँ" यह भोलावण शिष्य मण्डली को देते थे लेकिन ऐसी आत्मा खाली हाथ कैसे जाती जिसने जीवन के क्षण-क्षण का सदुपयोग कर आत्म-शक्ति के खजाने को सुरक्षित कर रखा था ।

आचार्य श्री का आराध्य वीतराग प्रभु है, जिसने रागद्वेष को जीत लिया है । भगवान शाँतिनाथ की प्रार्थना करते हुए आचार्य श्री के कवि ने केवल अपने लिए नहीं, सबके लिए शांति की कामना की है—

"भीतर शांति, बाहिर शांति, तुझमें शांति, मुझ में शांति ।
सब में शांति बसाओ, सब मिलकर शांति कहो ।।

आचार्य श्री की अपने गुरु के प्रति अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति थी । गुरु ही शिष्य को पत्थर से प्रतिभावान बनाता है ।

कवि की दृष्टि में सच्चा गुरु वह है जिसने जगत से नाता तोड़कर परमात्मा से शुभ ध्यान लगा लिया है, जो क्रोध, मान, माया, लोभादि कषायों

का त्यागी है, जो क्षमारस से ओतप्रोत है। ऐसे गुरु की सेवा करना ही अपने कर्म-बन्धनों को काटना है। गुरु के समान और उपकारी नहीं और कोई आधार नहीं।

पूज्य आचार्य प्रवर "अप्प दीवो भव" की प्रेरणा के प्रत्यक्ष प्रतीक थे। उन्होंने वीर वाणी को पीना, आत्म-स्वरूप को पाना और पाप से डरना सीखा था। आचार्य श्री का मंगलमय उत्तम जीवन का अंतिम फलित आदर्श समाधि-मरण था। उनकी पुनीत स्मृति हमें युगों-युगों तक प्रेरणा प्रदान करती रहेगी। ऐसे महापुरुष के चरणकमलों में उनकी ८३वीं जयन्ती पर मेरा शत-शत वन्दन।

—खीचन (जोधपुर) ३४२३०८

जिन-चरण में

▣ वर्षा सिंह

'जिन' की जयकार हो दिशाओं में।
कीर्ति गूंजे सदा हवाओं में॥

भावना के कमल रहें खिलते,
गंध बिखरे मधुर फिजाओं में।

धूप में, छांह में, खुशी—गम में,
'जिन' का ही नाम हो सदाओं में।

ज्योति जलती रहे सदा यूं ही,
आरती की सभी कलाओं में।

धर्म के द्वार पर रहें नत हम,
ध्यान अर्पित हो वन्दनाओं में।

नभ-धरा में निनाद हो 'जिन' का,
गान श्रद्धा का गीतिकाओं में।

'जिन—चरण' में करें नमन 'वर्षा',
'जिन' का आशीष हो घटाओं में।

—एफ-३६, एम. पी. ई. बी. कॉलोनी
मकरोनिया, सागर-४७०००४ (म. प्र.)

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में तीर्थंकर पार्श्वनाथ

□ डॉ. विनोद कुमार तिवारी

पार्श्वनाथ की ऐतिहासिकता पर अब तक इतिहासकारों में मतैक्य नहीं था, पर जैन धर्म एवं दर्शन पर कार्य कर रहे अनेक विद्वानों ने उनके जीवन की घटनाओं, शिक्षाओं और पुरातात्विक अवशेषों के आधार पर यह स्पष्ट कर दिया है कि वे एक ऐतिहासिक महापुरुष थे।

अनेक विद्वानों ने जैन और बौद्ध साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन से पार्श्व के जीवन पर प्रकाश डाला है। पार्श्वनाथ के पिता अश्वसेन वाराणसी के शासक थे और उनकी माता का नाम वामा था। वे क्षत्रिय वंश के इक्ष्वाकु कुल से सम्बन्धित थे। पार्श्व का जन्म ई. पू. ८५० में वाराणसी के समीप भेलपुर नामक स्थान पर हुआ था। पार्श्व के जीवन से सम्बन्धित कई अनुश्रुतियाँ हैं। उनके जीवन में सर्प की कई घटनायें घटीं। जन्म से पूर्व पार्श्व की माँ ने अपने बगल में (पार्श्व में) एक काले सर्प को रेंगते हुए देखा था, अत: उन्होंने बालक का नाम 'पार्श्व' रख दिया। पार्श्व ने आगे चलकर अपने जीवन में कई सर्पों की रक्षा की।

पार्श्व का विवाह प्रभावती के साथ हुआ था। पार्श्व ने तीस वर्ष तक सांसारिक जीवन व्यतीत किया और तत्पश्चात् प्रव्रजक हो गये। अन्तत: वे ८४ दिनों तक बनारस के निकट साधना में लीन रहे और तत्पश्चात् उन्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई। अगले तीस वर्षों तक वे भ्रमण करते हुए अपने धर्म का प्रचार-प्रसार करते रहे। इस बीच उन्होंने भारतवर्ष के एक बड़े क्षेत्र का भ्रमण किया। लगभग सत्तर वर्षों तक अपने धर्म का प्रचार करने के बाद सौ वर्ष की अवस्था में सम्मेद शिखर पर उन्होंने अपना शरीर त्याग किया। हजारी बाग जिले का सम्मेद शिखर आगे चलकर इसी कारण पारसनाथ पहाड़ी के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

जैन साहित्य में पार्श्व की शिक्षाओं पर वृहत् प्रकाश डाला गया है। पार्श्व का संघ समाज, जाति और कुल के बंधनों से परे था। उन्होंने चातुर्याम धर्म का प्रचार किया, जिसके अनुसार अहिंसा, सत्य, ईमानदारी और अपरिग्रह पर बल दिया गया। मौलिक रूप से पार्श्व और महावीर के धर्म और शिक्षा समान ही थे। पार्श्व ने चार मार्ग पर बल दिया जबकि महावीर का सिद्धान्त पाँच महाव्रतों पर आधारित था।

पार्श्व एक धार्मिक महापुरुष थे, जिन्होंने निरंकुशता, जातिवाद और पशु हिंसा का विरोध किया। उन्होंने जातिवाद से ऊपर उठकर मानवता के उत्थान के लिए कदम उठाया। ज्ञान प्राप्ति के बाद पार्श्व एक बड़े संघ के संचालक बने, जिसमें आठ गणधर और आठ गण थे। पार्श्व के संघ में १६,००० श्रमण थे। उनके संघ में स्त्री और पुरुष श्रावकों को समान स्तर प्राप्त था। जैन संघ कई भागों में विभाजित था, और प्रत्येक में कई हजार लोग थे, जिनका एक प्रधान हुआ करता था। जैन संघ का कई भागों में बंटा रहना ही यह प्रमाणित करता है कि पार्श्व में अपूर्व संगठन शक्ति थी।

प्राचीन जैन साहित्य में पार्श्व के अनुयायियों का वृहत् वर्णन हुआ है। पार्श्व के सिद्धान्त तत्कालीन राज परिवारों में काफी लोकप्रिय हुए। पार्श्व स्वयं काशी के राजकीय परिवार से सम्बद्ध थे। ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं कि गांधार के शासक नागनति, विदेह के सम्राट्, पंचाल के प्रधान, विदर्भ के राजा और कलिंग के प्रशासक ने भी पार्श्व के संघ में शामिल हो स्वयं को गौरवान्वित किया था। प्राप्त स्रोतों से स्पष्ट होता है कि स्वयं गौतम बुद्ध जैन विचारों से प्रभावित थे।

पार्श्व के संघ में समाज के हर वर्ग के लोग थे और यह जनसाधारण में काफी प्रचलित एवं लोकप्रिय हुआ। आधुनिक बिहार, बंगाल और उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में उनका मत काफी फैला। ऐसे प्रमाण मिले हैं जिससे पता चलता है कि स्वयं तीर्थंकर महावीर के माता-पिता पार्श्व के अनुयायी थे। पार्श्व के चातुर्याम धर्म को महावीर ने भी स्वीकार किया और इसमें मात्र ब्रह्मचर्य को जोड़कर इसे पंचमहाव्रत का स्वरूप दिया। स्वयं महावीर ने गंगेय के साथ हुए एक वार्त्तालाप में पार्श्व के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की थी तथा उन्हें उच्चकोटि का पुरुष कहा था। पार्श्व के अनुयायियों को निगंठकुमार पुत्त और महावीर के अनुयायियों को निगंठ नातपुत्त कहा जाता था। तुंगीय नामक स्थान पर पार्श्व के पाँच सौ शिष्यों ने महावीर के पंचमहाव्रत के सिद्धान्त को ग्रहण किया था। महावीर के युग में लोगों ने पार्श्व के चातुर्याम धर्म को महावीर के पंचमहाव्रत के काफी करीब माना और समय के अनुरूप पार्श्व के सिद्धान्तों के स्थान पर महावीर की शिक्षाओं को ग्रहण किया।

पार्श्व के संघ में बड़ी संख्या में स्त्रियाँ भी सम्मिलित हुईं, क्योंकि पार्श्व ने उन्हें अपने संघ में आने की छूट दी थी। प्रमुख स्त्रियों में काली, विजया, प्रगभ्भ, सक्का, लोह, अवन्तिका और उपाल की दो बहनों का नाम लिया जा सकता है, जो पार्श्व के संघ में शामिल हो उनके धर्म का प्रचार-प्रसार करती रहीं।

पार्श्व ने दक्षिण बिहार के सम्मेद शिखर (पार्श्वनाथ पहाड़ी) पर शरीर त्याग किया था और इसी कारण आज भी यह एक प्रतिष्ठित क्षेत्र है। इस क्षेत्र

में आज भी जैन अनुयायी बड़ी संख्या में पाये जाते हैं। यद्यपि इन अनुयायियों ने ब्राह्मण धर्म स्वीकार कर लिया है, पर उनका आचार-विचार अभी भी जैन धर्म के काफी करीब है। इन्हें सराक कहा जाता है, जो 'श्रावक' का ही बदला हुआ रूप हो सकता है।

पार्श्व को अब एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। ग्यूरिनॉट का कथन कि पार्श्व एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व थे, प्रमाणों के आलोक में सत्य है और इस कथन पर कोई दो मत नहीं हो सकते।

—रीडर, इतिहास विभाग, यू. आर. कॉलेज, रोसड़ा (समस्तीपुर) बिहार

प्रेम के टाँके | श्री नैनमल विनयचन्द्र सुराणा

एक बार जामनगर के महाराजा एक महात्माजी के दर्शनार्थ गये। जब वे महात्माजी के पास बैठे हुए थे तब अचानक उनकी दृष्टि महात्माजी के कुर्ते पर पड़ी। उसके टांके अत्यन्त कलात्मक थे। कुर्ता सीने वाला दरजी पास ही बैठा था। राजा ने बाहर जाते समय दरजी को पूछा, "क्या यह कुर्ता तुमने सिया है?

दरजी ने कहा, "हाँ।"

"मुझे भी ऐसा ही कुर्ता सीकर दो। तुम्हें मुँह-माँगी मजदूरी दूंगा, परन्तु स्मरण रहे, टांके तो ऐसे ही होने चाहिये।"

"अन्नदाता! आपके काम में कमी कैसे रखूँगा?" सात दिनों के पश्चात् अत्यन्त लगन से सिया हुआ सुन्दर टाँकों वाला कुर्ता दरजी ने महाराज को लाकर दिया। महाराज ने उसे देखा, वे कुर्ता देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, दरजी की कला पर मुग्ध हो गये; परन्तु महात्माजी के कुर्ते के समान पंक्तिबद्ध टाँकों का उसमें अभाव था।

महाराज ने कहा, "सिलाई तो अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक है। तुमने अपनी कला का प्रदर्शन किया है, परन्तु ये टाँके उन महात्माजी के कुर्ते के समान तो नहीं ही हैं।"

दरजी बोला—"गरीब परवर! मैंने हाथों से आँखों से और अपनी योग्यता से जितना हो सका उतना श्रम इस कुर्ते पर किया है, परन्तु उस महात्माजी के कुर्ते में तो इस समस्त श्रम के अतिरिक्त मेरे अन्तर का प्रेम भी कार्य कर रहा था। अतः मैं क्या करूं? प्रेम के टाँके बार-बार कहाँ से लाऊँ?"

—सुराणा कुटीर, सिरोही

परिचर्चा :

साधना विकासशील कैसे बने ?

□ आयोजक **श्री चाँदमल कर्णावट**
[संचालक, साधना विभाग]

विगत कुछ वर्षों से साधक भाई-बहिन आध्यात्मिक साधना पथ पर आरूढ़ हैं। साधना-शिविरों, पत्राचार, चर्चा-परिचर्चा आदि के द्वारा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से साधना में प्रगति लाने हेतु प्रयास किए गए हैं। फिर भी ऐसा अनुभव होता है कि साधकों को यथेष्ट रूप में साधना में आगे बढ़ाने हेतु और अधिक प्रयास करने की अपेक्षा है।

साधना का अर्थ ही साध्य की उपलब्धि हेतु निरन्तर प्रयास और अभ्यास करते रहना है। ये अभ्यास और प्रयास क्या हों, कैसे हों, आदि पर विचार करने हेतु यह परिचर्चा आयोजित की गई। पत्राचार द्वारा कुछ अनुभवी एवं सुयोग्य साधकों से उनके विचार जाने गए। आध्यात्मिक साधना की आवश्यकता, उसमें नियमितता एवं रुचि में अभिवृद्धि तथा इस प्रवृत्ति को सर्वतोभावेन विकासशील बनाने हेतु क्या प्रयास किए जाएँ, एतदर्थ कुछ प्रश्न बनाकर इन्हें भेजे गए, जो निम्नांकित हैं—

प्रश्न (i) आध्यात्मिक साधना की जीवन में क्या आवश्यकता है ?

(ii) आध्यात्मिक साधना में नियमितता कैसे लाई जा सकती है ?

(iii) आध्यात्मिक साधना में अभिरुचि बढ़ाने हेतु क्या किया जाना चाहिए ?

(iv) साधना शिविरों को अधिकाधिक सफल बनाने हेतु क्या कदम उठाना आवश्यक है ?

(v) साधक संघ का संचालन साधना को आगे बढ़ाने में कैसे सहायक बन सकता है ?

उक्त प्रश्नों के जो उत्तर, प्राप्त हुए, उन्हें यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है—

१. श्री संपतराजजी डोसी, जोधपुर

स्थानकवासी जैन स्वाध्यायी संघ, जोधपुर के संयोजक श्री डोसीजी जैन समाज के एक जाने-माने स्वाध्यायी एवं साधक हैं। वीतरागता की साधना हेतु आपका सम्पूर्ण जीवन समर्पित है। आपके दैनन्दिन जीवन व्यवहारों में आध्यात्मिकता घुलमिल सी गई है। नीचे साधना अधिक विकासशील कैसे बने इस सम्बन्ध में आपके विचार संक्षिप्त परन्तु पठनीय एवं मननीय हैं—

(i) अनुकूल एवं प्रतिकूल सभी परिस्थितियों में जीवन के हर क्षेत्र में सुखमय एवं शांतिपूर्ण जीवन जीने के लिए जीवन में आध्यात्मिक साधना की पूरी आवश्यकता है।

(ii) आध्यात्मिक साधना में नियमितता लाने के लिए प्रतिदिन नियत समय पर परमेष्ठी का अर्थ एवं भावसहित चिन्तन करना, फिर आत्मनिरीक्षण एवं परीक्षण करना, फिर अन्त में दोषों को त्यागने के लिए रोजाना दृढ़ संकल्प करने की आवश्यकता रहती है। ऐसा नियमित कार्यक्रम प्रातःकाल सामायिक में पहले, पीछे तथा रात्रि में सोने से पहले पुनः निरीक्षण-परीक्षा होना जरूरी है।

(iii) साधना में सच्ची एवं स्थायी रुचि जागृत करने के लिए साधकों को धर्म का वास्तविक स्वरूप समझाना चाहिए, जिससे साधक उसका आचरण कर जीवन के हर क्षेत्र में शान्ति एवं सच्चे सुख का अनुभव करें। जीवन में तत्काल शांति की अनुभूति से ही साधना के प्रति सच्ची रुचि जागृत हो सकती है, रुचि में अभिवृद्धि की जा सकती है। सच्चे धर्म याने राग-द्वेष अथवा मान या अहम् की कमी रूप धर्म साधना से जीवन में तत्काल शांति मिलती ही है। आज धर्म का फल भौतिक सुखों की प्राप्ति से ज्यादा जोड़ा जाता है। भौतिक सुख का मिलना जरूरी नहीं और मिल भी जाय तो उससे शांति बढ़ने के बजाय उल्टी घटती ही है।

(iv) साधना शिविरों में जो भी ज्ञान, ध्यान, तप, त्याग आदि कराया जाय, उसे दैनिक जीवन से भी जोड़ा जाना चाहिए। जब तक धर्म दैनिक जीवन का अंग नहीं बन जाता, तब तक मात्र वह शिविरों तक सीमित रह जाता है। धर्म के प्रति सच्ची रुचि एवं रस जागृत होना चाहिए। साधकों को यह अच्छी तरह समझा कर अनुभूति करानी चाहिए कि धर्म का फल तत्काल शांति

का मिलना होता है तथा दु:ख, अशान्ति एवं तनाव (टेंशन) की तत्काल कमी होती ही है।

(v) साधक संघ के पदाधिकारियों को बार-बार साधना शिविरों के माध्यम से पत्र-व्यवहार द्वारा तथा प्रचार आदि में जाकर साधकों से सम्पर्क रखना चाहिए। साधकों के जीवन में मोह, राग-द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ, आदि की कमी आ रही है या नहीं, और इनकी कमी आने से जीवन के हर क्षेत्र में तनाव कम हो रहा है या नहीं, ऐसी जानकारी करनी चाहिए। धर्म साधना के फलस्वरूप चाहे गृहस्थ हो या साधु, प्रत्येक के जीवन में शांति और आनन्द की वृद्धि होते रहने की अनुभूति होनी चाहिए। जैसे शरीर के रोगी को रोग घटने पर सुख की अनुभूति होती है, इसी प्रकार आत्मा में मोह के या राग के रोग के घटने पर शांति की अनुभूति होनी ही चाहिये। इस प्रकार प्रत्येक साधक से अपने अनुभवों की जानकारी लेकर संचालक साधकों को साधना मार्ग में आगे बढ़ा सकते हैं।

२. **श्री उदयलालजी जारोली, नीमच (म. प्र)**

विधि महाविद्यालय, नीमच के पूर्व प्राचार्य (प्रिंसिपल) श्री जारोलीजी, संप्रति स्वाध्याय संघ, जोधपुर के अन्तर्गत संचालित स्वाध्यायी पत्राचार पाठ्यक्रम के संयोजक हैं। आपके खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार सभी प्रवृत्तियों में आध्यात्मिक साधना रमी हुई है। साधना विकासशील कैसे बने? इस विषय में प्रस्तुत है आपका प्रेरणादायी चिंतन—

(i) राजनैतिक उठापटक, हत्या, आतंक, नक्सलवाद, पशु-पक्षी वध, सामाजिक विकृतियाँ, पारिवारिक कलह विघटन, व्यक्तिगत स्वार्थ भोग, अपराध वृत्ति एवं नैतिक अध: पतन आदि सभी की उपज का मूल कारण आध्यात्मिक जीवन के अभाव में खोजा जा सकता है। आत्मा-परमात्मा में गहन रुचिशील, श्रद्धाशील, राग-द्वेष, मोह को कर्मबन्ध का कारण और इनसे मुक्ति को आत्मा की मुक्ति या मोक्ष जानने, मानने एवं आचरण करने वाला मनुष्य अनिवार्यत: नैतिक मूल्यों, नीति-नियम से रहेगा। उसका खान-पान शुद्ध, सात्विक, प्राकृतिक होगा और रहन-सहन सादा-सरल होगा। वह पंचेन्द्रिय विषयों के भोग को रोग मानकर उनसे उदासीन रहते हुए मात्र संयम हेतु शरीर रक्षा करेगा तब उक्त वर्णित बुराइयों का भी उसमें अभाव होगा। जिस देश-समाज में जितने अधिक आध्यात्मिक जीवन जीने वाले सदस्य होंगे, वह देश-समाज उतना ही अधिक उन्नतिशील होगा। वहाँ पारस्परिक संघर्षों का अभाव होगा और स्नेह, सहकारिता, दया, मैत्री प्रमोद के गुण विकसित होंगे। ऐसी दशा में साधक का व्यक्तिगत इहलौकिक जीवन भी सुखी होगा और पारलौकिक

जीवन भी। ऐसे व्यक्तियों का समुदाय भी परम सुखी होगा। अतः आध्यात्मिक जीवन की नितांत अनिवार्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता।

(ii) स्व पर कल्याणकारिता समझ में आने के बाद साधना स्वतः नियमित हो जाती है। शरीर, परिवार, धन-सम्पदा की महत्ता और अनिवार्यता जितने अंशों में और जितनी तीव्रता से महसूस होती है, तदर्थक कार्य भी हम उतनी ही त्वरा और दक्षता से समय का भोग देकर पूरा करते हैं। इसी प्रकार यदि आत्मा का माहात्म्य समझ में आ जाए, मनुष्य जन्म की दुर्लभता और उससे भी अधिक जिनेश्वर भगवंत के वीतराग वचनों का मर्म सद्गुरु भगवन्त द्वारा समझ में आ जाय तो आध्यात्मिक साधना पूरे वेग से और नियमितता से होगी। जब तक हमारी समझ में फर्क रहेगा, आत्मभ्रान्ति कायम रहेगी, शरीरादि मोहजन्य वासना बनी रहेगी, तब तक सम्यक् साधना प्रारम्भ ही नहीं हो सकेगी।

(iii) मन्द विषय ने सरलता, सह आज्ञा सुविचार।
करुणा कोमलतादि गुण, प्रथम भूमिका धार॥

यदि ऐसी भूमिका बन जाय तो समझ आ जाए और तब जीवन की गाड़ी सही मार्ग पर चलने लगे। व्याख्यान श्रवण, आगमिक स्वाध्याय, सत्संग से रुचि जगे भी तो संसार का इतना भारी कुसंग का जोर चलता है कि साधक उधर मुँह करते ही चौकड़ी भूल जाता है। एक सामायिक या २०–३० मिनट के स्वाध्याय से २३ घंटे के कुसंग का प्रकोप शान्त नहीं हो सकता। इसलिए साधना में रुचि बढ़ाने के लिए निरन्तर और अधिकाधिक स्वाध्याय और सत्संग चाहिए। इसी से तत्त्व निर्णय दृढ़ होगा, विषयों के प्रति मन्दता, नीरसता होगी, परिवार, धन-सम्पदा के प्रति उदासीन भाव और मध्यस्थ भाव जागृत होंगे और तब साधक यह निश्चय कर सकेगा कि मेरे लिए तो यह अन्तिम पुद्गल परावर्तन है। इसका यह मेरा अन्तिम मनुष्य भव और इस भव का एक-एक पल सारा धन लुटादूँ तो भी वापिस नहीं मिलने वाला है। साधक के इस चिंतन और आचरण से उसकी रुचि आत्म-साधना में निरन्तर बढ़ती ही जायगी।

(iv) दया, शान्ति, समता, क्षमा, सत्य त्याग वैराग्य।
होय मुमुक्षु घट विषे, एह सदाप सुजाग्य॥

इतने गुण तो आत्मार्थी मुमुक्षु के होने चाहिए। मुमुक्षु, सम्यक्त्वी, व्रती, स्वाध्यायी और साधक यह क्रम है। हम स्वाध्यायियों को, साधकों को इतने ऊँचे पद पर मानने का भ्रम हो गया है। अतः शिविरों में साधकों को अपना

आकलन स्वयं करना चाहिए। सर्वप्रथम सच्ची समझ आनी चाहिए। तत्त्व निर्णय किया जाना चाहिए। मनुष्यत्व आदि चार दुर्लभताओं, प्रतिक्षण भाव-मरण के भाव शिविरों में पक्के होने चाहिए। इतने पक्के कि जब परिवार, धन्धे नौकरी में जावें तब भी उनका रंग जमा रहेगा। तब साधना शिविर सफल होंगे। इसके लिए शिविर ८—१० दिवसीय हों। १०—१२ घण्टे का स्वाध्याय, ध्यान हो और शिविर बार-बार लगें। अभ्यास ऐसा हो कि घर पर जाकर भी साधक ३—४ घंटे स्वाध्याय, सामायिक, ध्यान, चिंतन आदि में लगाएँ और परिवार आदि में उदासीन वृत्ति रख सकें। तत्त्व रुचि गहन बने, तत्त्व निर्णय दृढ़ हो जिससे साधक आरंभ-परिग्रह से स्वतः छूटता जाय और राग-द्वेष का नाश करते हुए मोक्ष मार्ग पर बढ़ते जायें। तभी साधना शिविर सफल होंगे।

(v) संचालक साधकों का अग्रेसर होता है, अतः उसका जीवन और बाह्य-आभ्यंतर साधकों के लिए ध्रुवतारा बनता है। साधक की साधना में गिरावट, उलझन, भटकाव आने पर संचालक का जीवन वृत्त उदाहरण बन सके। प्रत्यक्ष समागम से वे तत्त्व सम्बन्धी भूलें निकालें और अप्रत्यक्ष में संचालक की साधना और दी हुई समझ साधक के हित प्रेरणास्रोत बनें। इसके लिए संचालक को मत-पंथ, सम्प्रदाय से परे निष्पक्ष तत्त्व दृष्टि बनानी होगी। जब साधक की ऐसी दृष्टि बन जायगी तो संचालक का कार्य सरल हो जायगा।

३. श्री मोहनराजजी मेहता, जोधपुर

साधनाशील जीवन जीने वाले एवं साधना-स्वाध्याय में गहरी रुचि रखने वाले श्री मोहनराजजी मेहता एक वयोवृद्ध अनुभवी साधक और स्वाध्यायी हैं। आपके अपने अनुभवपूर्ण विचारों की प्रस्तुति इस प्रकार है—

(i) हमारी आतमा अनंतकाल से भव-भ्रमण कर रही है। आत्मसाधना करने से संसार का परिभ्रमण कम करके जीव कर्ममुक्त होकर सिद्धगति को प्राप्त करता है और जन्म-मरण, वृद्धावस्था एवं रोग से सदा के लिए मुक्ति पा लेता है।

साधना से प्रत्येक जीव के साथ राग कम होता जाता है और प्राणिमात्र के साथ प्रेमभाव में वृद्धि होती हैं। साधक का जीवन सादा व सरल बन जाता है और उसकी इच्छाएँ कम हो जाती हैं। जितनी इच्छाएँ कम होती जाती हैं उतना ही साधक के जीवन में दुःख घटता जाता है और आत्मिक सुख-शान्ति में वृद्धि होती जाती है। इन सभी दृष्टियों से जीवन में आध्यात्मिक साधना की अत्यन्त आवश्यकता है।

(ii) साधक ने जो व्रत-नियम ग्रहण किए हैं उनका व १८ पापों का चिंतन दिन में तीन बार अवश्य किया जाय। जिन नियमों का पालन नहीं हुआ हो, उनके लिए साधक पश्चात्ताप करें एवं भविष्य में सावधान रहें ताकि वह गलती दुबारा न होवे। पुनः उल्लंघन हो जाय तो साधक समुचित प्रायश्चित्त करे। प्रायश्चित्त के रूप में जो वस्तु साधक को अधिक प्रिय लगती है, उसका त्याग कुछ दिन के लिए करे।

(iii) प्रत्येक साधक जो नियमित सामायिक करता है, उस समय में तथा अतिरिक्त समय में नियमित स्वाध्याय करता रहे तो साधना में रुचि में वृद्धि अवश्य हो सकेगी।

(iv) साधकों से उनकी साधना में प्रगति जानने हेतु पत्र नियमित भेजे जायें। इससे शिविरों के बाद भी साधक साधना मार्ग में आगे बढ़ते रह सकते हैं। इसके अतिरिक्त शिविरों की संख्या में वृद्धि की जाय ताकि बार-बार के अभ्यास से साधना शिविरों की सफलता सुनिश्चित हो सके।

(v) साधना सम्बन्धी साहित्य का पठन-पाठन साधकों के लिए प्रेरणा-प्रद बन सकता है। अतः साधना सम्बन्धी रचनाएँ जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हों, उन्हें साधकों तक अवश्य पहुँचाया जाय। शिविर और पत्राचार के अलावा साहित्य अथवा पठन सामग्री साधकों तक पहुँचाने से उनकी साधना में दृढ़ता आयेगी और वह विकासशील बन सकेगी।

४. **श्री गोपीलालजी जैन, बजरिया (सवाईमाधोपुर)**

श्री गोपीलालजी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के वरिष्ठ स्वाध्यायी एवं उच्चतम श्रेणी के साधक हैं। त्याग-तप में आपकी गहरी रुचि है। आप साधना-विभाग के प्रारम्भ से ही साधना शिविरों में भाग लेते रहे हैं। 'साधना विकासशील कैसे बने' इस विषय में आपके विचार निम्न प्रकार ज्ञातव्य हैं—

(i) साधना से ही साधक को ज्ञान एवं क्रिया की महिमा ज्ञात होती है। वह यह जान पाता है कि प्रत्येक आत्मा सिद्ध समान है। साधना से वह अपने शुद्ध रूप को प्रकट कर सकता है।

निज आतम को दमन कर, पर आतम को चीन्ह।
परमातम का भजन कर, यही मत परवीन।।

(ii) साधना में रुचि बढ़ाने हेतु साधक का तत्त्वज्ञ होना आवश्यक है। तत्त्वज्ञान से उसे साधना का सही रूप ज्ञात होगा जिससे साधना मार्ग में बढ़ने में

रुचि बढ़ेगी। 'समत्वदर्शी पाप नहीं करता' और समझ-समझकर 'जीवड़ा गया अनंता मोक्ष' आदि उक्तियों से तत्त्वज्ञान की महिमा स्पष्ट होती है। कहने का अभिप्राय यही है कि तत्त्वज्ञान से स्व और पर का सही बोध करके आत्मा साधना में रुचि बढ़ा सकता है। केवल जानकारी ही नहीं परन्तु क्रिया या आचरण में भी हमारे कदम आगे बढ़ने चाहिये। जिनेश्वर देव और गुरु की आज्ञा पालन में ही धर्म है। यह मानकर सद्गुरु भगवन्तों की आज्ञा में रहते हुए साधना मार्ग पर आगे बढ़ा जा सकता है।

(iii) (iv) (v) बिन्दुओं पर विस्तार से न लिखकर संक्षेप में आपका विचार शेष बिन्दुओं के लिए भी यही रहा कि देव, गुरु की आज्ञा का अनुसरण एवं अनुपालन करने में ही साधना में नियमितता, साधना शिविरों एवं संचालन की सफलता निहित है।

संयोजकीय टिप्पणी :

परिचर्चा में अन्य अनुभवी चिन्तक एवं रुचिशील साधकों के विचार आमन्त्रित किये गये थे, परन्तु जिन से भी विचार उपलब्ध हो सके, उन्हें यहाँ प्रकाशित किया गया है।

साधना जीवन से जुड़नी ही चाहिए। इसीलिए साधक घर पर रहते हुए भी प्रतिदिन नियमित ध्यान, मौन, तप, त्याग, स्वाध्याय एवं कषाय विजय का अभ्यास करते हैं। वे इसे और आगे बढ़ावें।

साधना को अग्रसर करने हेतु जितना तत्त्वज्ञान आवश्यक है, उतना ही उसका जीवन में आचरण भी। अन्यथा तो वह ज्ञान भारस्वरूप ही हो जायगा। **'ज्ञानंभार : क्रियां बिना'**। मोक्ष मार्ग के निरूपण में व्यवहार में सम्यक् ज्ञान को प्रथम स्थान दिया गया है इसके साथ ही सम्यक् चारित्र को भी मोक्ष मार्ग का अनिवार्य हेतु माना गया है और सम्यग्दर्शन को भी। समझ तो सर्वप्रथम सही होनी ही चाहिए। परन्तु सम्यग्ज्ञानादि तीनों के समन्वित रूप को ही मोक्ष मार्ग माना गया है। अतः साधकों के लिए तीनों को महत्त्व देना आवश्यक है।

इन्द्रिय विषयों/विकारों एवं कषायों पर विजय करना साधना का मूल लक्ष्य है जिसकी ओर हम सभी साधकों का ध्यान केन्द्रित होना चाहिए।

अनुभवी साधकों के इस परिचर्चा में भाग लेने का स्वागत है। साधक परिचर्चा के विचारों पर चिंतन-मनन करके उन्हें आचरण का रूप देंगे और साधना पथ पर आगे बढ़ेंगे, यही अपेक्षा है।

—३५, अहिंसापुरी, फतहपुरा, उदयपुर–३१३ ००१

VEGETARIAN DIET

In earlier days it was considered that meat diet is better than vegetarian diet. But later. researches have shown that there is nothing practical that could support this theory.

It was also said that meat protiens are better assimilated into the body than vegetable protiens. Latest experiments have shown that it is not so. A judicious of vegetables would give required quantity of protiens from vegetable food.

It is a vulgar error to regard meat eating in any form as necessary to life. We know how much of the prevailing meat diet is not merely a wasteful extravagance but a source of serious evil to the consumer.

Vegetarian diet is the best diet—Meat, fish and eggs are not necessary food because a diet containing cereals, milk, pulses, vegetables and fruits in the right amount, is in every way a quite satisfactory (well balanced) diet.

—Health Bulletin No. 30, Page No. 15
(Government of India)

Vegetarian diet is the best

Vegetarian diet is full of food essentials

(1) **Protein**—Supplies building material for the body and making good the loss of tissue.

(2) **Fat**—Supplies reserve energy and prevents the loss of heat from the body.

(3) **Carbohydrates**—Body's chief source of energy.

(4) **Mineral Salt**

(a) **Calcium**— Necessary for the growth of bones and teeth and makes the heart work properly.

(b) **Phosphorus**—Necessary for all living tissues and is an important constituent of blood.

(c) **Iron**—Necessary for blood formation. Enables blood to carry oxygen from lungs to every part of the body. For lack of sufficient iron in the blood, people suffer from general weakness anaemia.

(5) **Vitamins**—Vitamins (A. B. C. D. etc.) are organic substances required in regulating some of the body processes and preventing diseases. Their constant deficiency in food causes one disease or the other.

Calories—Calories are heat units by which food requirements are estimated. One gram of protein yields–4.1 calories. One gram of carbohydrates yields–4.4 calories. One gram of fat yields–9.3 calories.

Water—Water is necessary for removing sweat urine etc. from the body. It cleans kidney and helps digestive system and blood circulation It also maintains normal temprature of the body.

HOW MUCH TO EAT DAILY ?

A diet list of a healthy person :

		Grams
Cereals	—	450
Milk & Milk Products	—	250
Pulses	—	100
Vegetables	—	200
Leafy Vegetables	—	125
Ghee, Oils, Fats	—	50
Fruits, Nuts	—	50

A Grert Medical Authority

Food Value Chart

Health Bulletin No. 23 Government of India

Vegetarian Foods

NAME	Colories per Gms	Protien %	Fat %	Mineral Salt %	Carbo Hydrates %	Calcium %	Phosphorus %	Iron %
Green Gram	334	24.0	1.3	3.6	56.6	0.14	0.28	8.4
Black Gram	350	24.0	1.4	3.4	60.3	0.20	0.37	9.8
Red Gram	353	22.3	1.7	3.6	57.2	0.14	0.26	8.8
Lentil	346	25.1	0.7	2.1	59.7	0.13	0.25	2.0
Peas	358	22.9	1.4	2.3	63.5	0.03	0.36	5.0
Bengal Gram	372	22.5	5.2	2.2	58.9	0.07	0.31	8.9
Cow Gram	327	24.6	0.7	3.2	55.7	0.07	0.49	3.8
Soya Beans	432	43.2	19.5	4.6	22.9	0.24	0.69	11.5
Almond	655	20.8	58.9	2.9	10.5	0.23	0.49	3.5
Cashewnut	596	21.2	46.9	2.4	22.3	0.05	0.45	5.4
Coconut	444	4.5	41.6	1.0	13.0	0.01	0.24	1.7
Gingelly	564	18.3	43.3	5.2	25.2	1.44	0.57	10.5
Groundnut	549	31.5	39.8	2.3	19.3	0.05	0.39	1.6
Pistochionut	626	19.8	53.5	2.8	16.2	0.14	0.43	13.7
Walnut	687	15.6	64.5	1.8	11.0	0.10	0.38	4.8
Cumin	356	18.7	15.0	5.8	36.6	1.08	0.49	31.0
Fenugreek	333	26.2	5.8	3.0	44.1	0.16	0.37	14.1
Cheese	348	24.1	25.1	4.2	6.3	0.79	0.52	2.1
Ghee	900	—	98.0	—	—	—	—	—
Skimmed Milk Powder	347	38.0	0.1	6.8	15.0	1.37	1.00	1.04

Flash Foods

NAME	Colories per Gms	Protien %	Fat %	Mineral Salt %	Carbo Hydrates %	Calcium %	Phosphorus %	Iron %
Egg	173	13.3	13.3	1.0	—	0.06	0.22	2.1
Fish	91	22.6	0.6	0.8	—	0.02	0.19	0.9
Mutton	194	18.5	13.3	1.3	—	0.15	0.15	2.5
Pork	114	18.7	4.4	1.0	[illegible]	0.03	0.2	2.3

Eggs are stores of poison

Eggs contain 6 kinds of poisons

Modern science has found the following harmful substances in egg which damage the organs of the human body in different ways and cause many diseases in the human beings :

1) Cholesterol
2) D. D. T.
3) Lipoproteins
4) Saturated Fatty Acids
5) S. R. Fraction 10 to 20
6) Microglobulins

Effect of the poisons in the body

Eggs cause heart disease, high blood pressure, paralysis, stone in gall bladder, intermittent claudication etc.

The above six harmful substances damage the human body such as arteries, heart, brain, kidney, liver etc., and cause many diseases such as coronary artery thrombosis, angina pectoris, atherosclerosis, hypertention, paralysis stone in gall bladder, intermittent claudication, cerebral insufficiency etc.

Whatever may be the type of eggs, they gradually and slowly damage the important organs of the human body and help in creating diseases.

Vegetarian Eggs—Absolutely a false propaganda because they are not produced by any plant.

Misconception is being intentionally created by some poultry farms by the name of so called 'Vegetarian Eggs'. In fact they are not produced by any plant like vegetable milk or ghee. Each and every egg ig produced by a hen or a duck.

Vegetarian Egg—a type of abortion, moistened with urine blood and faecal matter.

Egg, from which a chicken does not come out, some people also call it, by nick name. 'Vegetarian Egg' for business purpose to

increase their sale. In reality it is a type of abortion of a hen which is moistened with urine, blood and faecal matter. It has more potential of creating diseases in human body than an ordinary egg. It is not a vegetable substance Normally such type of eggs are not produced. They are not available in the market and an average person cannot recognise them.

Eggs cause putrefaction in the intestines

Eggs do not contain carbohydrates and vitamin 'C' and are deficient in calcium, iron and vitamin 'B' complex. Besides this, they contain many poisonous substances. So they cause putrefaction in the intestines and harmful substances which are generated and absorbed in the body and thus damage important organs of human-beings and put unnecessarily harmful load on the body metabolism. As such they disturb the digestion and normal metabolism of the body and reduce life span in the long run. Eggs are not completely and easily digested as compared to milk.

—Courtesy : Mahaveer Vani Prakashan, RAICHUR

A dead cow or sheep lying in the pasture is recognised as carrion. The same sort of a carcars dressed and hungup in butcher's stall passes as food.

—Dr. J. H. KELLOG, U.S.A.

Vegetarianism is going to be the practical solution for dealing with problems of some of the most densely populated areas in the world. Vegetarianism has become a socio—economic necessity apart from any other aspect.

—Dr. SUBRAMANIAM, Mysore

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजें :
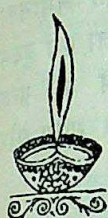
साहित्य-समीक्षा

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

१. **जैन दर्शन और कबीर : एक तुलनात्मक अध्ययन**—जैन साध्वी डॉ० मंजु श्री, प्र० आदित्य प्रकाशन, एफ–१४/६५, माडल टाउन II, दिल्ली–११०००६, पृ० ४८०, मू० ४५०.०० ।

विगत दशक में उच्च-स्तरीय अध्ययन एवं शोध की ओर विश्वविद्यालय के स्तर पर—जैन सन्त-सतियों की प्रवृत्ति विशेष रूप से बढ़ी है । सन्तों की अपेक्षा साध्वियाँ इस दिशा में अग्रणी रही हैं । कई साध्वियों ने विभिन्न विश्वविद्यालयों से दर्शन-साहित्य और संस्कृति विषय में पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की हैं । इन साध्वियों में डॉ. मंजु श्री का नाम विशेष उल्लेखनीय है । मंजु श्री बहुमुखी प्रतिभा की धनी हैं । आप ओजस्वी वक्ता होने के साथ-साथ सुमधुर गीतकार, कुशल लेखिका एवं गवेषक विदुषी भी हैं । प्रस्तुत ग्रंथ आपका शोध प्रबन्ध है । जिस पर पूना विश्वविद्यालय ने आपको पी. एच. डी. की उपाधि प्रदान की है ।

संत कबीर भक्तिकाल की निर्गुण धारा के प्रतिनिधि कवि हैं । उन्होंने छुआछूत, जातपांत, ढोंग, पाखण्ड, आडम्बर आदि के खिलाफ अपना क्रांति-स्वर बुलन्द किया और मानव-मानव की एकता पर बल दिया । कबीर के काव्य में ज्ञान, भक्ति और प्रेम की त्रिवेणी प्रवाहित है । कबीर आत्म-जागृति और पुरुषार्थ के कवि हैं । कबीर-काव्य के अध्ययन में वैष्णव, इस्लाम, सूफी, हठयोग, नाथ पंथ आदि के प्रभावों की चर्चा की गई है । पर जैन दर्शन के परिप्रेक्ष्य में कबीर का अध्ययन उपेक्षित रहा है । साध्वी मंजु श्री ने अपने अनुसंधान द्वारा इस अभाव की पूर्ति की है ।

यह ग्रंथ साध्वी श्री के गहन अध्ययन, तटस्थ समीक्षण, गम्भीर विश्लेषण-क्षमता और मौलिक चिन्तन का परिणाम है । ग्रन्थ के छह अध्यायों में जैन परम्परा की प्राचीनता, उसकी विकास-यात्रा, कबीर युगीन परिस्थितियों पर प्रकाश डालते हुए जैन दर्शन की तात्विक मीमांसा, जैन साधना पद्धति, जैन

श्रावकाचार एवं श्रमणाचार के परिप्रेक्ष्य में कबीर विचारधारा का तुलनात्मक विवेचन विश्लेषण कर साध्वी श्री ने जो निष्कर्ष निकाले हैं, वे बड़े सटीक और प्रामाणिक हैं। परिशिष्ट में जैन उक्तियों एवं कबीर उक्तियों की समानता के जो उद्धरण दिये गये हैं वे साध्वी श्री की व्यापक अध्ययनशीलता एवं सूक्ष्म ग्रहण शक्ति के परिचायक हैं। सन्त-साहित्य के अध्ययन की दिशा में यह ग्रन्थ कई नवीन आयामों को उद्घाटित करता है। ग्रन्थ पठनीय, आचरणीय और संग्रहणीय है।

२. **जैन सिद्धान्त भवन ग्रंथावली भाग १ व २**—सम्पादक ऋषभचन्द जैन फौजदार, प्र. श्री जैन सिद्धांत भवन प्रकाशन, भगवान महावीर मार्ग, आरा–८०२३०१ (विहार), पृ. लगभग ५०० प्रत्येक, मूल्य १३५.०० प्रत्येक भाग।

प्राचीन एवं मध्यकालीन साहित्य और संस्कृति के अध्ययन–अनुसंधान में हस्तलिखित ग्रन्थों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये ग्रन्थ राजकीय संग्रहालयों, मंदिरों, उपासरों एवं व्यक्तिगत संग्रहों में उपलब्ध हैं। ग्रंथों के संरक्षण एवं प्रतिलेखन में जैन श्रावकों, आचार्यों, मुनियों एवं साध्वियों की बड़ी भूमिका रही है। ग्रंथों का प्रतिलेखन एवं स्वाध्याय पुण्य व निर्जरा का कार्य माना जाता रहा है। यही कारण है कि देश के विभिन्न भागों में जैन ग्रन्थ भण्डार आज भी सुरक्षित और व्यवस्थित हैं। इन भण्डारों में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, कन्नड़, तमिल आदि भाषाओं की विविध विषयक पाण्डुलिपियाँ बड़ी संख्या में मिलती हैं। कई ग्रन्थ भण्डारों ने अपने सूचीपत्र भी प्रकाशित किये हैं। इस दिशा में श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस भवन का एक उल्लेखनीय विभाग श्री देवकुमार जैन प्राच्य शोध संस्थान हैं जिसमें शोध कार्य भी होता है। भवन में कई महत्त्वपूर्ण दुर्लभ ग्रन्थ संग्रहीत हैं जिनका सूची-पत्र छह भागों में प्रकाशित करने की योजना है।

प्रस्तुत दो भागों में १ से ९९७ एवं ९९८ से २०२० ग्रन्थों का ११ शीर्षकों में परिचय दिया गया है। यथा ग्रन्थ-संख्या, ग्रन्थ-नाम, लेखक और टीकाकार का नाम, लिपि, भाषा, आकार, स्थिति-समय आदि। जो ग्रन्थ सूचीबद्ध किये गये हैं वे १. पुराण - चरित्र - कथा २. धर्म - दर्शन - आचार ३. रस - छन्द - अलंकार - काव्य ४. मंत्र - कर्मकाण्ड ५. आयुर्वेद ६. स्तोत्र ७. पूजा - पाठ - विधान, इन सात विषयों से सम्बन्धित हैं। प्रत्येक भाग में दो खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में अकारादि क्रम से पाण्डलिपियों का विवरण रोमन लिपि में दिया गया है और द्वितीय खण्ड में परिशिष्ट शीर्षक से ग्रन्थों से प्रारम्भिक

अंश, अन्तिम अंश तथा प्रशस्ति दी गई है। यह खण्ड भाषा, साहित्य, धर्म, दर्शन और इतिहास के अध्ययन-अनुसंधान में बड़ा सहायक है। जिन पाण्डुलिपियों का विवरण दिया गया है वे संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश एवं हिन्दी भाषा से सम्बन्धित हैं।

३. **भक्तामर : एक दिव्य दृष्टि**—साध्वी डॉ. दिव्यप्रभा, प्र० उमरावमल चौरड़िया एवं प्राकृत भारती अकादमी, प्राप्ति स्थान—जैन पुस्तक मन्दिर, चौड़ा रास्ता, जयपुर–३, पृ. १८८, मू. ५१.००।

स्तोत्र काव्य में 'भक्तामर' का सर्वोपरि स्थान है। शायद ही कोई ऐसा ज्ञान भण्डार हो जिसमें इसकी एकाधिक पाण्डुलिपि न मिलती हो। इसकी स्वर्णाक्षरी एवं सचित्र प्रतियां भी कई भण्डारों में उपलब्ध हैं। यह स्तोत्र अत्यन्त लोकप्रिय एवं प्रभावकारी है। इसकी संस्कृत व अन्य भाषा-टीकाएँ प्रचुर परिमाण में मिलती हैं। कई भाषाओं में इसके अनुवाद (गद्य-पद्यानुवाद) हुए हैं। भक्तामर-साहित्य की अपनी परम्परा सी बन गई है। पर प्रस्तुत ग्रंथ भक्तामर-साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान और दृष्टि लिये हुये है।

साध्वी श्री दिव्यप्रभाजी बाल्यकाल से ही इस स्तोत्र की आराधिका और साधिका रही हैं। उन्होंने इसका मात्र शब्द-पारायण ही नहीं किया वरन् आत्मानुभूति में इसे उतारा है। अपने १९८९ के जयपुर चातुर्मास में प्रत्येक रविवार को क्रमशः साध्वी श्री ने 'भक्तामर' के श्लोकों पर १७ प्रवचन दिये। उन्हीं प्रवचनों का सम्पादित रूप है यह ग्रंथ। इसमें साध्वी श्री ने परम्परागत अर्थों पर स्वतन्त्र चिन्तन करते हुए आगमपरक साधनाभूत विवेचन किया है। यह ग्रंथ साध्वी श्री के चिन्तन-मनन का नवनीत और उनके निष्कपट भक्त हृदय की गहन अभिव्यक्ति है। भक्ति, अनुरक्ति और आत्मानुभूति की त्रिवेणी प्रवाहित है इन प्रवचनों में। धर्म, दर्शन, मनोविज्ञान, शरीर शास्त्र, रसायन शास्त्र, भौतिक शास्त्र और काव्य शास्त्र का समन्वित विवेचन है इस ग्रंथ में। साध्वी श्री की आत्मलीनता से यह विवेचन दिव्य और विशिष्ट बन गया है।

★ ★ ★
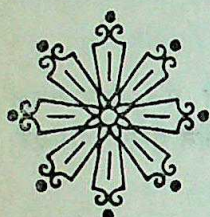
विवेक

प्रस्तोता—श्री पी० एम० चौरड़िया

[१]

(१) **प्रश्न**—विवेक किसे कहते हैं ?

उत्तर—(१) मानव की बुद्धि का वह अंश जो मानव को कर्तव्य निर्धारण में उचित चुनाव का मार्ग दर्शन देता है।

(२) विचारयुक्त ज्ञान, वस्तु में गुण-दोष परखने की शक्ति।

(३) बुद्धि और भावना का समन्वय मार्ग विवेक है।

(४) शाश्वत विचार ही विवेक है।

—स्वामी रामतीर्थ

(२) **प्रश्न**—पशु और मनुष्य में कब अन्तर नहीं रहता ?

उत्तर—जब मनुष्य विवेक खो देता है तो उसमें और पशु में कोई अन्तर नहीं रहता।

(३) **प्रश्न**—विवेक शून्य आचरण का फल क्या है ?

उत्तर—समाज में निंदा, अपयश एवं अशान्ति तथा अगले भवों में दुर्गति।

[२]

(१) **प्रश्न**—'विवेक' एवं 'धर्म' में क्या सम्बन्ध है ?

उत्तर—विवेक ही धर्म है। विवेकपूर्वक किया गया प्रत्येक आचरण धर्म की सीमा में आता है और विवेक शून्य होकर किया गया धर्म–आचरण वास्तव में धर्म नहीं, सिर्फ धर्म का भ्रम होता है। जीवन के सुख-शान्ति का द्वार विवेक है। विवेक धर्म का प्रवेश द्वार है। जहाँ विबेक है, वहीं धर्म है।

(२) **प्रश्न**—विवेक मन्द अथवा क्षीण कब होता है ?

उत्तर—जब मानब का चिन्तन अवरुद्ध हो जाता है। उस समय श्रेष्ठत्व का चयन करने में रुकावट आ जाती है। चिन्तन का क्षीण अथवा मन्द होने से विवेक भी मन्द अथवा क्षीण हो जाता है।

(३) **प्रश्न**—विवेक के पर्यायवाची शब्द कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—यतना, यतनाचार ।

[३]

(१) **प्रश्न**— विवेगे धम्मो' इसका अर्थ बताइये ?

उत्तर—विवेक में ही धर्म है ।

(२) **प्रश्न**—'अविवेक परमापदा परम्' इन शब्दों का क्या अर्थ है ?

उत्तर—अविवेक बड़ी विपत्तियों का कारण है ।

(३) **प्रश्न**—जं धन्नं तं 'न वत्तव्वं' (सूत्रकृतांग)

इन शब्दों का क्या रहस्य है ?

उत्तर—जो गोपनीय हो उसे नहीं बोलना चाहिये ।

[४]

(१) **प्रश्न**—'उतावला सो बावला, धीरा सो गम्भीरा'

उपर्युक्त उक्ति का संक्षिप्त में विवेचन कीजिये ।

उत्तर—बावला व्यक्ति वह होता है जो किसी कार्य को करने के पहले चिन्तन नहीं करता और प्रत्येक कार्य को हड़बड़ी में प्रारम्भ करता है तथा वह कार्य पूरा होने के पहले ही दूसरा कार्य प्रारम्भ करने लग जाता है । नतीजा यह होता है कि वह किसी भी कार्य को पूर्ण (सम्पन्न) नहीं कर सकता । इसलिये उतावला को बावला कहा गया है । दूसरी ओर जो व्यक्ति सोच-समझकर धीरज से, विवेकपूर्वक कार्य करता है, उसको सफलता मिलती है । वह गम्भीर होता है ।

(२) **प्रश्न**—"कोई भी काम करने के पहले सलाह लो, सलाह देने वाला और कोई न हो तो अपनी पगड़ी से ही सलाह ले लो ।" ऐसा क्यों कहा गया है ?

उत्तर—कार्य को करने के पूर्व सोचने एवं चिन्तन का समय मिल जायेगा । जिससे उस कार्य के लाभ-हानि, गुण-दोष का ज्ञान हो जायेगा । ऐसा करने से कम से कम अनिष्ट से तो बच जायेंगे ।

(३) **प्रश्न**—'मन के हाथी को विवेक के अंकुश में रखो ।'

उपर्युक्त शब्द किसने कहे ?

उत्तर—'रामकृष्ण परमहंस ने ।

[५]

(१) **प्रश्न**—घिरे रहो परिवार से, पर भूलो न विवेक ।
रहा कभी मैं एक था, अन्त एक का एक ।।

उपर्युक्त दोहे में कवि ने क्या प्रेरणा दी है ?

उत्तर—कवि कहता है—हे मानव ! तुम परिवार में रहकर परिवार की सभी जिम्मेदारियों का पालन करो, परिवार का पालन पोषण करो, व्यवसाय करो, बाल-बच्चों की परवरिश करो, लेकिन यह न भूलो कि तुम अकेले ही आये थे और अन्त में अकेले ही जाओगे। यदि यह विवेक रखकर सारी क्रियाएँ करोगे, तो पाप-कर्म का बन्ध कम से कम होगा ।

(२) **प्रश्न**—सम्यग्दृष्टि जीवड़ा, करै कुटुम्ब प्रतिपाल ।
अन्तर से न्यारो रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल ।।

उपर्युक्त दोहे का अर्थ बताइये ?

उत्तर—सम्यग्दृष्टि वाला विवेकशील प्राणी स्वजनों का पालन करते हुए उसी प्रकार अनासक्त रहता है जैसे कोई धाय मातावत अन्य की सन्तति का पालन पोषण करती है, किन्तु मन में यह बोध उसके मन में सदा ही बना रहता है कि वह उस शिशु की माता नहीं है ।

(३) **प्रश्न**— विवेक बिना धर्म नहिं पामे ।
बिना विवेक समकित नह जामे ।।
विवेक बिना मन रहे टांचू ।
एक ववा बिन सघलूं कांचू ।।

—एक गुजराती कवि

उपर्युक्त छन्द में विवेक के सम्बन्ध में क्या कहा गया है ?

उत्तर—विवेक के अभाव में धर्म की प्राप्ति नहीं हो सकती तथा सम्यक्त्व यानी श्रद्धा भी कभी दृढ़ नहीं होती । विवेक के बिना मन भी चंचल रहता है, वीतराग वाणी गले नहीं उतरती । अतः एक विवेक जीवन में प्रवेश कर जाय तो सारे सद्गुण अपने आप चले आयेंगे ।

[६]

(१) **प्रश्न**—'भासमाणो न भासेज्जा'

अर्थ—कोई दूसरा बोलता हो तो उसके बीच न बोलें ।

उपर्युक्त आगम की वाणी किस सूत्र से ली गई है ?

उत्तर—सूत्रकृतांग (१६, २५)

(२) **प्रश्न**—जो जस्स उपाग्रागो, सो तस्स नहिं तु दायव्वो

ग्रर्थ—जो जिसके योग्य हो, उसे वही देना चाहिए।

उपर्युक्त उत्तम विचार कहाँ से लिए गए है ?

उत्तर— निशीथ भाष्य' से।

(३) **प्रश्न**—दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं, वस्त्र पूतं जलं पिवेत्।
शास्त्र पूतं वदेद् वाचं, मनः पूतं समाचरेत्॥

ग्रर्थ—पैर रखने के पहले भूमि को दृष्टि से देखते चलो। पानी पीते हो तो वस्त्र से छानकर पीग्रो और जो वचन बोलते हो तो उसे भी शास्त्र से छान लो ग्रर्थात् अपने मन से व विवेक से छान लो कि यह ठीक है या नहीं ? प्रत्येक धर्म सिद्धान्त को मन की पवित्रता से छानकर विवेकपूर्ण ग्राचरण करो।

उपर्युक्त भाव किस उत्तम ग्रन्थ में ग्राए हैं ?

उत्तर—'मनुस्मृति' में

[७]

(१) **प्रश्न**—मानव जीवन में विवेक क्यों ग्रावश्यक है ?

उत्तर—मानव जीवन को सफल बनाने के लिए विवेक की ग्रावश्यकता होती है। मानव जीवन में कदम-कदम पर दुविधाएँ हैं ग्रौर दुविधा में ग्रक्सर मानव ग्रपनी सूझबूझ खो देता है। विवेक के बौद्धिक प्रकाश से मानव दुविधा में भी कोई ऐसा मार्ग ढूंढ लेता है जिससे उसकी दुविधा दूर हो जाती है एवं ग्रात्म-शांति मिलती है।

(२) **प्रश्न**—स्व-विवेक से नियंत्रित व्यक्ति का जीवन कैसा होता है ?

उत्तर—स्व विवेक से नियंत्रित व्यक्ति का जीवन स्व ग्रौर पर सबके लिए हितकर होता है, ग्रानन्दप्रद होता है। वह सदा यशस्वी जीवन जीता है। वह जीवन में कभी निराश नहीं होता।

(३) **प्रश्न**—भोग वासना में विवेक की दृष्टि से मानव ग्रौर पशु में क्या ग्रन्तर है ?

उत्तर—भोग-वासना मानव ग्रौर पशु दोनों में होती है, परन्तु मानव ग्रन्तर विवेक से ग्रपने आप पर संयम-नियंत्रण कर लेता है उसकी वासना पशु की तरह ग्रनियंत्रित एवं उच्छृंखल नहीं होती।

[८]

(१) **प्रश्न**—विवेकी व्यक्ति के क्या लक्षण होते हैं ?

उत्तर—वह चिन्तनशील, अनुभवी, विचारवान तथा धैर्यवान होता है। गुणी व ज्ञानी का सम्मान और दुर्गुणी से बचने की पहचान होती है। परोपकार की भावना रहती है। वह प्रत्येक काम शान्ति से करता है। विकट समय में भी हिम्मत रखता है।

(२) **प्रश्न**—विचार एवं विवेक को जीवन-महल की नींव क्यों कहा गया है?

उत्तर—जिस प्रकार भव्य एवं आलीशान महल अच्छी एवं गहरी नींव पर टिका रहता है, उसी प्रकार जीवन रूपी महल भी सुन्दर विचारों एवं विवेक पर टिका हुआ है। अच्छे विचारों एवं विवेक से हमारी बुद्धि निर्मल होती है, हमें अपने कर्त्तव्य का बोध होता है। यही कारण है कि विचार एवं विवेक को जीवन-महल की नींव कहा गया है।

(३) **प्रश्न**—"जितने भी अज्ञानी पुरुष हैं वे सब दु:ख के भागी है। सत्-असत् के विवेक से शून्य वे इस अनन्त संसार में बार-बार पीड़ित होते रहते हैं।"

महावीर की यह वाणी कहाँ से संकलित की गई है?

उत्तर—'उत्तराध्ययन सूत्र' से।

[६]

(१) **प्रश्न**— ज्ञान बढ़े गुणवान की संगति,
ध्यान बढ़े तपसी संग कीने।
मोह बढ़े परिवार की संगत,
लोभ बढ़े धन में चित्त दीने॥
क्रोध बढ़े नर मूढ़ की संगत,
काम बढ़े तिरिया संग कीने।
बुद्धि विवेक विचार बढ़े,
कवि '..........' सुसज्जन के संग कीने॥

उपर्युक्त छन्द के रचयिता कौन हैं?

उत्तर—कवि 'दीन'।

(२) **प्रश्न**—समझा समझा एक है, अनसमझा सब एक।
समझा सोई जानिए, जाके हृदय विवेक॥

इस दोहे के रचनाकार कौन हैं?

उत्तर—'संत कबीर'।

(३) प्रश्न—

जीवन-पथ

जीवन का पथ नहीं पुण्य-पथ, कण्टक पथ बड़ा विकट है।
संभल-संभल कर चलो अन्यथा, पद-पद पर मिलता संकट है।।

आँखों के होते आँखों को, बन्द किए चलते अज्ञानी।
आगे-पीछे खुली आँख से, देख-देख चलते हैं ज्ञानी।।

जीवन का सुख है विवेक में, स्वर्ग उसी के हाथों में है।
अविवेकी जन पाते पीड़ा, नरक कुण्ड दुर्बोधों में है।।

इस कविता के रचयिता कौन हैं ?

उत्तर—उपाध्याय श्री अमर मुनिजी म. सा.।

[१०]

(१) **प्रश्न**—विवेक हीन व्यक्ति पशु क्यों कहलाता है ?

उत्तर—आत्मा की दृष्टि से पशु और मानव में कोई अन्तर नहीं है। अन्तर केवल विवेक और अविवेक दृष्टि का ही है। पशु में विवेक नहीं होता। उदाहरण स्वरूप पशु और मानव दोनों गन्ने का उपयोग करते हैं लेकिन दोनों के उपयोग में अन्तर है। मानव गन्ने के सार तत्व रस को ग्रहण करता है लेकिन पशु पूरे गन्ने को छिलके सहित चबाकर निगल जाता है। यही कारण है कि विवेकहीन व्यक्ति पशु कहलाता है।

(२) **प्रश्न**—श्रमण भगवान महावीर से यह पूछने पर भी कि चलने-फिरने, उठने-बैठने, आहार-विहार आदि में हर समय क्रिया होती है, तब कैसे जीएं ?

उत्तर—महा श्रमण भगवान महावीर ने कहा—धर्म क्रिया में नहीं, विवेक में है। जीवनयापन करने की प्रत्येक क्रिया—चलना, फिरना, उठना, बैठना, आहार, निहार आदि विवेक से की जावे तो पाप कर्म का बन्ध नहीं होगा।

(३) **प्रश्न**—यदि विद्या परिश्रम से, धन भाग्य से और विचार बुद्धि से पैदा होते हैं तो विवेक कैसे पैदा होता है ?

उत्तर—विवेक दुःख-सुख की अनुभूति व अन्तर की विविध अनुभूतियों से पैदा होता है।

—89, Audiappa Naicken Street
Sowcarpet, Madras–600 079

समाज-दर्शन

अभिनन्दन एवं बधाई

अमृतसर—यहाँ आयोजित एक विशेष समारोह में जैन संत श्री कमल मुनि "कमलेश" को उनके अहिंसा एवं शाकाहार प्रचार-प्रसार के लिए जैन मित्र मण्डल द्वारा 'राष्ट्र सन्त' उपाधि से सम्मानित किया गया। समारोह के मुख्य अतिथि थे दैनिक 'उत्तम हिन्दू' समाचार पत्र के मुख्य सम्पादक श्री इरविन खन्ना। अध्यक्षता की मित्र मण्डल के अध्यक्ष श्री दीनानाथ ने।

जोधपुर—वरिष्ठ स्वाध्यायी एवं प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्त्री श्रीमती सुशीला बोहरा को विकलांगों व नेत्रहीनों की सेवा एवं जन कल्याण के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धियों के लिए नेशनल प्रेस इण्डिया के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के अवसर पर उप राष्ट्रपति श्री के. आर. नारायणन ने प्रशस्ति पत्र एवं शाल प्रदान कर राष्ट्रीय सम्मान से विभूषित किया। श्रीमती बोहरा इस समय जोधपुर जिला महिला विकास प्राधिकरण की परियोजना निदेशक हैं।

गोंदिया—वाणीभूषण श्री रतन मुनिजी की प्रेरणा से गोरेगांव निवासी श्री उत्तमचंद जी पींचा की धर्मपत्नी श्रीमती बसन्ती बाई ने निराहार २१ उपवास की तपस्या सुख-शान्ततापूर्वक सम्पन्न की।

भीलवाड़ा—आचार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी की आज्ञानुवर्ती विदुषी साध्वी श्री राजश्री जी ने सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर से संस्कृत में एम. ए. परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की है।

जयपुर—विजयनगर के श्री सुरेशचंद पारीक (खटका राजस्थानी) को राजस्थान विश्वविद्यालय ने 'आधुनिक हिन्दी जैन प्रबन्ध काव्य : एक अनुशीलन' विषय पर पी-एच. डी. उपाधि प्रदान की है। श्री पारीक ने अपना शोध कार्य हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० नरेन्द्र भानावत के निर्देशन में सम्पन्न किया है। इसी तरह जयपुर की श्रीमती वदना जैन को राजस्थान विश्वविद्यालय ने 'राजस्थानी काव्य में नारी-चित्रण' विषय पर पी-एच. डी. की उपाधि प्रदान की है। वंदना ने भी अपना कार्य डॉ० नरेन्द्र भानावत के निर्देशन में सम्पन्न किया है।

जोधपुर—वैराग्यवती सश्री मीनाकुमारी सुपुत्री श्री सुगनचंद जी सिसोदिया की जैन भागवती दीक्षा २७ दिसम्बर को पं० रत्न श्री प्रकाशचन्द्र जी

म०, वीरपुत्र श्री घेवरचंद जी म० एवं विदुषी साध्वी श्री लक्ष्मीकँवर जी के सान्निध्य में सम्पन्न हुई।

इन्दौर—आचार्य श्री पुष्पदन्त सागर जी के सान्निध्य में एलक श्री सौरभ सागर जी ने एक जनवरी, १९९३ को भव्य मुनि दीक्षा अंगीकृत की।

उदयपुर—दिल्ली से प्रकाशित पाक्षिक 'नया खून' द्वारा 'भगवान महावीर' पर आयोजित अ० भा० कविता प्रतियोगिता में छन्दराज पारदर्शी प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किये गये।

उक्त सभी महानुभावों का हार्दिक अभिनन्दन एवं बधाई।

अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ का द्वितीय वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न

बालोतरा—अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ का द्वितीय वार्षिक अधिवेशन ८ नवम्बर को डॉ० भीमराव अम्बेडकर टाउन हॉल में सम्पन्न हुआ जिसमें बालोतरा, जोधपुर, जयपुर, भीलवाड़ा, बाड़मेर, पीपाड़, सवाईमाधोपुर, भोपालगढ़, बजरिया, पाली आदि अनेक स्थानों से आये लगभग ४०० युवारत्न बन्धुओं, संघ के प्रमुख पदाधिकारियों एवं संघ हितैषी श्रावकों ने भाग लिया। अधिवेशन की अध्यक्षता श्री अमिताभ हीरावत ने की। समारोह का संचालन किया श्री ओमप्रकाश बांठिया, बालोतरा ने। युवक संघ के महासचिव श्री गोपाल अब्बानी ने वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए संघ द्वारा संचालित ब्लड बैंक, बुक बैंक, स्वाध्यायी तैयार करने के कार्यक्रम आदि पर प्रकाश डाला। श्री सुमतिचंद मेहता ने पीपाड़ शहर की, श्री पदमचंद कांकरिया ने भोपालगढ़ की, श्री कुशल गोटेवाला ने सवाईमाधोपुर की, श्री पुखराज कुचेरिया ने जयपुर की, श्री ताराचंद जैन ने बाड़मेर की, श्री ओमप्रकाश बांठिया ने बालोतरा की, श्री सुशील गांधी ने भीलवाड़ा की, जोधपुर के श्री राजेन्द्र जैन ने देवनगर की, श्री अशोक चौरड़िया ने सरदारपुरा की एवं श्री चन्द्रेश भण्डारी ने घोड़ों के चौक की युवक संघ की प्रवृत्तियों एवं गतिविधियों पर प्रकाश डाला। कार्याध्यक्ष श्री आनन्द चौपड़ा ने भावी योजनाओं का परिचय देते हुए बैंगलोर, मद्रास, जलगांव, बम्बई आदि क्षेत्रों में प्रवास कार्यक्रम रखने एवं शाखाएँ गठित करने का संकेत दिया। इन्होंने स्वाध्यायियों के प्रशिक्षण हेतु ग्रीष्मावकाश में माउण्ट आबू पर एक सप्त दिवसीय विशेष शिविर आयोजित करने की घोषणा भी की। संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्र बाफना ने युवकों को जोश के साथ होश रखते हुए तन, मन, धन से संघ प्रवृत्तियों में सक्रिय रूप से

जुटने का आह्वान किया। इस अवसर पर श्री नवरत्नमल जी डोसी, श्री जगदीशमल जी कुम्भट एवं श्री लखपतराज जी भण्डारी को उनके विशिष्ट योगदान के लिए अ. भा. जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के कार्याध्यक्ष श्री सायरचंद जी कांकरिया ने शाल ओढ़ाकर सम्मानित किया।

अधिवेशन में विशिष्ट अतिथि के रूप में सम्बोधित करते हुए जोधपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो० कल्याणमल लोढ़ा ने कहा कि युवकों के साथ युवतियों को भी संगठित करना चाहिए और पाठ्य पुस्तकों के साथ-साथ धार्मिक पुस्तकें भी वितरित करनी चाहिए। रत्नवंशीय शासन समिति के सम्मानीय सदस्य श्री रतनलाल जी बाफना ने मांसाहार निषेध एवं शाकाहार प्रचार में योगदान देने के लिए युवकों का आह्वान किया। न्यायाधिपति श्री जसराज जी चौपड़ा ने कहा कि आप युवा रत्न तभी हैं जब आपमें धर्म-श्रेष्ठता और चारित्र की निर्मलता होगी। आज साधन बढ़ रहे हैं, पर संतोष समाप्त हो रहा है, प्रचार खूब हो रहा है पर गौरव घट रहा है। आप जीवन को सद्गुणों से अलंकृत करें। श्री चौपड़ा ने कहा कि संख्या में बल नहीं होता है बल होता है संगठन में। अतः आप संगठन को मजबूत करें। श्री चौपड़ा ने युवकों को व्यसनों से दूर रहने की प्रवाही प्रेरणा दी और कहा कि आप संघ अध्यक्ष श्री मुणोत साहब से व्यसन-मुक्त रहने का संकल्प लें। इस पर युवा बन्धुओं ने हाथ उठाकर अपना संकल्प व्यक्त किया। तब अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री मोफतराज जी मुणोत ने 'मैं देव, गुरु, धर्म एवं संघ की साक्षी से सप्त कुव्यसनों का त्याग करता हूँ'। इन शब्दों के साथ सभी को संकल्प पाठ कराया। उन्होंने यह भी कहा कि संघ का मतलब संगठन से होता है। संगठन का आधार अनुशासन है। अतः आप संगठित रहें। अनुशासित रहें। व्यक्तिगत अहं को भुलाकर विनय, प्रेम, विवेक और समर्पण भाव से संघ सेवा में लगें। अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में श्री अमिताभ हीरावत ने कहा कि हम शक्ति व सेवा भाव से समर्पित होकर समाज में सर्वोपरि बनें और हमारे बुजुर्ग हमें मार्गदर्शन देवें। श्री हीरावत ने बालोतरा के युवारत्न श्री ओमप्रकाश बांठिया को संघ का उपाध्यक्ष मनोनीत करने की घोषणा की। विशिष्ट अतिथियों को भेंट स्वरूप स्मृति चिह्न प्रदान किये गये। धन्यवाद एवं जलपान के साथ अधिवेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

डॉ० भानावत प्रोफेसर के रूप में पदोन्नत

जयपुर—'जिनवाणी' के मानद सम्पादक एवं राजस्थान विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ० नरेन्द्र भानावत प्रोफेसर के रूप में पदोन्नत किये गये हैं। डॉ० भानावत ने विविध विधाओं में २५ मौलिक एवं लगभग ३५

सम्पादित कृतियां सृजित की हैं। विभिन्न स्थानों पर इन्होंने लगभग २०० मुख्य विशेष व्याख्यान दिये हैं। राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर १०० से अधिक संगोष्ठियां व सेमिनार आयोजित किये हैं। इनकी लगभग ७० रेडियो एवं दूरदर्शन वार्ताएँ प्रसारित हुई हैं।

चातुर्मासिक उपलब्धियाँ

भीलवाड़ा—उपाध्याय श्री मानचंद्र जी म० सा०, युवाकवि श्री गौतम मुनिजी, सेवाभावी श्री नन्दीषेण जी म० ठाणा ३ का चातुर्मास भोपालगंज में विभिन्न त्याग, तपस्या के साथ सम्पन्न हुआ। चातुर्मास काल में महिला स्वाध्यायी शिविर आयोजित किया गया जिसमें १०० महिलाओं ने ज्ञानार्जन किया। श्री नन्दीषेणजी म० ने महिलाओं को थोकड़ों का विशेष ज्ञान कराया। श्री गौतम मुनिजी की प्रेरणा से युवक एवं बालक-बालिकओं का विशेष शिविर लगा जिसमें लगभग २०० शिविरार्थियों ने भाग लिया। श्री चाँदमलजी बाबेल का अध्यापन कार्य में सहयोग रहा। चार दिवसीय स्वाध्यायी शिविर में ३३ स्वाध्यायियों ने भाग लिया। श्री उग्रसिंहजी कालिया, रायपुर तथा श्रीमती पोकरना, विजयनगर ने अध्यापन कार्यों में सहयोग दिया। १०-११ व्यक्तियों ने आजीवन शीलव्रत के प्रत्याख्यान लिये तथा ६०-७० व्यक्तियों ने १२ व्रत धारण किये। संघ अध्यक्ष श्री तेजमलजी गांग एवं मन्त्री श्री नवरत्नमलजी चौधरी की सेवाएँ अनुकरणीय रहीं।

गोटन—आचार्य श्री हीराचंद्रजी म. के आज्ञानुवर्ती श्री ज्ञानमुनिजी एवं श्रीराम मुनिजी का चातुर्मास तप-त्याग की दृष्टि से विशेष उपलब्धिमूलक रहा। श्रीमती चंचलबाई बाफना ने ४५, श्री चम्पालालजी कोठारी ने ३७, श्री कंचनबाई सिसोदिया ने मासखमण, श्री जबरचंदजी कांकरिया की धर्मपत्नी ने २१ की तपस्याएँ कीं। इसके अतिरिक्त १६/१, ११/5, १०/3, ९/८, ८/३७, ७/२, ५/९, ४/८, 3/९० बेला १३, उपवास ५०१ आदि तपस्याएँ हुईं। चार दम्पत्तियों—श्री सम्पतराजजी बाफना, श्री लादुलालजी पोखरना, श्री सम्पतराजजी लोढ़ा एवं श्री भैरूलालजी ओसवाल ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किये। बालक-बालिकाओं को धार्मिक शिक्षण दिया गया। चार पंचरंगिया हुई, इकतीस हजार रुपये जीव दया व अन्य प्रवृतियों के लिए एकत्रित हुए।

पल्लावरम मद्रास—विदुषी साध्वी श्री अजितकुमारीजी ठाणा ५ के सान्निध्य में बालक-बालिकाओं का धार्मिक शिक्षण शिविर, प्रति रविवार को धार्मिक प्रश्न, ज्ञान प्रतियोगिता, सामूहिक आयम्बिल आदि रखे गये। दो बार नौ दिन के अखण्ड शान्ति जाप हुए।

पोरवाल क्षेत्र में प्रचार कार्यक्रम सम्पन्न

जोधपुर—श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ जोधपुर एवं शाखा बजरिया द्वारा पोरवाल क्षेत्र में स्वाध्यायियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर उन्हें ज्ञान-वृद्धि की प्रेरणा देने हेतु दि० ८-१२-९२ से १२-१२-९२ तक धार्मिक प्रचार कार्यक्रम निम्नानुसार रखा गया—

८-१२-९२	सवाईमाधोपुर, ग्रालनपुर, हाउसिंग बोर्ड
९-१२-९२	ग्रादर्श नगर, बजरिया
१०-१२-९२	चकेरी, श्यामपुरा, कुण्डेरा
११-१२-९२	उनियारा, समीधि, ग्रलीगढ़, कुश्तला
१२-१२-९२	बाबई, सुमेरगंज मण्डी, जरखोदा, देई

उक्त सोलह स्थानों पर सभाएँ आयोजित कर स्वाध्यायी भाई-बहनों से सम्पर्क कर प्रतिदिन स्वाध्याय-सामायिक करने एवं जीवन सुधारने हेतु प्रेरित किया गया। साथ ही शासन प्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म. सा. ग्रादि ठाणा के भाड़ोती में दर्शन-वन्दन का लाभ भी लिया। इस कार्यक्रम में वरिष्ठ स्वाध्यायी साधक श्रीमान फूलचन्दजी मेहता का सहयोग, मार्गदर्शन एवं प्रेरक उद्बोधन विशेष उल्लेखनीय रहा। ग्रन्य सहयोगी श्री गोपीलालजी जैन बजरिया, श्री ऋद्धिचन्दजी जैन मानटाउन, श्री राजूलालजी जैन बजरिया, श्री चौथमलजी जैन बजरिया तथा श्री गिरधारीलालजी जैन सवाईमाधोपुर वालों की सेवाएँ भी प्रशंसनीय रहीं।

संक्षिप्त समाचार

उदयपुर—श्रमण संघ के तृतीय पट्टधर श्री देवेन्द्र मुनिजी शास्त्री के ग्राचार्य पद चादर प्रदान समारोह का भव्य ग्रायोजन २९ मार्च, १९९३ को किया जा रहा है।

दिल्ली—भारत जैन महामण्डल का ४७वां ग्रधिवेशन यहाँ ५ व ६ दिसम्बर को श्री रमेशचंदजी जैन की ग्रध्यक्षता में सम्पन्न हुग्रा। मुख्य ग्रतिथि थे लोक सभा ग्रध्यक्ष श्री शिवराजजी पाटिल। सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधिपति श्री नरेन्द्रमोहनजी कासलीवाल ने उद्घाटन किया।

बालाघाट—विदुषी साध्वी श्री ताराकंवरजी एवं श्री सरोज बालाजी आदि ठाणा ६ के सान्निध्य में ३१ अक्टूबर से ४ नवम्बर तक विविध ज्ञानवर्द्धक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

कानोड़—वर्द्धमान ग्रामीण सेवा संस्थान की ओर से बारहवां निःशुल्क असहाय सहायता शिविर ६ दिसम्बर को कानोड़ में, २७ दिसम्बर को तेरहवाँ शिविर आकोला में व २ जनवरी को चौदहवाँ शिविर कूण में लगाया गया। संस्थापक सचिव श्री पारस नागौरी के अनुसार इन शिविरों में गरीबों, विकलांगों एवं असहायों को कोट, पेंट, शर्ट, स्वेटर्स आदि प्रदान किये गये।

जयपुर—अमर मेडिकल रिलीफ सोसायटी, अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् एवं जैन श्वेताम्बर संघ, जवाहर नगर के संयुक्त तत्त्वावधान में १६ दिसम्बर से २३ दिसम्बर तक महावीर साधना केन्द्र में एक्यूप्रेशर चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया जिसमें १०० से अधिक भाई-बहनों ने जय भगवान एक्यूप्रेशर सर्विस, बम्बई के प्रमुख आचार्य श्री विपिन भाई से प्रशिक्षण प्राप्त किया। समापन समारोह के मुख्य अतिथि थे 'राजस्थान पत्रिका' के प्रकाशक श्री जयसिंह कोठारी, संयोजन किया श्री राजेन्द्र पटवा ने।

इन्दौर—यहाँ श्री अजित मुनिजी, विदुषी साध्वी डॉ. अर्चना श्रीजी आदि के सान्निध्य में जैन दिवाकर श्री चौथमलजी म. की ११६वीं जन्म जयन्ती, उपाध्याय श्री कस्तूरचंदजी म. सा. की दीक्षा जयन्ती, आत्मा-आनन्द शताब्दी वर्ष एवं श्री मोहन मुनिजी की ७०वीं जयन्ती विविध त्याग, प्रत्याख्यान एवं धार्मिक कार्यक्रमों के साथ मनाई गई।

उदयपुर—श्री भुवनेश मुनिजी एवं श्री महेन्द्र मुनिजी 'दिनकर' की प्रेरणा से दहेज न मांगने के सामूहिक संकल्प ग्रहण किये गये। आपकी प्रेरणा से हिरणमगरी में महावीर सार्वजनिक पुस्तकालय, वाचनालय, चन्दनबाला सिलाई केन्द्र, धार्मिक पाठशाला, साधर्मिक सहायता फण्ड आदि स्थापित हुए।

जयपुर—सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की ओर से कु. शीला नाहर को मण्डल के प्रकाशन एवं 'जिनवाणी' की प्रतिनिधि के रूप में नियुक्ति की जाती है। इनसे सदस्यता आदि के लिए सम्पर्क किया जा सकता है। पता है—५८, मैलापुर बाजार रोड, मैलापुर, **मद्रास-६०० ००४।**

बिलोन—श्रमणसंघीय महामंत्री श्री सौभाग मुनिजी 'कुमुद', श्री मदन-मुनिजी पाथक, डॉ. राजेन्द्र मुनिजी 'रत्नेश' के सान्निध्य में प्रवर्तक श्री

अम्बालालजी म. का ६७वां दीक्षा जयन्ती दिवस 'व्यसन-मुक्ति दिवस' के रूप में मनाया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता उच्च शिक्षा राज्य मंत्री डॉ. रतनलाल जाट ने की। विशेष अतिथि थे विधायक श्री शिवदानसिंह।

किशनगढ़—श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के चुनाव में श्री राजेन्द्र-कुमारजी डांगी अध्यक्ष, श्री सिरेहमलजी लोढा उपाध्यक्ष, श्री प्रेमचन्दजी लोढा मंत्री, श्री नरेन्द्रकुमारजी मोदी सहमंत्री, श्री बंशीलालजी कोचेटा कोषाध्यक्ष चुने गये।

जयपुर—'छह ढाला प्रवचन' भाग २ एवं 'सुखी होने का उपाय' भाग-३ पुस्तकें स्वाध्यायार्थ भेंट दी जा रही हैं। इच्छुक महानुभाव ३१ जनवरी तक २/- डाक टिकट भेजकर ये पुस्तकें मंगा सकते हैं। पता—निःशुल्क साहित्य वितरण विभाग, टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापू नगर, जयपुर-१५।

खतौली—पं. दौलतराम कृत 'छह ढाला' पुस्तक २/- रु. डाक टिकट भेजकर स्वाध्यायार्थ मंगवा सकते हैं—श्री जैन जागृति मण्डल, ३५-तगान, **खतौली**-२५१ २०१ (उ.प्र.)।

आलनपुर-सवाईमाधोपुर—श्री व. स्था. जैन श्रावक संघ के चुनाव में अध्यक्ष श्री राधेश्यामजी जैन, उपाध्यक्ष श्री फूलचन्दजी ठेकेदार, मंत्री श्री लड्डूलालजी मुनीम, सहमंत्री श्री पूरनमलजी जैन, कोषाध्यक्ष श्री भँवरलालजी पटवारी, कोठारी श्री प्रभुदयालजी मास्टर चुने गये।

झुंझुनूं—यहाँ साध्वी श्री शशिप्रभाजी के सान्निध्य में प्रवर्तिनी श्री सज्जनश्रीजी की तृतीय पुण्यतिथि तप-त्यागपूर्वक मनाई गई। मुख्य वक्ता थे डॉ. नरेन्द्र भानावत। अध्यक्षता की श्रीमती शान्तिदेवी टांक, जयपुर ने।

टोंक—जीवदया मण्डल ट्रस्ट के मंत्री श्री जसकरणजी डागा ने महामहिम राष्ट्रपति श्री शंकरदयालजी शर्मा, प्रधान मंत्री, पर्यावरण मंत्री एवं कृषि मंत्री भारत सरकार को पत्र लिखकर बढ़ती हिंसा एवं दूषित होते पर्यावरण को रोकने, पूरे देश में गोवध वंश पर रोक लगाने तथा अण्डे, मछली, मुर्गे आदि के व्यंजनों को बनाने की विधि टी. वी. पर न दिखाने व पाठ्य पुस्तकों में इसे सम्मिलित न करने की अपील की है।

जयपुर—प्रबन्धकारिणी कमेटी, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी द्वारा संचालित जैन विद्या संस्थान श्रीमहावीरजी के वर्ष-१९९३ के "महावीर पुरस्कार" के लिए जैनधर्म, दर्शन, इतिहास, साहित्य, संस्कृति आदि से

सम्बन्धित किसी भी विषय की पुस्तक/शोध प्रबन्ध की चार प्रतियाँ दिनांक ३० अप्रेल, १९९३ तक आमन्त्रित हैं। इस पुरस्कार में ११,००१/– रुपये एवं प्रशस्तिपत्र प्रदान किया जायगा। ३१ दिसम्बर, १९८८ के पश्चात् प्रकाशित पुस्तकें ही इसमें सम्मिलित की जा सकती हैं। अप्रकाशित कृतियाँ भी प्रस्तुत की जा सकती हैं। अप्रकाशित कृतियों की तीन प्रतियाँ स्पष्ट टंकण/फोटोस्टेट की हुई तथा जिल्द बंधी होनी चाहिए। नियमावली तथा आवेदन का प्रारूप प्राप्त करने के लिए संस्थान कार्यालय भट्टारकजी की नसियाँ, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर–४ से पत्र-व्यवहार करें।

जयपुर—जैन स्वाध्यायी संघ जोधपुर की ओर से श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, बजाज नगर, जयपुर में स्वाध्याय-शिक्षक प्रशिक्षण शिविर २५ दिसम्बर से २९ दिसम्बर तक आयोजित किया गया जिसमें ३० शिवि-रार्थियों ने भाग लिया। इस शिविर में कर्म सिद्धान्त के विविध पक्षों पर तात्त्विक एवं जीवनपरक चर्चा के साथ-साथ स्वाध्याय-शिक्षण को विशेष प्रभावी एवं रुचिकर बनाने पर रचनात्मक सुझाव दिये गये। श्री मोहनलाल जी मूथा, श्री केवलमल जी लोढ़ा, श्री नथमल जी हीरावत, श्री श्रीचन्द जी गोलेछा, श्री टीकमचन्द जी हीरावत, श्री हीराचन्द जी हीरावत, श्री सम्पतराज जी डोसी का तत्त्व-चर्चा में विशेष योगदान रहा। शिविर का संचालन संस्थान के अधीक्षक श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा ने किया।

शोक श्रद्धांजलि

बदनावर—प्रवर्तक श्री उमेश मुनिजी की आज्ञानुवर्ती महासती श्री कमलाकँवर जी म० का १२ नवम्बर को संथारापूर्वक देहविलय हो गया। आपने १२ वर्ष की अल्पायु में अपनी माताजी (महासती श्री गेंदकँवर जी) भाई (श्री रूपेन्द्र मुनिजी) एवं मौसेरी बहिन (महासती श्री चाँदकँवर जी) के साथ कतवारा (दाहोद) में पूज्य प्रवर्तक श्री सूर्य मुनिजी के सान्निध्य में दीक्षा अंगीकृत की थी।

छोटी सादड़ी—आचार्य श्री नानेश की आज्ञानुवर्ती महासती श्री सुमति कँवर जी का ९ नवम्बर को आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। संवत २०११ में भीनासर में आपने दीक्षा अंगीकृत की। आप सेवानिष्ठ, मधुर व्याख्यानी और दीर्घ संयमपालिका थीं। स्वर्गीय महासती श्री वल्लभ कँवर जी आपकी संसारपक्षीय मातुश्री थीं।

पीपलगाँव बसवन्त—दक्षिण केसरी तपस्वी श्री मिश्रीलाल जी म० की आज्ञानुवर्ती विदुषी महासती श्री विरदीकँवर जी का ६३ वर्ष की आयु में २७ दिन के संथारापूर्वक ८ अक्टूबर को स्वर्गवास हो गया। आप आचार्य श्रीलाल जी म० सा० की संसारपक्षीय भतीजी थीं।

मन्दसौर—आचार्य श्री नानेश की आज्ञानुवर्ती साध्वी श्री कस्तूर कँवर जी का १८ दिसम्बर को संथारापूर्वक स्वर्गवास हो गया। आपने संवत २००७ में खाचरौद में भागवती दीक्षा अंगीकृत की थी।

बम्बई—अ० भा० श्वे० स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेन्स के अध्यक्ष श्री पुखराजमल जी एस० लूंकड़ का हृदयगति रुक जाने से २३ दिसम्बर को ७२ वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। आप बड़े कर्मठ, सेवाभावी, निष्ठावान तथा समर्पित सुश्रावक थे। विद्वानों के प्रति आपके मन में बड़ा आदर और सम्मान था। जरूरतमन्दों को मदद देने में आप सदा तत्पर रहते थे। 'जीवन प्रकाश योजना' और 'सागर कल्याण योजना' का सूत्रपात कर आपने शिक्षा, चिकित्सा और आर्थिक स्वावलम्बन की दिशा में समाज के होनहार युवकों को आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन और आधार रूप सहयोग प्रदान किया। आपके नेतृत्व में कॉन्फ्रेन्स की प्रवृत्तियों में विशेष सक्रियता आई। आप अत्यन्त उदार, मिलनसार, स्नेहिल और सहृदय व्यक्ति थे। आपके निधन से एक कर्मठ सेवाभावी वयोवृद्ध सुश्रावक की अपूरणीय क्षति हुई है।

जयपुर—यहाँ के प्रमुख शिक्षाविद्, आदर्श अध्यापक एवं प्रबुद्ध विचारक श्री सौभाग्यमल जी श्रीश्रीमाल का ८२ वर्ष की आयु में १५ दिसम्बर को असामयिक निधन हो गया। आपने सुबोध स्कूल से अपना अध्यापकीय जीवन प्रारंभ किया। शाहपुरा, करौली, सवाईमाधोपुर के विद्यालयों में सेवारत रहते हुए राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, माणक चौक चौपड़, जयपुर के प्रिंसीपल पद से आप १९७१ में सेवानिवृत

हुए। आदर्श शिक्षक और कुशल प्रशासक के रूप में आपकी सेवाओं का मूल्यांकन करते हुए सन् १९६८ में राज्य सरकार ने आपको शिक्षक दिवस पर सम्मानित किया। सेवानिवृत्ति के बाद भी आप बाल मंदिर बी० एड० कॉलेज, उच्च माध्यमिक सुबोध विद्यालय, प्रौढ़ शिक्षा, स्काउटिंग आदि प्रवृत्तियों से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान की हिन्दी पाठ्यक्रम समिति के सदस्य, अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् के आजीवन सदस्य, श्री वीर बालिका शिक्षण संस्थान के अध्यक्ष आदि के रूप में आपकी विशेष सेवाएँ रहीं। अनुशासन, कर्तव्यपरायणता, प्रामाणिक जीवन, श्रमनिष्ठा, सुधारवादी दृष्टिकोण और नैतिक आदर्शों के लिए आप सदैव समर्पित रहे। १९८३ में अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् द्वारा वयोवृद्ध गुणाभिनन्दन समारोह में आपको विशेष रूप से सम्मानित किया गया था।

जयपुर—पशुक्रूरता निवारण समिति के संयुक्त मंत्री एवं कर्मठ समाजसेवी श्री प्रकाशचंद जी मेहता का २३ दिसम्बर को ४२ वर्ष की अल्पायु में बम्बई में असामयिक निधन हो गया। आप अत्यन्त मिलनसार. सेवाभावी, करुणहृदय और सरल स्वभावी थे। आपको अपने पिता श्री सूरजमल जी मेहता, सी. ए. (पल्लीवाल क्षेत्रीय स्वाध्यायी संघ के संयोजक) एवं नाना (स्वर्गीय श्री उमराव मल जी सेठ) से धार्मिक संस्कार एवं सेवाभाव विरासत में मिले। आपका पूरा परिवार उच्च शिक्षित एवं धर्मनिष्ठ हैं। आप स्वयं प्रसिद्ध चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट थे। आपके दो अनुज भी चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट हैं। अपने व्यवसाय में आप प्रामाणिक एवं विश्वसनीय रहे। अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी आप विकलाँगों एवं मूक पशुओं की सेवा में समय देते थे। आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० एवं रत्नवंशीय सम्प्रदाय के प्रति आपकी अनन्य आस्था और अटूट श्रद्धा-भक्ति थी। श्री प्रमोद मुनिजी आपके संसारपक्षीय भाई, विदुषी साध्वी श्री तेजकँवर जी आपकी संसारपक्षीय मौसी एवं तपस्वी श्री सज्जन ऋषिजी म० सा० आपके संसारपक्षीय ताऊ हैं। आप कई धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हुए थे। आप युवा मैत्री संघ के संस्थापक अध्यक्ष थे। आपके
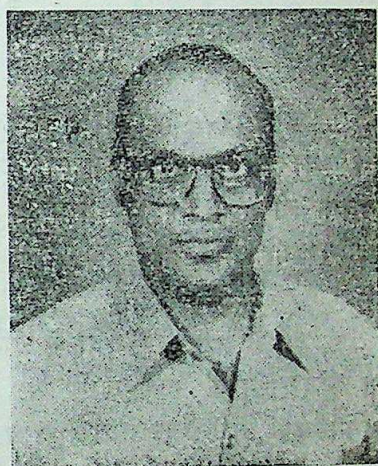
निधन से एक कर्मठ समाजसेवी और युवा सामाजिक कार्यकर्ता की अपूरणीय क्षति हुई है।

खंडप—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री सिरेमल जी लूंकड़ का १२ अक्टूबर को निधन हो गया। आप धर्मपरायण, सेवाभावी, सहृदय, सरल निष्ठावान श्रावक थे।

खंडप—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री बादरमल जी बिनाकिया की धर्मपत्नी श्रीमती शान्तिदेवी का १९ अक्टूबर को आकस्मिक निधन हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की सेवाभावी श्राविका थीं।

जोधपुर—यहाँ के प्रमुख श्रावक एवं लब्ध प्रतिष्ठ उद्योगपति श्री एस० आर० मेहता (हकुसा) की धर्मपत्नी श्रीमती प्रसन्नकँवर मेहता का २ दिसम्बर को ५३ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप अनन्य गुरुभक्त, श्रद्धाशील, जागरूक श्राविका थीं।

जोधपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री छगनमल जी सिंघवी के पुत्र युवारत्न श्री संजय सिंघवी का २ दिसम्बर को दुर्घटना में आकस्मिक निधन हो गया। श्री सिंघवी अनन्य गुरुभक्त, श्रद्धाशील, उत्साही, धर्मानुरागी युवक थे।

छोटी सादड़ी—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री भूपेन्द्रकुमार जी वया का हृदय गति रुक जाने से ५७ वर्ष की आयु में १५ दिसम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आप धर्मपरायण, मिलनसार, व्यवहारकुशल एवं उत्साही कर्मठ कार्यकर्त्ता थे। संत-सतियों की सेवा में आप सदैव अग्रणी रहते थे। आपकी इच्छानुसार मरणोपरान्त आपकी आँखें दान कर दी गईं। आप 'जिनवाणी' की सम्पादक डॉ० शान्ता भानावत के बड़े भाई थे।

उदयपुर—यहाँ के सुप्रतिष्ठित वयोवृद्ध श्रावक श्री जीवनसिंह जी नलवाया का ९२ वर्ष की आयु में ६ दिसम्बर को निधन हो गया। आप धर्मनिष्ठ, जैन तत्त्व ज्ञाता, सरल स्वभावी विवेकशील, श्रद्धावान श्रावक थे।

बीकानेर—यहाँ के प्रमुख समाजसेवी धर्मनिष्ठ श्री रामसिंह जी

कोचर का ६५ वर्ष की आयु में १४ दिसम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप मिलनसार, सरल स्वभावी सुश्रावक थे।

बम्बई—प्रतिष्ठित सुश्रावक स्वर्गीय श्री रंगराज जी मेहता की धर्मपत्नी एवं श्री राजेन्द्र जी मेहता की मातुश्री श्रीमती सरस्वतीबाई मेहता का १६ नवम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आप अनन्य गुरु-भक्त, श्रद्धाशील जागरूक महिला थीं। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष डॉ० सम्पतसिंह जी भाण्डावत की आप भुआजी थीं।

जावद—यहाँ के प्रमुख श्रावक श्री रोड़ूमल जी पितलिया का १ दिसम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप धर्मनिष्ठ श्रद्धावान श्रावक थे।

रतलाम—समाजसेवी श्री मानवमुनि जी की भुआजी श्रीमती पांचीबाई का ११० वर्ष की आयु में २१ अक्टूबर को स्वर्गवास हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की निष्ठावान श्राविका थीं।

बैंगलोर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक धर्मनिष्ठ श्री मोहनराज जी बोहरा (आत्मज स्वर्गीय श्री प्रेमराज जी बोहरा एवं अनुज श्री गणपतराज जी बोहरा, पिपलिया कलां) का ७६ वर्ष की आयु में १ नवम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। शिक्षा, चिकित्सा, समाजसेवा एवं उद्योग-व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में आपकी उल्लेखनीय सेवाएं रहीं। आप कई प्रतिष्ठानों के अध्यक्ष और प्रबन्ध निदेशक थे। अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ के आप उपाध्यक्ष भी रहे।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोकविह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

साभार प्राप्ति स्वीकार

३५०) रु० 'जिनवाणी' की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

३१८९. श्री भीमराजजी गोलिया, आसाम
३१९०. ,, भँवरलालजी सांड, भीलवाड़ा
३१९१. ,, चन्द्रसिंहजी कोठारी, भीलवाड़ा
३१९२. ,, नवरत्नजी संचेती, भीलवाड़ा
३१९३. ,, हरकलालजी हस्तीमलजी भलावत, भीलवाड़ा
३१९४. ,, सुरेन्द्रकुमारजी नीरजकुमारजी कटारिया, भीलवाड़ा
३१९५. ,, वीरेन्द्रकुमारजी मारू, भीलवाड़ा
३१९६. ,, जगदीशचन्द विनीतबाबू धारीवाल, जोधपुर
३१९७. ए. परमीलाजी मेहता, बम्बई
३१९८. श्री पुखराजजी जैन, मद्रास
३१९९. ,, गुलाबसिंहजी चौधरी, भीलवाड़ा
३२००. ,, पुखराजजी धामाणी, भीलवाड़ा
३२०१. ,, जी. गौतमचन्दजी मेहता, मद्रास
३२०२. ,, सतीशचन्दजी जैन, एई. एस. एस., भोपाल
३२०३. ,, पदमचन्दजी कांकरिया, मद्रास
३२०४. मैसर्स अरिहंत ज्वैलर्स, मद्रास
३२०५. श्री पी. एम. भण्डारी, बम्बई

'जिनवाणी' को सहायतार्थ भेंट

१००१/– श्रीमती विमलाबाई धर्मपत्नी श्री कैलाशचन्दजी सा. हीरावत, जयपुर

श्रीमान कैलाशचदजी सा. हीरावत का ह्यूस्टन (अमरीका) में हार्ट का सफल आॅपरेशन होने के उपलक्ष्य में भेंट।

१०००/– डॉ. सम्पतसिंहजी सा. भाण्डावत, जोधपुर
श्री संदीप भाण्डावत आत्मज श्री डॉ. सम्पतसिंह भाण्डावत के सुपुत्र जन्म के उपलक्ष में भेंट।

५००/– श्री जे. पारसमलजी गोलेच्छा, बैंगलौर
श्री मोहनलालजी मूथा की पुत्रवधू श्रीमती उषादेवी राजेशकुमारजी मूथा, बैंगलौर की मासखमण की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२५१/– श्रीमान सुरेन्द्रकुमारजी कटारिया, भीलवाड़ा
धर्मपत्नी श्रीमती शशी कटारिया के २१ उपवास की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२५१/– श्री सुरेशचन्दजी दिलीपचन्दजी एवं पदमचन्दजी सुराणा
पूज्य मातुश्री श्रीमती शांतिदेवी की पुण्य स्मृति में भेंट।

२५१/– श्री पारसमलजी सा. लूणावत, अहमदाबाद
बड़े भाई श्री पुखराजजी लूणकरणजी लूणावत की पुण्य स्मृति में भेंट।

२०१/– श्री नेमीचन्दजी बाफना, गोटन
सपरिवार तपस्या करने के उपलक्ष में भेंट।

२०१/– श्री कमलकिशोर पारसमलजी बाफणा (भोपालगढ़ वाले) जलगांव
श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. ठाणा ३ के सन् १९९२ के सफलतम चार्तुमास के उपलक्ष में भेंट।

२००/– श्रीमती सरला बहिनजी श्री किशोरजी भंसाली, अहमदाबाद
आचार्य श्री के बालोतरा चार्तुमास एवं दर्शन करने की खुशी में भेंट।

१११/– श्री अजीतकुमार जयकुमारजी खाटेड़, पूनमली (मद्रास)
पिताजी श्री नेमीचन्दजी खाटेड़ की पुण्य स्मृति में भेंट।

२०१/– श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, मेड़ता सिटी
महासती श्री शांतिकंवरजी म. सा. एवं महासती सुमनप्रभाजी म. सा. ठाणा ६ के चातुर्मास सम्पन्न होने के उपलक्ष में भेंट।

१११/– श्री हरकचन्दजी ओस्तवाल, जोधपुर
सुपुत्री सौ. का. शोभाकुमारी का शुभ विवाह चि. हुलामचंद कोठारी के साथ सम्पन्न होने की खुशी में भेंट।

१०१/– श्री चन्द्रसिंहजी बोथरा, जयपुर
मातुश्री अनोपकंवर देवी धर्मपत्नी स्व. श्री सुजानसिंहजी बोथरा की पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/– श्री लेखराजजी मेहता, जोधपुर
आचार्य श्री के दर्शन करने की खुशी में भेंट।

१०१/– श्री जयतकुमार बी. जैनी, मैसूर
दीक्षा के अवसर पर जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

१०१/– श्री सुरेन्द्रकुमारजी कोठारी, मेड़तासिटी
गुरु आम्नाय के उपलक्ष में भेंट।

१५१/– श्री बुद्धराजजी कोठारी, मेड़तासिटी
सुपौत्र जन्म के उपलक्ष में भेंट।

२०१/– श्री अजीतजी मूथा, सतारा
गुरु आम्नाय की खुशी में भेंट।

१०१/– डॉ. नरेन्द्रजी भानावत, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर की प्रोफेसर के रूप में पदोन्नति पर 'जिनवाणी' को सादर भेंट।

१०१/– श्री जवाहरलालजी बाघमार, मद्रास
आचार्य प्रवर १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. की ८३वीं जयन्ती के उपलक्ष में भेंट।

५१/– महासती श्री शांतिकंवरजी म. सा. के पास विरक्ता बहिन सुदर्शनाजी के तेले की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्रीमती राजकंवर बाईजी रियां वाले, अजमेर
आचार्य श्री के दर्शन करने की खुशी में भेंट।

५१/– श्रीमती कलावती बाई जैन, मनावर
आचार्य श्री के दर्शन करने की खुशी में भेंट।

५१/– श्री रवीन्द्रजी शांतिलालजी नाहर, छोटी सादड़ी
आचार्य श्री के दर्शन करने की खुशी में भेंट।

५१/– श्री आर. सुगनचंदजी धोका, मद्रास
सौ. कां. चन्द्रकला के शुभ विवाह पर भेंट।

५१/– श्री जे. एन. रांका, मण्डिया
श्री रंगमल संग उषा के विवाह के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री पूरणमलजी जैन, 'अध्यपाक' कुजैला (स. माधोपुर)
महासती श्री मैना सुन्दरीजी म. सा. के कुजेला पधारने की खुशी में भेंट।

५१/– श्रीमती सुगाली बाई काटेड, आरकोट
जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

५१/– श्री विमलकुमारजी राठोड़, रायपुर (मालावाड़)
पूज्य मातुश्री श्रीमती भूला बाई की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१/– श्रीमती आनन्दकंवर उर्फ फूलकंवरजी मेहता, प्लाट नं. ३३, छायादीप कॉलोनी नं. १, महेश नगर, जयपुर ने अपनी भाभी श्रीमती चाँदकंवरजी कुम्भट, मद्रास निवासी के ८४ वर्ष की अवस्था में वर्षीतप के उपलक्ष में बधाई स्वरूप जिनवाणी को भेंट।

५१/– श्री जवाहरलाल हीराचंदजी रांका (जैन) भड़गाँव (जलगांव)
चि. राजेन्द्रकुमार एवं सौ. सरिता के शुभ विवाह के उपलक्ष में भेंट।

५०/– श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, बदनावर (म. प्र.) ने प्रवर्तक श्री उमेश मुनिजी म. सा. की आज्ञानुवर्ती महासती श्री कमलाकंवरजी म. सा. का देवलोक गमन दि. १२.११.९२ को बदनावर में हुआ, उनकी स्मृति में जिनवाणी को भेंट।

५०/– बी. गजराज बोकडिया, सेलम
श्रीमान गजराजजी बोकडिया सेलम वालों के सुपौत्र श्री नवरत्न-

मलजी के सुपुत्र तथा नीतुकुमारी व प्रेमकुमार के छोटे भाई के जन्म की खुशी में सप्रेम भेंट।

२१/– श्री प्रसन्नचंदजी कटारिया, भीलवाड़ा
जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

२१/– श्री विनोद ढाबरिया, भीलवाड़ा
जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

२१/– श्री ज्ञानेन्द्रकुमार जैन, इन्दौर
पूज्य पिताजी श्री शिरोमणिचन्दजी जैन को 'समाज शिरोमणि' की उपाधि मिलने की खुशी में भेंट।

२१/– श्री राजकुमारजी कुण्डल बोहरा, भवानी मण्डी
पूज्य पिताजी श्री बागमलजी कुण्डल बोहरा की प्रथम पुण्य तिथि की स्मृति में भेंट।

२१/– श्री हंसराजजी परमानन्दजी जैन, श्यामपुर (स. मा.)
महासती श्री मैना सुन्दरीजी म. सा. ठाणा ८ के दर्शन करने के उपलक्ष में भेंट।

२१/– श्री बाबूलालजी जैन, जयपुर
सुपुत्री मंजू के विवाह के उपलक्ष में भेंट।

२१/– श्री वर्धमान स्था. जैन श्रावक संघ, भूपालगंज (भीलवाड़ा)
साध्वी राजश्रीजी म. सा. के एम. ए. संस्कृत में प्रथम आने पर भेंट।

११/– श्रीमान मोतीलालजी राजेन्द्रकुमारजी जैन, आलनपुर के तृतीय रत्न प्राप्ति के उपलक्ष में जिनवाणी को भेंट।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल को भेंट

१०१/– श्री कमलकिशोर पारसमलजी बाफना, भोपालगढ़ वाले (जलगांव)
श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. ठाणा ३ के सन् १९९२ के सफल चातुर्मास के उपलक्ष में भेंट।

स्वाध्याय संघ को भेंट

२०१/- श्री नेमीचंदजी बाफना, गोटन
सपरिवार तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ को प्राप्त पर्युषण सहायता राशि

९०१/- वरणगांव
८४४/- लासूर
५०१/- सिल्लोड
५००/- धरणगांव
४५१/- कमलसरा
४२१/- पहूर
४११/- पहूरदामा
३७१/- तोंडापुर

साहित्य प्रकाशन के आजीवन सदस्य ५०१/-

४२९. श्री गणपतराजजी सिंघवी, जयपुर
४३०. श्री मीठालालजी अशोककुमारजी बागमार, बालोतरा

मद्रास के जिनवाणी प्रतिनिधि

श्री सोहनराजजी अरविन्द,
मैसर्स कविता एन्टरप्राइजेज
नं. ४८-ए, पेरुमल कोयल गार्डन्स स्ट्रीट
साहूकार पेट,
मद्रास-६०००७९

'जिनवाणी' पत्रिका के सदस्य बनने, बनाने व विज्ञापन के कार्य में इन्हें पूर्ण सहयोग देने की कृपा करें। इसी तरह सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के साहित्य के आजीवन सदस्य बनने व बनाने में इन्हें सहयोग देने की कृपा करें।

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर

जयपुर–दिनांक १ दिसम्बर, १९९२ से मण्डल के साहित्य की आजीवन सदस्यता शुल्क रु. १०००/– (रुपये एक हजार मात्र) कर दिया है ।

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

मण्डल के साहित्य का विक्रय जोधपुर में

जयपुर–सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित साहित्य का एक विक्रय केन्द्र श्रीमान भण्डारी सरदारचन्दजी जैन, द्वारा मैसर्स भण्डारी सरदारचन्द एण्ड सन्स, होलसेल बुकसेलर्स एण्ड स्टेशनर्स, त्रिपोलिया बाजार, जोधपुर–३४२००२ (राज.) में प्रारम्भ हो गया है । इसी तरह से श्रीमान सरदारचन्दजी भण्डारी जोधपुर को "जिनवाणी" पत्रिका के सदस्य बनाने के लिए अधिकृत किया गया है । जो कोई भी सज्जन मण्डल का साहित्य जोधपुर में क्रय करना चाहते हों या जिनवाणी के सदस्य जोधपुर में बनना चाहते हैं वे श्रीमान सरदारचन्दजी भण्डारी से उपर्युक्त पते पर सम्पर्क करने की कृपा करावें ।

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

आत्म-हत्या एवं समाधि-मरण में भेद

□ डॉ० धर्मचन्द जैन

आत्माहत्यां प्रकल्पन्ते समाधिमरणं जनाः ।
अज्ञानिनो न बुध्यन्ति, यदेतदात्मसाधना ।।१।।
आत्महत्या तु सावेशा, रागरोषविमिश्रिता ।
समाधिमरणं तावत्, समभावेन तज्जयः ।।२।।

साधारण लोग समाधिमरण को आत्म-हत्या मानते हैं । वे अज्ञानी प्राणी यह नहीं समझते हैं कि यह आत्म-हत्या नहीं, आत्म-साधना है । आत्म-हत्या तो आवेश पूर्वक एवं राग-द्वेष से युक्त होकर की जाती है, जबकि समाधि-मरण में समभाव पूर्वक इन्हें (आवेश, राग-द्वेष आदि को) जीता जाता है ।

—संस्कृत विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय

'नया वर्ष' हम मानें उसको,.......

श्री मनोजकुमार जैन 'निर्लिप्त'

[१]

'नया वर्ष' हम मानें उसको,
जिसमें सब कुछ नया-नया;
'नव जीवन' मानें उसको ही,
जिसमें सब कुछ नया-नया।
सन् तो आते-जाते रहते,
सम्वत् आते रहते हैं;
दुनिया में वो 'नए साल' औ,
'नव सम्वत्' कहलाते हैं।।

[२]

जन्म-मरण के चक्कर में फिर,
जीव घूमता रहता है;
नए-नए जन्मों को पाकर,
फिर से मरता रहता है।
जन्म-मरण के दुःख को देने,
वाला जीवन नव कैसे (?);
जिसका अन्त अवश्यंभावी,
कह दें 'नव-जीवन' कैसे (?)।।

[३]

'वर्ष'-अर्थ 'स्थल' भी होता,
'भारत वर्ष' कहाता है;
'भारत-स्थल' देश हमारा,
'वर्षोत्तम' कहलाता है।
इसी भाँति श्री सिद्ध-प्रभु का,
'स्थल' 'सिद्ध-शिला' होता;
'निज-आतम' की शुद्धि करके,
'जीव' जहाँ शोभित होता।।

[४]

'निज-आतम' की 'शुद्धि' करना,
ही 'नव-जीवन' उत्तम है;
नाम-निशां न दुक्खों का जो,
सुखाभास से परचम है।
'सुखाभास से परचम' मतलब—,
'सच्चे सुख का दायी' हैं;
ऐसा 'नव जीवन' पाना ही,
लक्ष्य सदा सुखदायी है।।

[५]

आओ! हम पुरुषार्थ जगाएँ,
'नए वर्ष' में जाने का;
'सिद्ध-शिला' के 'नए वर्ष' पे,
'नव जीवन' को पाने का।
परम, अलौकिक और निराकुल,
शाश्वत सुख को पाने का;
जन्म-मरण का दुःख न जिसमें,
'नव जीवन' वो पाने का।।

—P.W.D. क्वार्टर नं. ६, समद रोड, अलीगढ़-२०२ ००१ (उ.प्र.)

'जिनवाणी' पत्रिका के विज्ञापन की दरें निम्नानुसार हैं—

१ दिसम्बर, १९९२ से प्रभावी

क्र.	पृष्ठ	साधारण अंक की दरें		साधारण अंक में रंगीन विज्ञापन		विशेषांक की दरें
		प्रति दो माह	सम्पूर्ण वर्ष	प्रति दो माह	सम्पूर्ण वर्ष	
१	२	३	४	५	६	७
१.	टाइटल कवर चौथा पृष्ठ	३,०००/–	१५,०००/–	—	३०,०००/–	१०,०००/–
२.	टाइटल कवर तीसरा पृष्ठ	२,०००/–	१०,०००/–	—	२०,०००/–	५,०००/–
३.	टाइटल कवर दूसरा पृष्ठ	२,०००/–	१०,०००/–	—	२०,०००/–	७,५००/–
४.	आर्ट पेपर पूरा पृष्ठ	२,०००/–	१०,०००/–	५,०००/–	२०,०००/–	३,५००/–
५.	साधारण पूरा पृष्ठ	१,२००/–	५,०००/–	—	—	२,५००/–
६.	साधारण आधा पृष्ठ	८००/–	४,०००/–	—	—	१,५००/–
७	साधारण चौथाई पृष्ठ	६००/–	२,०००/–	—	—	७५०/–
८	विदेशों के प्रतिष्ठान का विज्ञापन (साधारण पूरा पृष्ठ)	—	५०० डालर	—	—	—

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

With Best Compliments

From :

M/s HIMA GEMS

14th FLOOR
FLAT - B
POKPAH MANSION
58-60, CAMERON ROAD,
T. S. T.
KOWLOON
HONG KONG
TEL. No. : 3671457

वाणी

अपनी बात
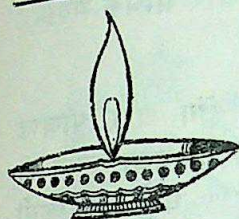
धर्म व्यापार नहीं, आचार बने

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

आज देश में मन्दिर, मस्जिद आदि उपासना-स्थलों को लेकर बड़ा विवाद है और धर्म के नाम पर उत्तेजना, आतंक, अविश्वास, हिंसा का वातावरण बना हुआ है। परस्पर अविश्वास, सन्देह और असुरक्षा का भाव है। निरपराध लोग गोली के शिकार बन रहे हैं, लूटखसोट, आगजनी और रक्तपात ने सदाचरण, नैतिकता और धार्मिक जीवन-मूल्यों को छिन्नभिन्न कर दिया है। अध्यात्म प्रधान देश भारत में यह सब क्यों, कैसे और किनके द्वारा हो रहा है, यह सब विचारणीय है। भारत जो ऋषि-मुनियों का देश रहा है, जहाँ की संस्कृति के विशाल महासागर में भिन्न-भिन्न मतों, विश्वासों, परम्पराओं और मान्यताओं की सरिताएँ मिलकर एकमेक हो गई हैं—वहाँ ऐसे समय में जबकि शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक प्रसार हुआ है, विज्ञान ने आशातीत प्रगति की है, जनतंत्रात्मक शासन के प्रति विश्वास व्यक्त किया गया है, सभी धर्मों के प्रति आदर और समभाव का संकल्प दोहराया गया है, यह स्थिति वर्तमान की विभिन्न चुनौतियों में से एक है।

लगता है, उपभोक्ता संस्कृति ने हम में इन्द्रिय-विषय-सुख की भूख अधिक जागृत कर दी है कि हम धर्म को व्यापार के क्षेत्र में ले आये हैं। धर्म आत्मा का स्वभाव और स्वाभाविक कर्तव्य न रहकर बाजारों में दुकानों पर बेची जाने वाली वस्तु और सामग्री बन गया है। ग्राहकों को रिझाने और आकृष्ट करने के लिए जैसे बड़े-बड़े आकर्षक पोस्टर और साइन-बोर्ड लगाये जाते हैं, जन-संचार माध्यमों के जरिये उनका विज्ञापन किया जाता है, माल खपाने के लिए एजेन्सियाँ खड़ी की जाती हैं और एजेन्ट नियुक्त किये जाते हैं उसी प्रकार तथाकथित धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए मठ, मन्दिर, उपासरे और भवन बनाये जाते हैं, बहुमूल्य रत्न जटित प्रतीक स्थापित किये जाते हैं, भगवान को रिझाने के लिए बढ़-चढ़कर बोलियाँ लगाई जाती हैं, षटरस-व्यंजक भोग चढ़ाये जाते हैं, बड़ी लम्बी यात्राएँ की जाती हैं, प्रदर्शनपूर्वक समारोह और आयोजन किये जाते हैं ताकि नये-नये मार्केट बन सकें, नई-नई मण्डियाँ खुल सकें। धर्म जब आचरण से हटकर बाजार में आ जाता है तब कुछ ऐसा होता है। वह सजाने-संवारने का सामान बन जाता है। प्राणतत्त्व, जीवनतत्त्व उसमें से गायब

हो जाता है, कथनी और करनी का द्वैत बढ़ता जाता है, ज्ञान और कर्म की खाई अधिकाधिक चौड़ी होती जाती है। यह स्थिति तब और अधिक भयावह बन जाती है जब हम अपनी बौद्धिकता पर गर्व करते हों।

भारतीय सन्त परम्परा धर्म के नाम पर बढ़ते हुए ढोंग और पाखण्ड का विरोध करती रही है। इसने धर्म को अन्तःकरण की श्रद्धा, हृदय की पवित्रता और मानसिक ईमानदारी के रूप में ग्रहण किया है। धर्म को किसी मजहब और साम्प्रदायिकता से न जोड़कर मानवीय संवेदना और सामाजिक सरोकार से जोड़ा, इसे जाति, वर्ण और वर्गभेद से ऊपर माना और जन्मना किसी को धार्मिक या सर्वोच्च न मानकर आचार और कर्म से व्यक्ति को नैतिक और उन्नत माना। सत्ता और सम्पत्ति से धर्म को अलग रखकर उसे क्षमा, शील, सन्तोष, दया, प्रेम, मैत्री, करुणा और वात्सल्य से जोड़ा। भगवान महावीर ने हरिकेशी जैसे चाण्डाल को अपने संघ में दीक्षित किया और वर्णाश्रम-व्यवस्था में आई विकृतियों को दूर करने के लिए धार्मिक और सामाजिक क्रांति का शंखनाद किया। धर्म को अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकान्त जैसे जीवन स्पर्शी सिद्धान्तों से जोड़ा और अपने आचरण में इन्हें ला उतारा। उन्होंने धर्म को अनुभूति के स्तर पर जीया, उसे आचरण में उतारा, चरित्र में ढाला।

आज हमने धर्म को या तो अंधश्रद्धा में बदल दिया या बौद्धिक तर्क जाल में उलझा दिया। इसके साथ जुड़ा विवेकशीलता और जागरूकता का तत्त्व खो गया। परिणाम यह हुआ कि धर्म जीवनचर्या से कट गया। क्षतिपूर्ति के सिद्धान्त के रूप में धर्म का उपयोग किया जाने लगा। पाप और पुण्य की तराजू पर उसे तौला जाने लगा। वह व्यक्ति अधिक धार्मिक माना जाने लगा जिसके पास अधिक धन है, अधिक परिग्रह है और अधिक भोग-सामग्री है। धर्म का त्याग से, समर्पण से, विनय से, सादगी से, श्रम से सम्बन्ध छूटता गया। बाहर से परिग्रह भले ही छूट गया हो पर भीतर में परिग्रह का दायरा बढ़ता गया, बाहर से घर भले ही छूट गया हो पर भीतर में बाजार सजता गया। फल यह हुआ कि धर्म का जो अंकुश राजनीति में था, समाज-व्यवस्था में था, आर्थिक प्रबन्धन में था वह ढीला पड़ता गया और धर्म धीरे-धीरे जीवन से कट गया, आचार से अलग हो गया, वह व्यापार बन गया। इसी लिए धर्म से करुणा गायब हो गई, दूसरों के सुख-दुःख में भागीदारी गायब हो गई, परमार्थवृत्ति गायब हो गई। आवश्यकता है इसे जीवन और समाज में फिर से प्रतिष्ठित करने की और यह तभी सम्भव है जब धर्म व्यापार नहीं, आचार बने।

प्रवचनामृत
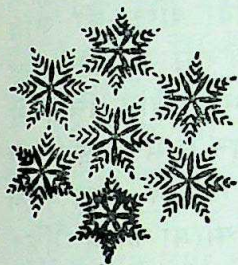
प्रार्थना का प्रभाव*

□ स्वर्गीय आचार्य श्री हस्ती

तू धन, तू धन, तू धन, तू धन, शांति जिनेश्वर स्वामी ।
मृगीमार निवार किये प्रभु, सर्व मणि सुख गामी ।।

यह भगवान शांतिनाथ की प्रार्थना है । प्रार्थनाओं के अनेकों प्रकार हैं । प्रस्तुत प्रार्थना का बहाव भावना की ओर होने के कारण इसे भावनाप्रधान प्रार्थना की कोटि में परिणित किया जा सकता है । भावना की प्रधानता के साथ इसमें प्रभु जीवन की महत्ता का भी रूप प्रकट किया गया है । इस प्रार्थना में साधक प्रार्थी अपने से कुछ कहता है और साथ ही प्रार्थ्य को अपना शिरोमणि समझ कर और प्रार्थना के रूप को बदल कर उससे कुछ याचना भी करता है ।

बतलाया जा चुका है कि वीतराग परमात्मा कुछ देने या करने वाले नहीं हैं, फिर भी हम उनसे प्रार्थना करते हैं, याचना भी करते हैं । क्यों ऐसा करते हैं, यह समझाने के लिए सूर्य और वायु के उदाहरण बतलाए जा चुके हैं । सभी जानते हैं कि सूर्य और वायु का सेवन लाभदायक है । फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सूर्य किसी पर प्रसन्न होकर किरणें बिखेरता है या किसी पर अप्रसन्न होकर नहीं बिखेरता है ।

यही स्थिति वायु की है । यह भी न किसी पर रुष्ट होती है, न तुष्ट होती है । तुष्ट होकर किसी को लाभ पहुँचाने की और रुष्ट होकर लाभ न पहुँचाने की वृत्ति उसमें नहीं है । क्या सूर्य और क्या वायु, नैसर्गिक रूप से अपने गुणों को प्रकट करते रहते हैं । अतएव सूर्य की किरणों से और वायु के सेवन से संसार के प्राणी लाभ उठाते रहते हैं । इतना होने पर भी वायु यह कामना लेकर नहीं बहती कि कोई मुझसे लाभ उठावे और मेरी प्रशंसा करे । सूर्य के विमान में भी ऐसी वृत्ति या कामना नहीं है । वे अपने-अपने स्वभावानुसार प्रवृत्त हो रहे हैं । लाभ उठाने वाले उठा लेते हैं ।

*आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित ।

यही बात वीतराग परमात्मा के स्मरण और प्रार्थना के सम्बन्ध में कही जा सकती है। वीतराग होने के कारण वे इस कामना को लेकर नहीं चलते कि अमुक प्रार्थी मेरी प्रार्थना कर रहा है, अतएव उस पर दया दृष्टि की जाय और उसे कोई बख्शीस दी जाए और जो प्रार्थना नहीं करता उसे कोई दण्ड दिया जाय। ऐसा होने पर भी यह असंदिग्ध है कि जो भक्त शांत चित्त से वीतराग की प्रार्थना करते हैं, स्मरण करते हैं, उन्हें जीवन में अपूर्व लाभ की प्राप्ति होती है। वीतराग के विशुद्ध आत्मस्वरूप का चिंतन भक्त के अन्तःकरण में समाधि भाव उत्पन्न करता है और उस समाधि भाव से आत्मा को अलौकिक शांति की प्राप्ति होती है। भक्त के हृदय में बहता हुआ विशुद्ध भक्त का निर्झर उसके कलुष को धो देता है और आत्मा निष्कलुष बन जाती है। निष्कलुषता के इस लाभ में भक्त का भक्तिभाव ही अंतरंग कारण है, वीतराग भगवान तो निमित्त मात्र हैं।

वीतराग भगवान के भजन से भक्त को उसी प्रकार लाभ मिलता है, जिस प्रकार सूर्य की किरणों के सेवन से और वायु के सेवन से रोगी को लाभ होता है। एक आदमी गन्दी गलियों की हवा का सेवन करता है, रात-दिन उसी में पड़ा रहता है और दूसरा प्रभात के समय उद्यान की शुद्ध वायु का सेवन करता है। क्या इससे उनके स्वास्थ्य को हानि-लाभ नहीं होता ? शुद्ध वायु के सेवन से दिल और दिमाग में ताजगी का अनुभव होता है, शरीर में हल्कापन महसूस होता है।

शारीरिक रोगी के समान संसारी जीव आध्यात्मिक रोगों से ग्रसित हैं। जब वे किसी रागी-द्वेषी का स्मरण करते हैं तो उनकी आत्मा राग और द्वेष से अधिक ग्रस्त होती है, परन्तु जब वीतराग परमात्मा का स्मरण किया जाता है तो राग की आकुलता की और शोक के सन्ताप की उपशांति हो जाती है। इसी तथ्य को भक्त कवि विनयचन्दजी ने यों प्रकट किया है—

> भजन कियां भव-भव ना दुष्कृत, दुख दुर्भाग्य टल जावे ।
> काम क्रोध मद मत्सर तृष्णा, दुर्मति निकट न आवे रे ।
> सुज्ञानी जीवा ! भज ले रे जिन इकवीसवां ।।

नेमिनाथ भगवान की प्रार्थना में कविराज कहते हैं—ऐ साधक ! तू भगवान का भजन करले। भजन करेगा तो भव-भव के पाप, दुःख और दुर्भाग्य से छुटकारा मिल जाएगा। काम, क्रोध आदि विकार, जो आत्मा की मलिनता के जनक हैं और जिनके कारण दुःखों की उत्पत्ति होती है, तेरे पास भी नहीं फटक सकेंगे।

मगर भजन का आशय यह नहीं है कि तोते की तरह किसी पाठ को बोल लिया जाय। वास्तविक भजन तब होता है जब मन, वचन और काय के योग की शुभ प्रवृत्ति की जाए। अगर कोई प्रार्थी जितेन्द्रिय बन कर, एकाग्र दृष्टि रख कर और ध्यानस्थ होकर प्रार्थना में न जुटा हो तो हो सकता है कि उसका मनोयोग चंचल हो जाए। जो वचन योग की क्रिया में चल रहा है, उसे स्वयं श्रोता बन कर अपने को सुनना चाहिए। ऐसा न हो कि अपने शब्द दूसरा तो सुने पर आप न सुनें। इसमें मजा नहीं आएगा। आपका बोलना आपको सुनना चाहिए। अगर आप बोलने वाले भी बन जाएँ और श्रोता भी बन जाएँ तो आपकी चित्तवृत्ति एकाग्र हो जाएगी। मगर कभी कभी ऐसी स्थिति भी होती है कि बोलने वाले के शब्द दूसरे तो सुनते हैं पर उसे स्वयं पता नहीं रहता कि मैं क्या बोल गया हूँ! ऐसी स्थिति में वह रस और वह मजा नहीं आता। जब हम अपने शब्दों को आप ही श्रोता बन कर सुनते भी हैं तब अद्भुत रस की अनुभूति होती है। इसे कहते हैं तन्मयता।

अगर वचनयोग के साथ शुभ मनोयोग का भी सामंजस्य हो जाय और काययोग उसके साथ मिल ही जाए, तो इस शुभ त्रिपुटि की प्रवृत्ति का परिणाम यह होगा कि निश्चित रूप से अशुभ कर्मों का बन्ध टल जाएगा और यदि उस चिंतन में, उस ध्यान में और उस स्मरण में आपने तल्लीनता प्राप्त की है, एकाग्रता पाई है तो अशुभ कर्म-दलिकों के प्रक्षय के साथ शुभ कर्म-दलिकों का संचय भी होगा। इसलिए भक्त कहते हैं—

भजन कियां भव-भावना दुष्कृत, दुख दुर्भाग्य मिट जावे।

एक जन्म के नहीं, जन्म-जन्मान्तर के और अतिशयोक्ति नहीं होगी कि कोटि-कोटि जन्मों के अशुभ कर्मों के दलिक नष्ट हो जाते हैं। भजन करने से दुष्कृत अर्थात् पाप का नाश हो जाता है तो दुःख और दारिद्रय का, जो पाप के फल हैं, नाश होना स्वाभाविक ही हैं; क्योंकि कारण के अभाव में कार्य का अभाव होता ही है। जब अशुभ कर्म नष्ट होते जायेंगे, उनका दायरा सिकुड़ता जायेगा और वे फूलेंगे-फलेंगे नहीं तो दुःख, दरिद्रता और अशांति भी नहीं बढ़ेगी। इसके बाद कहा है—

काम क्रोध मद मत्सर तृष्णा, दुर्मति निकट न आवे रे।

उन अमीरों की बात आप छोड़ दें जो रात्रि में देरी से सोते हैं और सूर्य की किरणों के फैल जाने पर भी बिस्तर पर पड़े रहते हैं। क्या आप अनुभव नहीं करते कि सूर्य की किरणें पड़ते ही आप की सुस्ती दूर हो जाती है ? आप

बिस्तर त्याग कर उठ बैठते हैं ? इसके अतिरिक्त जिनका जीवन त्रास में बीत रहा है, जो निरन्तर वेदना से व्याकुल रहते हैं, वे भी प्रभात के समय शांति का अनुभव करते हैं और कहते हैं—'रात भर तो वेदना से कराहता रहा पर प्रभात के समय कुछ शांति मिली है।'

तरह-तरह की वेदनाएँ होती हैं, पर कई उदाहरण ऐसे मिलेंगे कि उनमें से कोई प्रभात के समय उपशांत रहती हैं। यह प्रभातकाल जीवन में स्फूर्ति और उत्साह पैदा करता है। तबियत में हल्कापन लाता है। मगर प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों होता है ? इसका कारण है सूर्य की किरणें। किरणों में राग-द्वेष नहीं, तथापि उनके सहज स्वभाव से ही वेदना में कमी होती है। इसी प्रकार वीतराग भगवान के स्वरूप को स्मरण करने से शांति लाभ होता है। भक्ति के द्वारा, अन्तःकरण में उनके ज्ञानस्वरूप की जो कोमल किरणें ग्रहण की जाती हैं, उनका यह सहज स्वभाव है कि वे शांति और समाधि उत्पन्न करती हैं। जो भक्त वीतराग देव का प्रीति पूर्वक स्मरण करेगा, उसके मन की दुर्मति, काम, क्रोध, मद, मात्सर्य आदि दुर्भावनाएँ कम होंगी अथवा विनष्ट होंगी। वीतराग के स्मरण रूपी किरणों का यह अवश्यंभावी असर है और जितनी-जितनी मात्रा में विकारों का उपशमन होगा, उतनी ही मात्रा में शांति और समाधि वृद्धिगत होती जाएगी।

जब-जब भी धार्मिक क्रिया से, आत्मिक शांति के लक्ष्य को समक्ष रख कर चलेंगे, अवश्य वह प्राप्त होगी। देवाधिदेव वीतराग परमात्मा का स्मरण, ध्यान और प्रार्थना से जीवन में अपूर्व शांति की प्राप्ति होती है। परमात्म-प्रार्थना का मुख्य लक्ष्य विकारों को नष्ट करके परमशान्ति प्राप्त करना है। परममशांति के मुख्य लक्ष्य में लौकिक शान्ति की प्राप्ति तो गर्भित ही रहती है। उसके लिए पृथक् प्रयत्न या प्रार्थना करनी आवश्यक ही नहीं होती उसके लिए कामना भी नहीं करनी पड़ती। आप अपने मन को, हृदय को ऐसी स्थिति में लाइए कि वह यह अनुभव करने लगे कि देवाधिदेव वीतराग के ध्यान से मोह जनित आकुलता कम हो रही है, शोक का वातावरण मिटता जा रहा है। निश्चय ही आपका चित्त शान्त और समाहित होगा। यही बात इन शब्दों में कही गई है—तित्थयरा में पसीयंतु।

इस विषय में पहले भी कहा जा चुका है। यहाँ सिर्फ इतना ही कहना है कि परमात्मा का भक्त जब बार-बार अन्तःकरण में 'पसीयंतु, पसीयंतु' की आवृत्ति करता है, तब उसके चित्त में सघनता से व्याप्त शोक का वातावरण छंटने लगता है, शांति का नूतन वातावरण निर्मित हो जाता है।

अगर प्रातःकाल में, मन में, तीर्थंकर भगवान की प्रसन्नता का एवं उनके राग-द्वेष विहीन निर्विकार स्वभाव का स्मरण-चिन्तन कर लिया तो आपको अनुभव होगा कि आपकी दिन भर की चर्या प्रसन्नता से व्यतीत होगी और जब आपका दिन भर प्रसन्नता से बीता तो क्या इसका अर्थ यह है कि भगवान ने आपको कुछ दे दिया ? नहीं, भगवान ने कुछ दिया नहीं, तथापि आपको मिल गया है । इस बात को समझने के लिए आपको पूर्वोक्त वायु और सूर्य किरणों का उदाहरण ध्यान में रखना चाहिए । जैसे वायु के अनुकूल सेवन से लाभ की और प्रतिकूल सेवन से हानि की प्राप्ति होती है, उसी प्रकार वीतराग देव के अनुकूल सेवन से लाभ और प्रतिकूल सेवन से हानि होती है ।

वीतराग का प्रतिकूल सेवन क्या है ? जिन वचनों को, तीर्थंकर के उपदेशों को ठुकराना, उनकी अवहेलना करना, उनकी आज्ञा का तिरस्कार करना, उनकी ओर अनादर और अवहेलना की दृष्टि से देखना और उनका अवर्णवाद करना । इस प्रकार के प्रतिकूल सेवन रूप गन्दे विचारों की हवा को जो अपने मन में भरी रक्खेंगे, वे पापों का संचय करके दुःख, अशान्ति और असमाधि प्राप्त करेंगे ।

अगर किसी सरागी देव की बात होती तो कहा जा सकता था कि देव नाराज हो गए, मगर वीतराग के लिए तो राजी-नाराजी होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता । फिर भी उनका अवर्णवाद करने वाले को दुःख और क्लेश की प्राप्ति होती है । यह दुःख और क्लेश वस्तुतः उसी की कलुषित भावना का परिणाम है, जो वीतराग के प्रति की गई थी । वीतराग प्रभु के स्वरूप को ठीक तरह समझ कर उनके निमित्त से पवित्र भावना की जो हवा ग्रहण करनी चाहिए थी, उसके बदले उसने निन्दा, विकथा आदि के द्वारा उनकी आसातना की, उनकी आज्ञाओं का उल्लंघन किया, उनके वचनों का उपहास किया और इस प्रकार बुरे चिन्तन की गन्दी हवा अपने में भरी, उसने अपने मन को बिगाड़ा, वचन को बिगाड़ा और अपने शरीर पर बुरे विचारों का असर डाला । नतीजा यह होता है कि ऐसा करने वाला अपने जीवन को दुःखों के सागर में डुबा लेता है ।

आपने कभी किसी तैराक को दरिया में तैरते देखा है ? मगर वह चमड़े की मशक या रबड़ का थैला ले ले और उसका मुंह खुला रख कर तैरना चाहे अथवा उसमें रेत भर कर उसके सहारे तैरने का प्रयत्न करे तो क्या तैर सकेगा ? नहीं, डूब जाएगा । तैरने के लिए आवश्यक है कि मशक या थैले में हवा भरी जाय, वायु से परिपूर्ण मशक के सहारे तैरने वाला किसी भी नदी, दरिया, तालाब या बाँध में कूद सकता है और तैर सकता है ।

तो जिसको डूबना नहीं है, पार होना है, वह मशक में रेत पत्थर या सोना नहीं भरेगा, बल्कि हवा भरेगा। इसी प्रकार संसार-सागर को पार करने के लिए हमारा मन मशक के समान है और हम, हमारी आत्मा तैराक है। जीव-तैराक ने मन रूपी मशक को ग्रहण किया। मगर उसमें धन-दौलत, कुटुम्ब-परिवार आदि की ममता रूपी रेत भरी है, मद, मोह, मात्सर्य आदि के पाषाण भरे हैं, दुर्भावना की गन्दगी भरी है। ऐसी मशक को लेकर यदि हम जल-यात्रा के लिए उद्यत हो गए हैं तो यह डुबाने की सामग्री है या तिराने की? निस्सन्देह इस दशा में आप दुस्तर संसार-सागर से पार नहीं हो सकते। अगर आप पार होना चाहते हैं तो भगवत नाम-स्मरण, स्तवन, कीर्त्तन, प्रवचन, श्रवण और सत्संग की वायु मन-मशक में भरिये। उसे भरने के बाद उसका मुंह बन्द कर लीजिये ताकि उसमें से वह वायु निकल न जाये और उसमें कचरा न भर जाये। इतना करने के बाद आपकी यात्रा में मूलभूत खतरा नहीं रहेगा। आप नहीं रुकेंगे और अवश्य पार हो जायेंगे।

अपने चित्त से इस दुविधा को दूर कीजिए कि भगवान वीतराग हैं, अतः उनका स्तवन और आराधन कुछ फलप्रद होगा या नहीं? इस भ्रम को हटा दीजिए कि हमारा प्रार्थना करना, स्मरण करना और भजन करना बेकार है। भगवान वीतराग हैं, यह सत्य है, तथापि वीतराग के स्मरण से उत्पन्न होने वाली हमारी प्रशस्त भावना कदापि निष्फल नहीं होती। भावना के अनुसार फल की प्राप्ति होती ही है। भगवत प्रार्थना से आत्मिक बल की वृद्धि होती है। मन रूपी मशक हल्की होती है।

युग के वातावरण में चलते हुए भी यदि प्रार्थना का संबल लेकर चलोगे तो मन में ताकत आएगी। मगर वह ताकत उपाश्रय तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिए। उसका उपयोग बाहरी जगत् में होना चाहिए। धर्म-स्थान पावर हाउस के समान है। पावर हाउस में उत्पन्न हुई पावर यदि अन्यत्र काम न आई तो उसकी सार्थकता का अर्थ ही क्या है? धर्म-स्थान में की हुई धर्मक्रिया से आत्मा में जो सत्संस्कार प्राप्त होते हैं, उनका उपयोग मकान, दुकान और जहान में होना चाहिए। यही धार्मिकता की कसौटी है। यही जीवन-निर्माण की सच्ची विधि है। अगर आपका मन प्रार्थना के गहरे रंग में रंगा होगा तो आप अपने साथी को भी उस रंग में रंग सकोगे। और यदि आप किसी दूसरे रंग में रंगे हैं तो अपने साथियों को भी उसी में रंगेंगे। विषय और कषाय का रंग कालिख का रंग है। यह जीवन में लगी हुई कालिमा है। इस कालिमा को पोते अनन्त काल व्यतीत हो चुका। संसारी जीव ने अपना जीवन न जाने कितना गन्दा कर लिया है और दूसरों के जीवन को कितना गन्दा कर दिया है, अड़ौस-पड़ौस के जीवन को भी कितना गन्दा बना दिया

और ऐसा करते-करते आत्मा को नरक के द्वार तक पहुँचा दिया है। गनीमत है कि इतनी गन्दगी के बावजूद आपको किसी पुण्य के योग से मनुष्य जीवन और परमात्मा के स्मरण का तथा प्रार्थना का सुन्दर अवसर मिल गया है।

भव्य जीवो! इस सुअवसर का लाभ लो और कम से कम इस जन्म में तो कालिख को न बढ़ाओ। उचित यही है कि हम अपने जीवन को भी उज्ज्वल करें और दूसरों के जीवन को भी उज्ज्वल बनाने का यत्न करें। आप प्रार्थना से यही भावना लेकर जावें। बूढ़े, बच्चे और युवक—सभी इस भावना को आत्मसात् करें।

गन्दे वातावरण का निर्माण करने वाले भी आप हैं और प्रशस्त परम्पराओं की प्रतिष्ठा करने वाले भी आप ही हैं। आप के वातावरण का निर्माण कोई दूसरा नहीं करता। गन्दा वातावरण बनाने में आप अग्रगामी बनते हैं तो दूसरों को भी प्रोत्साहन मिलता है। इसके बदले अगर आप कोई अच्छी परम्परा शुरू करें तो आपका भी भला हो और दूसरों का भी भला हो सकता है। वीतराग बनने से पहले अप्रशस्त राग का त्याग करके प्रशस्त राग में जाना पड़ेगा, अशान्ति से शान्ति में और अशुभ से शुभ में जाना होगा। जो शुभरागी होंगे वे साधना के बल पर एक दिन वीतराग बनेंगे। ऐसा किये बिना वीतरागता प्राप्त नहीं की जा सकती। वीतरागता प्राप्त करने के लिए जीवन में पैठी हुई कुटेवों को बदलने की आवश्यकता है।

व्यक्तिगत जीवन को बदलना उतना कठिन नहीं है। एक तरफ बैठकर भी उसे बदला जा सकता है, परन्तु सामूहिक जीवन में परिवर्तन लाने के लिए विशिष्ट प्रयोगों की आवश्यकता होती है, वहाँ एक कोने में बैठे रहने से काम नहीं चलता। सार्वजनिक जीवन में सुधार करने की भावना वाला देखता है कि यह गन्दगी इस तरकीब से दूर की जा सकती है। उदाहरणार्थ होली के अवसर पर लोग आम तौर से गन्दी गालियां बकते हैं और गन्दे गीत गाते हैं। ऐसी स्थिति में सामूहिक चिन्तन वाला, सामूहिक शुभ चेतना देने वाला कोई तरुण या कोई संस्था उसका समुचित और सफल प्रतीकार सोचेगा। वह गन्दे गीतों की जगह नयी शैली के शुभ गीत जनता के समक्ष रखेगा। वह इस विचार के दस-बीस तरुणों को तैयार कर लेगा और जब दस बीस हो जायेंगे तो अपनी टोली को और अधिक बढ़ा लेंगे। इस प्रकार एक दिन वे सामूहिक जीवन को नयी दिशा में मोड़ देने में समर्थ हो सकेंगे।

माताओं और बहिनों के मन पर अगर वीतराग की प्रार्थना का रंग चढ़ा होगा और तरंग उत्पन्न हुई होगी तो गन्दे गीत गाने के अवसर पर व भगवद्-

भक्ति के गीत और प्रार्थना का संगीत आलापने लगेंगी और सारे गन्दे वातावरण को पलट कर शुभ वातावरण के रूप में परिवर्तित कर देंगी। ऐसा करने वाली बहिनें समाज का ही नहीं, अपने बाल-बच्चों का भी भला करेंगी और बालकों के कोमल दिल और दिमाग पर अच्छा असर डालेंगी। उनको गन्दे विचारों और वासनाओं की ओर नहीं जाने देंगी।

इस प्रकार वीतराग की प्रार्थना करके और उनकी आज्ञा का अनुसरण करके यदि आप अपने अन्तःकरण को हल्का बनायेंगे और गन्दगी के, विषय-कषाय का त्याग करके अपने जीवन को परमात्मनिष्ठ बनायेंगे तो आपका कल्याण होगा।

क्रोध पर विजय

□ श्री दिनेश मुनि

जूलियस सीजर नामक एक प्रसिद्ध सेनापति हुआ है, जिसमें लाखों सैनिकों को अनुशासन में रखने का अपूर्व साहस एवं उत्साह था। यही कारण है कि भयंकर से भयंकर युद्ध में भी उसे विजय प्राप्त होती और शत्रुओं को सदा ही उसके सम्मुख सफलता न मिलती थी।

उसकी सफलता का रहस्य यही था कि भयंकर से भयंकर युद्ध में भी उसने क्रोध को वश में करने के लिए विशेष रूप से प्रयत्न किया था।

जूलियस सीजर यह भली प्रकार जानता था कि मनुष्य के अन्दर क्रोध का प्रवेश होने पर वह समानता, सहनशीलता एवं शान्ति को खो बैठता है। उस दशा में वह व्यक्ति विचार-पूर्वक कार्य करने में व विवेक रखने में असमर्थ रहता है।

जूलियस सीजर को जब क्रोध आता था, तो वह उस समय तक कोई कार्य नहीं करता था जब तक कि क्रोध शान्त न हो जाय। वह सदा ही क्रोध के समय आने वाले विचारों एवं शान्ति के समय आने वाले विचारों की तुलना किया करता था। इस प्रकार तुलना करने से उसको स्पष्ट ज्ञात हो जाता था कि यदि क्रोध की स्थिति में कार्य किया जाता, तो कितना अनर्थ होता और जिसके कारण न जाने कितना पश्चात्ताप करना पड़ता।

इस प्रकार जूलियस सीजर क्रोध पर विजय प्राप्त करने का पूर्ण प्रयत्न करता और क्रोध शान्त होने पर जो विचार मन में आते, उन्हीं के अनुसार अपना कार्य करता।

इस प्रकार क्रोध पर विजय प्राप्त करने के कारण उसका साहस और आत्मिक बल निरन्तर बढ़ता चला गया तथा उसके अन्दर कार्य करने की शक्ति का समुचित विकास हुआ। उसने संसार में बहुत से कार्य साहस और आत्मिक बल के कारण पूर्ण किये, जिनके कारण आज भी अनेक व्यक्ति उसका नाम आदर पूर्वक लेते हैं तथा उसके साहस-पूर्ण कार्य से प्रेरणा ग्रहण करते हैं।
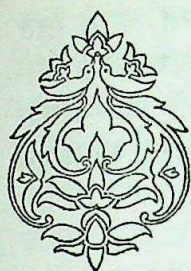
मानसिक शान्ति के मूल सूत्र

☐ आचार्य श्री देवेन्द्र मुनि जी म०

जीवन रूपी गाड़ी के लिए स्वस्थ मन अनिवार्य—हमारे जीवन के शारीरिक, वाचिक एवं बौद्धिक कार्य-कलापों का बहुत कुछ आधार हमारा मन है। मन की ही प्रेरणा से शरीर, इन्द्रियाँ, वाणी, बुद्धि आदि सब कार्य करते हैं। जिस प्रकार मोटर, इंजिन या मशीन ड्राइवर की प्रेरणा पर चलती है, उसी प्रकार हमारी जीवन रूपी गाड़ी मन रूपी ड्राइवर की प्रेरणा से चलती है। कुशल एवं स्वस्थ ड्राइवर गाड़ी को मंजिल तक सही सलामत पहुँचा देता है, उसी प्रकार कुशल एवं स्वस्थ मन जीवन रूपी गाड़ी को लक्ष्य तक सही सलामत पहुंचा देता है। अनाड़ी और अस्वस्थ ड्राइवर गाड़ी को कहीं भी दुर्घटनाग्रस्त कर सकता है, उसी प्रकार असन्तुलित, अस्वस्थ एवं अनाड़ी मन जीवन नैया को मझधार में डूबा देता है—तोड़फोड़ देता है। अत: मानसिक शान्ति, स्वस्थता एवं सन्तुलन जीवन की सफलता एवं लक्ष्य तक सही सलामत पहुँचने के लिए अनिवार्य है। इसके बिना जीवन बिना पतवार की नौका है, बिना ब्रेक की गाड़ी है अथवा बिना लगाम का घोड़ा है।

स्वस्थ एवं सशक्त मन के लिए स्वस्थ तन आवश्यक :—स्वस्थ एवं सशक्त, अथवा शान्त एवं सन्तुलित मन के लिए सर्वप्रथम स्वस्थ तन होना आवश्यक है। यह निर्विवाद है कि अस्वस्थ शरीर में मन:शक्ति के प्रकट होने की आशा नहीं की जा सकती। कहा भी है—"सशक्त शरीर में ही सशक्त मन का निवास है।" अस्वस्थ शरीर अपार मनोबल को धारण नहीं कर सकता। छिद्र युक्त घड़े में दूध का दोहन सम्भव नहीं हो सकता। मोटर के कलपुर्जे टूटे-फूटे तथा कील-कांटे ढीले-ढाले एवं अंजर-पंजर हों तो उस मोटर में चलने-चलाने की क्षमता नहीं होती। इसी प्रकार शरीर ढीला-ढाला, सुस्त, अशक्त एवं बीमार होगा तो मानसिक संस्थान ठीक-ठाक काम नहीं कर सकेगा।

पर्याप्त साधन सम्पत्ति होने पर भी मानसिक अशान्ति :—कई लोगों के पास सुन्दर ढंग से जीने के लिए पर्याप्त साधन-सामग्री, आर्थिक समृद्धि, बौद्धिक योग्यता एवं उच्च शिक्षा तथा उच्च पद-प्रतिष्ठा होने पर भी उनका मन अशान्त एवं उद्विग्न देखा जाता है। कई अच्छे व्यापारी, नेता, पंडित या अधिकारी होते

हैं, फिर भी सतत खोये-खोये से प्रतीत होते हैं। वे भूले भटके राही, स्वयं भी परेशान रहते हैं, अपने परिवारवालों को भी परेशान और अशान्त करते रहते हैं। अधिकांश लोगों की लगभग एक ही शिकायत है—मन की अशान्ति, मानसिक परेशानी, मन की अस्वस्थता और अशान्ति। ऐसे लोगों का मन सदा असन्तुलित, अस्वस्थ और व्यग्र रहता है। वे इसके लिए तरह-तरह का प्रयत्न करते हैं, फिर भी उन्हें समाधान नहीं मिल पाता।

अशान्त मन : अनेक बुराइयों का कारण :—जिसका मन अशान्त व उद्विग्न रहता है, उस व्यक्ति का भाग्य रूठ जाता है। उसके विकास और उन्नति की सारी सम्भावनाएँ नष्ट हो जाती हैं। निराशा और विषाद उसे रोग की तरह घेर लेते हैं। जीवन के सारे सुख उसे छोड़कर अन्यत्र चले जाते हैं। न उसे भोजन अच्छा लगता है, न नींद आती है। जरा-जरा सी बात पर वह कुढ़ता है, खीजता है और दूसरों को कोसने लगता है। अप्रिय एवं अस्वस्थ्यकर मानसिक कुण्ठाओं से उसका हृदय परिपूर्ण रहता है।

मन की अशान्ति से विवेक, विचार और सन्तुलन नष्ट :—अनेक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों से यह सिद्ध हो चुका है कि मन की अशांति एवं उद्वग्निता मनुष्य के स्नायु-संस्थान पर अनुचित बोझ डाल कर उसे कमजोर बना देती है। वह विश्राम करता है लेकिन उसे आराम नहीं मिलता। अशान्त एवं उद्विग्नचित्त व्यक्ति जब सोकर उठता है, तब गहरी नींद न आने के कारण ताजगी और स्फूर्ति के बदले भारी थकान और सुस्ती का अनुभव करता है। उसका शरीर निढाल और लुंजपुंज हो जाता है। आलस्य, शैथिल्य और दौर्बल्य आदि उसे बुरी तरह घेरे रहते हैं। इस प्रकार दुःखपूर्ण जीवन बिताने के कारण उसका स्वास्थ्य, बल और विवेक चौपट हो जाते हैं। जिस मन में अशान्ति अपना डेरा डाल देती है, वहाँ मानसिक सन्तुलन, विवेक, विचार एवं सम्यग्ज्ञान नष्ट हो जाते हैं। उस व्यक्ति की बुद्धि भी स्वस्थ और सन्तुलित नहीं रहती, जिसके फलस्वरूप वह अशांति के कारणों का निवारण करने में असमर्थ हो जाता है। अगर वह उद्विग्न मन से उलटे-सीधे प्रयत्न भी करता है, तो उसके परिणाम उलटे ही निकलते हैं।

मानसिक अशान्ति : एक आपत्ति और व्याधि—मानसिक अशान्ति भयंकर आपत्ति है, जो दूसरी आपत्ति को न्यौता देती है। एक आपत्ति से छूटकर दूसरी में पड़ जाना, विषाद से छूटकर निराश हो जाना, क्रोध से छूट कर शोक और शोक से छूटकर भय के वशीभूत हो जाना, यह विष-चक्र मानसिक अशान्ति का परिणाम है।

मानसिक अशान्ति से मानसिक सन्तुलन बिगड़ जाता है, तब विक्षिप्तता पैदा हो जाती है। हर समय दुःखी, अशान्त, चिन्तित और परेशान रहना उसके जीवन-क्रम का विशिष्ट अंग बन जाता है। जिस प्रकार शरीर में ताप की अधिकता से ज्वर नामक शारीरिक व्याधि हो जाती है, उसी प्रकार अधिक संतप्त एवं उद्विग्न रहने वाले व्यक्ति को 'अशान्ति' नामक मानसिक व्याधि उत्पन्न हो जाती है। मानसिक अशान्ति से शरीर में भयंकर उत्तेजना भी पैदा होती है, जिससे उसके रक्त में भयंकर विष व्याप्त हो जाता है, जो रक्त के धार को नष्ट करके गठिया, यक्ष्मा, कैंसर आदि भयंकर व्याधियों को उत्पन्न करता है।

अविद्या ही मानसिक अशान्ति का मूल कारण—मानसिक अशान्ति का मूल कारण महापुरुषों ने "अविद्या" को बताया है। उसी के साथ फिर मोह, काम, क्रोध, लोभ, असमता आदि अन्य कारण जुड़ते जाते हैं। भगवान महावीर ने अन्तिम प्रवचन में दुःख और अशान्ति के मूल कारण की मीमांसा करते हुए कहा था—"जावंतोऽविज्जा–पुरिसा सव्वे ते दुक्खसंभवा" जितने भी अविद्यावान पुरुष हैं, वे सब अपने लिए दुःख और अशान्ति पैदा करते हैं। सचमुच, ऐसे मनुष्य बुद्धि में बहुत बढ़े-चढ़े होते हैं, वे तर्क, युक्ति और पांडित्य में तथा भाषा ज्ञान में भी दूसरों से बाजी मार लेते हैं, किन्तु वे हृदय को महत्त्व नहीं देते। वे बुद्धि के बल पर शास्त्रों की लम्बी-चौड़ी व्याख्या कर सकते हैं, लच्छेदार भाषण दे सकते हैं, अनेक भाषाएँ बोल सकते हैं, परन्तु हृदय की जड़ता के कारण वे अविद्या के अन्धकार में भटक कर मानसिक अशान्ति के गहरे गर्त में पड़े रहते हैं। बुद्धि के बल पर भ्रांतिवश वे व्यापार, शिक्षा पाण्डित्य, विद्वता, उच्च पद आदि से जीवन में सफलता के स्वप्न देखते हैं, परन्तु हृदय की व्यापक विशालता एवं सम्यग्ज्ञान के अभाव में सफलता उनसे कोसों दूर रहती है।

अविद्या का लक्षण :—आत्मा की विशिष्ट शक्तियों का ज्ञान न होना अथवा बौद्धिक उड़ान को ही सम्यग्ज्ञान मानना अविद्या है। अविद्या के कारण ही मनुष्य शरीर को ही सब कुछ समझता है। उसके दुर्बल, रुग्ण, अशक्त, बेडौल एवं कुरूप होने को ही अपने आप (आत्मा) की दुर्बलता, रुग्णता, अशक्ति, कुरूपता या बेडौलपन समझता है। इसी प्रकार शरीर और शरीर से सम्बन्धित सजीव-निर्जीव वस्तुओं को अपनी और शाश्वत समझकर मोह ममत्ववश सुख-दुःख की कल्पना करता है, यही अज्ञान है, अविद्या है। इसी अविद्या के कारण मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह, मात्सर्य, द्वेष आदि नाना विकार पैदा होते हैं, जिनसे मानसिक संक्लेश पैदा होता है। अगर मनुष्य अविद्या और उसके कारणों एवं परिणामों को समझ ले तथा उनसे दूर रहने का सतत अभ्यास करे तो वह मानसिक अशान्ति से छुटकारा पा सकता है।

अविद्या : एक प्रकार की नास्तिकता—इसी अविद्या के कारण कई मनुष्य स्वयं को दीन-हीन और दु:खी मानकर दिन-रात रोते-झीकते और चिन्ता करते रहते हैं। इससे मानसिक अशान्ति, तनाव और विपत्ति बढ़ती जाती है। स्वयं को दीन-हीन मानकर चलने वाले व्यक्ति जाने-अनजाने प्राय: नास्तिकता के घोर अन्धकार की ओर बढ़ते जाते हैं। नास्तिकता भी अविद्या का ही एक प्रकार है। निराश, चिन्तित एवं अप्रसन्न रहना आत्मा का तिरस्कार है, आत्मा की अनन्त शक्तियों के प्रति अश्रद्धा एवं अवमानना है, यह भी नास्तिकता है। आस्तिक व्यक्ति हर परिस्थिति और प्रत्येक दशा में प्रसन्न, सन्तुष्ट और उल्लसित रहता है। वह जानता है कि दीन, हीन, मलिन और अप्रसन्न रहने से आत्मा का तेज नष्ट होता है, आत्मा के अस्तित्व एवं उसकी प्रचण्ड शक्तियों पर से विश्वास उठ जाता है। जिस मनुष्य को मानव शरीर में श्रेष्ठ आत्मा जैसा प्रसाद मिला हो, उत्तम चिन्तन करने के लिए बुद्धि और विवेक जैसा पुरस्कार मिला हो, विशिष्ट क्षमताओं, योग्यताओं और समर्थों से भरा मन मिला हो, शक्तिशाली, सुन्दर, स्वस्थ, सुघड़ शरीर मिला हो, वह मनुष्य दीन-हीन हो ही कैसे सकता है ? दीनता-हीनता का अनुभव करना मानसिक अशान्ति को स्वयं न्यौता देना है।

इस नास्तिकता के दुष्परिणाम—इसी नास्तिकता के परिणामस्वरूप मनुष्य स्वयं दु:खी एवं अशान्त होकर कभी-कभी आत्म-हत्या कर लेता है, जो निकृष्ट एवं पापपूर्ण कार्य है। ऐसे नास्तिक एवं अविद्यावान् लोग अपने अभावों एवं परिस्थितियों का रोना रोते रहते हैं। ऐसे लोग अपने मन-मस्तिष्क को प्रतिकूलता को समर्पित कर आर्त्तध्यान करते रहते हैं। ऐसा करने से मनुष्य निर्बल, निकम्मा एवं निराश होकर अन्धेरे में भटकता रहता है, अपनी मानसिक क्षमताओं को नष्ट कर डालता है। परिस्थितियों से घबराकर मन को अशान्त एवं असन्तुलित बनाने अथवा अपने अभावों और विषमताओं पर रोते रहने के अभ्यासी लोगों का अपने पर से ही नहीं, वीतराग परमात्मा पर से भी विश्वास उठ जाता है। वह या तो निमित्तों को कोसता है या परमात्मा को। इस प्रकार वह अपना आत्म-विश्वास खोकर अपने उपादान (आत्मा) का संशोधन नहीं करता, बल्कि आत्म-शुद्धि के लिए व्रत, नियम, तप, संयम, त्याग का आचरण करना भी छोड़ देता है। वह अज्ञानवश पुराने अशुभ कर्मों का क्षय तो कर नहीं पाता, नये अशुभ कर्मों को और बांध लेता है।

अपनी परिस्थिति में सन्तुष्ट रहना सीखो—अगर व्यक्ति अपनी संकटपन्न परिस्थिति में धैर्य रखे, मन का सन्तुलन न खोये, अपनी स्थिति में ही सन्तुष्ट और प्रसन्न रहने का आस्तिक भाव बनाये रखे अथवा शान्तिपूर्वक परिस्थिति का सामना करे, स्वयं को परिस्थिति के अनुरूप एडजस्ट कर ले तो वह मानसिक

शान्ति भी प्राप्त कर लेता है, परमात्मा की कृपा का पात्र, गुरुदेवों के आशीर्वाद का भाजन एवं धर्माचरण को सक्षम भी बनाता है। अपनी आत्मा को भी ज्ञान-दर्शन के प्रकाश से विकसित कर लेता है।

आस्तिकता सम्पन्न व्यक्ति कभी दुःखी नहीं होते—अपनी परिस्थिति के विषय में इस प्रकार की आस्तिकता एवं आध्यात्मिक विचारधारा रखने वाले कभी दुःखी नहीं होते। प्रतिकूल एवं विषय परिस्थितियाँ उन्हें दीन-हीन, व्याकुल एवं अशान्त नहीं बना पातीं। उनका आत्म-विश्वास बढ़ता जाता है। वे अधिकाधिक परिश्रमी, दूसरों के प्रति उदार, सहिष्णु एवं आत्मीयता की भावना से ओतप्रोत बन जाते हैं। ऐसे आत्मा और परमात्मा के प्रति दृढ़विश्वासी व्यक्ति जीवन की कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण होकर एक दिन अवश्य ही वास्तविक सुख-शान्ति के अधिकारी बनते हैं।

वह आवश्यकताओं की कटौती करता है—ऐसा आस्तिक व्यक्ति अपने उपादान (आत्मा) को शुद्ध करने का प्रयत्न करता है। वह स्वेच्छा से अपनी आवश्यकताएँ घटाता है, आवश्यकताओं की छंटनी करके उनमें से अनिवार्य आवश्यकताओं का—इच्छाओं का परिमाण करता है। वह मन में यह निश्चित धारणा बना लेता है कि आनन्द, सुख, सन्तोष या सम्पन्नता धन, सम्पत्ति एवं बाह्य साधनों में नहीं है। ये सब मनुष्य की आत्मा में निवास करने वाले आस्तिकभाव–दैवी-भाव में है। यदि सुख आदि का निवास बाह्य साधनों में होता तो संसार का प्रत्येक धनवान, साधन सम्पन्न एवं भौतिक सम्पदा में आसक्त व्यक्ति सन्तुष्ट, सुखी और प्रसन्न होता, परन्तु ऐसा होता नहीं।

आवश्यकता बढ़ाने से अशान्ति बढ़ेगी—अविद्यावान् नास्तिक लोग अपनी आवश्यकताएँ बढ़ा लेते हैं अथवा दूसरों की देखादेखी आवश्यकताएँ बढ़ाने का विचार करते रहते हैं। घर में पर्याप्त वस्त्र होते हुए भी वे कपड़े की दुकान में प्रवेश करके विभिन्न किस्म के कपड़े देखकर मन में जलते रहते हैं—"आह, ऐसा कपड़ा मेरे पास नहीं है। काश ! मैं इसे खरीद सकता।" ऐसा करके कभी तो वे कर्ज लेकर ऐसी अनावश्यक वस्तुओं को खरीदते रहते हैं, अथवा मन ही मन अशान्ति का अनुभव करते रहते हैं।

मानसिक शान्ति और भौतिक वस्तुओं की लालसा एक दूसरे के कट्टर विरोधी हैं। निष्कर्ष यह है कि मानसिक शान्ति के लिए देखादेखी से, अनावश्यक वस्तुओं को खरीदने का विचार करने से, भौतिक वस्तुओं की लालसा से अथवा लोभ से प्रेरित होकर प्रतिस्पर्धा करने से दूर रहना चाहिए।

ईर्ष्या से मानसिक अशान्ति—कई लोगों के पास पर्याप्त धन एवं साधन होते भी हैं, फिर भी वे उनका सदुपयोग करने के बदले दूसरों के प्रति ईर्ष्या और

प्रतिस्पर्द्धा करके दुःखी होते रहते हैं। वे दूसरों की स्थिति अपने से अच्छी देख कर स्वयं को दीन-हीन एवं निर्धन महसूस करने लगते हैं। उन्हें अपने पास के साधन कम मालूम होते हैं। किसी की उन्नति देखकर ऐसे व्यक्ति जलने-कुढ़ने लगते हैं। ऐसे अभागे अज्ञानग्रस्त व्यक्ति जीवन में स्थायी शोक-सन्ताप के सिवाय और क्या पा सकते हैं?

संसार में एक से एक बढ़कर धनवान और एक से एक बढ़कर निर्धन या अभावग्रस्त पड़े हैं। इसलिए अपनी स्थिति पर असन्तुष्ट होकर रोने या दूसरों से जलने की अपेक्षा मनुष्य को अपने से निर्धन एवं अभाव पीड़ित की ओर देखना चाहिए। तभी सन्तुष्टि और मनः शान्ति प्राप्त हो सकती है। अपनी स्थिति से जो दुःखी हो रहा है, उसे सोचना चाहिए कि क्या उसकी स्थिति समाज में सबसे गई गुजरी है? ऐसा तो नहीं है। तब उसका खेद करना कदापि उचित नहीं है। ईर्ष्या, प्रतिस्पर्द्धा और भौतिक लालसा मानसिक शान्ति में बाधा उत्पन्न करने वाली है। अपने दुर्भाग्य के लिए दूसरों की नुक्ताचीनी, टीका-टिप्पणी या मिथ्या आलोचना करना भी उचित नहीं। ऐसा करने से दुर्भाग्य तो मिटेगा नहीं, उलटे अशुभ कर्मबन्ध होने से बढ़ेगा ही। अतः दुर्भाग्य को सौभाग्य में परिवर्तित करने के लिए व्यक्ति समभाव, सन्तोष, तप, त्याग, संयम, प्रत्याख्यान, कषायविजय, विषयासक्ति-त्याग, धैर्य आदि का अभ्यास बढ़ाना चाहिए।

परिस्थितियों से घबराकर विचलित न हों—मनुष्य के जीवन में कुछ परिस्थितियाँ अनिवार्य होती हैं, उन्हें प्रसन्नतापूर्वक सहे बिना छुटकारा नहीं। मानव जीवन में सैकड़ों प्रतिकूलताएँ, विपत्तियाँ, दुःख, बीमारी, इष्टवियोग—अनिष्ट संयोग आते हैं। शान्ति और धैर्यपूर्वक उनका सामना करना या उन्हें सहन करना सीखना चाहिए। ऐसा करने से आत्मबल, धैर्य एवं गाम्भीर्य बढ़ेगा। उसकी इच्छाशक्ति मजबूत बनेगी। फलतः प्रतिकूलताएँ या विपरीत परिस्थितियाँ भी अनुकूल बनाई जा सकेंगी।

परावलम्बिता का यथाशक्ति त्याग करें—कई बातों में मनुष्य स्वावलम्बी बन सकता है, परन्तु थोड़ी सी सुविधा एवं सुकुमारता के चक्कर में पड़कर वह परावलम्बी बन जाता है। यह परावलम्बीपन आगे चलकर उसके लिए ही दुःखदायी एवं मानसिक संताप का कारण बन जाता है।

विरोधों और अवरोधों से घबराओ मत—कई लोग सत्कार्य करते हैं, परन्तु उनमें जब विरोध या अवरोध आते हैं, अथवा कठिनाइयाँ या कसौटियाँ आती हैं, तो घबरा उठते हैं। परन्तु घबरा जाने से मानसिक शान्ति भंग हो जायेगी। इसके बदले विरोधों और अवरोधों की परवाह किये बिना शान्ति और

धैर्यपूर्वक सत्कार्य करते रहना चाहिए। सत्कार्य करने में विघ्न-बाधाएँ मुसीबतें या कठिनाइयाँ तो आती ही हैं बल्कि मुसीबतें मानव जीवन में अनिवार्य हैं। अवरोध, संकट या विरोध से विचलित नहीं होना चाहिये न ही उनके आगे घुटने टेकने चाहिए, क्योंकि ये सब व्यक्ति की निष्ठा, श्रद्धा और धैर्य की कसौटी करने आते हैं। जिस समय विरोध या अवरोध आयें, उस समय व्यक्ति को अपनी इच्छाशक्ति मजबूत बनाकर दृढ़तापूर्वक सत्कार्य करने का निश्चय करना चाहिये। अगर व्यक्ति उस समय विरोधों, कठिनाइयों या मुसीबतों को देखकर दूर भाग जायेगा, या सत्कार्य छोड़कर आलसी बनकर चुपचाप बैठ जायेगा तो वह किसी भी सत्कार्य को कर नहीं पायेगा। उसके मन में विरोधों या अवरोधों से हार खाने का कांटा सदैव बना रहेगा। विरोधों या अवरोधों के समय शान्त और स्वस्थ मन से परमात्मा से उन्हें सहने की शक्ति की प्रार्थना करनी चाहिये। श्रेष्ठ, प्रेरणादायक पुस्तकों के स्वाध्याय, सत्संग या जप में स्वयं को लगाये रखना चाहिये, ताकि आत्मबल प्राप्त हो।

दूसरों की पंचायत में न पड़ो—कई बार मनुष्य दूसरों के कार्य में मगज-पच्ची करता रहता है। दूसरे क्या करते हैं या किस प्रकार चलते हैं, इसकी आलोचना या टीका-टिप्पणी करके अशान्त और अस्वस्थ होना, स्वयं चलाकर अशान्ति को मोल लेना है। मानसिक शान्ति के लिए यह अनिवार्य है कि मनुष्य दूसरों के काम में हस्तक्षेप न करे। जो विश्व के समस्त पदार्थों से मानसिक शान्ति का मूल्य अधिक मानता है, उसे इस नियम का दृढ़ता से पालन करना चाहिए।

अपमान को भूल जाओ—मान लो, किसी व्यक्ति ने अज्ञानतावश तुम्हारा अपमान कर दिया या तुम्हारी भावना को आघात पहुँचाया, तो उसके प्रति तुम्हें अपने हृदय में द्वेष, दुर्भाव, क्रोध या अनिष्ट करने का विचार नहीं लाना चाहिये। दुर्भाव या द्वेष-भाव का सेवन करना एक प्रकार का मानसिक कैंसर है। इस प्रकार की संताप-वृद्धि करने की आदत व्यक्ति के अपने लिए भी हानि-कारक है। ऐसा करने से उस व्यक्ति की नींद हराम हो जाएगी, रक्त जहर बन जायेगा। रक्तचाप भी बढ़ जाना सम्भव है। किसी के द्वारा किये गये अपमान को अगर बार-बार याद किया जायेगा तो उससे मन में दुष्ट विचार आयेंगे, हृदय में जलन होगी, इसकी अपेक्षा उस अपमान का कड़वा घूंट पी जाने से अपमानित करने वाले व्यक्ति पर भी उसका असर होगा, मन को भी शान्ति मिलेगी।

लौकिक लोगों से प्रशंसा या प्रतिष्ठा की अपेक्षा न रखो—जो व्यक्ति दुनियादार लोगों से अपने कार्य की या अपनी प्रशंसा या सार्वजनिक सम्मान, प्रतिष्ठा चाहता है, वह अपने लिए मानसिक अशान्ति और शारीरिक अस्वस्थता

का सृजन करता है। जब प्रशंसा या सम्मान मिलेगा, तभी वह काम करेगा, अन्यथा सत्कार्य को छोड़ बैठेगा अथवा मन में घुटता रहेगा कि मैं इतना अच्छा कार्य करता हूँ, फिर भी मेरी कोई प्रशंसा या कद्र नहीं करता है। दुनियादार लोगों में अधिकांश अज्ञानी एवं चापलूस होते हैं, उनके किये गये गुणगान का मूल्य इतना क्यों आंका जाये ? परमात्मा एवं चारित्रशील महात्माओं के आशीर्वाद एवं कृपा-प्रसाद प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये। धर्मशास्त्रों के उपदेशों तथा सदाचार के नियमों एवं साधु-सन्तों तथा पवित्र पुरुषों के मत को ही महत्त्व देना चाहिए।

श्रेय-प्रेय का विवेक करना सीखो—जो व्यक्ति मानसिक शान्ति चाहता है, उसे प्रत्येक अवसर पर अच्छे-बुरे, सत्-असत् या श्रेय-प्रेय का विवेक करना सीखना चाहिए। सन्मार्ग का निर्णय करने के लिए आत्म-निरीक्षण की आवश्यकता है। अर्थात्—उसे आत्माभिमुख होना चाहिए। जो अन्तर की गहराई में उतरकर आत्म-विकास की दृष्टि से खोज करेगा, वह अवश्य ही आनन्द पायेगा। वह अपने अन्तर में विवेक का गज डालकर श्रेय (कल्याणकारी मार्ग) और प्रेय दोनों को पहचान लेगा। यदि मन इन्द्रियों की भावुकता भरी माँग का अनुसरण करके प्रवृत्ति करेगा तो वह मायाजाल भरे प्रेय मार्ग में फंसा देगा अर्थात्—जब मन तुम्हें संसार के फिसलन वाले भोग विलासपूर्ण रमणीय मार्ग की ओर ले जाने लगे अथवा दूसरों का अनुसरण करने को ललचाये, तभी व्यक्ति को सम्भल कर अपनी विवेक बुद्धि का उपयोग करके श्रेय मार्ग को पकड़ना चाहिये, भले ही उसमें प्रारम्भ में कष्ट, कठिनाइयाँ या विघ्न-बाधाएँ आएँ, परन्तु उसका परिणाम सुख शान्ति-दायक होगा। जब श्रेय मार्ग का निर्णय हो जाये तो उसे क्रियान्विति करने हेतु जुट पड़ना चाहिए। सच्चा मार्ग आत्माभिमुखी पथ-पकड़ा कि उस व्यक्ति पर परमात्मा की कृपा अनायास ही उतरने लगेगी, जो उसके जीवन को अधिकाधिक उदात्त बनायेगी और इसी से उसे मानसिक शान्ति प्राप्त होगी।

विचार, वाणी और व्यवहार में एकरूपता लाओ—अतः मानसिक शान्ति का मूल सूत्र है—अपनी आत्मा के प्रति वफादार रहो। जो लक्ष्य निश्चित किया है, अथवा गृहस्थ धर्म या साधु धर्म दोनों श्रेयस्कर मार्गों में जिस मार्ग पर चलने का निश्चय किया है, उसके प्रति पूर्ण, अनन्य श्रद्धापूर्वक चल पड़ो। विचार, वाणी और व्यवहार में अधिकाधिक मात्रा में एकसूत्रता लाओ। जैसा विचार हो, तदनुसार बोलो और व्यवहार करो, छल, झूठ-फरेब या दम्भ को जीवन में से निकाल फेंको। तभी सच्चे माने में मानसिक शान्ति प्राप्त होगी। भौतिक सतह पर तुम से जो कम भाग्यशाली हो, उसके साथ अपनी तुलना करो और आध्यात्मिक सतह पर जो तुम से अधिक भाग्यशाली हो, उसके साथ अपनी

तुलना करो। उपाय तुम्हारे अन्तर में भौतिक सन्तोष और आध्यात्मिक असन्तोष जागृत करेगा। इस उपाय से तुम आध्यात्मिक प्रगति और मानसिक शान्ति प्राप्त कर सकोगे। आध्यात्मिक समृद्धि ही वास्तविक समृद्धि है। यह आत्मा की पूंजी होगी। उपर्युक्त उपाय के बदले उलटा उपाय आजमाओगे अर्थात् भौतिक समृद्धि में तुम से बढ़े-चढ़े लोगों की ओर तथा आध्यात्मिक समृद्धि में तुम से निम्न कोटि के लोगों की ओर मुख रखोगे तो तुम में भौतिक असन्तोष एवं आध्यात्मिक अहंकार का अनिष्ट प्रभाव पैदा होगा।

मानसिक शान्ति के लिए कुछ प्रेरणा सूत्र—एक बात और। मानसिक शान्ति के लिए किसी को बिना माँगे सलाह या सुझाव मत दो, अनावश्यक वार्त्तालाप बन्द करो, शब्दों को तौल-तौल कर हेतु पूर्वक ही बोलो। अन्यथा, कई बार सदाशय से बोले गये निर्दोष शब्द भी गलतफहमी पैदा कर देते हैं, फलत: संघर्ष और अशान्ति खड़ी हो जाती है। सलाह देने वाला व्यक्ति अपनी बात उससे मनवाने का आग्रह करता है। अगर वह तुम्हारे मत से विरुद्ध मत रखता है तो तुम्हें क्या? सहिष्णुता रखकर तो तुम उसे धीरे-धीरे अपने मत का बना सकोगे, विरोध या आग्रह करने से बात तन जायेगी, अत: दूसरों को सुधारने के चक्कर में पड़कर अपना समय और शक्ति मत खर्च करो, ऐसा करने से तुम थक कर निराश हो जाओगे, उसे अपना शत्रु बना लोगे। अत: स्वस्थ और शान्त रहकर आध्यात्मिक गुणों की वृद्धि करने में लगो, यही मानसिक शान्ति का राज-मार्ग है।

---

१०१ रुपये में १०८ पुस्तकें प्राप्त करें

अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रारम्भ की गई "ज्ञान प्रसार पुस्तक माला" के अन्तर्गत अब तक ८२ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुल १०८ पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना है। प्रत्येक पुस्तक का फुटकर मूल्य दो रुपया है पर जो व्यक्ति या संस्था १०१ रुपये भेजकर ट्रैक्ट साहित्य सदस्य बन जायेंगे, उन्हें १०८ पुस्तकें नि:शुल्क प्रदान की जायेंगी।

तपस्या, विवाह, जयन्ती, पुण्यतिथि पर प्रभावना के रूप में वितरित करने के लिए १०० या अधिक पुस्तकें खरीदने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

कृपया १०१ रुपये मनिआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा 'अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्' के नाम सी-२३५ ए, तिलक नगर, जयपुर-३०२००४ के पते पर भेजें।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत
सम्पादक-संयोजक
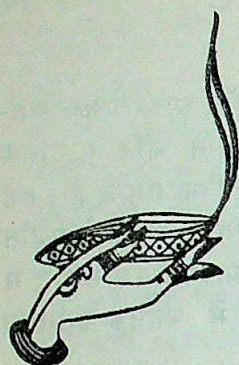
राग का नहीं, त्याग का महत्त्व है●

□ उपाध्याय श्री मानचन्द्रजी म. सा.

'नास्ति रागं समं दुखं' (महाभारत) राग अर्थात् आसक्ति के बराबर दुख नहीं है। आसक्ति अथवा राग इस संसार में परिभ्रमण कराता है। इससे जन्म-मरण का चक्र बढ़ता चला जाता है। इसे कर्मों का बीज कहा गया है—

'रागो य दोषो विय कम्म बीयं।'

यदि बीज नष्ट नहीं होगा तो शाखा-प्रशाखा रूप, जन्म-मरण नष्ट नहीं होंगे। अतः शाखा-प्रशाखा रूपी जन्म-मरण के मूल को नष्ट करना चाहिये। फिर शाश्वत सुखों में कोई अड़चन नहीं आवेगी। राग के कारण प्रत्येक प्राणी अनिष्टकारी प्रवृत्तियों में प्रवृत्त होता चला जाता है। यह हमारा प्रबल शत्रु है तथा ऐसा शत्रु है जो कि मित्रवत् रहता है, आस्तीन के सर्प की तरह है जो कि हमारा इतना अनिष्ट कर देता है जितना शत्रु नहीं करता है। राग एक प्रकार से बन्धन है जो कि पराधीन बनाये रखता है। विद्वानों ने इसे सोने की बेड़ी कहा है फिर भी वह बन्धन ही है तथा यह बन्धन द्वेष से भी अधिक भयंकर व अहितकर है क्योंकि द्वेष को तो पहचाना जा सकता है किन्तु राग को पहचानना बड़ा कठिन है। राग भाव के कारण ही तो हजारों-लाखों कीट-पतंगें दीपक की लौ पर अपने प्राण न्यौछावर कर देते हैं। राग भाव के कारण ही भ्रमर पुष्प की कली में बन्द हो जाता है जबकि उसमें सख्त लकड़ी में छेद करने की शक्ति है। वह किवाड़ों एवं मकान के छत के पाटों में तो छेद कर देता है किन्तु राग भाव के कारण वह पुष्प की कोमल पत्तियों में छेद नहीं कर पाता है तथा कभी-कभी उसी में अपने प्राणों को गँवा बैठता है अतः राग का बन्धन बड़ा ही भयंकर है। राग भाव को जानना, पहचानना व पहचान कर त्यागना बड़ा ही कठिन है।

'नेह पासा भयंकरा' अर्थात् राग का बन्धन बड़ा भयंकर है। गौतम स्वामी को केवल ज्ञान की प्राप्ति तब तक नहीं हो पायी जब तक कि भगवान महावीर के प्रति हल्का सा राग उनके मन में बना रहा था। जब राग छूटा तो अनन्त

●श्री चाँदमल बाबेल द्वारा सम्पादित प्रवचन।

ज्ञान की प्राप्ति हुई। किसी वस्तु या पदार्थ पर या किसी के प्रति राग भाव है तो वह आसक्ति का रूप ले लेता है जिससे वह संसार के बन्धनों को काट नहीं पाता है। एक दफा उदयपुर के महाराणा के राज्य में किसी पहलवान ने आकर चुनौती दी—महाराज! कोई भी पहलवान मेरा मुकाबला नहीं कर सकता है। मेरे सामने जो आयेगा उसे मैं दो-तीन मिनट में चित कर दूंगा। महाराणा ने सारे नगर में डोंडी पिटवादी कि जो व्यक्ति इस पहलवान को कुश्ती में पछाड़ देगा उसे राज कोष से उतना ही धन दिया जावेगा जितनी स्वर्ण मुद्राएँ वह उठा कर ले जा सकता है किन्तु वह हार गया तो उसे प्राणदण्ड दे दिया जावेगा।

अनेक पहलवान तैयार तो हुए किन्तु प्राण-दण्ड की शर्त के कारण वे लड़ने को आगे नहीं आ रहे थे। फिर वह पहलवान बाहर का था अत: उसके दाँव-पेच से वे परिचित नहीं थे अत: उनका मनोबल मजबूत नहीं बन पा रहा किन्तु जेल में पड़े एक पहलवान ने सोचा कि यहाँ पर जिन्दगी जेल में निकल रही है। यदि जीत गये तो स्वर्ण मुद्रायें मिलेंगी जिससे परिवार सुखी बन जावेगा तथा हार गये तो जेल में सड़ने के बजाय मर जाना ही उपयुक्त है। अत: उसने महाराणा से कहलवाया कि मैं इस पहलवान का मुकाबला करूँगा। महाराणा को कैदी की बात से आशा बंधी एवं उसे दरबार में बुलाया क्योंकि मेवाड़ की इज्जत का प्रश्न था। अब महाराणा ने कैदी की हथकड़ी एवं बेड़ी तोड़ने के लिये औजार लाने की आज्ञा दी, किन्तु कैदी ने औजार लाने से रोक दिया एवं अपने हाथों से बेड़ी एवं हथकड़ी तोड़ डाली। यह देखकर महाराणा को आश्चर्य हुआ तथा पूछा—तुम इतने शक्तिशाली हो तो इतने दिन कैद में क्यों रहे? बन्धन तोड़कर भाग सकते थे—तब कैदी बोला—महाराणा! सच है कि मैं जब भी चाहता तब बन्धन तोड़ कर भाग सकता था किन्तु आपके कर्मचारी एवं पुलिस मेरे माता, पिता, भाई, पत्नी आदि को तंग करते, उनको परेशान करते। उनके स्नेह एवं राग के कारण मैं ऐसा नहीं कर सका।

इस प्रकार राग के कारण जब कैदी इन बन्धनों को तोड़ने में भी असमर्थ रहा तो ये संसार के बन्धन कैसे टूट सकते हैं? अत: संसार के बन्धनों को तोड़ने के लिये राग को समाप्त करना पड़ेगा। राग भाव व्यक्ति के लिये तारक नहीं, अपितु मारक है।

'रागान्धो हितन: सर्वो न पश्यति हिताहितम्' अर्थात् राग में अन्धे हुए सभी मनुष्य अपनी आत्मा के हिताहित स्वरूप को नहीं देख सकते हैं। इस प्रकार वस्तुओं पर राग, पदार्थों पर राग करना भी संसार में भ्रमण करने का कारण है।

'भोगी भमई संसारे' भोगी व्यक्ति संसार में भ्रमण करता है अतः इस प्रकार भोग की प्रवृत्ति छोड़कर त्याग के मार्ग को अपनाना श्रेयस्कर है क्योंकि त्याग की बड़ी महत्ता है। दीक्षा का महत्त्व ज्यादा है बनिस्पत विवाह के। व्यवहार में देखते ही हैं कि विवाह के निमन्त्रण पर चन्द व्यक्ति ही इकट्ठे होंगे किन्तु दीक्षा महोत्सव है तो अधिक संख्या में एकत्रित होंगे क्योंकि त्याग का महत्त्व अधिक समझा जाता है। यदि कोई लकड़हारा दीक्षा लेता है और उसके बाद यदि कोई चक्रवर्ती दीक्षा लेता है तो चक्रवर्ती उस लकड़हारे को वन्दना करता है। इस प्रकार जिसने त्याग पूर्व में किया, वह अधिक महत्त्वशाली है।

'नास्ति त्याग समं सुखम्' (महाभारत, पर्व १२) त्याग के बराबर सुख नहीं है। वस्तु का संयोग होने पर भी इच्छापूर्वक उसके भोग से मुंह मोड़ लेना, ऐसा त्याग ही अलौकिक सुख रूप होता है। इससे अपूर्व शान्ति प्राप्त होती है। समस्त प्राणियों के मुक्ति का एक मात्र साधन भोगों का त्याग कर देना ही माना गया है। इच्छापूर्वक भोगों के परित्याग का अन्तिम परिणाम अनन्त शान्ति ही है। 'निवृति पाप संपर्का सन्तो यान्ति हि निवृत्तिम्' पाप पूर्ण आरम्भ-समारम्भ से निवृत्त पुरुष ही साधुता प्राप्त करते हुए मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

आगे बढ़ने के लिये स्वच्छ राह चाहिये,
जीवन बनाने के लिये अच्छा उत्साह चाहिये ।
निर्वाण पथ की ओर बढ़ने के लिये ए मानव,
अपने जीवन में त्याग की सुचाह चाहिये ।।

जीवन में त्याग ही मोक्ष मार्ग पर ले जाने का एक मात्र सहारा है। उस समय सभी को त्यागना पड़ता है। जिसे हम तत्त्वों की अपेक्षा उपादेय मानते हैं, वह भी हेय की स्थिति में आ जाता है। त्याग के बाद वैराग्य की महत्ता है क्योंकि त्यागी तो फिर भी मन में यह भाव रख सकता है कि मैंने संसार, धन, माल, पुत्र-पुत्री, पत्नी आदि सबको छोड़ दिया है। तो यह फिर भी हल्का सा अभिमान है, किन्तु वैरागी इस अभिमान को भी छोड़ देता है। तभी उसे मुक्ति प्राप्त होती है। वैसे हम देखते हैं कि त्याग से बड़ी शान्ति प्राप्त होती है। जो निस्पृही है, वह चक्रवर्ती से भी अधिक सुख का अनुभव करता है। यदि कोई पुरुष वर्तमान में प्राप्त वस्तु के प्रति तृप्त नहीं हुआ तो भला भविष्य में कैसे संतुष्ट होगा ? अतः पूर्ण संतुष्टि तो उसे त्याग में ही प्राप्त होगी क्योंकि वैभवशाली देवता, इन्द्र भी इस त्याग के समक्ष अपने को निम्न समझते हैं। वे भौतिक ऐश्वर्य से सम्पन्न हो सकते हैं किन्तु त्याग मार्ग को नहीं अपना सकते हैं।

एक दफा दशार्णभद्र राजा ने विचार किया कि मैं भगवान महावीर के दर्शनार्थ बड़े ही सजधज के साथ प्रस्थान करूँ तथा ऐसा ही किया। इस अभिमान को देवताओं के राजा इन्द्र ने अपने ज्ञान में देखा। तब इन्द्र उसे बोध देने के लिए अपने वैक्रिय बल से बड़े ही आडम्बर से निकल पड़ा। उसके सामने राजा दशार्णभद्र का वैभव पर्वत के सामने चींटी की तरह नजर आया। राजा को अपनी भूल मालूम हुई। उसने विचार किया कि वैभव से अधिक महत्त्व त्याग का है। अत: इस वैभव को छोड़कर उसने महावीर के पास दीक्षा अंगीकार कर ली। तब इन्द्र ने आकर वन्दना की एवं निवेदन किया कि वैभव का मुकाबला मैं अवश्य कर सकता हूँ किन्तु त्याग के सामने मैं स्वयं नतमस्तक हूँ। आपको मैं वैभव से विजय प्राप्त करना चाहता था किन्तु आपने त्याग के सामने मुझे पराजित कर दिया।

भौतिक बल अन्यत्र कहीं भी, नहीं शक्ति से झुकता है।
किन्तु त्याग बल के सम्मुख, आकर आखिर थकता है॥

वास्तव में त्याग का महत्त्व राग से अधिक है, किन्तु त्याग से अधिक महत्त्व वैराग्य का है।

—सी-४६, डॉ. राधाकृष्णन् नगर, भीलवाड़ा (राज.)

कविता :

खतरा

☐ डॉ. सत्यपाल चुघ

दुनिया में नहीं
खतरा
पशुता की जबरन
ताकत से
यह है शौर्य
शराफ़त की
बेहिम्मत
कमजोरी से
मचा लें चाहे
काले-काले
घुमड़ घने
बादल-दल
चारों ओर ही
भीषण शोर
पर दमके यदि
ऊंचा कर मुंह
सूरज तेजाभ
तो हो नहीं सकती
किसी तरह
असमय रात।

—बी-८२, अशोक विहार
फेज-I, दिल्ली-११००५२

धारावाही लेखमाला (६)
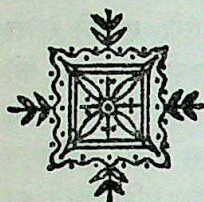
श्रावकधर्म : स्वरूप और चिन्तन

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
(उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य)

२. प्रमादाचरित या प्रमादचर्या—अनर्थदण्ड का दूसरा आधार स्तम्भ प्रमादाचरण है। प्रमादयुक्त आचरण का नाम प्रमादाचरण है। प्रमाद जीवन के लिये जीता-जागता मरण है। यह मानव को विषय-कषाय, निद्रा-विकथा आदि दुर्गुणों में लिप्त करके अधमरा-सा बना देता है। यह जीवन का तत्त्व-सत्त्व चूस लेता है। सचमुच प्रमाद मानव-जीवन को पतन की ओर ले जाता है।

१. मद—प्रमाद का अर्थ केवल आलस्य या निद्रा ही नहीं है। प्रमाद के पाँच प्रकार हैं—मद, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा। इन पाँच प्रमादों का सेवन करने से जीव संसार-सागर में गिरता है। मद का अर्थ अहंकार या मद्य है। मद के आठ भेद हैं।[1] उनके नाम इस प्रकार हैं।

१. जातिमद, २. कुलमद, ३. बलमद, ४. रूपमद, ५. तपमद, ६. लाभ-मद, ७. शास्त्रमद, ८. ऐश्वर्य मद।

दूसरे अर्थ में जब 'मद' शब्द प्रयुक्त होता है तब मद यानी प्रमाद का मुख्य उत्पादक मदिरा होने से वह मद (मद्य) कहलाता है। साधक गृहस्थ को इन मदों से बचना चाहिये। जाति, कुल, बल, रूप आदि का मद बहुत ही अनर्थ और संघर्ष का कारण है।

२. विषय—पाँच इन्द्रियों के तेवीस विषय हैं। उनमें आसक्त होना विषय-प्रमाद है। आत्मा इन पंचेन्द्रिय विषयों में निमग्न होकर अपने ज्योतिर्मय स्वरूप को भूल जाता है। श्रावक शब्द, रूप, रस, गन्ध एवं स्पर्श रूप पाँचों इन्द्रियों के विषयों का आसक्तिपूर्वक कभी भी सेवन नहीं करता। विषयों में आसक्त प्राणी अपने प्राणों को भी खतरे में डाल देता है।

१. स्थानांग सूत्र, स्थान-८

३. **कषाय**—'कषाय' शब्द 'कष' और 'आय' इन दो शब्दों से निष्पन्न हुआ है 'कष' का अर्थ है—संसार और 'आय' का अर्थ है—लाभ ! दोनों शब्दों का सम्मिलित अर्थ होता है—जिनके द्वारा संसार की प्राप्ति हो, उसे कषाय कहते हैं। कषाय पुनर्भव के मूल को सींचते रहते हैं, उसे शुष्क नहीं होने देते हैं।[1] यह संसार-वृक्ष कषायों से हरा-भरा रहता है। इसके चार भेद हैं—क्रोध, मान, माया और लोभ। क्रोध और मान ये द्वेष हैं, माया और लोभ ये राग हैं। श्रावक को कषाय से बचना चाहिये।

४. **निद्रा**—निद्रा आत्मा की गफलत से लाभ उठाती है, आत्मा की जागरूकता का हरण कर लेती है।

५. **विकथा**—जिनके कहने-सुनने से दूसरों को कामोत्तेजना या विकार उत्पन्न होते हैं, विकथा है। आत्मा को इससे कोई लाभ नहीं है। यह आत्म-गुणों की नाशक है। इसके चार भेद हैं—स्त्रीकथा, भक्तकथा, देशकथा और राजकथा। श्रावक को विकथा से बचना चाहिये।

इसी सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि दुःश्रुति नामक भेद, प्रमादाचरण के भेद विकथा में ही समाविष्ट हैं। दुःश्रुति का अर्थ है—जिन बातों को सुनने-पढ़ने से चित्त आरम्भ में, आसक्ति से, पाप-कार्य करने के साहस से, मिथ्यात्व, द्वेष, राग, मद और काम से कलुषित हो जाता है, वह दुःश्रुति है।

३. **हिंस्रप्रदान**—अनर्थदण्ड का तीसरा आधार स्तम्भ हिंस्रप्रदान है—हिंसा में सहायता के लिये उपकरण या साधन दूसरों को देना। इसका अपर नाम "हिंसादान" भी है। हिंसा करने के लिये उसके साधनों का दान करना हिंसादान है। यहाँ सूक्ष्म रूप से इसकी व्याख्या पर विचार करना है कि जिन चीजों से हिंसा हो सकती है, उन्हें प्रदान करना हिंसादान नहीं है अपितु हिंसा के लिये शस्त्र आदि पदार्थों को देना हिंसादान है। वास्तव में यह अनर्थदण्ड तभी होता, जब हिंसा आदि के लिये शस्त्र आदि कोई पदार्थ किसी को दिया जाय, जैसे दो देशों या दो शासकों को परस्पर लड़ाने के लिये सेना को उकसा कर हथियार देना। तात्पर्य यह है कि जिनसे हिंसा होती है, उन अस्त्र-शस्त्र, आग, विष, आदि हिंसा के साधनों को क्रोधाविष्ट अथवा क्रोधावेश से रहित व्यक्ति के हाथों में दे देना हिंस्रप्रदान है।

४. **पापोपदेश**—यह अनर्थदण्ड का चतुर्थ भेद है। इसका अर्थ है—पाप कर्म का उपदेश देना। ऐसा उपदेश, जिसे सुनकर व्यक्ति पाप-कार्य में हिंसा-

---

१. सिंचति मूलाइं पुणब्भवस्स—दशवैकालिक ८/४०

असत्य, मैथुन, परिग्रह आदि में प्रवृत्त हो। जो कार्य पाप रूप है, उनका उपदेश देना पापोपदेश है। इससे कोई लाभ नहीं है बल्कि दूसरे को अधःपतन की ओर ले जाना है, इसलिये श्रावक के लिये यह वर्जनीय है।

इस प्रकार अनर्थदण्ड के चार आधार स्तम्भ हैं। श्रावक को इनको भली भांति समझ कर इनसे बचना चाहिये। जो श्रावक प्रत्येक प्रवृत्ति को प्रारम्भ करने से पूर्व अर्थ-अनर्थ का विवेक करके निरर्थक कार्यों से बचता है, वही अनर्थ दण्ड के पाप से अपनी आत्मा को बचा सकता है। यों तो बाहर से देखने में प्राण, भूत, जीव और सत्त्व का विनाश करता है किन्तु अन्तरंग रूप से वह आत्मा की हानि करता है। आत्म-विकास को रोकता है। जो मानव दूसरों को कष्ट पहुँचाता है, कष्ट पहुँचाने का विचार करता है या प्रेरणा करता है वह दूसरों को तो कष्ट पहुँचा सकेगा या नहीं यह निश्चित नहीं है, किन्तु यह सुनिश्चित है कि वह निश्चय में अपनी आत्मा की भावहिंसा कर लेता है। इसलिये अनर्थ दण्ड का परित्याग श्रावक के लिये आवश्यक है।

श्रावक को अनर्थदण्ड के पाँच अतिचारों से बचने और शुद्ध रूप से अनर्थ दण्ड विरमण व्रत का पालन करने का प्रयत्न करना चाहिये। इस व्रत के पाँच अतिचार जानने योग्य हैं। आचरण करने योग्य नहीं हैं। वे इस प्रकार हैं।[1]

१. कन्दर्प, २. कौत्कुच्य, ३. मौखर्य, ४. संयुक्ताधिकरण, ५. उपभोग परिभोगातिरिक्तता।

१. कन्दर्प—यह प्रथम अतिचार है। जिसका अर्थ है—काम-वासना को उत्तेजित करने वाले। मोह-समुत्पादक शब्दों का हास्य या व्यंग्य में दूसरों के प्रति प्रयोग करना या सुनना कन्दर्प नामक अतिचार है। बोधवर्धक विनोद करना इस अतिचार में नहीं है।

२. कौत्कुच्य—जिसका अर्थ है—आँख, नाक, मुँह आदि अंगों को टेढे-मेढे, भौंडे-भद्दे रूप में विकृत करना, विकृत बना कर भांड या विदूषक की-सी चेष्टा करके व्यक्तियों को हँसाना, कुतूहल पैदा करना, विचित्र वेष बनाकर मानवों को विस्मय में डालना।

३. मौखर्य—इसका अर्थ है—अकारण ही अधिक बोलना, कुछ न कुछ

१. उपासकदशांग सूत्र—१/८ अभयदेव वृत्ति पृ० १६

बकवास करते रहना, इधर-उधर की निष्प्रयोजन अनर्गल बातें कहना। वाचालता श्रावक जीवन के लिये अश्रेयस्कर है। यह एक ऐसा भयंकर रोग है जो मानव जो जर्जर बना देता है। अत्यधिक बोलने से मानसिक और आत्मिक शांति भंग होती है। जो व्यक्ति वाणी का संयम रखता है उसकी वाणी प्रभावशालिनी होती है। मौखर्य नामक अतिचार से बचने के लिये संयम रखना एवं मौन की साधना करनी चाहिये।

४. संयुक्ताधिकरण—यह चतुर्थ अतिचार है। जिसका अर्थ है—कूटने-पीसने एवं गृह कार्य के अन्यान्य साधनों का अधिकाधिक और निष्प्रयोजन संग्रह कर रखना।

५. उपभोग परिभोगातिक्तता—इसका अर्थ है—जो पदार्थ उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत स्वीकार करते समय मर्यादा में रखे थे, उनमें अत्यधिक आसक्त रहना, उनमें आनन्द मानकर उनका पुनः उपयोग करना। उनका उपयोग जीवन निर्वाह के लिये नहीं, अपितु केवल स्वाद के लिये करना। श्रावक को कम से कम पदार्थों से अपना जीवन-निर्वाह करना चाहिये। तभी वह इस अतिचार से बच सकता है। तात्पर्य यह है कि शरीर-संरक्षा या जीवन-निर्वाह के लिये भोजन, वस्त्र, शय्या आदि पदार्थों का उपभोग-परिभोग अनर्थ दण्ड नहीं है। जबकि रसास्वाद, बड़प्पन-प्रदर्शन आदि के लिये भोजन, वस्त्र, शय्या आदि का उपभोग करना अनर्थदण्ड है।

अनर्थदण्ड विरमण व्रत से, मन, वचन और काया से होने वाली समस्त प्रवृत्तियाँ शुद्धतम होती हैं। प्रवृत्तियाँ निरवद्य हुए बिना सामायिक आदि व्रतों की आराधना नहीं हो सकती है। इसलिये जैसे कृषक खेती करने से पहले खेत में उगे हुए निरर्थक घास-फूस, झाड़-झंखाड़ को उखाड़ फेंकता है तभी इस भूमि में बीज बोने पर सुन्दर रूप में खेती हो सकती है, वैसे ही श्रावक को सामायिक आदि की साधना करने से पहले अनर्थदण्ड के घास-फूस या झाड़-झंखाड़ को उखाड़ फेंकना चाहिये तभी समभाव आदि के बीज मनोभूमि में बोने पर आत्म-विकास की अतीव सुन्दर फसल लहलहा सकती है। वास्तव में अनर्थ-दण्ड के त्यागी साधक का जीवन धर्मप्रधान एवं शान्तिमय है। उसके जीवन के कण-कण में सदाचार एवं सद्विचार की सुवास विद्यमान होती है। (क्रमशः)
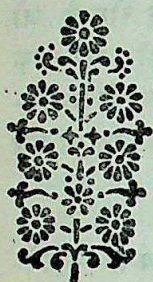
जैन आगम—एक विवेचन

☐ श्री दुलीचन्द जैन

जीवन के दो पहलू हैं—आचार और विचार। विचार बुद्धि का विषय है—जो अध्ययन, चिन्तन, मनन पर आधारित है। विचार की कीमत तभी है, जब वह सत्यपरक हो—सत्य से जुड़ा हो। वह सत्योन्मुख विचार जब कर्म में परिणत होता है तब वह आचार, सदाचार कहलाता है।

अतः सबसे पहले सही ज्ञान का प्राप्त होना आवश्यक है। भगवान महावीर ने कहा—'पढमं नाणं तओ दया'—प्रथम ज्ञान, फिर दया। विचार, आचार और कर्म में जब समन्वय होता है, तब जीवन का समग्र विकास होता है।

वही ज्ञान सत्य है जिसको व्यक्ति ने प्रत्यक्ष रूप से—स्वयं साक्षात्कार करके—स्वयं अनुभव करके प्राप्त किया है। आत्मा अनन्त ज्ञान का पुंज है, लेकिन वह असीम ज्ञान कर्मों के आवरणों या पर्दों से ढका है। जब आत्मा के समस्त आवरण ध्यान, साधना, तपस्या, संवर, निर्जरा द्वारा मिट जाते हैं तब आत्मा का असीम, अपरिमित, अनन्त ज्ञान प्रकट होता है। कर्मों के आवरण से ज्ञान को मुक्त कराने वाले साधक वीतराग कहलाते हैं। वीतराग का तात्पर्य वे महान् आत्माएँ हैं, जिन्होंने राग, द्वेष, काम, क्रोध आदि सभी विकारों पर विजय प्राप्त करली है।

इस प्रकार के वीतरागी महापुरुषों की वाणी को ही आगम कहते हैं। न्याय सूत्र के अनुसार आगम का अर्थ है—'आप्तोपदेश : शब्द' अर्थात् आप्त का कथन आगम है। इस प्रकार जिन का उपदेश एवं वाणी ही जैनागम है।

जैन अनुश्रुति के अनुसार जिन भगवान (तीर्थंकर) सर्वज्ञ होने के उपरांत, अपनी वाणी द्वारा उपदेश रूपी अमृत की वर्षा करते हैं। वे जो कुछ बोलते हैं उनको उनके प्रधान शिष्य, जो गणधर कहलाते हैं, सूत्र रूप में ग्रंथित करते हैं, उसे आगम कहा जाता है। आगम का एक और अर्थ है जो चिरकाल से, अनादि काल से चला आ रहा है।

प्राचीन काल में शास्त्र ज्ञान को कंठस्थ रखने की परम्परा थी। शिष्य अपने गुरुजनों से शास्त्र का श्रवण करते थे तथा श्रवण कर उन्हें अपनी स्मृति

में संजोकर रखते थे। उनसे उनके उत्तरवर्ती शिष्य सुनते थे। यह क्रम निरंतर चलता रहता था। वेद, पिटक एवं आगम—तीनों इसी पद्धति से शताब्दियों तक सुरक्षित बने रहे। बेदों को 'श्रुति' तथा आगमों को जो 'श्रुत' कहा गया, वह इसी तथ्य का सूचक है।

जैन श्रुति के अनुसार तीर्थंकर के समान अन्य प्रत्येक बुद्ध कथित आगम भी प्रमाण हैं। गणधरों के अतिरिक्त अन्य स्थविरों की रचनाओं को भी जैन परम्परा आगमान्तर्गत मानती है। स्थविर दो प्रकार के होते हैं—सम्पूर्ण श्रुत ज्ञानी और दशपूर्वी। उनकी रचनाओं को भी गणधर प्रणीत आगम के समान जिनागमान्तर्गत माना गया है। कालक्रम से वीर संवत १७० वर्ष के बाद जैन संघ में श्रुतकेवली का भी अभाव हो गया और केवल दशपूर्वधर ही रह गये तब उनकी विशेष योग्यता को ध्यान में रखकर दशपूर्वधर ग्रंथित ग्रंथों को भी आगम में समाविष्ट कर लिया गया।

जैन मान्यता के अनुसार चतुर्दश पूर्वधर और दशपूर्वधर वे ही साधक हो सकते हैं, जिनमें सम्यग्दर्शन होता है। अतः उनके ग्रंथों में आगम विरोधी बातों की सम्भावना ही नहीं रहती।

ऐतिहासिक दृष्टि से भगवान महावीर के निर्वाण के लगभग १६० वर्ष बाद तक आगम ज्ञान की परम्परा श्रवण तथा कंठाग्रता के आधार पर चलती रही। तदनन्तर एक प्रतिकूल परिस्थिति आई। मगध (दक्षिण बिहार) में १२ वर्ष का दुष्काल पड़ा। उस समय उत्तर भारत में चन्द्रगुप्त मौर्य का राज्य था। दुर्भिक्ष के कारण जैन श्रमण इधर-उधर बिखर गये। अनेक काल-कलवित हो गये। जैन संघ के लिए यह चिन्ता का विषय बना कि आगम श्रुत की सुरक्षा कैसे की जाये।

दुर्भिक्ष समाप्त हुआ। आगमों को व्यवस्थित करने हेतु पाटलीपुत्र में आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में जैन मुनियों का एक सम्मेलन आयोजित हुआ। इसमें ग्यारह अंग संकलित किये गये। बारहवां अंग दृष्टिवाद किसी भी श्रमण की स्मृति में नहीं था। उस समय दृष्टिवाद के ज्ञाता सिर्फ आचार्य भद्रबाहु थे पर वे महाप्राण ध्यान की आराधना करने १२ वर्ष के लिये नेपाल गये हुए थे। अतएव संघ ने स्थूलभद्र को अनेक साधुओं के साथ दृष्टिवाद की वाचना लेने के लिए भद्रबाहु के पास नेपाल भेजा। उन्होंने दशपूर्व सीखने के बाद अपनी श्रुत-लब्धि-ऋद्धि का प्रयोग किया। इसका पता जब भद्रबाहु को चला, तब उन्होंने आगे अध्यापन कराना छोड़ दिया। स्थूलभद्र के बहुत अनुनय-विनय करने पर वे राजी हुए किन्तु स्थलभद्र को कहा कि शेष ४ पूर्व की अनुज्ञा मैं नहीं देता।

शेष चार पूर्व की सूत्र वाचना मात्र देता हूँ। इस प्रकार वे दृष्टिवाद के १४ पूर्वों में से मात्र दश पूर्व तक का अर्थ सहित ज्ञान प्राप्त कर सके। चवदह तक ४ पूर्वों का उन्हें केवल पाठ प्राप्त हो सका।

आगम-संकलन का यह प्रथम प्रयास था, जिसे 'पाटलिपुत्र वाचना' कहा जाता है। इस प्रकार आगम-वाङ्मय को संकलित तो कर लिया गया पर उन्हें सुरक्षित बनाये रखने का आधार उन्हें कण्ठाग्र कर स्मृति में संजोये रखना ही रहा।

जैनों ने अपने आगम ग्रंथों को सुरक्षित रखने का सदैव प्रबल प्रयत्न किया है, किन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि जिस रूप में भगवान के उपदेश को गणधरों ने ग्रथित किया था, वह रूप आज हमारे पास नहीं है। उनकी भाषा में प्राकृत होने के कारण परिवर्तन होना स्वाभाविक है। ब्राह्मणों की तरह जैनाचार्य और उपाध्याय, अंग ग्रन्थों की अक्षरशः सुरक्षा नहीं कर सके हैं। फिर भी इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अंगों का अधिकांश जो आज उपलब्ध है, वह भगवान के उपदेश के अधिक निकट है।

इस प्रकार स्थूलभद्र तक चतुर्दश पूर्व का ज्ञान श्रमण संघ में रहा। उनकी मृत्यु के बाद १२ अंगों में से ११ अंग और दशपूर्व का ही ज्ञान शेष रह गया। स्थूलभद्र की मृत्यु वीर निर्वाण के २१५ वर्ष बाद में हुई।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जैन आगम लोक भाषा में निर्मित थे जो व्याकरण के कठिन नियमों से बंधी नहीं थी। इसलिए आने वाले समय के साथ-साथ उसमें भाषात्मक दृष्टि से परिवर्तन भी स्थान पाने लगा। स्मृति दुर्बलता भी बढ़ रही थी। पुनः द्वादश वर्ष का दुष्काल पड़ा। अतः ग्रहण, गुणन और अनुप्रेक्षा के अभाव में सूत्र नष्ट होने लगे। कालान्तर में यह अनुभव किया जाने लगा कि उन्हें व्यवस्थित करने का पुनः प्रयास किया जाये। फलतः भगवान महावीर के निर्वाण के ८२७–८४० वर्ष के मध्य आगमों को सुव्यवस्थित करने का एक और प्रयत्न हुआ। दुर्भिक्ष समाप्त होने पर आर्य स्कन्दिल के नेतृत्व में साधु संघ मथुरा में एकत्र हुआ। तब उपस्थित मुनियों ने जैसा स्मरण था, उसके आधार पर संकलन कर आगम को व्यवस्थित किया। चूंकि यह वाचना मथुरा में हुई थी, इसे 'माथुरी वाचना' कहते हैं। आगमों को संकलित करने का यह द्वितीय प्रयास था।

माथुरी वाचना के समय के आसपास ही सौराष्ट्र के अन्तर्गत वल्लभी में नागार्जुन सूरि ने श्रमण संघ को एकत्र करके आगमों को व्यवस्थित करने का प्रयास किया।

उपर्युक्त वाचनाओं को सम्पन्न हुए लगभग १५० वर्ष व्यतीत हो चुके थे। उस समय फिर वल्लभी नगर में देवर्धिगणि क्षमाश्रमण के नेतृत्व में श्रमण संघ इकट्ठा हुआ और पूर्वोक्त दोनों वाचनाओं के समय एकत्र हुए सिद्धान्तों के उपरांत जो-जो ग्रंथ-प्रकरण विद्यमान थे, उन सबको लिखाकर सुरक्षित करने का निश्चय किया गया। इस श्रमण-समवसरण में दोनों वाचनाओं के सिद्धान्तों का परस्पर समन्वय किया गया तथा जहाँ तक हो सका उनका भेदभाव मिटाकर उन्हें एकरूप कर दिया गया। यह कार्य वीर निर्वाण ९८० में हुआ। वर्तमान में जो आगम ग्रंथ उपलब्ध हैं, उनका अधिकांश इसी समय में स्थिर हुआ था। इस सम्मेलन की विशेषता यह रही कि इसमें आगमों को लेखबद्ध किया गया ताकि भविष्य में उनका एक सुनिश्चित रूप सबके सामने विद्यमान रहे। जहाँ पाठ भेद का समन्वय नहीं हो सका, वहाँ वाचनान्तर या भिन्न वाचना का संकेत किया गया। बारहवाँ अंग दृष्टिवाद साधुओं को स्मरण नहीं था अतः उसे विच्छिन्न घोषित कर दिया गया।

आगम वाङ्मय - सकल श्रुत का मूलाधार गणधर ग्रंथित द्वादशांग है। इनके नाम निम्न हैं :—(१) आचार (२) सूत्रकृत (३) स्थान (४) समवाय (५) व्याख्या प्रज्ञप्ति (भगवती) (६) ज्ञातृधर्म कथा (७) उपासक दशा (८) अन्तकृद्दशा (९) अनुत्तरौपपातिक दशा (१०) प्रश्न व्याकरण (११) विपाक (१२) दृष्टिवाद अन्तिम अंग दृष्टिवाद का लोप हो गया है।

इनमें वर्णित विषयों के पूरक अंश, विस्तार एवं किसी भी रूप में सम्बन्धित विषय जिन ग्रंथों में वर्णित हुए हैं, वे अंगों के सहायक आगम हैं। उनकी रचना अंगों के आधार पर ही हुई है। वे उपांग, छेद, मूल और आवश्यक रूप में अभिहित हुए हैं,

बारह अंगों के बारह उपांग माने गये हैं। अंगों में बारहवां अंग अप्राप्त है। उपांग सब प्राप्त हैं।

उपांग ग्रंथों के नाम हैं :—(१) औप-पातिक (२) राजप्रश्नीय (३) जीवाभिगम (४) प्रज्ञापना (५) सूर्य प्रज्ञप्ति (६) जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति (७) चंद्र प्रज्ञप्ति (८) निरयावली (९) कल्यावतसिका (१०) पुष्पिका (११) पुष्प चूलिका (१२) वृष्णि दशा।

निम्नांकित ४ ग्रंथ छेद कहे जाते हैं :—(१) व्यवहार (२) बृहत्कल्प (३) निशीथ (४) दशाश्रुत स्कन्ध।

४ मूल ग्रंथ हैं—(१) दशवैकालिक (२) उत्तराध्ययन (३) नन्दी (४) अनुयोग द्वार। आवश्यक १ (एक) है।

इस प्रकार अंग, उपांग, छेद, मूल एवं आवश्यक कुल मिलाकर बत्तीस होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रकीर्णक के रूप में तेरह और माने जाते हैं जिन्हें मिलाने से आगम संख्या ४५ हो जाती है। कहीं-कहीं प्रकीर्णकों की संख्या और अधिक मानी गई है जिन्हें मिलाने से आगमों की संख्या ८४ तक चली जाती है।

दिगम्बरों का कहना है कि वीर निर्वाण के बाद श्रुत का क्रमशः ह्रास होते-होते ६८३ वर्ष के बाद कोई अंगधर या पूर्वधर आचार्य रहा ही नहीं। अंग और पूर्व के अंश मात्र के ज्ञाता आचार्य हुए। दिगम्बरों ने मूल आगम का लोप मानकर भी कुछ ग्रंथों को आगम जितना ही महत्त्व दिया है और उन्हें जैन वेद की संज्ञा देकर प्रसिद्ध चार अनुयोगों में विभक्त किया है।

चार अनुयोग हैं—१. प्रथमानुयोग—पद्म पुराण (रविषेण), हरिवंश पुराण (जिनसेन), आदिपुराण (जिनसेन), उत्तर पुराण (गुणभद्र)।

२. करणानुयोग—सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, जयधवला।

३. द्रव्यानुयोग—प्रवचनसार, समयसार, नियमसार, पञ्चास्तिकाय (चारों कुन्दकुन्दकृत) तत्त्वार्थाधिगम सूत्र (उमास्वाति कृत) और उसकी समंत भद्र, पूज्यपाद, अकलङ्क, विद्यानन्द आदि कृत टीकाएँ, आप्त मीमांसा (समन्त भद्र) और उसकी अकलङ्क, विद्यानंद आदि कृत टीकाएँ।

४. चरणानुयोग—मूलाचार (वट्टकेर) त्रिवर्णाचार, रत्नकरण्ड श्रावकाचार।

इस सूची से स्पष्ट है कि इसमें दशवीं शताब्दी तक लिखे हुए ग्रंथों का समावेश है।

जैनागमों में से कुछ तो ऐसे हैं जो जैन आचार से सम्बन्ध रखते हैं, कुछ उपदेशात्मक हैं, कुछ में दार्शनिक मत का निरूपण किया गया है। कतिपय प्रमुख आगम ग्रंथों के मुख्य विषय निम्न हैं :—

आचारांग—महावीर की साधना एवं श्रमणों का आचार।

सूत्रकृतांग—महावीर वाणी का विशाल भंडार एवं दार्शनिक सिद्धांत।

स्थानांग—महावीर चरित्र दर्शन।

समवायांग—दर्शन।

विपाक सूत्र—कर्म सिद्धांत आदि।

उपासकाध्ययन—गृहस्थ धर्म ।

अन्तकृतदश—मुनियों के तप एवं साधना का वर्णन ।

अनुतरौपपातिकदश—मुनियों की साधना का वर्णन ।

भगवती—भगवान महावीर के साथ हुए संवादों का संग्रह ।

उत्तराध्ययन सूत्र—महावीर के अंतिम उपदेश के रूप में प्रसिद्ध ।

नंदी सूत्र—ज्ञान के स्वरूप एवं भेदों का विश्लेषरा ।

उपासकदशा सूत्र—उपासकों के आचार का वर्णन ।

आवश्यक चूर्णि—महावीर के जीवन की घटनाओं का वर्णन ।

विशेषावश्यक भाष्य—दार्शनिक युग के प्रायः सभी विषयों का वर्णन ।

आवश्यक निर्युक्ति—महावीर का मिथ्यातत्वादि से निर्गम आदि वर्णन ।

दशा श्रुतस्कंध—(कल्पसूत्र) महावीर चरित्र आदि ।

दशवैकालिक—जैन आचार से सम्बन्धित ।

जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, सूर्य प्रज्ञप्ति—भूगोल और खगोल ।

ज्ञातृ-धर्म कथा—कथाओं के साथ उपदेश ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन आगम वाङ्मय में आचार, व्रत, सम्यक्-ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र, संयम, तप, ब्रह्मचर्य, कषायनिग्रह, सेवा, समिति, भावना, इन्द्रियनिग्रह, दया, दान, शिक्षा, शील, क्षमा, जीव, अजीव, धर्म, अधर्म, लोक, काल, पाप, पुण्य, संवर, निर्जरा, मोक्ष, गृहस्थ धर्म आदि विभिन्न विषयों का अनेक अपेक्षाओं से विस्तृत वर्णन है ।

सदाचार, आत्म-साधना, पवित्र जीवन, संयम, अप्रमाद आदि के सन्दर्भ में आगम साहित्य में जो बिचार प्रकट किये गये हैं, वे बड़े ही मार्मिक एवं उद्बोधक हैं । सहस्रों वर्ष पूर्व प्रकट किये गये ये उद्गार युगों-युगों तक जन-जन को शुद्ध, निष्पाप एवं निर्मल जीवन जीने की प्रेरणा देते रहेंगे ।

—जैन इण्डस्ट्रियल कॉरपोरेशन
७०, शम्बुदास स्ट्रीट, मद्रास-६०० ००१

JAIN ASCETIC (JAIN MUNI)

Jain Philosophy—JAINISM is one of the most ancient and foremost religions of the world. According to its philosophy each and every individual soul after slackening its four Karmas (bondages) can attain supreme perception, supreme knowledge, infinite happiness and infinite bliss. It can become enlightend and become 'Paramatma'—the emancipeted and supreme soul. It can ultimately attain liberation, the supreme state of 'Nirvana' where there is no more cycles of births and deaths, because in Jain philosophy there is no difference in the original quality between the conscious soul existing in the smallest body of a microm and that of a human being. The only difference between them is in the state of development in consciousness, knowledge and instrusion etc.

Thirthankaras—THERE were twenty-four Thirthankaras in the current descending cycle of time. The first was Lord Rishabha and the last was Lord Mahaveer, who lived in the 6th Century B. C. The Thirthankarns are fully enlightened and omniscient teachers of universal trulh. The teachings of the Thirthankaras are the instruments for guiding us to cross this muadane world and lead to final liberation or moksha, called the Sidhloka, enjoying eternal bliss and beautitude. The Thirthankaras have established the holy path of sanctity the 'Thirth' or the Sangh. It consisted of four wings : the monks and the nuns ; the householders both men and women.

Two Sects—AFTER the last Thirthankara, Lord Mahaveer, two sects came into existence with a little difference in belief. They are ; Swetambar and Digambar, The Digambar asceties or munis remain nude while the Swetambar Munis wear white cloths. In Swetambar sect, at a later stage other sub-sects were formed. They are Sthanakwasi and Terapanthi. They do not erect temples and

worship images but believe in self-realisation and self-purification. The Swetambar Sthanakwasi and Swetambar Terapanthi monks and nuns tie their mouth, with 'Munhpathi' made from a piece of white cloth, while the Swetambar Moorthi Pujak monks and nuns keep it in their hands. It is with the view to prevent innumerable invisible insects and microbes from being hurt while breathing and speaking and to avoid spit falling out while reading a holy scripture or conversing. The monks are called Muniji and the nuns Mahasatiji,

MONASTIC RULES

ANY man or woman without the distinction of caste or age can enter the holy monastic order, after renouncing his or her house, family and worldly possessions. They have to strictly observe a code of conduct in their life. These rules are equally applicable to monks as well as to nuns.

FIVE GREAT VOWS

THERE are five great vows (Panch Mahavratha) to be observed by the ascetics. They are :

(1) **Ahimsa (Non-Violence)**—THE monks and nuns should maintain an attitude of compassion and equanimity towards all living-beings. They should not exhibit violence towards any living being, man, beast, bird, water, air, fire etc., through mind, speech or body. They should not commit any violence or approve of any violence committed by any person.

(2) **Satya (Truthfulness)**—THEY should always speak truth and should not approve of any lie. In extraordinary circumstances when speaking of truth is harmful to any body's feelings they prefer to keep silent.

(3) **Astheya (Non-Stealing)**—THEY should not commit any kind of theft or take anything without it being given. Even if one is in need ol something it should be taken after necessary permission.

(4) **Bramhacharya (Celebacy)**—THEY should practice the vow of celebacy by giving up all forms of sexual enjoyment in thought, word and deed and by refraining from even touching the opposite sex. A monk should not touch even a small girl and a nun should not touch even a small boy. They should also give up the desire for the enjoyment of sound, sight and taste which excite the senses like the film music and errotic songs, movies and dramas and the use of all kinds of perfumes and all kinds of green fruits, onions and potatoes etc. They should also avoid extreme cold and hot drinks.

(5) **Aparigraha (Non-Possession)**—THEY should remain as symbols of a renunciated life; non-attachment to and disinterestedness to worldly possessions and problems in thought, word and deed. They should abstain from touching even a single coin in their life. Tqey do not accept any gifts or cash. They are permitted to keep things for their ascetic life like clothes, wooden vessels, books etc., according to their needs, but they should not be attached to them They should keep only minimum necessaries.

FIVE RULES OF CONDUCT—(1) Careful walking. They always keep Rajoharna (dust-remover) for protection of the insects. (2) Vigilence in avoiding the destruction of any living being. (3) Restraint in speech so as to avoid wounding the feelings of any one. (4) Careful examination of all articles of food. (5) Proper care of all articles of use while they are being removed or replaced for avoiding injury to any living being.

THREE OTHER RULES—(1) Control of the mind for keeping aloof from any sinful thought. (2) Control of long conversation for avoiding hurt to other's feelings. (3) Control of the body for avoiding physical pain to any living being.

Vihar (Travelling)—THEY should travel on foot from one place to another however far away be their destination. During their travelling on foot they should give discourses on religion and

worship images but believe in self-realisation and self-purification. The Swetambar Sthanakwasi and Swetambar Terapanthi monks and nuns tie their mouth, with 'Munhpathi' made from a piece of white cloth, while the Swetambar Moorthi Pujak monks and nuns keep it in their hands. It is with the view to prevent innumerable invisible insects and microbes from being hurt while breathing and speaking and to avoid spit falling out while reading a holy scripture or conversing. The monks are called Muniji and the nuns Mahasatiji,

MONASTIC RULES

ANY man or woman without the distinction of caste or age can enter the holy monastic order, after renouncing his or her house, family and worldly possessions. They have to strictly observe a code of conduct in their life. These rules are equally applicable to monks as well as to nuns.

FIVE GREAT VOWS

THERE are five great vows (Panch Mahavratha) to be observed by the ascetics. They are :

(1) Ahimsa (Non-Violence)—THE monks and nuns should maintain an attitude of compassion and equanimity towards all living-beings. They should not exhibit violence towards any living being, man, beast, bird, water, air, fire etc., through mind, speech or body. They should not commit any violence or approve of any violence committed by any person.

(2) Satya (Truthfulness)—THEY should always speak truth and should not approve of any lie. In extraordinary circumstances when speaking of truth is harmful to any body's feelings they prefer to keep silent.

(3) Astheya (Non-Stealing)—THEY should not commit any kind of theft or take anything without it being given. Even if one is in need oj something it should be taken after necessary permission.

(4) Bramhacharya (Celebacy)—THEY should practice the vow of celebacy by giving up all forms of sexual enjoyment in thought, word and deed and by refraining from even touching the opposite sex. A monk should not touch even a small girl and a nun should not touch even a small boy. They should also give up the desire for the enjoyment of sound, sight and taste which excite the senses like the film music and errotic songs, movies and dramas and the use of all kinds of perfumes and all kinds of green fruits, onions and potatoes etc. They should also avoid extreme cold and hot drinks.

(5) Aparigraha (Non-Possession)—THEY should remain as symbols of a renunciated life; non-attachment to and disinterestedness to worldly possessions and problems in thought, word and deed. They should abstain from touching even a single coin in their life. Tqey do not accept any gifts or cash. They are permitted to keep things for their ascetic life like clothes, wooden vessels, books etc., according to their needs, but they should not be attached to them They should keep only minimum necessaries.

FIVE RULES OF CONDUCT—(1) Careful walking. They always keep Rajoharna (dust-remover) for protection of the insects. (2) Vigilence in avoiding the destruction of any living being. (3) Restraint in speech so as to avoid wounding the feelings of any one. (4) Careful examination of all articles of food. (5) Proper care of all articles of use while they are being removed or replaced for avoiding injury to any living being.

THREE OTHER RULES—(1) Control of the mind for keeping aloof from any sinful thought. (2) Control of long conversation for avoiding hurt to other's feelings. (3) Control of the body for avoiding physical pain to any living being.

Vihar (Travelling)—THEY should travel on foot from one place to another however far away be their destination. During their travelling on foot they should give discourses on religion and

instruct lay people to lead the right way of life. They show the path of salvation by inspiring to shed off sinful Karmas. The ascetics should carry their own luggage of essentials while walking from one place to another without utilising the services of any person, animal or vehicle for the purpose. They should not wear leather or any other kind of shoes but walk bare footed even under the scorching sun or in the severest winter and also on the rocky or sandy paths.

Staying—THE ascetics have no home or Ashram of their own in any part of the world. They stay in temples, sthanakas. schools, choultries and religious buildings with prior permission.

Chaturmas—DURING the Chaturmas (the four months of rainy season) the ascetics stay at one place, propagating the principles of Jainism, delivering public lectures and discourses on religion, philosophy and holy scriptures. "PARYUSHAN PARVA" the most sacred festival is also celebrated during this period, when all the ascetics and householders engage themselves in religious activities, undertaking fasts and soliciting pardon from all the living beings of the world for any hurt whieh might have been caused to them knowingly or unknowingly throughout the year.

EXCEPT during the four months of rainy season they move during the eight months from place to place, propagating the principles of Jainism, delivering public lectures and speeches

Aahar (Food)—JAIN ascetics go round the houses and receive their meals. They do not take their meals in any house but receive it in their wooden bowls, taking it to the place of their stay end eat it. They should observe complete abstention from taking food after sun set or before sun rise. They do not take any raw fruit, but accept only ripe fruits after the seeds and the skin are removed and vegetables after they are cooked. Those materials which are lying on fire are not acceptable to them. They take only Satvik Aahar (Simple food) such as roti, rice, cooked vegetables, ripe fruits, milk etc. and do not accept any kind of dhan (grains or cereals) etc. Jain munis do not even enter in the house of a non-vegetarian.

Water—THEY use water from tap or well only after it is boiled or after mixing a bit of opla-dust (ash).

Washing—THEY use a minimum quantity of water for cleaning their body and clothes, without using any soap or powder.

Lochon (Plucking of Hair)—JAIN munis should not use razor or scissors for shaving or clippiag their hair. They should pluck off the hair atleast once in a year.

Requirements—THE clothes, books, stationery and medicines if necessary are offered to them by the householders as per the requirements of the munis.

Tapa (Fasts)—THE ascetics should undertake austere fasts for the purification of the mind and self-realisation. Some monks and nuns had fasted 3 to 4 months consuming only small quantities of boiled water in the day time.

THESE fasts are undertaken in order to destroy the Karmas which enslave the soul in this mundane world. Any fast undertaken for secular or worldly gains would not benefit the entangled soul for liberating itself from the Karmana body or bondage and attaining self-realisation*

*Courtesy : Mahaveer VANI Prakashan. Raichur.

लेखकों से निवेदन

- 'जिनवाणी' में जैन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य एवं संस्कृति तथा नैतिक उन्नयन व सामाजिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं।
- रचनाएँ मौलिक, अप्रकाशित, प्रेरणादायक एवं संक्षिप्त हों।
- रचना भेजते समय उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लेवें। अस्वीकृत रचना वापस करना सम्भव नहीं।
- रचना कागज के एक ओर स्पष्ट अक्षरों में लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो।

—सम्पादक

instruct lay people to lead the right way of life. They show the path of salvation by inspiring to shed off sinful Karmas. The ascetics should carry their own luggage of essentials while walking from one place to another without utilising the services of any person, animal or vehicle for the purpose. They should not wear leather or any other kind of shoes but walk bare footed even under the scorching sun or in the severest winter and also on the rocky or sandy paths.

Staying—THE ascetics have no home or Ashram of their own in any part of the world. They stay in temples, sthanakas schools, choultries and religious buildings with prior permission.

Chaturmas—DURING the Chaturmas (the four months of rainy season) the ascetics stay at one place, propagating the principles of Jainism, delivering public lectures and discourses on religion, philosophy and holy scriptures. "PARYUSHAN PARVA" the most sacred festival is also celebrated during this period, when all the ascetics and householders engage themselves in religious activities, undertaking fasts and soliciting pardon from all the living beings of the world for any hurt whieh might have been caused to them knowingly or unknowingly throughout the year.

EXCEPT during the four months of rainy season they move during the eight months from place to place, propagating the principles of Jainism, delivering public lectures and speeches

Aahar (Food)—JAIN ascetics go round the houses and receive their meals. They do not take their meals in any house but receive it in their wooden bowls, taking it to the place of their stay end eat it. They should observe complete abstention from taking food after sun set or before sun rise. They do not take any raw fruit, but accept only ripe fruits after the seeds and the skin are removed and vegetables after they are cooked. Those materials which are lying on fire are not acceptable to them. They take only Satvik Aahar (Simple food) such as roti, rice, cooked vegetables, ripe fruits, milk etc. and do not accept any kind of dhan (grains or cereals) etc. Jain munis do not even enter in the house of a non-vegetarian.

Water—THEY use water from tap or well only after it is boiled or after mixing a bit of opla-dust (ash).

Washing—THEY use a minimum quantity of water for cleaning their body and clothes, without using any soap or powder.

Lochon (Plucking of Hair)—JAIN munis should not use razor or scissors for shaving or clippiag their hair. They should pluck off the hair atleast once in a year.

Requirements—THE clothes, books, stationery and medicines if necessary are offered to them by the householders as per the requirements of the munis.

Tapa (Fasts)—THE ascetics should undertake austere fasts for the purification of the mind and self-realisation. Some monks and nuns had fasted 3 to 4 months consuming only small quantities of boiled water in the day time.

THESE fasts are undertaken in order to destroy the Karmas which enslave the soul in this mundane world. Any fast undertaken for secular or worldly gains would not benefit the entangled soul for liberating itself from the Karmana body or bondage and attaining self-realisation*

*Courtesy : Mahaveer VANI Prakashan, Raichur.

लेखकों से निवेदन

- 'जिनवाणी' में जैन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य एवं संस्कृति तथा नैतिक उन्नयन व सामाजिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं।
- रचनाएँ मौलिक, अप्रकाशित, प्रेरणादायक एवं संक्षिप्त हों।
- रचना भेजते समय उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लेवें। अस्वीकृत रचना वापस करना सम्भव नहीं।
- रचना कागज के एक ओर स्पष्ट अक्षरों में लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो।

—सम्पादक

प्रश्नमंच कार्यक्रम [६३] ऋषभ जयन्ती पर विशेष

तीर्थंकर ऋषभदेव

प्रस्तोता—श्री पी० एम० चौरड़िया

[१]

(१) **प्रश्न**—'कल्प सूत्र' में भगवान ऋषभदेव के पाँच नाम बताये गये है, वे कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—(१) ऋषभ (२) प्रथम नृपति (३) प्रथम भिक्षाचर (४) प्रथम जिन (५) प्रथम तीर्थंकर।

(२) **प्रश्न**—इक्षु रस का पान करने के कारण भगवान किस नाम से पुकारे जाने लगे ?

उत्तर— काश्यप।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभ देव का नाम ऋषभ कुमार क्यों रखा गया ?

उत्तर—(१) मरुदेवी माता ने पुत्र के गर्भ में आने पर १२ स्वप्नों में पहला स्वप्न वृषभ का देखा था।

(२) जन्म के बाद उनकी छाती पर वृषभ जैसा चिह्न होने के कारण माता-पिता ने अपने पुत्र का नाम ऋषभ कुमार रखा।

[२]

(१) **प्रश्न**—भगवान आदिनाथ को किस भव में सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति हुई ?

उत्तर—धन्ना सार्थवाह के भव में घृत (घी) का दान शुद्ध भावना से आचार्य धर्म घोष को देने से समकित की प्राप्ति हुई।

(२) **प्रश्न**—सम्यग्दर्शन की उपलब्धि होने के भव से मोक्ष जाने तक भगवान ऋषभदेव के कितने भव हुए ?

उत्तर—१३ भव।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेब को किस भव में तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन हुआ ?

उत्तर—चक्रवर्ती वज्रनाभ के भव में ।

[३]

(१) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव की पत्नियों के नाम बताइये तथा उनकी कौनसी संतानें हुईं ?

उत्तर—(१) सुनन्दा :—बाहुबली व सुन्दरी ।

(२) सुमंगला :—भरत, ब्राह्मी व ९८ पुत्र ।

(२) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव का 'जीवानन्द' नामक कौनसा भव था तथा इस भव में उन्होंने क्या श्रेष्ठ कार्य किया ?

उत्तर—(१) ९वां भव ।

(२) दीर्घ तपस्वी मुनिराज के कृमिकुष्ठ रोग का उपचार किया, जिसके फलस्वरूप वे १२वें स्वर्ग में देव बने ।

(३) **प्रश्न**—ऋषभदेव ने अपने पुत्र भरत एवं बाहुबली को तथा अपनी पुत्रियों ब्राह्मी और सुन्दरी को क्या-क्या ज्ञान दिया ?

उत्तर—(१) ज्येष्ठ पुत्र भरत को—७२ कलाओं का ।

(२) कनिष्ठ पुत्र बाहुबली को—प्राणी लक्षण का ।

(३) प्रिय पुत्री ब्राह्मी को—१८ लिपियों (अक्षरों) का ।

(४) प्रिय पुत्री सुन्दरी को—गणित विद्या का ।

(जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति के अनुसार) ।

[४]

(१) **प्रश्न**—सम्राट् बनने के पश्चात् ऋषभदेव ने राज्य संचालनार्थ किस नगरी का निर्माण किया तथा उस प्रान्त का क्या नाम रखा ?

उत्तर—(१) अयोध्या नगरी ।

(२) इस प्रान्त का नाम 'इक्खाग भूमि' और विनीता रखा ।

कुछ समय पश्चात् वह प्रान्त मध्य प्रदेश के नाम से प्रख्यात हुआ ।

(२) **प्रश्न**—प्रकृति युग एवं कर्म युग (पौरुष युग) में क्या अन्तर है ?

उत्तर—प्रकृति युग में तो केवल प्रकृति (कल्प वृक्षों) अथवा कन्द मूल पर ही निर्भर रहना होता है जबकि कर्म युग में पुरुषार्थ कर कृषि धंधा तथा अन्य कर्म कर उत्पादन किया जाता है ।

प्रश्नमंच कार्यक्रम [६३] ऋषभ जयन्ती पर विशेष

तीर्थंकर ऋषभदेव

प्रस्तोता—श्री पी० एम० चौरड़िया

[१]

(१) **प्रश्न**—'कल्प सूत्र' में भगवान ऋषभदेव के पाँच नाम बताये गये है, वे कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—(१) ऋषभ (२) प्रथम नृपति (३) प्रथम भिक्षाचर (४) प्रथम जिन (५) प्रथम तीर्थंकर।

(२) **प्रश्न**—इक्षु रस का पान करने के कारण भगवान किस नाम से पुकारे जाने लगे ?

उत्तर– काश्यप।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभ देव का नाम ऋषभ कुमार क्यों रखा गया ?

उत्तर—(१) मरुदेवी माता ने पुत्र के गर्भ में आने पर १२ स्वप्नों में पहला स्वप्न वृषभ का देखा था।

(२) जन्म के बाद उनकी छाती पर वृषभ जैसा चिह्न होने के कारण माता-पिता ने अपने पुत्र का नाम ऋषभ कुमार रखा।

[२]

(१) **प्रश्न**—भगवान आदिनाथ को किस भव में सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति हुई ?

उत्तर—धन्ना सार्थवाह के भव में घृत (घी) का दान शुद्ध भावना से आचार्य धर्म घोष को देने से समकित की प्राप्ति हुई।

(२) **प्रश्न**—सम्यग्दर्शन की उपलब्धि होने के भव से मोक्ष जाने तक भगवान ऋषभदेव के कितने भव हुए ?

उत्तर—१३ भव।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव को किस भव में तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन हुआ ?

उत्तर—चक्रवर्ती वज्रनाभ के भव में ।

[३]

(१) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव की पत्नियों के नाम बताइये तथा उनकी कौनसी संतानें हुईं ?

उत्तर—(१) सुनन्दा :—बाहुबली व सुन्दरी ।

(२) सुमंगला :—भरत, ब्राह्मी व ९८ पुत्र ।

(२) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव का 'जीवानन्द' नामक कौनसा भव था तथा इस भव में उन्होंने क्या श्रेष्ठ कार्य किया ?

उत्तर—(१) ९वां भव ।

(२) दीर्घ तपस्वी मुनिराज के कृमिकुष्ठ रोग का उपचार किया, जिसके फलस्वरूप वे १२वें स्वर्ग में देव बने ।

(३) **प्रश्न**—ऋषभदेव ने अपने पुत्र भरत एवं बाहुबली को तथा अपनी पुत्रियों ब्राह्मी और सुन्दरी को क्या-क्या ज्ञान दिया ?

उत्तर—(१) ज्येष्ठ पुत्र भरत को—७२ कलाओं का ।

(२) कनिष्ठ पुत्र बाहुबली को—प्राणी लक्षण का ।

(३) प्रिय पुत्री ब्राह्मी को—१८ लिपियों (अक्षरों) का ।

(४) प्रिय पुत्री सुन्दरी को—गणित विद्या का ।

(जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति के अनुसार) ।

[४]

(१) **प्रश्न**—सम्राट् बनने के पश्चात् ऋषभदेव ने राज्य संचालनार्थ किस नगरी का निर्माण किया तथा उस प्रान्त का क्या नाम रखा ?

उत्तर—(१) अयोध्या नगरी ।

(२) इस प्रान्त का नाम 'इक्खाग भूमि' और विनीता रखा ।

कुछ समय पश्चात् वह प्रान्त मध्य प्रदेश के नाम से प्रख्यात हुआ ।

(२) **प्रश्न**—प्रकृति युग एवं कर्म युग (पौरुष युग) में क्या अन्तर है ?

उत्तर—प्रकृति युग में तो केवल प्रकृति (कल्प वृक्षों) अथवा कन्द मूल पर ही निर्भर रहना होता है जबकि कर्म युग में पुरुषार्थ कर कृषि धंधा तथा अन्य कर्म कर उत्पादन किया जाता है ।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव ने दीक्षा लेने के १००० वर्ष तक लोगों को उपदेश क्यों नहीं दिया ?

उत्तर—तीर्थंकर छद्मस्थ अवस्था में धर्म का उपदेश नहीं देते। जब तक वे सर्वज्ञ, सर्वदर्शी नहीं हो जाते, तब तक मौन रहते हैं।

[५]

(१) **प्रश्न**—भगवान् ऋषभदेव की महान् तपस्या का पारणा अक्षय तृतीया (आखा तीज) को सम्पन्न हुआ। वह तपस्या कब प्रारम्भ हुई और कितने दिनों तक वह तपस्या रही ?

उत्तर—चैत्र वदी ८ को भगवान् ऋषभदेव ने दीक्षा ली और अगले साल की बैसाख सुदी २ (४०० दिन) तक वह तपस्या चली और अक्षय तृतीया को श्रेयांस कुमार के हाथों इक्षु रस से भगवान का पारणा हुआ। वह समय १ वर्ष ४२ दिन का था।

(२) **प्रश्न**—जब श्रेयांस कुमार ने भगवान ऋषभदेव को देखा तो जाति स्मरण ज्ञान हो गया। इस जाति स्मरण ज्ञान में श्रेयांस कुमार ने क्या देखा और उस भव में भगवान ऋषभदेव के जीव व श्रेयांस कुमार के जीव का सांसारिक सम्बन्ध क्या था ?

उत्तर—उस जन्म में भगवान वज्र जंघ नाम के सम्राट् थे और श्रेयांस कुमार उनकी 'श्रीमती' नाम की एक रानी थी। उस समय एक दिन उस राजा के यहाँ चारण ऋद्धियों के धारणकर्ता कुछ मुनि आ गये। तब रानी ने सभी मुनियों को भोजन का दान दिया था।

(३) **प्रश्न**—इक्षु रस का दान देने की पिछली रात को महाराजा सोमयश, उनके प्रधान सुबुद्धि तथा राजकुमार श्रेयांसकुमार ने एक-एक स्वप्न देखा। तीनों ने क्या स्वप्न देखे और उनका सारांश क्या था ?

उत्तर—(१) महाराजा सोमयश ने स्वप्न में एक अद्भुत क्षमतावान वीर पुरुष को देखा जो चारों ओर से शत्रु समूह से घिरा हुआ था। उस समय श्रेयांस कुमार ने उसकी रक्षा की।

(२) प्रधान सुबुद्धि ने स्वप्न में देखा कि सूर्य की सारी किरणें नीचे गिर गई हैं और श्रेयांसकुमार उन सारी किरणों को सूर्य के साथ फिर से जोड़ रहे हैं।

(३) श्रेयांस कुमार ने स्वप्न में स्वर्णमय मेरु पर्वत पर भारी मैल जमा हुआ देखा, जिसको उसने साफ धोकर सारे धरातल को निर्मल बना दिया।

तीनों ने अपने-अपने स्वप्नों के अर्थ को जोड़ते हुए यह अनुभव किया कि राजकुमार श्रेयांसकुमार के हाथों कोई न कोई विशिष्ट कार्य होने वाला है, क्योंकि तीनों स्वप्नों का नायक श्रेयांसकुमार ही है।

[६]

(१) **प्रश्न**—अक्षय तृतीया में अक्षय शब्द विशेषण है। इसका अर्थ क्या है ?

उत्तर—अक्षय अर्थात् कभी क्षय नहीं होने वाली।

(२) **प्रश्न**—पालीताणा में लोग पारणे को महत्त्व क्यों देते हैं ?

उत्तर—ऐसी मान्यता है कि भगवान ऋषभदेव ९९ बार पालीताणा पधारे थे।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव को कौनसी तिथि को किस वृक्ष के नीचे तथा कौनसी तपस्या में केवलज्ञान हुआ ?

उत्तर—फागुन वद ११ को वटवृक्ष के नीचे तेले की तपस्या में केवलज्ञान हुआ था।

[७]

(१) **प्रश्न**—भैया, अन्तर-नयन उघारो।
अहंकार के गज पर बैठे, जीवन धन मत हारो ।।
भैया अन्तर नयन उघारो।

उपर्युक्त शब्द किसने, किसको कहे, इसका क्या अर्थ है तथा इन शब्दों का क्या फल हुआ ?

उत्तर—ब्राह्मी और सुन्दरी ने बाहुबली को ये शब्द कहे। इसका अर्थ है—हे भाई ! अहंकार रूपी हाथी पर बैठे हो, उससे नीचे उतरो। तुमने तपस्या कर अपने सारे शरीर को सूखा दिया है लेकिन फिर भी तुम्हें अभी केवलज्ञान नहीं हुआ, अत: अन्तर्दृष्टि कर अहंकार के गज से नीचे उतरो। इन शब्दों से बाहुबली के चिन्तन ने मोड़ लिया और उनके कदम अपने से ९८ छोटे भाइयों को जो दीक्षा में बड़े थे, वन्दन के लिए बढ़े, तो उन्हें केवलज्ञान हो गया।

(२) **प्रश्न**—अष्टषष्टिषु तीर्थेषु, यात्रायां यत्फलं भवेत्।
श्री आदिनाथ देवस्य, स्मरणेनापि तद् भवेत् ।।

उपर्युक्त श्लोक का अर्थ बताइये तथा यह किस उत्तम ग्रन्थ से लिया गया है ?

उत्तर—(१) इस श्लोक का अर्थ है कि ६८ तीर्थों की यात्रा करने से जो फल मिलता है, वह फल भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) के नाम का स्मरण करने मात्र से प्राप्त होता है।

(२) संस्कृत का यह श्लोक 'मनुस्मृति' से लिया गया है।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव ने दीक्षा लेने के १००० वर्ष तक लोगों को उपदेश क्यों नहीं दिया ?

उत्तर—तीर्थंकर छद्मस्थ अवस्था में धर्म का उपदेश नहीं देते। जब तक वे सर्वज्ञ, सर्वदर्शी नहीं हो जाते, तब तक मौन रहते हैं।

[५]

(१) **प्रश्न**—भगवान् ऋषभदेव की महान् तपस्या का पारणा अक्षय तृतीया (आखा तीज) को सम्पन्न हुआ। वह तपस्या कब प्रारम्भ हुई और कितने दिनों तक वह तपस्या रही ?

उत्तर—चैत्र वदी ८ को भगवान् ऋषभदेव ने दीक्षा ली और अगले साल की बैसाख सुदी २ (४०० दिन) तक वह तपस्या चली और अक्षय तृतीया को श्रेयांस कुमार के हाथों इक्षु रस से भगवान का पारणा हुआ। वह समय १ वर्ष ४२ दिन का था।

(२) **प्रश्न**—जब श्रेयांस कुमार ने भगवान ऋषभदेव को देखा तो जाति स्मरण ज्ञान हो गया। इस जाति स्मरण ज्ञान में श्रेयांस कुमार ने क्या देखा और उस भव में भगवान ऋषभदेव के जीव व श्रेयांस कुमार के जीब का सांसारिक सम्बन्ध क्या था ?

उत्तर—उस जन्म में भगवान वज्र जंघ नाम के सम्राट् थे और श्रेयांस कुमार उनकी 'श्रीमती' नाम की एक रानी थी। उस समय एक दिन उस राजा के यहाँ चारण ऋद्धियों के धारणकर्ता कुछ मुनि आ गये। तब रानी ने सभी मुनियों को भोजन का दान दिया था।

(३) **प्रश्न**—इक्षु रस का दान देने की पिछली रात को महाराजा सोमयश, उनके प्रधान सुबुद्धि तथा राजकुमार श्रेयांसकुमार ने एक-एक स्वप्न देखा। तीनों ने क्या स्वप्न देखे और उनका सारांश क्या था ?

उत्तर—(१) महाराजा सोमयश ने स्वप्न में एक अद्भुत क्षमतावान वीर पुरुष को देखा जो चारों ओर से शत्रु समूह से घिरा हुआ था। उस समय श्रेयांस कुमार ने उसकी रक्षा की।

(२) प्रधान सुबुद्धि ने स्वप्न में देखा कि सूर्य की सारी किरणें नीचे गिर गई हैं और श्रेयांसकुमार उन सारी किरणों को सूर्य के साथ फिर से जोड़ रहे हैं।

(३) श्रेयांस कुमार ने स्वप्न में स्वर्णमय मेरु पर्वत पर भारी मैल जमा हुआ देखा, जिसको उसने साफ धोकर सारे धरातल को निर्मल बना दिया।

तीनों ने अपने-अपने स्वप्नों के अर्थ को जोड़ते हुए यह अनुभव किया कि राजकुमार श्रेयांसकुमार के हाथों कोई न कोई विशिष्ट कार्य होने वाला है, क्योंकि तीनों स्वप्नों का नायक श्रेयांसकुमार ही है।

[६]

(१) **प्रश्न**—अक्षय तृतीया में अक्षय शब्द विशेषरा है। इसका अर्थ क्या है ?

उत्तर—अक्षय अर्थात् कभी क्षय नहीं होने वाली।

(२) **प्रश्न**—पालीतागा में लोग पारणे को महत्त्व क्यों देते हैं ?

उत्तर—ऐसी मान्यता है कि भगवान ऋषभदेव ९९ बार पालीताणा पधारे थे।

(३) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव को कौनसी तिथि को किस वृक्ष के नीचे तथा कौनसी तपस्या में केवलज्ञान हुआ ?

उत्तर—फागुन वद ११ को वटवृक्ष के नीचे तेले की तपस्या में केवलज्ञान हुआ था।

[७]

(१) **प्रश्न**—भैया, अन्तर-नयन उघारो।
अहंकार के गज पर बैठे, जीवन धन मत हारो ।।
भैया अन्तर नयन उघारो।

उपर्युक्त शब्द किसने, किसको कहे, इसका क्या अर्थ है तथा इन शब्दों का क्या फल हुआ ?

उत्तर—ब्राह्मी और सुन्दरी ने बाहुबली को ये शब्द कहे। इसका अर्थ है—हे भाई ! अहंकार रूपी हाथी पर बैठे हो, उससे नीचे उतरो। तुमने तपस्या कर अपने सारे शरीर को सूखा दिया है लेकिन फिर भी तुम्हें अभी केवलज्ञान नहीं हुआ, अतः अन्तर्दृष्टि कर अहंकार के गज से नीचे उतरो। इन शब्दों से बाहुबली के चिन्तन ने मोड़ लिया और उनके कदम अपने से ९८ छोटे भाइयों को जो दीक्षा में बड़े थे, वन्दन के लिए बढ़े, तो उन्हें केवलज्ञान हो गया।

(२) **प्रश्न**—अष्टषष्टिषु तीर्थेषु, यात्रायां यत्फलं भवेत् ।
श्री आदिनाथ देवस्य, स्मरणेनापि तद् भवेत् ।।

उपर्युक्त श्लोक का अर्थ बताइये तथा यह किस उत्तम ग्रन्थ से लिया गया है ?

उत्तर—(१) इस श्लोक का अर्थ है कि ६८ तीर्थों की यात्रा करने से जो फल मिलता है, वह फल भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) के नाम का स्मरण करने मात्र से प्राप्त होता है।

(२) संस्कृत का यह श्लोक 'मनुस्मृति' से लिया गया है।

(३) **प्रश्न**—जिस समय प्रभु को केवल ज्ञान हुआ, उसी समय सम्राट् भरत की आयुधशाला में चक्र रत्न और उनकी महारानी को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। ये तीनों बधाइयाँ भरत को एक साथ मिलीं। महाराजा भरत ने सर्व प्रथम भगवान ऋषभदेव को केवलज्ञानी होने का उत्सव मनाने का निर्णय क्यों लिया ?

उत्तर—केवलज्ञान की प्राप्ति धर्म का फल है, चक्र की उत्पत्ति और पुत्र की उत्पत्ति काम का फल है। इसलिये धर्म के फल को ही प्रमुखता देनी चाहिये। अर्थ और काम तो केवल इस जन्म में खुशी देते हैं। धर्म तो जन्म-जन्मान्तरों में सुख और शान्ति देने वाला है।

[८]

(१) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव के युग के प्रथम मोक्षगामी पुरुष और महिला कौन थीं ?

उत्तर—(१) पुरुष—बाहुबली।

(२) महिला—मरुदेवी माता।

(२) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव के कितने गणधर थे एवं उनमें पहले गणधर का नाम बताइये ?

उत्तर—(१) ८४ गणधर।

(२) वृषभसेन।

(३) **प्रश्न**—भगवान के ९८ पुत्रों का वैराग्य तथा उनका दीक्षित होने का वर्णन—जिस शास्त्र और उसके जिस अध्ययन या अध्याय में संकलित है, उसका नाम क्या है एवं उस अध्ययन का अर्थ क्या है ?

उत्तर—(१) चतुर्दश पूर्वधर पंचम श्रुत केवली भद्रबाहु स्वामी द्वारा रचित 'सूत्र-कृतांग' सूत्र के 'वैतालिक' नामक द्वितीय अध्ययन में यह वर्णन है।

(२) वैतालिक का अर्थ है—'जगाने वाला'। अनन्त काल से सोई हुई आत्माओं को जगाने वाला है—यह यथा नाम तथा गुण अध्ययन।

[९]

(१) **प्रश्न**— **"नहीं बचा सकेगा परमात्मा"**

(तर्ज—जरा सामने तो आओ छलिये.........................)

जरा कर्म देख कर करिये, इन कर्मों की बहुत बुरी मार है।
नहीं बचा सकेगा परमात्मा, फिर औरों का क्या एतबार है॥
बारह घड़ी तक बैलों को बांधा, छींका लगा दिया खाने को,
बारह मास तक ऋषभ प्रभु को, आहार मिला नहीं दाने का,

इस युग के प्रथम अवतार हैं, बिन भोग्या न छूटे लार है।।
नहीं बचा सकेगा परमात्मा............................

इस स्तवन के रचयिता कौन हैं ?

उत्तर—श्री जीतमलजी।

(२) **प्रश्न**— **"बोल बोल आदेश्वर बाला'**

(तर्ज—पनजी मुंडे बोल..)

बोल वोल आदेश्वरवाला कांई थारी मरजी रे
मांसू मूँडे बोल।।

बोल बेल मारा ऋषभ कन्हैया, कांई थारी मरजी रे
मांसू मूँडे बोल।। टेर।।

रह्यो मजामें है सुख साता, खूब कियो मन चायो रे।
एक कहन या थांसू लाल, मोड़ो क्यों आयो रे।। १।।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—श्री जैन दिवाकर चौथमलजी म. सा.।

(३) **प्रश्न**— **ऋषभ चालीसा**

विनय सहित हो वन्दन मेरा।
गुण कीर्तन मेटे भव फेरा।।
नाभि सुत मरुदेवा नन्दा।
आदि जिनवर आनंद कन्दा।।
छटा अलौलिक पूनम चन्दा।
गुण गाये हरि हर नर वृन्दा।।

उपर्युक्त छन्द के रचयिता कौन हैं ?

उत्तर—श्री विजय मुनिजी एवं श्री गौतम मुनिजी 'प्रथम'

[१०]

(१) **प्रश्न**—मरुदेवी माता को अतीर्थ-सिद्ध स्त्रीलिंग-सिद्ध क्यों कहा गया है ?

उत्तर—तीर्थ की स्थापना के पूर्व ही वे केबल ज्ञान प्राप्त कर सिद्ध हो गईं, इसलिए उन्हें ऐसा कहा गया है।

(२) **प्रश्न**—भगवान ऋषभदेव को आदि पुरुष क्यों कहते हैं ?

उत्तर—भगवान ऋषभदेव वर्तमान अवसर्पिणी काल के प्रथम राजा, कला-कौशल की शिक्षा देने वाले प्रथम युग प्रवर्तक महापुरुष, प्रथम मुनि तथा प्रथम तीर्थंकर थे, इसलिये उन्हें आदि पुरुष कहा गया है।

(३) **प्रश्न**—कौशलिक ऋषभदेव भगवान के निम्नलिखित पाँच कल्याणक किस नक्षत्र में हुए ? (१) गर्भ, (२) जन्म, (३) राज्याभिषेक, (४) अणगार धर्म में प्रव्रजित व (५) केवलज्ञान की प्राप्ति।

उत्तर—उत्तराषाढ़ा नक्षत्र।

[११]

(१) **प्रश्न**—भाई ! दीपक की वह ज्योति किस काम की, जो पागल पतंगों को मौत का परवाना बन जाती हो। नारी का वह सौन्दर्य किस काम का, जो किसी के मन की सुन्दरता और पवित्रता के लिए पाप बन जाता हो ?

भाई ! मेरे जीवन की सार्थकता इसी में है कि तुम मुझे प्रभु के चरणों में दीक्षित होने की अनुमति दे दो। ये शब्द किसने और कब कहे ?

उत्तर—ये शब्द सुन्दरी ने महाराजा भरत को कहे। जब भरत चक्रवर्ती बनकर अयोध्या लौटे और सुन्दरी की क्षीण काया को देखकर दुःखी हुए तब सुन्दरी ने भरत को ऐसा कहा।

(२) **प्रश्न**—भरत चक्रवर्ती को शीश महल में बैठे-बैठे ही केवलज्ञान हो गया—इसका मुख्य राज़ (कारण) क्या था ?

उत्तर—भरत चक्रवती अनासक्त भाव से रहते थे। छह खंड का राज्य करते हुए भी, राज्य की तथा भोग-वैभव की वासना से लिप्त नहीं थे। इस कारण उन्हें शीशमहल में बैठे-बैठे ही केवल ज्ञान हो गया।

(३) **प्रश्न**—'भक्तामर स्तोत्र' का दूसरा नाम 'आदिनाथ स्तोत्र' भी है। कई लोग इसे 'ऋषभ स्तोत्र' भी कहते हैं। 'भक्तामर स्तोत्र' के किन-किन श्लोकों से कौन-कौन से शब्दों से यह सिद्ध होता है कि इसका नाम 'आदिनाथ स्तोत्र' सही है ?

उत्तर—(१) प्रथम एवं द्वितीय श्लोक

(२) प्रथम श्लोक में 'युगादौ' और द्वितीय श्लोक के 'प्रथम जिनेन्द्र'। 'युगादौ' का अर्थ है—युग की आदि में (कर्म भूमि के प्रारम्भ में) व 'प्रथम जिनेन्द्र' का अर्थ है प्रथम तीर्थंकर।

—89, Audiappa Naicken Street
Sowcarpet, Madras-600 079
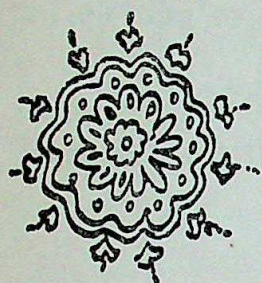
शिक्षण संस्थाओं में जैन सिद्धान्त का प्रचार-प्रसार*

☐ स्वर्गीय श्री सौभाग्यमल श्रीश्रीमाल

हमारे देश में शिक्षण संस्थाओं का दिनोदिन अबाध गति से विस्तार होता जा रहा है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए केन्द्रीय एवं प्रादेशिक सरकारें अब अधिक जागरूक हुई हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है। सभी स्तर के विद्यालयों की संख्या पहले से अधिक हुई है और प्रयत्न यह चालू है कि छोटे-छोटे गाँवों एवं खेड़ों में भी छोटा-मोटा विद्यालय अवश्य हो, ताकि उस क्षेत्र का बालक सन्निकट होने वाले विद्यालय का लाभ ले सके। ये विद्यालय जहाँ सरकार की ओर से खोले जा रहे हैं, वहीं स्वयंसेवी संस्थाएँ भी अपनी ओर से प्रयत्न कर विद्यालय चलाने का भार वहन करती हैं और अच्छे स्तर के विद्यालयो के संचालन करने का श्रेय प्राप्त कर रही हैं। इनमें से बहुसंख्यक विद्यालय उन परोपकारी निधि के अन्तर्गत चलाये जाते हैं, जिनको दानदाता या समुदाय किसी विशेष लक्ष्य से संचालित करते हैं। इनमें अधिकतर किसी सीमा तक राजकीय नियमों को मान्यता प्रदान करते हैं और बदले में कोई प्रतिशत व्यय का भाग राज्य सरकारों से सहायता राशि के रूप में प्राप्त करते हैं। फलत: राज्यों द्वारा सभी प्रकार के नियम-अधिनियम उन पर लागू हो जाते हैं और उनकी सीमाओं में ही रहकर उन्हें काम करना पड़ता है, ताकि राजकीय सहायता में किसी प्रकार का विघ्न नहीं आ पाये।

इस प्रकार शिक्षण संस्थाओं को हम निम्न श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं :—

१. वे संस्थाएँ जिन्हें राजकीय शिक्षा विभाग अपनी ओर से सम्पूर्ण व्यय वहन करके चलाते हैं।

२. वे संस्थाएँ, जो अराजकीय संगठनों व लोकोपकारी व्यक्तियों अथवा समाजों द्वारा चलायी जाती हैं, जिनका सम्पूर्ण पाठ्यक्रम राजकीय शिक्षा विभाग द्वारा निर्णित ही होता है, जिसे ये संस्थाएँ चलाती हैं और उन्हें राजकीय सहायता, उनके व्यय के आधार पर एवं उनके शिक्षा स्तर के आधार

• श्री अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् द्वारा आयोजित संगोष्ठी में प्रस्तुत विचार।

पर प्रदान की जाती है। उसके फलस्वरूप शिक्षा संस्था की रीति-नीती परम्परा आदि सभी पर राजकीय नियमों का प्रतिपालन करने के लिए वह संस्था बाध्य है।

३. वे संस्थाएँ जो अराजकीय संगठनों, समाज व लोकोपकारी व्यक्तियों द्वारा संचालित की जाती हैं और राजकीय शिक्षा विभाग के पाठ्यक्रम का ही अनुपालन करती हैं, पर वे राजकीय सहायता स्वीकार नहीं करतीं बल्कि अपनी रीति-नीति में वे पूर्णतः स्वतन्त्र होती हैं और इस क्षेत्र में वे स्वयं की ओर से ही रीति-नीति निर्धारित करती हैं। पर सामान्यतः सामाजिक जीवन में सर्वमान्य सिद्धान्तों का प्रतिपालन वे संस्थाएँ अवश्य करती हैं।

दूसरी ओर समूचे देश में संवैधानिक मान्यता है कि भारत किसी धर्म विशेष को महत्त्व नहीं देगा। उसकी धर्मनिरपेक्षता की नीति का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति देश में किसी भी धर्म विशेष को मानने के लिए पूर्णतः स्वतन्त्र है, उसके लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा। इस नीति का पालन सभी शिक्षण संस्थाओं पर भी लागू है। इसका अर्थ यह हुआ कि किसी धर्म विशेष का शिक्षण-प्रशिक्षण देने का कार्य विद्यालयों से अपेक्षित नहीं है। पर तब भी सदाचार, सद्व्यवहार, सामाजिकता, नैतिक मूल्यों का महत्त्व आदि ऐसे क्षेत्र हैं, जिन्हें आज भी विद्यालयों में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष में महत्त्व दिया जाता है/दिया जाना चाहिये।

इस दृष्टि से जैन सिद्धान्तों की शास्त्रीयता से हटकर उनके सर्वमान्य स्वरूपों को संचित कर सामान्य जीवन में सर्वमान्य रूप में उपस्थित करने की बड़ी आवश्यकता है। यह आवश्यक है कि वे सिद्धान्त धर्म के चोले को छोड़कर नैतिक स्वरूप में उपस्थित किये जावें। यह हमारे विद्वानों का कार्य होगा कि वे क्या स्वरूप देकर उपस्थित करें। ऐसा साहित्य कैसे उपयोगी व सर्वमान्य हो, इसको गहराई से सोचना होगा, ताकि सामान्य व्यक्ति भी स्वीकार करने में किसी भी प्रकार की ऊहापोह में न पड़े।

इस दृष्टि को रखकर ही हमको जैन सिद्धान्तों को प्रतिपादित करना होगा। मूल सिद्धान्तों में ऐसे सभी गुणों का समावेश हो, जो अधिकाधिक अन्य धर्मावलम्बियों को भी प्रिय और ग्राह्य लग सकें। अतः ये मान्यतायें किसी एक धर्म मात्र का प्रतिपादन करने वाली न होकर सर्वग्राही बन सकती हैं और अन्ततोगत्वा धर्मनिरपेक्ष भी।

विद्वानों को इस दृष्टिकोण को अपनाना होगा और उन सिद्धान्तों पर शास्त्रीय चर्चा से विलग होकर सामान्य भाषा और विचारों के स्तर पर आना

आवश्यक होगा। मौलिक सिद्धान्तों पर विचार करने के लिए कतिपय बिन्दुओं पर संकेत मात्र देने का यहाँ प्रयत्न किया है :—

ब्रह्मचर्य, अस्तेय, अहिंसा, क्षमा, तप, सत्य, करुणा, दया, सेवा-भावना, धैर्य, उदारता, प्रेम व मैत्री, विनय, श्रद्धा, सहिष्णुता, अपरिग्रह, आत्म-संयम, प्रामाणिकता, सदाचरण, स्वावलम्बन, सादगी, सरलता, समता-भावना, दैनिक प्रभु-भक्ति, योग साधना, अनेकान्त व्यसन-मुक्ति, स्वाध्याय आदि आदि।

इन पर और इन जैसे अन्य मूल सिद्धान्तों पर साहित्य का नवीन दृष्टिकोण से स्वतन्त्र सृजन करना होगा। विचारों के स्तर पर जैन छाप को हटाने का मोह संवरण करना पड़ सकता है, जिससे किसी धर्म विशेष के नाम का उल्लेख न होने से तथाकथित धर्म-निरपेक्षता भी कायम रह सके और व्यापक मौलिक रूप में मान्यताओं की जानकारी भी दी जा सके। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तो यह होना आवश्यक है कि जन-जन में इन सिद्धान्तों का जीवन में प्रतिपालन करने की ललक जग सके। यह ही हमारा मूल लक्ष्य है भी। वस्तुतः इस प्रकार के प्रयत्नों को हम मानव मूल्यों की शिक्षा नाम दें तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

चरित्र-निर्माण और सुसंस्कारों की आज के जीवन में बड़ी खाई दिखाई दे रही है। अतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसको दूर करने की औषधि वे जैन सिद्धान्त ही हो सकते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। अनैतिकता की बाढ़, अराजकता, आचारहीनता, उच्छृंलता, अनुशासनहीनता, घूसखोरी, धनलिप्सा, खाद्य-अखाद्य की विचारहीनता इतनी व्याप्त होती जा रही है जैसे मानव की मानवता समाप्त होती जा रही हो। अचम्भा लगता है कि दार्शनिकों के जग प्रसिद्ध इस भारत में यह सब क्यों और कैसे होने लग गया है। मानना होगा कि इस सबके पीछे उस दिव्य दर्शन की पृष्ठभूमि सम्भवतः लुप्त होती जा रही हो, उसे पुनः जागृत करने की अनिवार्य आवश्यकता है। विद्यालयों को इस क्षेत्र में आगे आना पड़ेगा और बचपन से ही उन संस्कारों को पुनः स्थापित करने होंगे जो लगभग तिरोहित हो गये हैं। हमें शिक्षार्थियों के मनोवैज्ञानिक संवेगों (Sentiments) का सदुपयोग करना होगा, जो उनके पास जन्मजात होते हैं। उनमें से कुछ ऐसे हैं, जिनका उपयोग दैनिक कार्यकलापों में किया जाना चाहिये। यदि सही दिशा दी जा सके तो वे संवेग सद्गुणों में परिवर्तित किये जा सकेंगे और जीवन-निर्माण के क्षेत्र में सोने में सुहागे का काम करेंगे।

प्रचार-प्रसार के साधनों पर भी विचार करना आवश्यक होगा। मूल में ऊपर लिखे साहित्य के निर्माण का कार्य अत्यधिक आवश्यक है। जिसका

उपयोग विद्यालयों में नैतिक शिक्षण के अन्तर्गत किया जा सकता है। स्वयं सरकार एवं शिक्षा विभाग भी इस पर बल देना चाहता है।

१. यह साहित्य, कथा साहित्य के रूप में, नाटक, गीत, एकांकी, पत्र-साहित्य, संवाद आदि रूपों में हो सकता है।

२. जैन संगठनों को ऐसे कार्यक्रम आयोजित करने चाहिये, जिनमें छात्र-छात्राओं की स्वस्थ प्रतिस्पर्धायें आयोजित की जाती रहें, जिनके लिए उनको सिद्धान्तों का अध्ययन करने की आवश्यकता पड़े।

३. जैन संगठनों द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाओं में विशेष वातावरण बनाने की कर्तव्यबद्धता को अनिवार्य किया जाय, जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी व अभिभावकगण जुड़ते रहें।

४. (अ) स्वस्थ मनोरंजन के कार्यक्रमों, तत्सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को तैयार कराकर प्रदर्शित कराया जाता रहे। जैसे टेलीविजन पर, रेडियो पर आदि।

(ब) वीडियो के लिए फिल्में तैयार कराकर।

५. पाठ्य-पुस्तकों में सम्मिलित करने लायक पाठों का निर्माण कराकर शिक्षा विभाग के पुस्तक निर्माण-विभागों को प्रेषित करना, ताकि उन्हें उनको प्रकाशित करना सरल बन सके।

६. छोटे-छोटे ट्रेक्ट व पुस्तिकायें प्रकाशित कराकर और हो सके तो उन्हें निःशुल्क वितरित करें अथवा कम से कम मूल्य पर उपलब्ध कराने का प्रयत्न हो।

७. विद्यालयों में समय-समय पर संस्कार शिविरों का आयोजन करके। नई शिक्षा नीति में ऐसे शिविरों के आयोजन की अपेक्षा की जाने लगी है। अतः उनका उपयोग किया जाना चाहिये।

८. विद्यालय ऐसे आयोजन भी कर सकते हैं, जिनमें शिक्षार्थियों का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन कर उनके अच्छे संस्कारों की प्रशंसा और आवश्यक सुधार की आवश्यकता हो तो उसके लिए मार्गदर्शन देने का कार्य प्रारम्भ करें।

९. नैतिक आचरणों के प्रति प्रतिबद्ध व्यक्तियों का समय-समय पर सम्पर्क विद्यालयों में कराया जाय, जिनके आदर्श जीवन और प्रवचनों का प्रभाव शिक्षार्थी समाज पर पड़ता रहे।

१०. दिनभर के पूरे जीवन की चर्या को नियमित, आदर्श और रचनात्मक बनाने के सत्प्रयत्न की दृष्टि से समय-समय पर खुले वातावरण में ऐसे शिविर आयोजित करना जहाँ उन्हें प्रत्यक्ष जीवन जीने के शिक्षण के अवसर प्रदान किये जा सकें।

११. प्रतिदिन सद् साहित्य के अध्ययन की आदत डलवा कर।

इसी प्रकार के अन्य उपयोगी कार्यक्रमों की भी योजनायें बनाई जा सकती हैं। लोकोपकारी जैन संस्थाओं में जैन सिद्धान्तों के शिक्षण पर जैसे कार्यक्रम अभी तक चलते आ रहे हैं, उन्हें अधिक सर्जीव व व्यावाहारिक बनाया जाना चाहिये। सरकारी एवं सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में उक्त योजनाओ को कार्यान्वित करना तभी सम्भव हो सकता है जब विद्यालय आचार्य एवं शिक्षक बन्धु इन सब में रुचि लें और इनकी सार्थकता पर विश्वास रखते हों। संक्षेप में प्रचार-प्रसार का माध्यम मेरी दृष्टि में इसी प्रकार सम्भव हो सकता है।

दो कविताएँ

शशिकला बाबेल

[१]

हीरा री खान

जैन धर्म है हीरा री खान,
कहाँ तक करूँ इरो गुणगान।
खमतखामणा पन्ना माणक,
कठोर तपस्या मोतियन माल।
जीव दया रो झीणो बीजणो,
ज्यामें सब लड़ियां है लाल।
समता सब चीड़ा रो तेड़यो,
ज्यां बीच जड़िया है जिनराज।
तीनों सम्यक् आदर हो तो,
अन्तरमन जगमगाये राज।
दीपावली सो प्रकाश फैलाकर,
बने सिद्धशिला मेहमान।

[२]

रे मन !

रे मन तना-तना सा रहता,
रे मन अनमना सा रहता।
सब कुछ जानते हुए भी,
तू अनजान सा रहता।
मधुर बेला में निद्रामग्न रहता,
मधुर स्वरों में बिना गुनगुनाते रहता।
मधुर धुन में बहरा बना रहता,
पुण्योदय में पाप कमाता रहता।
खुशहाली में शोक मग्न रहता,
हरियाली में अंधा बना रहता।
जागृत अवस्था में खोया सा रहता,
अन्तिम समय में दिशाहीन सा रहता।

२७८, सुभाष कॉलोनी, शास्त्री नगर, जयपुर

दक्षिण भारत के रत्नबन्धुओं का बैंगलोर महानगर में दो दिवसीय सफल अधिवेशन

फूलों की नगरी बैंगलोर व्यावसायिक जगत् में तो ख्याति प्राप्त है ही, धर्म-दर्शन-साहित्य-संस्कृति के क्षेत्र में भी उसकी अपनी अलग पहचान है। धार्मिक चेतना और सांस्कृतिक वैभव से सम्पन्न बैंगलोर नगर में दक्षिण भारतीय रत्नवंशीय बन्धुओं का दो दिवसीय अधिवेशन नाहर भवन, गाँधी नगर, बैंगलोर में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष माननीय श्री मोफतराजजी मुणोत के मुख्य आतिथ्य ११ एवं १२ जनवरी को सानन्द सम्पन्न हुआ।

अधिवेशन में अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री मोफतराजजी मुणोत, शासन सेवा समिति के सदस्यगण, क्षेत्रिय प्रधानगण, संघ, मण्डल और युवक संघ के प्रमुख पदाधिकारीगण उपस्थित हुए, वहीं दक्षिण भारत के अनेक ग्राम-नगरों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हुए।

अधिवेशन आयोजन समिति, बैंगलोर ने अधिवेशन तिथियों का निर्धारण करीब डेढ़ माह पूर्व कर लिया था, उस समय देश में कानून और व्यवस्था की सामान्य स्थिति थी और कहीं पर भी साम्प्रदायिक तनाव भी नहीं था परन्तु ६ दिसम्बर के बाद देश में कई स्थानों पर वातावरण में तनाव रहा फिर भी निर्धारित तिथियों पर अधिवेशन में अच्छी उपस्थिति रहना हमारे बन्धुओं के उत्साह को उजागर करती है। बम्बई की स्थिति बहुत विकट थी परन्तु संघाध्यक्ष महोदय पुलिस व सेना के अधिकारियों के सहयोग से बैंगलोर पहुंचे, वस्तुतः संघाध्यक्ष महोदय के इस साहसपूर्ण निर्णय से प्रतिकूल परिस्थितियों में भी संघ सदस्यों को काम करने की प्रेरणा सहज रूप से प्राप्त होती है।

अधिवेशन आयोजन समिति के सदस्यों एवं बैंगलोर के रत्नवंशीय बन्धुओं ने अध्यक्ष महोदय, अन्यान्य पदाधिकारियों एवं अधिवेशन में पधारे रत्नबन्धुओं का आत्मीयतापूर्ण स्वागत तथा आतिथ्य किया।

दिनांक ११ जनवरी को नाहर भवन में प्रातः १० बजे अधिवेशन की कार्यवाही मंगलाचरण से प्रारम्भ हुई। संघाध्यक्ष महोदय, शासन सेवा समिति के सदस्यगणों, क्षेत्रिय प्रधानों एवं संघ-मण्डल तथा युवक संघ के पदाधिकारियों के साथ विशिष्ट श्रावकों को मंच पर पधार कर आसन ग्रहण करने का निवेदन किया गया। स्थानीय सम्भाग की ओर से माल्यार्पण के साथ स्वागत किया गया। चन्दन की लकड़ी से अंकित नमस्कार महामंत्र की पट्टिका प्रतीक

चिह्न स्वरूप श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, बैंगलोर की ओर से अधिवेशन में पधारे महानुभावों को सम्मानार्थ प्रदान की गई। संघाध्यक्ष श्री मोफतराजजी मुणोत का स्वागताध्यक्ष श्री चम्पालालजी डूंगरवाल ने शॉल ओढ़ाकर बैंगलोर की ओर से बहुमान किया तथा संघाध्यक्ष महोदय की धर्मपत्नी श्रीमती शरद मुणोत का सुश्राविका श्रीमती कंचनबाई डूंगरवाल ने चूंदड़ी ओढ़ा कर स्वागत किया।

श्री सुमेरसिंहजी बोथरा ने अध्यक्ष महोदय एवं अन्यान्य पदाधिकारियों का परिचय दिया।

स्वागत एवं परिचय के बाद "मैं जैन हूँ, मुझे जैन होने पर गर्व है" संकल्प पाठ श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा ने करवाया। एक स्वर-एक लय में संकल्प पाठ का उच्चारण अधिवेशन की एकता-एकरूपता का परिचायक तो था ही, संकल्प शक्ति के माध्यम से देव-गुरु-धर्म और संघ के प्रति समर्पण की भावना सामने आई।

शासन सेवा समिति के सदस्य श्री रतनलालजी बाफणा ने अधिवेशन के प्रथम दिन प्रथम सत्र में अपने विचार रखते संघ के विरुद्ध पिछले डेढ़-दो वर्षों से चल रहे असत्य अनर्गल प्रचार से लेकर पटाक्षेप तक का विवरण-विवेचन प्रस्तुत करते कहा कि हमारे संघ ने प्रतिकूल परिस्थितियों में धैर्य-शांति और समभाव का परिचय दिया है, ऐसी मिसाल अन्यत्र उपलब्ध नहीं हो सकती। श्री बाफणा साहब ने शाकाहार प्रकोष्ठ का प्रस्ताव रखा, जिसे सर्वानुमति से स्वीकार किया गया।

श्री ईश्वर बाबू ललवाणी ने अधिवेशन में विचार रखते हुए कहा कि रत्नवंश में इस तरह के अधिवेशन आयोजित किए जाने से हमारी परस्पर की निकटता में वृद्धि होती है। हम मिल-बैठकर कार्यक्रमों का निर्धारण कर पूरी शक्ति से उसकी क्रियान्विति करें। डॉ० नरेन्द्र भानावत ने स्व० आचार्य भगवन्त की दूरदर्शिता के परिप्रेक्ष्य में विद्वानों के एक मंच पर लाने के प्रयास को महत्त्वपूर्ण मानते हुए कहा कि हमें स्व० आचार्य भगवन के सन्देश को जन-जन तक पहुँचाना है।

संघाध्यक्ष महोदय ने बैंगलोर के आत्मीय आतिथ्य के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा कि संघ का मतलब संगठन से होता है और संगठन का आधार आपसी प्रेम है। अनुशासन को संघ का प्राण निरूपित करते हुए अध्यक्ष महोदय ने अहं को छोड़कर संघ, सेवा में समर्पित होने पर बल दिया।

भोजनावकाश के पश्चात् खुला मंच कार्यक्रम रखा गया जिसमें सदस्यों ने अपने-अपने सुझाव रखे जिनका संघाध्यक्ष महोदय ने समाधान किया।

सायंकाल ७ बजे के पश्चात् युवक संघ की ओर से विचार संगोष्ठी कार्यक्रम रखा गया। अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ के परामर्शदाता श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा, अध्यक्ष श्री अमिताभजी हीरावत, कार्याध्यक्ष श्री आनन्दजी चौपड़ा, उपाध्यक्ष श्री ओमप्रकाशजी बांठिया ने युवक संघ की प्रवृत्तियों, गतिविधियों और कार्यक्रमों की रूपरेखा रखी एवं जलगांव, बम्बई, मद्रास जैसे नगरों में युवक संघ की शाखाएँ स्थापित होने का विवरण प्रस्तुत किया। बैंगलोर के युवारत्न बन्धुओं ने शाखा स्थापित किए जाने की सहमति व्यक्त की और संघाध्यक्ष श्री मोफतराजजी मुणोत ने नव मनोनीत अध्यक्ष आदि पदाधिकारियों को शपथ दिलाई।

दिनांक १२ जनवरी को प्रातः खुला अधिवेशन रखा गया जिसमें बैंगलोर महानगर ने अध्यक्ष श्री फूलचन्दजी लूणिया, साधुमार्गी संघ के अध्यक्ष श्री सोहनलालजी सिपाणी, मैसूर, विल्लीपुरम् आदि समीपवर्ती संघों के अध्यक्षों को मंच पर आमंत्रित किया गया। बैंगलोर महानगर की ओर से मुख्य अतिथि श्री मोफतराजजी मुणोत का माल्यार्पण कर स्वागत किया गया एवं सम्मानार्थ शॉल ओढ़ाया।

खुले अधिवेशन में सर्व श्री पी० एम० चौरड़िया ने सामायिक-स्वाध्याय की महत्ता एवं प्रश्न मंच कार्यक्रम की उपयोगिता पर विचार रखे। श्री हरिश-चन्दजी बडेर ने स्वधर्मी वात्सल्य सेवा के सन्दर्भ में विचार रखते हुए इस ओर जागरूकता पर बल दिया। कान्फ्रेंस के पूर्व प्रधान एवं विद्वान् श्री शान्तिभाई बनमाली सेठ ने स्व० आचार्य भगवन्त की संयम-साधना और समाज को उनकी देन विषय पर विशद विचार रखे। श्री राजेन्द्रकुमारजी पटवा ने कहा कि सामायिक संघ की अब तक की उपलब्धियों से सन्तोष नहीं करना है अपितु सामायिक-साधना में सभी को जोड़ना है। श्री विमलचन्दजी गोलेच्छा ने अपने विचार रखते हुए कहा कि हमारे संघ ने सम्प्रदायवाद का पोषण नहीं किया अपितु सेवा और मैत्री को बढ़ावा दिया है। युवक संघ के अध्यक्ष श्री अमिताभजी हीरावत ने धर्म के वैज्ञानिक आधार पर समीक्षा करते हुए समस्याओं के समाधान में जैन धर्म सिद्धान्तों की उपयोगिता बतलाई।

श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा ने अपने प्रभावशाली भाषण में श्रमण भगवान महावीर प्रभु के शासन में क्रांतिकारी वीर लोंकाशाह से लेकर आचार्य परम्पराओं का परिचय एवं कुशलवंश परम्परा के आदर्श के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए। स्व० आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमलजी म० सा० की जिन शासन के अनुपम आदर्श के उन्होंने कई संस्मरण रखे। श्री ईश्वरबाबू ललवाणी ने संघ के प्रति कर्त्तव्य-बोध कराया। प्रमुख चिन्तक डॉ० नरेन्द्र भानावत ने

श्रमण संस्कृति की सुरक्षा हेतु संघ स्तर पर प्रयास कैसे हो, उसका स्वरूप समझाया।

संघाध्यक्ष श्री मोफतराजजी मुणोत ने अपने भाषण में कहा कि धर्म व्यापार नहीं है जिसे बढ़ाया जाय। धर्म को जीवन में उतारने की आवश्यकता है। सम्प्रदाय परिवार है और परिवार की उन्नति तभी होगी जब कि हम सब उसके लिए प्रयास करें। संघ में प्रेम-वात्सल्य बढ़े, इस ओर हम सबको प्रयत्न करना चाहिए। बैंगलोर अधिवेशन के प्रति अपनी ओर से एवं संघ की ओर से धन्यवाद ज्ञापित करते अध्यक्ष महोदय ने जलगांव में अगले अधिवेशन के सन्दर्भ में कहा कि जलगाँव वालों की भावना शुभ है, जलगाँव में अधिवेशन का निर्णय अभी तो नहीं किया जा सकता पर यथा समय इस पर विचार किया जाएगा।

भारतीय हिन्दी परिषद् के जयपुर अधिवेशन में हिन्दी भाषा और साहित्य की उल्लेखनीय सेवाओं के लिए हिन्दी प्रोफेसर श्री नागप्पा को भी सम्मानित किया गया था पर निजी कारणों से वे उपस्थित नहीं हो सके थे। अधिवेशन के संयोजक एवं राजस्थान विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ० नरेन्द्र भानावत ने इस अवसर पर विशेष रूप से आमंत्रित कर प्रो० नागप्पा को प्रशस्ति पत्र व शॉल भेंट कर परिषद् की ओर से सम्मानित किया। रत्न-हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री मोफ़तराजजी मुणोत ने भी माल्यार्पण एवं शॉल ओढ़ाकर उनका स्वागत किया व डॉ० भानावत द्वारा सम्पादित कृति 'आचार्य हस्ती : व्यक्तित्व और कृतित्व' उन्हें भेंट की।

अधिवेशन में पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के आठ दिनों में पशु हिंसा बन्द रहे, इसके लिए सर्वानुमति से स्वीकृत प्रस्ताव केन्द्र सरकार को भेजने का निर्णय रहा। शाकाहार प्रकोष्ठ को व्यापक आधार देने का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। उमंग-उल्लास और परस्पर सहयोग के परिप्रेक्ष्य में अधिवेशन सफल रहा। अधिवेशन की कार्यवाही का संचालन सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के उपाध्यक्ष श्री चेतनप्रकाशजी डूंगरवाल ने अत्यन्त कुशलतापूर्वक किया।

इस अधिवेशन को सफल बनाने में स्वागत समिति के सभी सदस्यों का सक्रिय योगदान रहा। श्री भोपालचन्दजी पगारिया (उपाध्यक्ष, अ० भा० र० हि० श्रावक संघ) श्री चेतनप्रकाशजी डूंगरवाल (उपाध्यक्ष, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल), श्री जसवन्तमलजी दुग्गड़ (क्षेत्रीय प्रधान, कर्नाटक प्रान्तीय शाखा), श्री गणेशमलजी भण्डारी (शासन सेवा समिति, सदस्य), श्री प्रेमचन्दजी ज्ञानचन्दजी भण्डारी (सहमन्त्री, अ० भा० जै० र० हि० श्रा० संघ) श्री मोतीलालजी सांखला एवं श्री उत्तमचन्दजी भण्डारी के नाम इस दिशा में विशेष उल्लेखनीय हैं।

—जगदीशमल कुम्भट

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजें :
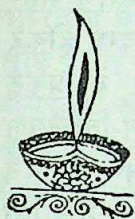
साहित्य-समीक्षा

☐ डॉ० नरेन्द्र भानावत

१. योग बिन्दु के परिप्रेक्ष्य में जैन योग साधना का समीक्षात्मक अध्ययन डॉ. सुव्रत मुनि शास्त्री, प्र. श्री आत्म ज्ञान पीठ, मानसा मण्डी, भटिण्डा (पंजाब) पृ. ३४०, साधारण शुल्क १००.००, पुस्तकालय संस्करण १४०.०० ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध पर कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय ने मुनि श्री को पी.एच.डी. की उपाधि प्रदान की है। यह शोध प्रबन्ध मुनिश्री के व्यापक अध्ययन, गहन-चिन्तन और तटस्थ समीक्षण दृष्टि का परिणाम है। भारतीय साधना-पद्धतियों में योग का केन्द्रीय स्थान रहा है। योग जैन-दर्शन में मन, वचन और काया की प्रवृत्ति को भी कहा गया है। इस दृष्टि से संयोग की दासता और वियोग का भय संसार-चक्र का कारण है। पर ध्यान और समाधि के रूप में योग संसार-विच्छिन्नता का मूल कारक भी है। आठवीं शती के महान् आचार्य हरिभद्र ने 'योग-शतक' और 'योग-विंशिका' प्राकृत भाषा में तथा 'योग-दृष्टि समुच्चय' और 'योग-बिन्दु' संस्कृत भाषा में रचे। 'योग-बिन्दु' में ५२७ श्लोक हैं। यह योग-साधना को व्यवस्थित रूप प्रदान करता है। योग-बिन्दु' को केन्द्र में रखकर इस ग्रन्थ की रचना की गई है। यह शोध प्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में वैदिक, जैन और बौद्ध वाङ्मय में प्रतिपादित जैन योग का परिचय दिया गया है। द्वितीय अध्याय में आचार्य हरिभद्र के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय में 'योग-बिन्दु' के आधार पर योग के अधिकारी, योगी के भेद और योग की भूमियों—अध्यात्म, भावना, ध्यान, साधना और संक्षय का विवेचन किया गया है। चतुर्थ अध्याय में जैन ध्यान योग का विवेचन करते हुए गुणस्थान और योग के पारस्परिक सम्बन्धों पर विचार किया गया है। पंचम अध्याय में आत्मा, कर्म और लेश्या के सन्दर्भ में तात्विक विश्लेषण किया गया है। योग साधकों के लिए ग्रन्थ उपयोगी और मार्गदर्शक है।

साधना-पद्धति में ध्यान योग :—डॉ. साध्वी प्रियदशना, प्र. श्री जैन रत्न पुस्तकालय, आचार्य श्री आनन्दऋषि जी मार्ग, अहमदनगर, पृ. ६५०, मूल्य ३००.०० ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध पर पुणे वि० वि० ने साध्वी प्रियदर्शना श्री जी को पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान की है। भारतीय साधना-पद्धति में ध्यान-योग केन्द्र में रहा है। ध्यान से मन की चंचलता पर निग्रह करने के साथ-साथ कर्म-आवरणों को दूर करने में सहायता मिलती है। ध्यान की अग्नि में दग्ध होकर सारे कलमष नष्ट हो जाते हैं और आत्म-शक्ति निर्मल-निर्विकार रूप में प्रकट हो जाती है। साध्वीश्री ने व्यापक परिप्रेक्ष्य में ध्यान-योग का विवेचन-विश्लेषण इसप्रबन्ध में प्रस्तुत किया है। यह शोध प्रबन्ध साध्वी श्री के गहन-चिन्तन-मनन और प्रखर अध्ययन और स्वानुभूति का परिणाम है। यह प्रबन्ध ६ अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में वैदिक, बौद्ध और जैन तथा भारतीयतर धर्मों की साधना-पद्धतियों के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय अध्याय में ध्यान सम्बन्धी आगम, आगमिक व्याख्या साहित्य और आगमेतर जैन साहित्य का परिचय दिया गया है। शेष चार अध्यायों में जैन साधना पद्धति में ध्यान के महत्त्व, ध्यान के स्वरूप, ध्यान के विविध प्रकार तथा ध्यान के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक लाभ तथा लब्धियों पर विस्तार से विवेचन किया गया है। शास्त्रीय उद्धरणों से ग्रन्थ को प्रामाणिकता प्रदान की गई है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में ४० पृष्ठों की डॉ० सागरमल जैन की विस्तृत भूमिका है। ध्यान-साधकों के लिए ग्रन्थ उपयोगी और मार्गदर्शक है।

३. नालडियार—सं. म. विनयसागर, प्र. प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर एवं मगनीराम बैजनाथ गोयनका चेरिटेबल ट्रस्ट, मुंगेर, प्राप्ति स्थान, प्रा. भा. अ. ३८२६, यति श्यामलालजी का उपासरा, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर-३, पृ. २४०, मू. १२०.००।

प्रस्तुत ग्रन्थ ७वीं शती के आचार्य पदुमनार रचित तमिल ग्रन्थ है। इसमें जैन मुनियों के जीवन मूल्यपरक ४०० पद्य संकलित हैं जो आदर्श मानव जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। यह ग्रन्थ तीन काण्डों–धर्म, अर्थ और काम में विभक्त है। धर्म काण्ड के १३ अधिकारों में १३०, अर्थकाण्ड के २४ अधिकारों में २४० व कामकाण्ड के ३ अधिकारों में ३० पद्य हैं। यह ग्रन्थ एक प्रकार से जीवन-शास्त्र है जिसमें ज्ञान, दर्शन युक्त पवित्र जीवन जीने के सुरुचिपूर्ण, सरस, प्रेरणादायक सूक्त संगृहीत हैं। मूल तमिल के साथ डॉ० जी० ए० पोप तथा एफ. डब्ल्यू. इलिस द्वारा किया गया अंग्रेजी अनुवाद व टी० इ० श्रीनिवास राघवन कृत हिन्दी पद्यानुवाद देने से ग्रन्थ की महत्ता एवं उपयोगिता बढ़ गई है। राष्ट्रीय एकता एवं समन्वयात्मक सांस्कृतिक चेतना के विकास में यह ग्रन्थ बड़ा सहायक एवं प्रेरक है।

४. पुनर्जन्म का सिद्धान्त—डॉ० एस० आर० व्यास, प्र० प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर, पृ. २०, मू. ५०.००।

प्रस्तुत ग्रन्थ सुखाड़िया वि० वि० उदयपुर द्वारा पी-एच० डी० के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध है। पूर्वजन्म एवं पुनर्जन्म में चार्वाक दर्शन के अलावा सभी भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शनों का किसी न किसी रूप में विश्वास रहा है। भारतीय दर्शन पुनर्जन्म के रूप में व मसीही सिद्धान्त पुनरुत्थान के रूप में आत्मा की अमरता को मान्य करते हैं। महर्षि अरविन्द न केवल कर्म के भुगतान के लिए वरन् जीवात्मा की विकासमान यात्रा के लिए पुनर्जन्म को अनिवार्य मानते हैं। विद्वान् लेखक ने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इन सभी दृष्टियों से पुनर्जन्म सिद्धान्त की विवेचना करते हुए आत्मा, ईश्वर, कर्म के साथ इनके सम्बन्धों पर विचार करते हुए इसकी मनोविज्ञान व आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से तार्किक एवं दार्शनिक मीमांसा की है। यह ग्रंथ ७ अध्यायों में सूक्ष्म दार्शनिक जटिल विषय को प्रामाणिक रूप से सरल-सहज बनाकर प्रस्तुत करता है।

५. जैन परामनोविज्ञान—मुनि डॉ० राजेन्द्र 'रत्नेश' एवं साध्वी डॉ० प्रभाश्री, प्र. श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, दाता भैरूं, उदयपुर-३१३००१, पृ. १३०, मू. ५०.००।

जैन दार्शनिकों ने इन्द्रियों से परे मन और आत्मा की गहराइयों को आत्मानुभूति से समझा-परखा है। जन्म-जन्मान्तरों के सम्बन्धों की कार्य-कारणमूलक व्याख्या-विवेचना की है। कथा-साहित्य के विविध अभिप्राय (मोटिफ) इसके उदाहरण हैं। जागतिक विज्ञान के क्षेत्र में तो आशातीत अनुसंधान हुआ है पर परामनोविज्ञान का क्षेत्र अभी अछूता रहा है। ऐसी स्थिति में जैन परामनोविज्ञान पर लिखा जाना ज्ञान के एक नये क्षेत्र व क्षितिज का उद्घाटन करना है। इस ग्रंथ के ५ अध्यायों में परामनोविज्ञान की प्रकृति एवं स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए पुनर्जन्म, प्रेत जीवन, अतीन्द्रिय दृष्टि एवं दूरबोध तथा पूर्वाभासी स्वप्न पर विविध दृष्टियों से विचार किया गया है। यह ग्रंथ परामनोविज्ञानवेत्ताओं के लिए दिशा-निर्देशक होने के साथ-साथ जैन विद्या के क्षेत्र में कार्यरत विद्वानों के लिए अनुसंधान की नयी सम्भावनाओं के द्वार खोलता है।

६. समर्पित लोकसेवक मनोहरसिंह महता (1911–1990)— डॉ. रेणुका पामेचा, प्र. सेवा संघ, बीगोद (भीलवाड़ा), पृ. ३००।

प्रस्तुत ग्रंथ के चरित नायक श्री मनोहरसिंह महता ने स्वतन्त्रता से पूर्व बीगोद को केन्द्र बनाकर सेवा संघ के माध्यम से जनसाधारण में स्वाभिमान, स्वावलम्बन और जागृति की भावना पैदा करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम को हाथ में लिया और उसे अक्षर-ज्ञान तक सीमित न रखकर सहकारिता,

कुटीर-उद्योग, शराबबन्दी, मृत्यु-भोज, छुआछूत-निवारण, साम्प्रदायिक सद्भाव, व्यसन-मुक्ति, जन-स्वास्थ्य आदि रचनात्मक प्रवृत्तियों से जोड़ा । यह ग्रंथ उनके लोकसेवक रूप की सचित्र जीवन-गाथा है । इस ग्रंथ के प्रथम खण्ड में श्री महता के उक्त रचनात्मक कार्यों का, द्वितीय खण्ड में उनके सम्पर्क में आने वाले सामाजिक कार्यकर्ताओं, सर्वोदयी विचारकों, प्रशासनिक अधिकारियों, मित्रों आदि के ६६ संस्मरणों का व तृतीय खण्ड में उनके निधन पर व्यक्त श्रद्धा-सुमनों का संकलन है । यह ग्रंथ लोक-सेवा क्षेत्र में कार्य करने वालों के लिए मार्गदर्शक एवं युवा-पीढ़ी के लिए प्रेरक और जीवन रूपान्तरणकारी है ।

७. **महाजीवन की खोज**—म० चन्द्रप्रभसागर, प्र० श्री जितयशाश्री फाउण्डेशन, ९-सी, एस्प्लानेड रो ईस्ट, कलकत्ता-६९, पृ. १४०, मू. १०.०० ।

हमें चलते-फिरते मानव के रूप में जो जीवन दिखाई देता है, वह वास्तविक जीवन नहीं हैं । वास्तविक जीवन आन्तरिक अनुभव की विवेक-यात्रा है । मुनिश्री ने इस पुस्तक के १५ प्रवचनों में इस यात्रा को महाजीवन की खोज कहा है । जोधपुर के सन् १९९० के चातुर्मास में जुलाई-अगस्त माह में आचार्य कुन्दकुन्द के महासूत्रों, अध्यात्म योगी आनन्दघन व अध्यात्म पुरुष श्रीमद् राजचन्द्र के अध्यात्म पदों पर आधारित ये प्रवचन अनेकान्त, योग, अनासक्ति, इंसानियत, आत्मानुभव, वीतरागता, वैराग्य, समता, प्रतिक्रमण, सम्यक्त्व, आत्मज्ञान, असंगता जैसे जीवन-मूल्यों पर सहज, सरल भाषा एवं रोचक शैली में अमिट प्रभाव डालते हैं । आत्म-जागृति व्यंजक ये प्रवचन हृदय संवेद्य एवं मर्मस्पर्शी हैं ।

८. **शब्द जब बोलते हैं अपना अर्थ**—डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया, प्र. जैन शोध अकादमी, ३९४, सर्वोदय नगर, आगरा रोड, अलीगढ़ (उ.प्र.)-२०२००१, पृ. १४०, मू. अकादमी की सदस्यता ।

डॉ. प्रचंडिया साहित्य-मनीषी होने के साथ-साथ आध्यात्मिक चिन्तक भी हैं । इसलिए उनकी वाणी आत्मानुभूति में पककर जब अभिव्यक्त होती है तब नई-नई अर्थ-भंगिमा बिखेरती है । प्रस्तुत पुस्तक में संकलित कानपुर में दिये गये उनके ११ प्रवचन इस कथन के प्रमाण हैं । इन प्रवचनों में प्रवचनकार शुष्क शास्त्रीय तथ्यों का उल्लेख नहीं करता, वह उन्हें वर्तमान परिवेश में ढालकर उनकी जीवनपरक हृदयस्पर्शी व्याख्या करता है । ये प्रवचन प्रवचनकार की व्यापक अध्ययनशीलता, गहरी अंतर्दृष्टि और आंतरिक बोध की अभिव्यक्ति हैं । जैन पारिभाषिक और रूढ़ शब्दों को सांस्कृतिक संदर्भों में नई पर ग्राह्य व्याख्या इन प्रवचनों की विशेषता है । इन प्रवचनों में षट आवश्यक, षटद्रव्य, इन्द्रिय-संयम, कषाय-विजय, लेश्या, कर्मसिद्धान्त, सम्यग्ज्ञान, णमोकार महामंत्र, शाका-

हार और अहिंसा की दर्शन, मनोविज्ञान, समाजनीति और मानवीय संदर्भों में मार्मिक व्याख्या-विवेचना की गई है।

९. इतिहास की अमरबेल ओसवाल (द्वितीय खण्ड)—मांगीलाल भूतोड़िया, प्र. प्रियदर्शी प्रकाशन, ७ ओल्ड पोस्ट ऑफिस स्ट्रीट, कलकत्ता-१, पृ. ४६०, मू. १७५.०० ।

इस ग्रंथ के प्रथम भाग की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से बड़ी उपयोगिता रही और सभी क्षेत्र से लेखक के प्रयत्नों को सराहा गया। प्रस्तुत ग्रंथ उसी क्रम में ओसवाल जाति के इतिहास का द्वितीय भाग है जिसमें १३ अध्याय से लेकर २३ अध्याय तक कुल ११ अध्याय हैं। १३वें अध्याय में ओसवाल जाति के पंजाब, पश्चिमोत्तर, दक्षिण, गुजरात, बंगाल, आसाम आदि पूर्व प्रदेशों तथा विदेशों में ओसवाल जाति के स्थानान्तरण और उनके कारणों पर प्रकाश डाला गया है। अध्याय १४ इस ग्रंथ का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अध्याय है जिसमें ओसवाल गोत्रों का इतिहास प्रस्तुत किया गया है। इसमें क्षत्रियों से निसृत २३, चौहान राजपूतों से निसृत ३९, परमार राजपूतों से निसृत २२, राठौड़ राजपूतों से निसृत २५, बोहरा गोत्र के ७, परिहार राजपूतों से निसृत १९, शिशोदिया राजपूतों से निसृत ३, खींची राजपूतों से निसृत ७, कछवाहा राजपूतों से निसृत ३, ब्राह्मण वर्ग से निसृत ८, सोलंकी राजपूतों से निसृत ८, गौड़ राजपूतों से निसृत ६, माहेश्वरी जाति से बने ९, खण्डेलवाल जाति से बने ४, सोढ़ा राजपूतों से निसृत ३, श्रीमाल वंश के १९, भाटी राजपूतों से निसृत १२ एवं गुजरात में बसे ओसवालों के २३ कुल मिलाकर लगभग २४० गोत्रों का बड़ा ज्ञानवर्द्धक, खोजपूर्ण, तथ्यपरक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

१५ से लेकर २० अध्यायों में ओसवाल संस्कृति, राजकीय प्रशासन में प्रधानमन्त्री, दीवान, फौज बक्शी आदि के रूप में योग देने वाले ओसवालों का, पोरवाल, माहेश्वरी, अग्रवाल, खण्डेलवाल, बघेरवाल आदि ओसवालों की सहजातियों का, ओसवालों के सामाजिक समीकरण, ओसवाल जाति की सामाजिक समस्याओं और जनगणना में उनकी स्थिति आदि का सामाजिक, सांस्कृतिक सन्दर्भ में सुन्दर विवेचन प्रस्तुत किया गया है। २१वें अध्याय में ओसवाल जाति की सतियों, साध्वियों तथा शिक्षा, साहित्य, चिकित्सा एवं समाज-सेवा के विभिन्न क्षेत्रों में अग्रणी महिलाओं का परिचय दिया गया है। अध्याय २२ में स्वतन्त्रता सेनानी, साहित्य, संस्कृति, शिक्षा, न्याय, समाज,. धर्म, शासन, उद्योग एवं व्यापार आदि के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान देने वाले इस शताब्दी के ओसवाल नर पुंगवों का परिचय दिया गया है। अध्याय २३ में इस शती में हुए ओसवाल समाज को संगठित करने के विविध प्रयासों का तथा प्रगति के विविध आयामों

का आलेखन किया गया है। यथास्थान विशिष्ट और दुर्लभ चित्र भी दिये गये हैं जिनकी कुल संख्या ५५ है।

यह ग्रंथ लेखक के व्यापक अध्ययन, अनवरत खोज और नैष्ठिक साधना का जीता जागता दस्तावेज है और है राष्ट्रीय निर्माण में ओसवाल जाति के योगदान का सचित्र मानक इतिहास।

१०. जैन समाज का बृहद् इतिहास (प्रथम खण्ड)—डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल, प्र. जैन इतिहास प्रकाशन संस्थान, ८६७, अमृत कलश, किसान मार्ग, बरकत नगर, जयपुर-१५, पृ. ७००, मू. २५०.०० ।

डॉ. कासलीवाल साहित्य, संस्कृति और इतिहास के नित्य नवीन तथ्यों को उजागर करने में अनवरत रूप से साधनाशील हैं। 'खण्डेलवाल जैन समाज का वृहत् इतिहास' के बाद प्रस्तुत ग्रंथ इनकी इसी साधनाशीलता और इतिहास दृष्टि का परिणाम है। डॉ. कासलीवाल इतिहास लेखन को सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में देखने वाले इतिहासकार हैं। वे इतिहास को केवल अतीत का आलेख नहीं मानते, वरन् उसे वर्तमान का सरोकार एवं भविष्य के लिए प्रेरणा रूप मानते हैं। उनका इतिहासलेखन मात्र ज्ञात सामग्री पर आधारित नहीं है, अज्ञात और अछूती सामग्री को जुटाने में उन्होंने कई विषम क्षेत्रों की यात्राएँ की हैं और बिखरे हुए सूत्रों को जोड़ा है।

प्रस्तुत ग्रंथ तीन खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में समाज इतिहास का महत्त्व और विकास स्पष्ट करते हुए वर्तमान शताब्दी के प्रमुख जैन संस्थाओं, प्रमुख आचार्यों एवं संतों, राष्ट्रीय स्तर के विद्वानों एवं श्रेष्ठिजनों तथा अभिनन्दन ग्रंथों की प्रकाशन परम्परा पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय खण्ड पूर्वांचल प्रदेश के जैन समाज और समाजसेवियों से सम्बन्धित है। तृतीय खण्ड में राजस्थान, बिहार, मालवा, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र एवं दक्षिण भारत के जैन समाज और समाजसेवियों का सचित्र परिचय दिया गया है। इतिहास लेखन में यह ग्रंथ आधारभूत सामग्री प्रदान करता है। इस ग्रंथ के लेखक की अपनी सीमा रही है। दिगम्बर समाज की प्रवृत्तियों और समाजसेवियों को ही इसमें समाविष्ट किया जा सका है। यदि श्वेताम्बर समाज की प्रवृत्तियों और समाज सेवियों को भी इसमें आलेखित किया जाता तो जैन समाज का वर्तमान सदी का समग्र रूप उभर कर सामने आ जाता। आशा है, इस शृंखला के तीन अन्य भाग भी शीघ्र समग्र रूप में प्रकाशित होंगे।

११. अध्यात्म नवनीत—संत अमिताभ, प्र. आध्यात्मिक शोध संस्थान, सम्बोधिवन, गौमुख रोड, माउन्ट आबू-३०७५०१, पृ. १२०, मू. १५.०० ।

इस पुस्तक में लगभग ३० वर्षों की मौन और एकान्त साधना के फल-स्वरूप हुई आत्मानुभूति को सूक्तिरूप छोटे-छोटे वाक्यों में अभिव्यक्त किया गया है। तेरापंथ सम्प्रदाय के अष्टम आचार्यश्री कालूगणी द्वारा सं. १९९२ में दीक्षित स्वामी मीठालालजी म. ही संत अमिताभ हैं। आचार्य श्री तुलसी की अनुमति से आप एकान्त ध्यान साधना में लीन रहे। आपने अनुभूति के स्तर पर अध्यात्म, व्यवहार, व्रत-अव्रत, हिंसा-अहिंसा, जीव-ब्रह्म, संस्कार, संत, गुरु, उपवास, आहार, तप, संयम आदि पर नवनीत के रूप में 'गागर में सागर' भरने का प्रयत्न किया है। अध्यात्म अनुभूति को शब्दों में बांधने के कारण कहीं-कहीं विरोधाभास सा लगता है। वीतरागता और जागरूकता सर्वत्र अभिव्यंजित है।

१२. परब्रह्म—राजमल पवैया, प्र. तारादेवी पवैया ग्रंथमाला, ४४, इब्राहीमपुरा, भोपाल, पृ. १००, मू. ४.००।

वयोवृद्ध स्वतन्त्रता सेनानी श्री पवैयाजी ने हजारों की संख्या में आध्यात्मिक पद एवं भजन रचे हैं। इस संग्रह में नई और पुरानी शैली के उनके ३०५ गीत संकलित हैं। विभाव से स्वभाव में आने की प्रेरणा इन गीतों से मिलती है। समता, शान्ति, वीतरागता, ज्ञान-साधना, भाव-विशुद्धि, इन्द्रिय निग्रह और सदाचरण की शिक्षा इन गीतों के माध्यम से जनसाधारण को दी गई है। तत्त्वज्ञान और दर्शन की छाप प्रत्येक गीत में प्रतिभासित है।

१३. युवा प्रश्न मंच—भाग ८ व ९—प्रस्तोता—पी. एम. चौरड़िया, प्र. श्री एस. एम. जैन युवक संघ, ३४८ मिन्ट स्ट्रीट, साहूकार पेट, मद्रास-७९, पृ. ९०, मू. ज्ञानोपयोग।

श्री चौरड़िया ने युवा पीढ़ी को जैन धर्म दर्शन के मुख्य सिद्धांतों, प्रमुख धार्मिक अनुष्ठानों और आध्यात्मिक महापुरुषों के जीवन से परिचित कराने के लिए 'युवा प्रश्न मंच' का बड़ा उपयोगी, रोचक और प्रेरणादायक कार्यक्रम कई वर्षों से मद्रास में चालू कर रखा है। 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका में विगत पाँच वर्षों से 'प्रश्न मंच कार्यक्रम' स्तम्भ नियमित रूप से प्रकाशित हो रहा है। प्रश्न मंच की सामग्री को व्यवस्थित और स्थायी रूप प्रदान करने की दृष्टि से इनका पुस्तक रूप में प्रकाशन किया गया है। अब तक इसके ९ भाग प्रकाशित हो चुके हैं। आठवें भाग में मानव जीवन, अचौर्य, रात्रि भोजन, लेश्या, आत्मा और मन तथा नवें भाग में सुख, दुःख, विनय, निंदा, वाणी और भावना पर प्रश्नोत्तर दिये गये हैं। ये पुस्तकें पठनीय, संग्रहणीय और आचरणीय हैं।

१४. प्रिय बहनों—सज्जन चौपड़ा, प्र. अ. भा. तेरापंथ महिला मण्डल, लाडनूं, पृ. १५२, मू. १०.००।

प्रस्तुत पुस्तक में सज्जन चोपड़ा के 'नारी लोक' में प्रकाशित बहिनों के नाम लिखे गये पत्रों का संकलन है। इन पत्रों में संयम, सादगी, सेवा, अनुशासन,

मितव्ययता, कुरीति निवारण, संघ और समाज के प्रति दायित्व, पत्नी और पति के मधुर सम्बन्ध जैसे विषयों पर प्रेरणादायक विचार व्यक्त किये गये हैं। धार्मिक, सामाजिक और नैतिक चेतना की जागृति में ये विचार बड़े उपयोगी और मार्गदर्शक हैं।

१५. आचार्य गुरु हस्ती महिमा स्तुति—संकलनकर्ता–जवाहरलाल बाघमार, प्र. ६ चन्द्रप्पा मुदली स्ट्रीट, साहूकार पेट, मद्रास, पृ. ६४, मू. नित्य पठन-पाठन।

आचार्य हस्ती की ८२वीं जयन्ती पर प्रकाशित इस पुस्तिका में आचार्य हस्ती की जीवन-झांकी के साथ-साथ उनकी महिमा और स्तुति में रचित विभिन्न पद और भजन संकलित किये गये हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर आचार्य हस्ती के प्रेरणादायक चिन्तन-कण भी दिये गये हैं। श्रद्धालु भक्तों के लिए पुस्तक उपयोगी है।

१६. स्वाभाविक आहार और शाकाहार—जशकरण डागा, प्र. श्री जीवदया मण्डल ट्रस्ट, डागा सदन, संघपुरा, टोंक, पृ. १००, मू. २.५०।

श्री डागाजी ने इस पुस्तक में नैतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, स्वास्थ्य, पर्यावरण, शारीरिक संरचना आदि दृष्टि से शाकाहार के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए मांसाहार से होने वाले दुष्परिणामों पर सहज सरल भाषा शैली में प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत की है। कई उपयोगी चार्ट एवं तुलनात्मक विवरण दिये हैं। यह लेखमाला 'जिनवाणी' पत्रिका में भी धारावाही रूप से प्रकाशित हुई है। शाकाहार प्रचार में पुस्तक उपयोगी और सहायक है।

१७. मिणकला—मुनि बुद्धमल, प्र. अ. भा. तेरापंथ युवक परिषद् लाडनूं, पृ. १३०, मू. २५.००।

निकाय प्रमुख मुनि बुद्धमल प्रबुद्ध विचारक, चिन्तनशील साधक और अनुभूति प्रवण कवि हैं। हिन्दी और राजस्थानी पर आपका समान अधिकार है। आपके कई काव्य संग्रह पूर्व में प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत पुस्तक में ३६५ काव्य-मुक्ता संकलित हैं जो वर्ष में प्रत्येक दिन के लिए मननीय और आचरणीय हैं। राजस्थानी भाषा की चार पंक्तियों में तराशे हुए ये काव्य-माणक जीवन प्रकृति और संस्कृति के सम्बन्ध में कवि के चिन्तन, मनन और आत्मानुभव के आलोक को प्रकाशित करते हैं। आज के भय, सन्देह, अनास्था, कुण्ठा भरे जीवन में इनसे आस्था, विश्वास, उत्सर्ग, बलिदान और समर्पण का तप-तेज मिलता है।

१८. सचित्र णमोकार महामन्त्र—मार्गदर्शक उपाध्याय श्री केवलमुनि, सं. श्रीचन्द सुराणा 'सरस', प्र. दिवाकर प्रकाशन, ए-७, अवागढ़ हाउस, एम. जी. रोड, आगरा-२८२००२, मू. १००.००।

सुषुप्त आत्म - शक्ति को जागृत करने में ध्यान, प्रभु नाम-स्मरण, जप, स्तुति, भक्ति, उपासना, मंत्र-साधना आदि का बड़ा महत्त्व है। मंत्रों में णमोकार महामंत्र सर्वोपरि है। इस महामंत्र में अरिहन्त और सिद्ध रूप वीतराग देव तथा आचार्य, उपाध्याय एवं साधु रूप आध्यात्मिक गुरु को नमन किया गया है। इस मंत्र में व्यक्ति विशेष को नमन न करके गुणों के धारक व्यक्तित्व को नमन किया गया है। इस मंत्र पर अनेक विवेचनात्मक एवं व्याख्यात्मक ग्रंथ लिखे गये हैं। प्रस्तुत पुस्तक में अरिहन्त आदि पंच परमेष्ठियों के स्वरूप-बोध, महत्त्व आदि का रंगीन आकर्षक एवं प्रभावक चित्रों के साथ चित्रण किया गया है। इस मंत्र की ध्यान एवं जप-विधि तथा नवग्रह शान्ति हेतु इनके प्रयोग का भी विवरण दिया गया है। रंगों के आधार पर चैतन्य केन्द्रों पर ध्यान केन्द्रित करने की विधि भी दी गई है। इस मंत्र के महत्त्व को व्यंजित करने वाली ५ सचित्र कथाएँ भी दी हैं। आत्म-रक्षा इन्द्र कवच के रूप में सचित्र विवरण देकर इसके मर्म को व्यंजित किया गया है। नवकार सम्बन्धी अन्त में ५ परिशिष्ट दिये गये हैं जो णमोकार मंत्र के विविध मंत्र, योग, प्रत्यक्ष चामत्कारिक अनुभव, नवकार स्तवन, आनुपूर्वी आदि से सम्बन्धित हैं।

इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद भी अलग से प्रकाशित किया गया है। नवकार महामंत्र का यह सचित्र प्रकाशन संभवतः प्रथम प्रयोग है।

१९. अपभ्रंश रचना सौरभ—डॉ. कमलचंद सोगानी, प्र. अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जैन विधा संस्थान, नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर ४, पृ. २१६, मू. पु. सं. ६०.०० तथा वि. सं. ३५.००।

आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास अपभ्रंश भाषा से हुआ है। ८वीं से १३वीं शती तक यह उत्तर भारत की साहित्यिक भाषा रही। विभिन्न भाषाओं के कथ्य, शिल्प एवं काव्य रूप को इस भाषा के साहित्य ने व्यापक रूप से प्रभावित किया। विश्वविद्यालय स्तर पर अध्ययन, अनुसंधान और पठन-पाठन में यह भाषा और इसका साहित्य उपेक्षित रहा है। इसके अध्ययन के बिना आदिकालीन एवं मध्यकालीन शोध में मौलिकता का सन्निवेश सम्भव नहीं। अपभ्रंश साहित्य अकादमी ने इस दिशा में सर्टिफिकेट और डिप्लोमा कोर्स आरम्भ कर सराहनीय कार्य किया है। अपभ्रंश भाषा और साहित्य के अध्ययन में उसका व्याकरण जानना मूल आवश्यकता है। व्याकरण के पठन-पाठन में प्रायः लोग रुचि नहीं लेते। इसे जटिल और नीरस समझा जाता है। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि डॉ. सोगानी ने अपभ्रंश भाषा के व्याकरण को सहज, सरल और रोचक बनाकर इस पुस्तक में प्रस्तुत किया है। इसमें सर्वनाम, संज्ञा, प्रत्यय, अव्यय, क्रिया, विभक्ति आदि से सम्बन्धित ८४ पाठ और उनके अभ्यास दिये गये हैं। अपभ्रंश भाषियों के लिए यह पुस्तक पठनीय और उपयोगी है।

२०. अपभ्रंश काव्य सौरभ—डॉ. कमलचन्द सोगानी, प्र. वही, पृ. २५०, मू. पु. सं. १२५.००, वि. सं. ७५.०० ।

अपभ्रंश साहित्य के अध्ययन, अध्यापन की दिशा में वैज्ञानिक ढंग से तैयार की गई पाठ्य पुस्तकों की बड़ी कमी है । प्रस्तुत पुस्तक इस क्षेत्र में एक अभाव की पूर्ति है । डॉ. सोगानी ने बड़े परिश्रम और निष्ठाभाव से अपभ्रंश कवि स्वयंभू के पउमचरिउ, पुष्पदंत के महापुराण, वीर के जंबू सामि चरिउ, नयनन्दि के सुदंसण चरिउ, कनकामर के करकंड चरिउ, रइधू के धण्ण कुमार चरिउ, हेमचन्द्र के दोहे, जोइन्दु के परमात्म प्रकाश, मुनि रामसिंह के पाहुड दोहा तथा देवसेन के सावय धम्मदोहा से उपयोगी प्रेरणादायी काव्यांश चयनित कर १७ पाठ मूल और हिन्दी अनुवाद सहित दिये हैं । अन्त में प्रत्येक पाठ से सम्बन्धित व्याकरणिक विश्लेषण एवं शब्दार्थ देने से तथा परिशिष्ट में कवि-परिचय और काव्य-प्रसंग देने से पुस्तक अध्ययन, अध्यापन की दृष्टि से विशेष उपयोगी और पूर्ण बन गई है । इस पद्धति पर अपभ्रंश गद्य संकलन भी प्रकाशित किया जाना चाहिए ।

२१. आपणा तीर्थंकरो—संकलन—तारा बहन रमणलाल शाह, प्र. श्री बम्बई जैन युवक संघ, ३८५, सरदार वल्लभभाई पटेल मार्ग, बम्बई-४, पृ. ११२ मू. ३०.०० ।

जैन धर्म में तीर्थंकरों का अपना विशिष्ट स्थान है । केवलज्ञान प्राप्त करने के बाद वे धर्मतीर्थ की स्थापना कर लोक कल्याणार्थ देशना देते हैं । वर्तमान के २४ तीर्थंकरों में अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर हैं । इस पुस्तक में वर्तमान के चौबीस तीर्थंकरों का नाम, भव-संख्या, तीर्थंकर नाम कर्म उपार्जन का भव, जन्म-कल्याणक-तिथि, जन्म-दीक्षा, केवलज्ञान, नक्षत्र, राशि, गण, वंश, गोत्र, योनि, कुमार अवस्था, राज्य अवस्था, माता-पिता की गति, दीक्षा, तप एवं केवलज्ञान कल्याणक सम्बन्धी विवरण मुख्य भक्त-राजा, साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाओं की संख्या, निर्वाण कल्याणक सम्बन्धी सूचनाएँ आदि चार्ट रूप में दी गई हैं । जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र की अतीत और अनागत चौबीसी के नाम आदि भी दिये गये हैं । २० विहरमानों के परिचय सम्बन्धी चार्ट भी दिये गये हैं । श्री अजितनाथ भगवान के समय में विचरने वाले तीर्थंकरों की उत्कृष्ट संख्या १७० मानी गई है । उनमें से ५ भरतक्षेत्र के, ५ ऐरावत क्षेत्र के और १६० महाविदेह क्षेत्र के हैं । उनका परिचयात्मक चार्ट भी दिया गया है । यह संकलन तीर्थंकरों के सम्बन्ध में विविध जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से बड़ा उपयोगी और खोजपूर्ण है ।

□ □ □

समाज-दर्शन

'जिनवाणी' का अहिंसा विशेषांक

प्रबुद्ध विचारकों एवं लेखकों से रचनाएँ आमंत्रित

जयपुर—मासिक पत्रिका "जिनवाणी" ने जनवरी, १९९३ में ५०वें वर्ष में प्रवेश कर लिया है। स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में "जिनवाणी" का **"अहिंसा विशेषांक"** आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की पुण्यतिथि पर अप्रेल, १९९३ में प्रकाशित किया जा रहा है। 'जैन संस्कृति और राजस्थान', 'कर्म सिद्धान्त', 'अपरिग्रह' जैसे विशेषांकों की तरह यह विशेषांक भी विशेष पठनीय और संगृहणीय होगा।

लगभग ५०० पृष्ठों के इस विशेषांक में विभिन्न धर्मों में अहिंसा का स्वरूप-विवेचन के साथ-साथ उद्योग, व्यवसाय, प्रशासन, राजनीति, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, पर्यावरण, शाकाहार, शिक्षा, चिकित्सा, स्वास्थ्य, आधुनिक विज्ञान, विश्व-शांति आदि क्षेत्रों में अहिंसा से सम्बन्धित अधिकृत विद्वानों के लेख प्रकाशित किये जायेंगे।

अहिंसा सम्बन्धी प्रेरक प्रसंग, लघुकथा, आदि भी प्रकाशित किये जायेंगे।

देश-विदेश में अहिंसा के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं का संक्षिप्त परिचय भी दिया जावेगा।

विशिष्ट विद्वानों एवं अहिंसा-क्षेत्र में कार्यरत जनसेवियों से इस विशेषांक के लिए गंभीर, चिन्तनपरक, मौलिक रचनाएँ तथा अहिंसा-क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं के संक्षिप्त परिचय फरवरी, १९९३ के अन्त तक निम्नलिखित पते पर आमंत्रित हैं।

डॉ० नरेन्द्र भानावत
सम्पादक, 'जिनवाणी'
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग
तिलक नगर, जयपुर-३०२ ००४

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर-३०२ ००३

'आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान' के लिए कृतियाँ आमन्त्रित

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की पुण्य स्मृति में सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा आयोजित 'आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान' के लिए कृतियाँ आमन्त्रित हैं। इसके नियम आदि इस प्रकार हैं—

१. यह सम्मान ग्यारह हजार रुपयों का होगा और प्रतिवर्ष सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की ओर से जैन धर्म सम्बन्धी दर्शन, इतिहास, कला, संस्कृति, साहित्य (काव्य, कथा, निबन्ध, नाटक, जीवनी आदि विधाएँ) विषयक किसी प्रकाशित अथवा अप्रकाशित ग्रंथ पर दिया जायेगा। रचनाओं का मौलिक होना अनिवार्य है। मौलिकता का प्रमाण-पत्र लेखक/प्रकाशक को देना होगा। सम्पादित (संकलित) ग्रंथ स्वीकार्य एवं मान्य नहीं होंगे। सम्मान राशि के साथ प्रशस्ति-पत्र एवं स्मृति चिह्न भी प्रदान किया जायेगा।

२. मण्डल यह राशि सम्मानार्थ उस विद्वान् को भी भेंट स्वरूप दे सकता है जिसने जैन धर्म सम्बन्धी दर्शन, इतिहास, कला, संस्कृति. साहित्य आदि क्षेत्र में विशिष्ट योगदान दिया है।

३. इस सम्मान के लिए देश-विदेश के विद्वान् समान रूप से अधिकारी होंगे।

४. प्रकाशित अथवा अप्रकाशित ग्रंथ हिन्दी भाषा में होना चाहिए।

५. सम्मान-वर्ष के पूर्व ५ वर्ष की अवधि में प्रकाशित ग्रंथ ही विचारार्थ स्वीकार्य होंगे।

६. ग्रंथ की (प्रकाशित अथवा अप्रकाशित) चार प्रतियाँ मण्डल को भेजना आवश्यक है।

७. ग्रंथ फरवरी, १९९३ के अन्त तक मण्डल कार्यालय में पहुँच जाने चाहिये। इस तिथि के बाद प्राप्त ग्रंथों पर विचार नहीं किया जायेगा।

८. मण्डल की सम्मान चयन समिति का निर्णय सर्वमान्य होगा।

९. ऐसे ग्रंथों पर विचार नहीं किया जायेगा जो खण्डों में प्रकाशित हो रहे हों और अभी तक सम्पूर्ण न हों लेकिन आगे जाकर जो पूर्ण किन्तु खण्डों में प्रकाशित ग्रंथ पर विचार किया जा सकता है।

उक्त सम्मान के लिए विचारार्थ अपकी कृतियां कृपया निम्न पते पर भेजें :—

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर-३०२ ००३ (राज०)

महावीर पुरस्कार वर्ष—१९९२

प्रबन्धकारिणी कमेटी, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी द्वारा संचालित जैनविद्या संस्थान श्रीमहावीरजी के वर्ष–१९९२ के "महावीर पुरस्कार" के लिए जैनधर्म, दर्शन, इतिसास, साहित्य, संस्कृति आदि से संबंधित किसी भी विषय की पुस्तक/शोधप्रबन्ध की चार प्रतियाँ दिनांक ३० अप्रेल, १९९३ तक आमंत्रित हैं। इस पुरस्कार में ११,००१/– रुपये एवं प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जायगा। ३१ दिसम्बर, १९८८ के पश्चात् प्रकाशित पुस्तक ही इसमें सम्मिलित की जा सकती है। अप्रकाशित कृतियाँ भी प्रस्तुत की जा सकती हैं। अप्रकाशित कृतियों की तीन प्रतियां स्पष्ट टंकण/फोटोस्टेट की हुई तथा जिल्द बंधी होनी चाहिए।

नियमावली तथा आवेदन का प्रारूप प्राप्त करने के लिए संस्थान कार्यालय से पत्र व्यवकार करें।—डॉ० कमलचत्द सोगाणी, संयोजक, जैनविद्या संस्थान, नसियां भट्टारक जी, जयपुर-३०२ ००४।

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पुरस्कार

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर द्वारा जैन साहित्य के सृजन अध्ययन/अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से रु० २५,००० के वार्षिक पुरस्कार की स्थापना की गई है। इस पुरस्कार के अन्तर्गत प्रतिवर्ष जैनधर्म/दर्शन की किसी भी विद्या पर निश्चित समयावधि में लिखी गई श्रेष्ठ मौलिक प्रकाशित/कृति के लिए लेखक को २५,०००/- रु० नगद तथा प्रशस्ति पत्र प्रदान कर सम्मानित किया जावेगा। यह पुरस्कार १९९३ से प्रारम्भ किया जा रहा है। १९९३ का यह पुरस्कार १९८७-९२ की अवधि में पूजा पद्धति/प्रतिष्ठा विधान/ज्योतिष पर लिखी श्रेष्ठ मौलिक एकल कृति पर प्रदान किया जायेगा। पुरस्कार का निर्णय एक त्रिसदस्यीय निर्णायक मंडल द्वारा किया जायेगा। पुरस्कार हेतु प्रस्ताव कोई भी विद्वान् प्रेषित कर सकता है। प्रस्तावक को विद्वान् का संक्षिप्त परिचय, पुरस्कार हेतु प्रस्तावित कृति का संक्षिप्त परिचय एवं पुरस्कार हेतु प्रस्तावित कृति की २ प्रतियाँ प्रेषित करनी होंगी। प्रस्ताव ३१-३-१९९३ तक निम्न पते पर प्राप्त होना आवश्यक है।—डॉ० अनुपम जैन, शोधाधिकारी, कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, 483, महात्मा गांधी मार्ग, तुकोगंज, इन्दौर-४५२ ००१।

रामपुरिया एवं सांड स्मृति पुरस्कार के लिए कृतियां ग्रामंत्रित

बीकानेर—श्री ग्र० भा० साधुमार्गी जैन संघ द्वारा स्व० श्री प्रदीपकुमार रामपुरिया एवं स्व० श्री चम्पालाल सांड की स्मृति में प्रदत्त १९९२ के साहित्य पुरस्कारों के लिए जैन धर्म एवं दर्शन, जैन इतिहास, कला, संस्कृति एवं साहित्य की विविध विधाग्रों में लिखित कृतियाँ ३१ मार्च, १९९३ तक ४ पंक्तियों में ग्रामंत्रित हैं। दोनों पुरस्कारों के लिए कृतियाँ ग्रलग-ग्रलग भेजी जानी चाहिए। कृतियां हिन्दी में हों ग्रौर १ जनवरी, १९८७ से पूर्व की प्रकाशित न हों। ये पुरस्कार क्रमश: ग्यारह हजार व पांच हजार एक सौ रुपये के हैं। ग्रंथ निम्न पते पर भेजें—मंत्री, श्री ग्र० भा० साधुमार्गी जैन संघ, समता भवन, रामपुरिया मार्ग, बीकानेर (राज०)।

हार्दिक ग्रभिनन्दन एवं बधाई

जोधपुर—ग्र० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के भूतपूर्व ग्रध्यक्ष तथा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के ग्रध्यक्ष डॉ० सम्पतसिंह जी भांडावत को राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर में राजकीय ग्रधिवक्ता एवं ग्रतिरिक्त महाधिवक्ता नियुक्त किया गया है। डॉ० भांडावत १९७५ से १९८४ तक राजकीय उच्च न्यायालय, जोधपुर में उप राजकीय ग्रधिवक्ता एवं १९८४ से ग्रतिरिक्त राजकीय ग्रधिवक्ता के रूप में कार्यरत थे।

जयपुर—कृषि उत्पादन विभाग में प्रमुख सचिव श्री मीठालाल जी मेहता को दिल्ली में गृह मंत्रालय में ग्रतिरिक्त सचिव के पद पर प्रतिनियुक्त किया गया है। पूर्व में भी श्री मेहता १९७२ से १९७७ तक गृह मंत्रालय में उपसचिव रह चुके हैं। श्री मेहता ग्रपनी रचनात्मक दृष्टि एवं कार्य योजना के लिए विश्रुत हैं।

उदयपुर—के० के० बिरला फाउण्डेशन दिल्ली की ग्रोर से इस वर्ष का ५०,०००/- रु० का 'बिहारी पुरस्कार' राजस्थान के लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार एवं कवि श्री नन्द चतुर्वेदी को उनकी काव्य-कृति 'यह समय मामूली नहीं है' पर घोषित किया गया है।

हांसी—श्री रतनलाल जैन को मेरठ विश्वविद्यालय ने 'जैन कर्म सिद्धान्त और मनोविज्ञान' विषय पर पी-एच. डी. की उपाधि प्रदान की है। श्री जैन ने ग्रपना शोध कार्य सहारनपुर के संस्कृत प्राध्यापक डॉ० कैलाशचन्द जैन के निर्देशन में सम्पन्न किया है।

लाडनूं—'जैन भारती' की सम्पादक मुमुक्षु शान्ता जैन को राजस्थान विश्वविद्यालय ने 'लेश्या एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन' विषय पर पी-एच. डी. की उपाधि प्रदान की है। यह शोध कार्य जैन धर्म दर्शन के प्रमुख विद्वान् डॉ० नथमल टाटिया के निर्देशन में सम्पन्न हुआ है।

उदयपुर—जय तुलसी फाउण्डेशन की ओर से १९९२ का 'अणुव्रत पुरस्कार' राजसमन्द निवासी श्री देवेन्द्रकुमार जी कर्णावट को चारित्रिक एवं नैतिक मूल्यों के विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं के लिए प्रदान किया गया है। श्री गांधी कर्मठ कार्यकर्ता, पत्रकार, लेखक, विचारक, शिक्षाविद् और मूक समाजसेवी हैं। पुरस्कार में एक लाख रुपये व प्रशस्ति पत्र भेंट किया जायेगा।

उक्त सभी महानुभावों का हार्दिक अभिनन्दन एवं बधाई।

आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म-जयन्ती ७ जनवरी, ९३ को तप-त्यागपूर्वक सम्पन्न

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म० सा०, ओजस्वी वक्ता पं० रत्न श्री शुभेन्द्र मुनिजी म० सा० आदि ठाणा ५ के पावन सान्निध्य में **गोटन** में स्व० आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० का ८३वां जन्म दिवस त्याग-तप के साथ मनाया गया। गोटन में जोधपुर, बालोतरा, कोटा, भोपालगढ़, नागौर, मेड़ता आदि कई स्थानों के श्री संघ एवं समीपवर्ती ग्राम-नगरों के सैंकड़ों भाई-बहिनों ने श्रद्धा-भक्तिपूर्वक स्व० आचार्य भगवन्त के जन्म दिवस पर त्याग-तप गुण कीर्तन-गुण स्मरण कर स्व० आचार्य भगवन्त के जन्म दिवस को स्वाध्याय दिवस के रूप में मनाया। इस अवसर पर मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म० सा० की पुण्य तिथि के प्रसंग के कारण उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर भी प्रकाश डाला गया। कोटा श्री संघ ने आचार्य प्रवर के आगामी चातुर्मास की भावभरी विनती प्रस्तुत की। नागौर श्री संघ ने नागौर पधारने की पुरजोर प्रार्थना की। आचार्य प्रवर ने गोटन से नागौर की ओर विहार किया और १४-१-९३ को प्रातः नागौर पधारे। आचार्य प्रवर के नागौर विराजने से धर्म ध्यान का अपूर्व उत्साह रहा हैं। नागौर से अजमेर की ओर शीघ्र विहार संभावित है।

परम श्रद्धेय उपाध्याय पं० रत्न श्री मानचन्द्र जी म० सा० आदि ठाणा ३ भीलवाड़ा का ऐतिहासिक चातुर्मास सानन्द सम्पन्न कर मेवाड़ अंचल के पुर, लाखोला, गंगापुर, [illegible] आदि ग्रामों एवं मध्यान्तर वाले

ग्रामों में धर्म प्रभावना करते २८ दिसम्बर को आसीन्द पधारे। **आसीन्द** में पौष शुक्ला दशमी के दिन रत्नवंश के त्यागी एवं महान् संत श्री लक्ष्मीचन्द जी म० सा० की पुण्य तिथि त्याग-तपपूर्वक मनाई गई। पौष शुक्ला चतुर्दशी के दिन स्व० आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म० सा० का जन्म दिवस एवं स्व० मरुधर केसरी मिश्रीमल जी म० सा की पुण्य तिथि त्याग-तप के साथ उमंग उल्लासपूर्वक मनाई गई। भीलवाड़ा, ब्यावर, विजयनगर आदि क्षेत्रों से श्री संघ एवं अनेक ग्राम-नगरों से आए भाई-बहिनों को उपाध्याय प्रवर आदि संतों के मुखारबिन्द से दोनों महापुरुषों के निर्मल-निष्पृह संयम साधना के संस्मरण सुनने का सौभाग्य मिला। उपाध्याय प्रवर का गुलाबपुरा की ओर विहार हुआ है। अग्र विहार अजमेर की ओर संभावित है।

रोचक व्याख्याता श्री ज्ञान मुनिजी म. सा., तत्त्व चिन्तक श्री प्रमोद मुनिजी म. सा. आदि ठाणा ४ मेड़ता से विहार कर दिनांक ६.१.९३ को **रिया बड़ी** पधारे। दिनांक ७.१.९३ को स्व. आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्ती-मलजी म. सा. की एवं स्व. मरुधर केसरी श्री मिश्रीमलजी म. सा. की पुण्य तिथि श्रद्धा-भक्ति पूर्वक त्याग-तप के साथ मनाई गई। वयोवृद्ध श्री दया मुनिजी म. सा. के स्वास्थ्य में सामान्यतः समाधि है। शीत लहर से वृद्ध सन्तों के घुटनों में दर्द है। आशा है, शीत लहर समाप्ति के साथ मुनि मण्डल का अग्र विहार भैरून्दा की ओर हो।

साध्वी प्रमुखा प्रवर्तिनी महासती श्री बदनकंवरजी म. सा., उप प्रवर्तिनी महासती श्री लाडकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ६ घोड़ों के चौक स्थानक, **जोधपुर** में सुख-शान्ति पूर्वक विराजमान हैं। साध्वी प्रमुखा प्रवर्तिनी महासतीजी म. सा. के स्वास्थ्य में सामान्यतः जमी स्थिति है। स्व. आचार्य भगवन्त के जन्म दिवस पर सामूहिक दया का आयोजन एवं दया-संवर-पौषध की अच्छी प्रभावना हुई।

सरल हृदया महासती श्री सायरकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ३ के सान्निध्य में **आगोलाई में**, शासन प्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म. सा. आदि ठाणा ८ के सान्निध्य में **सवाई माधोपुर** में, शान्त स्वभावी महासती श्री सन्तोषकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ५ के सान्निध्य में **भैरून्दा** में, शांत स्वभावी महासती श्री शांतिकंवरज म. सा. आदि ठाणा ४ के सान्निध्य में **धनोप** में, व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ३ के सान्निध्य में **भरतपुर** में तथा विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ५ के सान्निध्य में **पाली** में स्व. आचार्य भगवन्त के जन्म दिवस पर त्याग-तप की अच्छी प्रभावना हुई।

स्व. आचार्य भगवन्त का जन्म दिवस त्याग-तप के साथ स्वाध्याय दिवस के रूप में देश भर में मनाया गया। जयपुर, अजमेर, जलगांव, मद्रास, बम्बई, बैंगलोर, दिल्ली, कलकत्ता, कानपुर, इन्दौर, नदबई जैसे नगरों—महानगरों में त्याग-तप की अच्छी प्रभावना हुई। श्रावक-श्राविकाओं ने सामायिक—स्वाध्याय पर कई स्थानों पर प्रश्नमंच कार्यक्रम रखे। युवक संघ की ओर से स्व. आचार्य भगवंत के जन्म दिवस पर त्याग-तप और सामायिक-स्वाध्याय के प्रति विशेष उत्साह रहा।

मद्रास—पल्लावरम् में विदुषी महासती श्री अजितकुमारीजी ठाणा ५ के सान्निध्य में तप त्याग पूर्वक जयन्ती मनाई गई। श्री जवाहरलालजी बाघमार, श्री कांतिलालजी गाँधी, श्री सोहनलालजी हुण्डीवाल, श्री पारसमलजी कोठारी, श्री सोहनलालजी धोका, श्री गौतमचन्दजी सुराना, श्री महावीरचन्दजी ओस्तवाल, श्रीमती मधु सुराना आदि ने आचार्य श्री की जीवन साधना पर प्रकाश डाला। जयन्ती के उपलक्ष्य में जरूरतमंदों को लगभग ४०० चादर व स्कूल के विद्यार्थियों को पाठ्य सामग्री तथा मिठाई के पैकिट वितरित किये गये।

बम्बई—७ व ८ जनवरी को श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ बम्बई के तत्त्वावधान में जयन्ती समारोह आयोजित किया गया। ७ जनवरी को पंचरत्न के टेरेस हॉल में १२५ श्रावकों ने सामूहिक रूप से सामायिक—स्वाध्याय कर आचार्य श्री के प्रति अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये। श्री गौतमचन्दजी मेहता, श्री कपूरचन्दजी जैन, श्री नवरत्नमलजी कोठारी, श्री नरेन्द्रजी हीरावत, श्री बाबूलालजी जैन 'उज्ज्वल', श्री राजाबाबू बोथरा, श्री सोनूजी डागा, श्री नीरजजी जैन, श्री प्रेमचन्दजी कोठारी आदि ने आचार्य श्री के संयमी जीवन पर प्रकाश डाला। क्षेत्रिय प्रधान श्री पारसचन्दजी हीरावत ने आभार व्यक्त किया।

८ जनवरी को बालकेश्वर में आयोजित समारोह में आचार्य श्री के प्रति भावांजलि करने के साथ-साव रिजर्व बैंक के डिप्टी गवर्नर श्री डी. आर. मेहता सा. की सेवाओं के उपलक्ष में उनका सम्मान किया गया। अ. भा. श्री जैनरत्न युवा संघ के शिष्ट मण्डल के प्रतिनिधियों—सर्वश्री अमिताभ हीरावत, श्री आनन्द चौपड़ा, श्री ओमप्रकाश बांठिया, श्री ज्ञानेन्द्र बाफना आदि को भी शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर बम्बई के रत्नवंशीय जैन श्रावक-श्राविकाओं का प्रथम बार सामूहिक स्नेह मिलन समारोह भी आयोजित किया गया। इसमें बड़ी संख्या में श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया। संघ अध्यक्ष श्री मोफतराजजी मुणोत ने जैनरत्न युवा संघ

की बम्बई शाखा की स्थापना की घोषणा की तथा श्री नरेन्द्र हीरावत को अध्यक्ष व श्री गौतम मेहता को मंत्री मनोनीत किया । बम्बई के सभी रत्नवंशीय सदस्यों की एक डायरेक्ट्री का प्रकाशन करने का निश्चय किया गया । इस विशेष समारोह की अध्यक्षता जलगाँव के प्रमुख समाज-सेवी श्री ईश्वरबाबू ललवाणी ने की ।

जयपुर—लाल भवन में आयोजित समारोह में संघ मन्त्री श्री उमराव-मलजी चौरड़िया, पूर्व मंत्री श्री गुमानमलजी चौरड़िया, श्री मोहनलालजी मूथा, डॉ. नरेन्द्र भानावत, मण्डल के संयुक्त मंत्री श्री केसरीचन्दजी नवलखा, जवाहर नगर जैन संघ के मंत्री डॉ. सी. आर. कोठारी, स्वाध्यायी श्री हीराचन्दजी हीरावत, श्री विनोद सेठ आदि ने आचार्य श्री के जीवन, साधना और साहित्य पर अपने विचार व्यक्त किये । समारोह का संचालन श्री उत्तमचन्दजी डागा ने किया । इस दिन सामूहिक सामायिक-स्वाध्याय के साथ-साथ दया, व्रत, उपवास आदि के प्रत्याख्यान ग्रहण किये गये ।

विशेष सूचना

'जिनवाणी' का लगभग ५०० पृष्ठों का **'अहिंसा विशेषांक'** अप्रेल, १९९३ में प्रकाशित होगा, इस कारण 'जिनवाणी' का मार्च एवं मई का अंक बन्द रहेगा । कृपया पाठक नोट कर लेवें ।

—व्यवस्थापक

संक्षिप्त - समाचार

पुरुषवाकम् मद्रास—उपाचार्य डॉ. शिव मुनि के सान्निध्य में २४ दिसम्बर, ९२ से ३ जनवरी, ९३ तक ध्यान साधना शिविर आयोजित किया गया जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के १३० श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया । युवाचार्य श्री ने ध्यान के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष पर प्रवचन दिये तथा मौन एवं ध्यान-योग का विशेष अभ्यास कराया । युवाचार्य श्री ने मद्रास में आयोजित विश्व शाकाहार सम्मेलन को भी सम्बोधित किया ।

जलगाँव—महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ एवं व. स्था. जैन श्रावक संघ के तत्वावधान में २५ दिसम्बर से २९ दिसम्बर, १९९२ तक धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया जिसमें ११५ बालक-बालिकाओं ने भाग लिया । शिविर का संचालन श्री नरेन्द्र कामदार ने किया । श्री दलीचन्दजी चौरड़िया,

श्री रतनलालजी बाफना, श्री हस्तीमलजी बोरा आदि ने शिविरार्थियों को सम्बोधित किया। शिविर का उद्‌घाटन पं. श्री लक्ष्मनराव मांडवगणे ने किया। श्री बंशीलालजी बोथरा एवं श्री झुमरलालजी कांकरिया ने बच्चों को पुरस्कार प्रदान किये।

दिल्ली—ऋषभदेव प्रतिष्ठान द्वारा १९ से २१ जनवरी को आयोजित स्थगित सांस्कृतिक सद्‌भावना संगोष्ठी एवं ऋषभ जयन्ती अब १४ मार्च से १६ मार्च को आयोजित की गई है।

बोदासर—आचार्य श्री तुलसी के सान्निध्य में ९ से ११ जनवरी तक राष्ट्रीय अणुव्रत शिक्षक संसद् का अधिवेशन सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ जिसमें ११ राज्यों के ५०० शिक्षकों ने भाग लिया। अधिवेशन का उद्‌घाटन पूर्व मंत्री श्री चन्दनमलजी बैद ने किया।

भोपालगढ़—श्री जैन चक्षु चिकित्सा सेवा समिति की ओर से सप्त दिवसीय चक्षु सेवा शिविर श्री जैनरत्न छात्रालय में आयोजित किया गया जिसमें डॉ. एन. सी. देसाई के नेतृत्व में ८७ पुरुषों एवं १०३ महिलाओं के सफल ऑपरेशन किये गये। लगभग ७०० नेत्र-रोगियों का बाह्य उपचार किया गया एवं औषधियाँ बांटी गई।

बोदवड़—अ. महाराष्ट्रीय जैन संगठना और अ. भा. जैन कान्फ्रेन्स जिला जलगाँव के संयुक्त तत्वावधान में नेत्र चिकित्सा शिविर आयोजित किया गया जिसमें ३८ महिलाओं और ३० पुरुषों के मोतियाबिन्द के सफल ऑपरेशन किये गये। महाराष्ट्रीय जैन संगठना शाखा बोदवड़ के चुनाव में श्री कान्तिलाल जैन अध्यक्ष, डॉ. रमेश कांकरिया उपाध्यक्ष, श्री प्रकाश कोठारी सचिव एवं श्री नन्दलाल छाजेड़ सह-सचिव चुने गये।

महिदपुर—स्थानीय नव-युवक मण्डल की ओर से तृतीय नेत्र चिकित्सा शिविर आयोजित किया गया जिसमें ५७६ रोगियों का परीक्षण कर उपचार किया गया, ६४ ऑपरेशन किये गये।

इन्दौर—अ. भा. जैन कान्फ्रेन्स के उपाध्यक्ष एवं भारत जैन महा-मण्डल के प्रांतीय अध्यक्ष श्री नेमीनाथजी जैन ने प्रधान मंत्री श्री नरसिंह राव को पत्र लिखकर अनुरोध किया है कि एक रुपये के नये सिक्कों पर फल, सब्जी के साथ अण्डे, मांस, मछली के चित्र अंकित नहीं किये जायें। देश के सम्पूर्ण अहिंसक समाज की भावनाओं पर यह बहुत बड़ा कुठाराघात होगा। उन्होंने सभी व्यक्तियों, संगठनों एवं संघों से अपील की है कि वे इस सम्बन्ध में भारत के प्रधान मंत्री, कृषि मंत्री एवं वित्त मंत्री को विरोध पत्र लिखें।

जयपुर—'अपभ्रंश साहित्य अकादमी' द्वारा पत्राचार अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम १ मार्च १९९३ से आरम्भ किया जा रहा है। इस पाठ्यक्रम में भारत के विभिन्न राज्यों में स्थित विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के हिन्दी विभागों, भाषा-विभागों एवं प्रान्तीय भाषा विभागों के अध्यापकों तथा संस्थानों में कार्यरत विद्वान् सम्मिलित हो सकेंगे। किन्तु राजस्थान राज्य के जयपुर नगर में स्थित विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विद्यालयों के किसी भी विषय के अध्यापक तथा संस्थानों में कार्यरत विद्वान् एवं श्री महावीरजी में स्थित महाविद्यालय एवं विद्यालयों के अध्यापक तथा संस्थानों में कार्यरत विद्वान् (कितनी भी संख्या में) इस पत्राचार पाठ्यक्रम में सम्मिलित हो सकेंगे। विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें—डॉ. कमलचन्द सोगाणी, संयोजक, अपभ्रंश साहित्य अकादमी, नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-३०२००४।

टोंक (राज.)—जिला प्रशासन व राज्यपाल महोदय से सम्पर्क कर यहाँ लम्बे समय से पशुओं पर होने वाले अवैध वध पर रोक लगवाई गई है तथा घोषित अहिंसक अगताओं की सख्ती से पालना के निर्देश भी जारी कराये गये हैं। जनवरी ९३ के प्रथम सप्ताह में एक मांस से भरे ट्रक को पकड़वा कर जप्त करा दोषियों पर मुकदमा चलाया गया व मांस की अनेक दुकानों के चालान भी कराये गये हैं। अवैध पशु-वध पर स्थायी रोक लगे, इसके प्रयास जारी हैं।—जशकरण डागा मंत्री, जीव दया मण्डल ट्रस्ट रजि.।

जोधपुर—पशु क्रूरता निवारण समिति के तत्वावधान में २४ से २८ जनवरी १९९३ तक जीव-जन्तु कल्याण पखवाड़ा बड़े ही विस्तृत कार्यक्रम के साथ मनाया गया जिसका समापन समारोह राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर के न्यायाधीश श्री राजेन्द्र सक्सेना के मुख्य आतिथ्य तथा आयकर विभाग के उपायुक्त श्री गिरीश दवे की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। इस समारोह में पखवाड़ा के दौरान आयोजित भाषण, निबन्ध, पोस्टर, सामान्य ज्ञान, चित्रकला व बछड़ा-बछड़ी प्रतियोगिता के विजेता, उप-विजेता छात्र-छात्राओं व पशुपालकों को पुरस्कृत किया गया। इस पखवाड़े में १० प्रतियोगिताओं में ६७० विद्यार्थियों ने भाग लिया तथा ३५ सफल प्रतियोगियों को समिति की ओर से पुरस्कार दिये गये। समिति उपाध्यक्ष व पखवाड़ा संयोजक डॉ. पी. एम. कुम्भट ने बताया कि बच्चों में करुणा, दया भाव व सहिष्णुता के संस्कारों का बीजारोपण करने के लिए आयोजित प्रतियोगिताओं के अलावा जन-शिक्षण व जन-जागरण हेतु बैनर्स, पोस्टर्स, सिनेमा में स्लाइड्स व फिल्म 'ब्यूटी विदाउट क्रूएल्टी' का प्रदर्शन, रेडियो वार्त्ता, समाचार-पत्रों में लेख आदि के

कार्यक्रम किए गए। पशुपालन विभाग के सहयोग से बछड़ा-बछड़ी प्रतियोगिता तथा सात पशु चिकित्सा शिविरों का आयोजन किया गया।

बुढ़ाना (मुजफ्फरनगर-उत्तर प्रदेश)—पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी म. की प्रेरणा से स्व. डॉ. नेमीचन्दजी शास्त्री द्वारा ४ भागों में लिखित 'तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा' ग्रन्थ का पुनः प्रकाशन हो गया है। पोस्टेज सहित ३२५/- भेजकर ये ग्रन्थ मंगाये जा सकते हैं। इसी तरह भट्टारक प्रभाचन्द कृत 'आराधना कथा प्रबन्ध' का हिन्दी रूपांतरण मूल के साथ डॉ. रमेशचन्द जैन द्वारा किया हुआ छप गया है। यह ग्रन्थ ३० रु. में उपलब्ध है। इच्छुकजन सम्पर्क करें—रतनलाल जैन, महामंत्री, आचार्य शांतिसागर (छाणी) स्मृति ग्रन्थमाला, बुढ़ाना (मुजफ्फरनगर) उत्तर प्रदेश।

आम्बुर—श्री सुमन मुनिजी एवं सुमन्तभद्रजी म. के सान्निध्य में पार्श्वनाथ जयन्ती तप-त्याग पूर्वक मनाई गई।

भोपाल—लोंकाशाह जयन्ती पर श्री जैन भवन छात्रावास मालवीय नगर टी. टी. नगर में श्री वीर लोंकाशाह जैन पाठशाला का उद्घाटन श्री मदनलालजी सुराना द्वारा सम्पन्न हुआ। यह पाठशाला १९५६ से जैन स्थानक भवन मारवाड़ी रोड पर पर नियमित रूप से चल रही है।

इलकल नगर—आचार्य श्री नानेश की आज्ञानुवर्ती विदुषी साध्वी श्री नानुकंवरजी म. ठाणा २२ के पधारने से यहाँ विशेष धर्म-जागृति हुई। श्री जैन कल्याण गौशाला स्थापित की गई जिसके श्री मांगीलालजी मिश्रीमलजी बोरा अध्यक्ष, श्री उदयराजजी गिरधारीलालजी कटारिया उपाध्यक्ष, श्री सज्जनराजजी जसवंतराजजी मूथा मंत्री, श्री उदयराजजी गिरधारीलालजी भण्डारी कोषाध्यक्ष व श्री भीकमचन्दजी फतेहचन्दजी कटारिया प्रधान कार्यदर्शी चुने गये।

मद्रास—राज वैद्य पं. भागीरथजी व्यास द्वारा बचपन से पाली पोषित सौ. सुमति का विवाह पिलिवाकम् निवासी चि. कैलाश के संग श्वे. स्था. जैन समाज द्वारा जैन पद्धति से १५ जनवरी को बड़ी सादगी के साथ सम्पन्न हुआ। सभी ओसवाल भाई-बहिनों ने इसमें योग दान दिया।

मद्रास—श्री दक्षिण भारत जैन श्वे. संघ के चुनाव में श्री भंवरलालजी गोष्ठी अध्यक्ष, श्री कनकमलजी चौरड़िया उपाध्यक्ष, श्री रिखबचन्दजी लोढ़ा मंत्री, श्री अखेचन्दजी भिड़कचा सहमंत्री तथा श्री अमरचन्दजी छाजेड़ कोषाध्यक्ष चुने गये। संघ द्वारा कोडम्बकम् वड़पल्ली में २५ दिसम्बर, १९९२

से १ जनवरी, १९९३ तक तथा २६ दिसम्बर, १९९२ से २ जनवरी, १९९३ तक दो शिविर आयोजित किये गये जिनमें क्रमशः २४० एवं १५० शिविरार्थियों ने भाग लिया।

जयपुर—इण्डियन कौंसिल ऑफ फिलासोफिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट एवं राजस्थान विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के तत्वावधान में प्रो. दयाकृष्ण के निर्देशन में ५ व ६ जनवरी को 'शाकाहार के दार्शनिक आयाम' विषय पर एक सेमीनार आयोजित किया गया जिसमें लन्दन के प्रमुख दार्शनिक रिचर्ड सोबरावजी ने तीसरी शती के ग्रीक दार्शनिक पोरफरी की शाकाहार सम्बन्धी पुस्तक पर विशेष व्याख्यान दिया। इस सेमीनार में प्रो. वी. आर. मेहता, डॉ. एन. के. सिंघी, डॉ. मुकुन्द लाट, डॉ. के. एल. शर्मा, डॉ. आर. एस. भटनागर, डॉ. सरला कल्ला, डॉ. योगेश गुप्ता, डॉ. लोकनाथन, राजकुमार जैन व राजवीरसिंह शेखावत आदि ने अपने विचार प्रकट किये।

कोयम्बटूर—जैन संघ के तत्वावधान में २७ दिसम्बर, १९९२ से ३ जनवरी, १९९३ तक ८वां धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित किया गया जिसमें १७५ बच्चों ने भाग लिया। शिविर का संचालन श्री घीसूलालजी हींगड़ एवं श्री महेन्द्रकुमारजी जैन ने किया।

जोधपुर—महावीर इंटरनेशनल जोधपुर के नव-निर्वाचित अध्यक्ष वीर चंचलमल, चोरड़िया ने अपनी कार्यकारिणी में वीर माणकचन्दजी संचेती (उपाध्यक्ष), वीर डॉ. रामगोपालजी (महा सचिव), वीर कांतिलालजी जैन (सचिव), वीर प्रसन्नसिंहजी सिंघी (कोषाध्यक्ष) एवं वीरांगना सुशीलाजी बोहरा को महिला प्रतिनिधि के रूप में मनोनीत किया, इसके अतिरिक्त साधारण सभा में से वीर भगवानसिंहजी परिहार, वीर अमृतलालजी गाँधी, वीर एस. एम. मेहता, वीर पारसजी चौपड़ा, वीर गणपतराजजी अबाणी, वीर राजेन्द्र एस. मेहता एवं वीर गोविन्दमलजी मेहता का कार्यकारिणी के सदस्यों के रूप में चयन किया गया। निवर्तमान अध्यक्ष वीर डॉ. प्रकाशमल कुम्भट एवं महासचिव वीर एस. एस. मेहता भी कार्यकारिणी के सदस्य होंगे।

शोक-श्रद्धांजलि

बीकानेर—समता विभूति आचार्य श्री नानेश के सुशिष्य घोर तपस्वी, परम सेवामूर्ति श्री अमरचन्दजी म० का २३ दिसम्बर को पूज्य श्री नानेश के चरणों में समाधिमरण हो गया। मुनि श्री का ६२ वर्ष

पूर्व श्री वृद्धिचन्दजी संजीत पामेचा के यहाँ श्रीमती टांकुबाई की कुक्षि से जन्म हुआ। ३२ वर्ष की आयु में आपने सपत्नीक भागवती दीक्षा अंगीकृत की। तप, त्याग और सेवा के प्रति आपका सम्पूर्ण जीवन समर्पित रहा। एक उपवास से लेकर ६३ उपवास तक की लड़ी तथा ५५ मासखमण एवं अनेक तपस्याएँ कर आपने अनूठा कीर्तिमान स्थापित किया। आपके परिवार के १४ सदस्य अब तक दीक्षा अंगीकृत कर चुके हैं। आपकी एकमात्र संसार पक्षीय सुपुत्री विदुषी साध्वी चन्दनबाला आचार्य श्री नानेश के शासन में दीक्षित हैं। आपके निधन से एक उत्कृष्ट तपस्वी आध्यात्मिक सन्त की अपूरणीय क्षति हुई है।

अजमेर—श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के कर्मठ कार्यकर्ता व अनन्य गुरुभक्त श्री रतनलालजी रांका की धर्मपत्नी श्रीमती पानकंवर का ६५ वर्ष की आयु में २ दिसम्बर को निधन हो गया। आप धर्म-परायण, सरल स्वभावी, सन्त-सतियों की सेवा में अग्रणी रहने वाली सुश्राविका थीं।

अजमेर—यहाँ के प्रमुख श्रावक श्री प्रकाशचन्द्रजी सिंघवी एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती पुष्पादेवी का उदयपुर में एक सड़क-दुर्घटना में २५ दिसम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आप दोनों ही धर्मपरायण, संघ सेवी एवं आचार्य श्री के प्रति श्रद्धावान थे। श्री सिंघवी सा. यूको. बैंक मेड़ता में शाखा प्रबन्धक थे। आपका जीवन सरलता, सादगी और सहिष्णुता से ओतप्रोत था।

जोधपुर—यहां की धर्मनिष्ठ श्राविका श्रीमती कानकंवर मेहता का २१ दिसम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप स्वर्गीय श्री परवतचन्दजी मेहता की धर्मपत्नी एवं सुश्रावक श्री आनन्दजी मेहता की मातुश्री थीं। आप व्यवहार से सरल, प्रकृति से शान्त और मन से निर्मल स्वभावी थीं।

चेटपेट—धर्मप्रेमी श्रावक श्री सूरजमलजी भण्डारी की पुत्री का एक दुर्घटना में आकस्मिक दुःखद निधन हो गया। आप सरल स्वाभावी और सादगीप्रिय थीं।

बिलाड़ा—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री बाबूलालजी सुराना की धर्मपत्नी श्रीमती शांतिदेवी का ४६ वर्ष की आयु में २४ नवम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आप धर्मपरायण, सेवाभावी व व्रत निष्ठ महिला थीं।

जयपुर—धर्मनिष्ठ श्रावक श्री देवबन्धुचन्दजी भण्डारी की धर्मपत्नी श्रीमती किरणकंवर का २ जनवरी, १९९३ को असामयिक निधन हो गया। आप सरल-स्वभावी, धर्मपरायण व सेवाभावी महिला थीं।

सांगानेर-भीलवाड़ा—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री मोतीलालजी छापरवाल का ३१ अक्टूबर को ८३ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप आशु कवि थे। आपके राजस्थानी भाषा में लिखे हुए दोहे बड़े मार्मिक, प्रभावी और गहरी अनुभूति लिये हुए हैं।

बैंगलोर—चंगम निवासी श्री सुगनराजजी ललवानी की धर्मपत्नी श्रीमती फूटरीबाई का ३० दिसम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप सरलमना, आदर्श श्राविका थीं।

जयपुर—भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी, जयपुर संभाग के आयुक्त श्री पी. एन. भण्डारी के आत्मज श्री अविनाश भण्डारी का १८ वर्ष की अल्पायु में १९ जनवरी, १९९३ को असामयिक दुःखद निधन हो गया। श्री अविनाश इंजीनियरिंग कॉलेज जोधपुर के मेधावी छात्र थे।

जयपुर—यहाँ के प्रमुख शिक्षाविद् एवं समाजसेवी श्री देवीशंकरजी तिवारी का २६ जनवरी को ९१ वर्ष की आयु में निधन हो गया। राजस्थान लोक-सेवा आयोग एवं जयपुर विकास-न्यास के अध्यक्ष के रूप में आपकी उल्लेखनीय सेवाएँ रहीं। जयपुर की कई सामाजिक, शैक्षणिक, साहित्यिक एवं जन-कल्याणकारी संस्थाओं से आप सक्रिय रूप से जुड़े हुए थे। लालबहादुर शास्त्री कॉलेज के आप संस्थापक अध्यक्ष थे।

जयपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक स्वर्गीय श्री गोपीचन्दजी सोगानी की धर्मपत्नी श्रीमती मैनादेवी का ८१ वर्ष की आयु में ९ जनवरी, १९९३ को निधन हो गया। एक दिन पूर्व आपने अन्न, जल आदि का त्याग कर दिया था। आप सरल-स्वभावी, व्रत-नियमनिष्ठ, श्रद्धावान श्राविका थीं। अपभ्रंश साहित्य अकादमी के संयोजक प्रमुख जैन दार्शनिक डॉ. कमलचन्दजी सोगानी की आप मातुश्री थीं।

मन्दसौर—आचार्य श्री नानेश की आज्ञानुवर्तिनी स्वाध्याय-रसिका महासती श्री कस्तूरकंवरजी का १८ दिसम्बर, १९९२ को ८४ वर्ष की आयु में संथारा पूर्वक समाधिमरण हो गया। आपका जन्म सं. १९६५ में कुकड़ेश्वर में श्री हजारीमलजी बोहरा के घर श्रीमती मोतीबाई की

कुक्षि से और विवाह नारायणगढ़ के श्री झमकलालजी छिंगावत के साथ हुआ था। आपने ४३ वर्ष की अवस्था में महासती श्री भूराजी के सान्निध्य में सं. २००७ में कुकड़ेश्वर में दीक्षा अंगीकृत की। १६ वर्षों से आप मन्दसौर में स्थिरवास विराजित थीं। आपकी नन्दीसूत्र के स्वाध्याय में विशेष रुचि थी और प्रति दिन खड़े रहकर २००० / श्लोक, गाथाओं का स्वाध्याय व ५ बार आनुपूर्वी गिनती थीं।

छोटी सादड़ी—यहाँ के प्रतिष्ठित सुश्रावक श्री भँवरलालजी नलवाया का ७६ वर्ष की आयु में २० नवम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप मधुर भाषी, सरलमन, सामाजिक कार्यकर्ता थे।

चित्तौड़गढ़—उदयपुर निवासी श्री भगवतीलालजी मेहता का २९ दिसम्बर को ६२ वर्ष की आयु में एक सड़क-दुर्घटना में आकस्मिक निधन हो गया। आप वन-विभाग से सेवा-निवृत्त हुए थे। आप मिलनसार, मृदुल स्वभावी एवं धर्मनिष्ठ श्रावक थे।

जयपुर—देश के प्रख्यात वैज्ञानिक और शिक्षाविद् डॉ. दौलतसिंहजी कोठारी का ८७ वर्ष की आयु में ४ फरवरी, १९९३ को असामयिक निधन हो गया। आपका जन्म ६ जुलाई, १९०६ को उदयपुर में हुआ। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से आपने भौतिक शास्त्र में एम. एस-सी. किया। दिल्ली वि. वि. में भौतिक शास्त्र के प्रोफेसर रहे। आप विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष रहे। केन्द्र सरकार ने आपको रक्षा मंत्रालय में वैज्ञानिक सलाहकार तथा राष्ट्रीय शिक्षा अकादमी और सोवियत विज्ञान अकादमी का सदस्य भी नियुक्त किया। आपने केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से भौतिक शास्त्र में पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। भारत सरकार ने विज्ञान, शिक्षा आदि क्षेत्रों में विशिष्ट सेवाओं के लिए आपको सन् १९७३ में 'पद्मविभूषण' अलंकार प्रदान कर सम्मानित किया। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के 'चांसलर' के रूप में आपकी नियुक्ति कर भारत सरकार ने आपकी सेवाओं के प्रति विशेष सम्मान व्यक्त किया। आप अ. भा. श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कांफ्रेन्स के भी अध्यक्ष रहे। विश्व-प्रसिद्ध वैज्ञानिक होते हुए भी अध्यात्म के प्रति आपकी गहरी रुचि थी। 'गीता' पर आपका विशेष अधिकार था। जैनागम 'आचारांग' सूत्र को आप महावीर की विश्व को सबसे बड़ी देन मानते थे। आपका जीवन सादा और विचार उच्च थे। सन्तों के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। आप वैज्ञानिकों में सन्त और सन्तों में वैज्ञानिक जैसे थे। आपके

निधन से एक महान् अध्यात्म-प्रवण वैज्ञानिक की अपूरणीय क्षति हुई है।

जयपुर—धर्मनिष्ठ श्रावक श्री रामकुमारजी जैन का २७ जनवरी, १९९३ को असामयिक निधन हो गया। आप सरल स्वभावी थे।

सवाई माधोपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक एवं कर्मठ कार्यकर्ता श्री रामदयालजी सर्राफ की मातुश्री एवं स्वर्गीय श्री भूरालालजी की धर्मपत्नी श्रीमती कन्नोदेवी का ७५ वर्ष की आयु में २४ जनवरी, १९९३ को असामयिक निधन हो गया। आप धर्मपरायण, सेवाभावी एवं सरलमना श्राविका थीं। आचार्य श्री के प्रति आपकी अनन्य आस्था और अगाध भक्ति थी।

सवाई माधोपुर—यहाँ के धर्मनिष्ठ श्रावक श्री चौथमलजी जैन देवली वालों का ६० वर्ष की आयु में २१ जनवरी, १९९३ को आकस्मिक निधन हो गया। आपकी आचार्य श्री के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी।

बड़ी सादड़ी—यहाँ के प्रतिष्ठित धर्मनिष्ठ वयोवृद्ध श्रावक श्री सागरमलजी मेहता का ९० वर्ष की आयु में ४ फरवरी को निधन हो गया। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करते थे। आप शांत स्वभावी, सरलमन और प्रसन्नचित्त थे।

जयपुर—यहाँ के एडवोकेट श्री शिखरचन्दजी जैन की धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मीदेवी का ६ फरवरी, १९९३ को ६७ वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की सरल-स्वभावी महिला थीं।

जयपुर—धर्मपरायण श्राविका श्रीमती बिरदकंवर धर्मपत्नी स्व. श्री अमृतराजजी मोहनोत का ७ फरवरी, १९९३ को असामयिक निधन हो गया। आप सरल-स्वभावी महिला थीं।

जयपुर—यहाँ के वरिष्ठ पत्रकार श्री गुमानमलजी जैन के सुपुत्र श्री शिखरचन्द जैन (मुन्ना) का ७ फरवरी, १९९३ को २६ वर्ष की अल्पायु में एक सड़क दुर्घटना में आकस्मिक निधन हो गया।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ. भा. श्री जैनरत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोक-विह्वल परिवार के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

'जिनवाणी' पत्रिका के विज्ञापन की दरें निम्नानुसार हैं—

१ दिसम्बर, १९९२ से प्रभावी

क्र.	पृष्ठ	साधारण अंक की दरें प्रति दो माह	साधारण अंक की दरें सम्पूर्ण वर्ष	साधारण अंक में रंगीन विज्ञापन प्रति दो माह	साधारण अंक में रंगीन विज्ञापन सम्पूर्ण वर्ष	विशेषांक की दरें
	२	३	४	५	६	७
१.	टाइटल कवर चौथा पृष्ठ	३,०००/—	१५,०००/—	—	३०,०००/—	१०,०००/—
२.	टाइटल कवर तीसरा पृष्ठ	२.०००/—	१०,०००/—	—	२०,०००/—	५,०००/—
३.	टाइटल कवर दूसरा पृष्ठ	२,०००/—	१०,०००/—	—	२०,०००/—	७,५००/—
४.	आर्ट पेपर पूरा पृष्ठ	२,०००/—	१०,०००/—	५,०००/—	२०,०००/—	३,५००/—
५.	साधारण पूरा पृष्ठ	१,२००/—	५,०००/—	—	—	२,५००/—
६.	साधारण आधा पृष्ठ	८००/—	४,०००/—	—	—	१,५००/—
७.	साधारण चौथाई पृष्ठ	६००/—	२,०००/—	—	—	७५०/—
८.	विदेशों के प्रतिष्ठान का विज्ञापन (साधारण पूरा पृष्ठ)	—	५०० डालर	—	—	—

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर

जयपुर—दिनांक १ दिसम्बर, १९९२ से मण्डल के साहित्य की आजीवन सदस्यता शुल्क रु. १०००/– (रुपये एक हजार मात्र) कर दिया है।

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

मण्डल के साहित्य का विक्रय जोधपुर में

जयपुर—सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित साहित्य का एक विक्रय केन्द्र श्रीमान् भण्डारी सरदारचन्दजी जैन, द्वारा मैसर्स भण्डारी सरदारचन्द एण्ड सन्स, होलसेल बुकसेलर्स एण्ड स्टेशनर्स, त्रिपोलिया बाजार, जोधपुर–३४२००२ (राज.) में प्रारम्भ हो गया है। इसी तरह से श्रीमान् सरदारचन्दजी भण्डारी जोधपुर को "जिनवाणी" पत्रिका के सदस्य बनाने के लिए अधिकृत किया गया है। जो कोई भी सज्जन मण्डल साहित्य जोधपुर में क्रय करना चाहते हों या 'जिनवाणी' के सदस्य जोधपुर में बनना चाहते हैं वे श्रीमान् सरदारचन्दजी भण्डारी से उपर्युक्त पते पर सम्पर्क करने की कृपा करावें।

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

मद्रास के जिनवाणी प्रतिनिधि

श्री सोहनराजजी अरविन्द,
मैसर्स कविता एन्टरप्राइजेज
नं. ४८–ए, पेरुमल कोयल गार्डन्स स्ट्रीट
साहूकार पेट,
मद्रास–६०००७९

'जिनवाणी' पत्रिका के सदस्य बनने, बनाने व विज्ञान के कार्य में इन्हें पूर्ण सहयोग देने की कृपा करें। इसी तेरह सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के साहित्य के आजीवन सदस्य बनने व बनाने में इन्हें सहयोग देने की कृपा करें।

चैतन्य ढढ्ढा
मंत्री

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

३५०/- रु० 'जिनवाणी' की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

३२०६. श्री पारसमल जी सुरेशकुमार जी, मद्रास
३२०७. श्री मोतीलाल जी प्रतीककुमार जी गादिया, बैंगलोर
३२०८. श्रीमती पुष्पा मोहनोत, जोधपुर
३२०९. श्री सुरेश भण्डारी, बैंगलोर
३२१०. श्री पदमराज मेहता, बैंगलोर
३२११. श्री अशोककुमार जी वल्लभदास जी मुणोत, सागर (म. प्र.)
३२१२. श्रीमती राखी चौरड़िया, कोटा
३२१३. श्री महावीर इलेक्ट्रिकल्स, जोधपुर

नोट :—आजीवन सदस्य संख्या ३२०५ जो जिनवाणी के माह जनवरी, १९९३ के पृष्ठ ६० पर प्रकाशित हुआ, उसे रद्द समझा जावे।

'जिनवाणी' को सहायतार्थ भेंट

५००/- श्रीमती चांदकँवर जी मुणोत, जोधपुर
आचार्य प्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म. सा. की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

३०१/- श्रीमान् पी० एम० भण्डारी, बम्बई से सप्रेम भेंट।

२०१/- श्रीमान् हेमराज जी श्रीचंद जी डोसी, मेड़ता सिटी
आचार्य प्रवर का मेड़ता सिटी पधारने के उपलक्ष्य में भेंट।

२०१/- श्री विनयचंद जी विमलचंद जी श्रीश्रीमाल, जयपुर
अपने पूज्य पिता श्री सौभागमल जी सा० श्रीश्रीमाल की पुण्य-स्मृति में भेंट।

१५०/- श्री गौतमचंद जी हुण्डीवाल, मद्रास
चातुर्मास सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में भेंट।

१२१/- श्री हरीशचंद जी गुप्ता, जयपुर
चि० राजेन्द्र के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/- श्री एस० गौतमचंद जैन, मद्रास
आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० का ८३वां जन्म दिवस एवं मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म० सा० की पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/- श्री पदमचंद जी तातेड़, मेड़ता सिटी
गुरु आम्नाय के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/- श्री बाबा नमक, कानपुर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती एवं आचार्य प्रवर के दर्शन के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/- श्री लालचंद जी मोहनलाल जी कोठारी, गोटन
आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की जन्मजयन्ती एवं मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म० सा की पुण्य तिथि के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/- श्री नौरतनमल जी अनिलकुमार जी गांग, जोधपुर
श्री प्रवीणकुमार जी गांग सुपुत्र श्री नौरतनमल जी गांग के शुभ विवाह सौ. कां. शशी जी के साथ सम्पन्न हुआ उसके उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/- श्री केवलचंद जी महावीरचंद जी सिंघवी नागौर
आचार्य प्रवर के नागौर पधारने के उपलक्ष्य में भेंट।

१००/- श्री नेमीचंद जी चिरंजीलाल जी तातेड़, रियांवाड़ी
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की जन्म जयन्ती एवं स्व० श्री मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म० सा० की पुण्य स्मृति में भेंट।

१००/- श्री सम्पतराज जी महावीरचंद जी देड़िया, रियांबाड़ी
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की जन्म जयन्ती एवं श्री मरुधर केसरी श्री मिश्रीमल जी म० सा० की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१/- श्री ए० एस० सुगनराज जी ललवानी, बैंगलोर
धर्मपत्नी श्रीमती फुटरीबाई की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१/- श्री चांदमल जी आत्मज उच्छबराज जी जैन, सेवानिवृत्त अध्यापक, नवसारी (गुजरात)
२५ घन्टे महामंत्र नवकार के अखण्ड जाप करने व नवीन गृह में प्रवेश करने हेतु भेंट।

५१/- श्रीमती शान्तिदेवी मोदी धर्मपत्नी श्री सुमेरनाथ जी मोदी, जोधपुर
पूज्य गुरुदेव के दर्शनार्थ एवं आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री हस्तीमल जी बुधमल जी जैन, रतकुरिया, जोधपुर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री दलीचंद जी प्रेमचंद जी कांकरिया, भोपालगढ़
आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री कपूरचंद जी पारसमल जी कांकरिया, भोपालगढ़
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री बादलचंद जी नौरतनमल जी लोढ़ा, भोपालगढ़
आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री सीशुलाल जी विमलचंद जी चोरड़िया, भोपालगढ़
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री हड़मानमल जी जागीरदार, बालोतरा
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री प्रेमचंद जी ओमप्रकाश जी कोठारी, बून्दी
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री मिलापचंद जी हेमन्तकुसार जी डागा, बून्दी
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती एवं आचार्य प्रवर के दर्शनार्थ के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- गुप्त दान, जयपुर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री बुद्धिप्रकाश जी जैन, कोटा
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री जबरचंद जी ओमप्रकाश जी ओस्तवाल, गोटन
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्रीमती किशोरकंवर जी सिंघवी, धर्मपत्नी श्री मनोहरलाल जी सा० सिंघवी
प्रपौत्र के जन्म के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री प्रेमकुमार जी सिंघवी, पुत्र श्री शुभलाल जी बारणी, खुर्द
आचार्य प्रवर श्री हीराचंद जी म० सा० आदि ठाणा बारणी पधारने के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री सागरमल जी अरुणकुमार जी नागौर
आचार्य प्रवर के सागर पधारने के उपलक्ष्य में भेंट।

५१/- श्री दिनेशकुमार जी सुराणा, नागौर
गुरु आम्नाय के उपलक्ष्य में भेंट।

२१/- श्री सायरचंद जी गणपतराज जी बाघमार, कोसाना
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट

२१/- श्री शिवराज जी नथमल जी नाहर, कोसाणा
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

२१/- श्री नेमीचंद जी पुत्र श्री बाबूलाल जी चौपड़ा, जोधपुर
आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० की ८३वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में भेंट।

२१/- गुप्तदान, जोधपुर से जिनवाणी को भेंट।

स्वाध्याय संघ में पर्युषण सहायता

२५००/- श्री वर्धमान स्था० जैन श्रावक संघ, कानपुर

१५००/- श्री वर्धमान स्था० जैन श्रावक संघ, भोपाल
५०१/- श्री एस० एस० जैन सभा, नागलराया, नई दिल्ली
५०१/- श्री वर्धमान श्रावक संघ, जबलपुर
१५१/- श्री स्था० जैन श्रावक संघ, भोपालगढ़
१५१/- श्री जैन श्रावक संघ, भानसोल, गढवाड़ा

आर्थिक सदस्यता सहायता

२०००/- भाण्डावत फाउण्डेशन, जोधपुर
५००/- श्री मुलतानमल जी बांठिया, जोधपुर
२५०/- श्री सुगनचंद जी भण्डारी, जोधपुर
२५०/- श्री केसरी बुरड़, जोधपुर
२५०/- श्री रिखबचंद जी मेहता, जोधपुर
२५०/- श्री रतनलाल जी रांका, सैलाना

अन्य सहायता

५१/- श्रीमती इन्द्रकंवर डागा, जोधपुर

साहित्य प्रकाशन के आजीवन सदस्य

१. श्री पुखराज जी जैन, मद्रास — ५०१/-
२. श्रीमती शोभाजी जैन (सिंघवी), जोधपुर — १०००/-

आवश्यकता है

एक महिला की जो धार्मिक शिक्षण करा सके, जिसको सामायिक, प्रतिक्रमण, भक्तामर आदि का पूर्ण व शुद्ध ज्ञान हो। पूर्ण जानकारी के लिए निम्न स्थान पर सम्पर्क करने का कष्ट करें।

पदमचन्द बम्ब
अध्यक्ष
अ० भा० श्री जैन रत्नयुवक संघ
१२ गणगौर का रास्ता
जौहरी बाजार, जयपुर
फोन नं० ५६५४१३, ५६३३८६

विनयचन्द डागा
मन्त्री
फोन नं० ५६३७४५, ४१७४६

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल बापू बाजार, जयपुर

के

महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

पुस्तक-नाम		लेखक / सम्पादक
1– दशवैकालिक सूत्र	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
2– उत्तराध्ययन सूत्र भाग 1–2–3	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
3– अन्तगडदशा सूत्र	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
4– गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग 1 से 7	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
5– आध्यात्मिक आलोक	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
6– जैन संस्कृति और राजस्थान	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत
7– प्रार्थना-प्रवचन	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
8 । Concept of Prayer	:	आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रवचनों से अनूदित
9– उपमिति भवप्रपंच कथा	:	सिद्धर्षि गणि
10– जैन तमिल साहित्य और तिरुक्कुरल	:	डॉ० इन्दरराज बैद
11– ध्यान-योग : रूप और दर्शन	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत
12– दुःख मुक्ति : सुख प्राप्ति	:	कन्हैयालाल लोढ़ा
13– दीक्षा कुमारी का प्रवास	:	अनु० लालचन्द्र जैन
14– जैन दर्शन : आधुनिक दृष्टि	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत
15– गजेन्द्र सूक्ति-सुधा	:	डॉ० संजीव भानावत
16– निर्ग्रन्थ भजनावली	:	मुनिश्री श्रीचन्दजी म० सा०
17– स्वाध्याय स्तवन-माला	:	सम्पतराज डोसी
18– जैन तत्त्व प्रश्नोत्तरी	:	कन्हैयालाल लोढ़ा
19– श्री रत्नचन्द्र पद मुक्तावली	:	पं० र० मुनिश्री लक्ष्मीचन्दजी म० सा०
20– सुजान पद सुमन वाटिका	:	पं० र० मुनिश्री लक्ष्मीचन्दजी म० सा०
21– पर्युषण पर्वाराधना	:	साध्वी श्री मैनासुन्दरीजी
22– पर्व-सन्देश	:	साध्वी श्री मैनासुन्दरीजी
23– कर्म-सिद्धान्त	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत
24– व्रत प्रवचन संग्रह	:	आचार्य श्री हीरामुनिजी
25– कर्म-ग्रंथ	:	केवलमल लोढ़ा
26– श्रावक धर्म और समाज	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत
27– पर्युषण-सन्देश	:	जशकरण डागा
28– सप्त चरित्र संग्रह भाग 1–2	:	सम्पतराज डोसी
29– अपरिग्रह : विचार और व्यवहार	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत
30– "जिनवाणी" (मासिक पत्रिका)	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत